प्रतीहार राजपूतों का इतिहास

(मण्डोवर से नागौद सातवीं सदी से बीसवीं सदी तक)

लेखक

रामलखन सिंह

गढ़ी पतौरा, जिला सतना (म०प्र०)

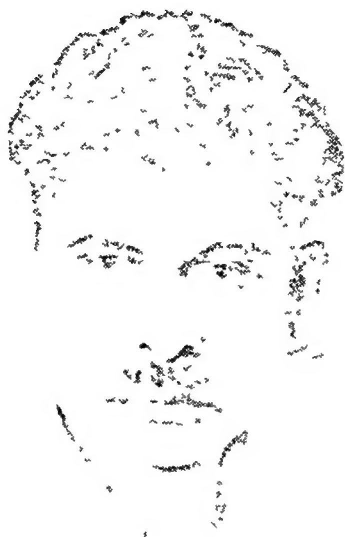
प्रकाशक

लेखक

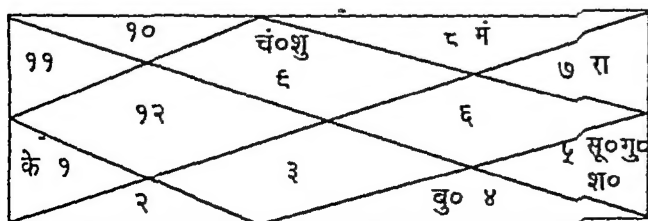
स्व० श्री रामलखन सिंह

जन्म 24 अगस्त 1920

स्वर्गवास 9 मार्च 1987



जन्म चक्र



प्राक्कथन

इतिहास शब्द इति + इह + आसीत से बना है, जिसका अर्थ है ऐसा हुआ। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र को इतिहास माना गया है। कालान्तर में इसमें महाभारत भी जोड़ दिया गया। इसी प्रकार प्राचीन भारत में महाभारत, पुराण, धर्मशास्त्र आदि के रूप में इतिहास को इतना सरल और रुचिकर बनाया गया था कि प्रायः सभी लोग उपर्युक्त ग्रन्थों का न्यूनाधिक ज्ञान रखते थे। भारत में आज भी पुराण और महाभारत सुनने की परम्परा अनवरत रूप से प्रचलित है। सुधी जन भागवतपुराण आदि का वाचन रुचिपूर्वक सुनते हैं। कुछ समय पहले तक यह सन्देह व्यक्त किया जाता था कि पुराणों में वर्णित घटनाएं सही नहीं हैं। उदाहरण के लिए **भागवतपुराण** में लिखा है कि कृष्ण की द्वारका समुद्र में डूब गई थी। इस घटना पर अधिकांश लोग विश्वास नहीं करते थे। किन्तु जब से श्री एस० आर० राव ने अरब सागर में डूबी द्वारका खोज ली है, तब से पुराणों में वर्णित घटनाओं पर विश्वास किया जाने लगा है।

प्रत्येक देश और जाति का इतिहास होता है जिसमें उसके उत्कर्ष और अपकर्ष का लेखा-जोखा होता है। इसी इतिहास के माध्यम से कोई देश अथवा जाति भविष्य में आने वाली बुराइयों से स्वयं को सुरक्षित रखती है। इस प्रकार इतिहास पथ प्रदर्शक का काम करता है। अभिमन्यु और शिवाजी जैसे वीरों को बचपन से ही इसकी शिक्षा दी गई थी। इसीलिए कोली नामक विद्वान का कथन है कि 'History is the first thing that should be given to children in order to form their hearts and understanding''

इतिहास में प्रारम्भ से ही मेरी रुचि रही है। अतः प्रतिहारों के इतिहास की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए मेरी तीव्र लालसा जाग उठी। अध्ययन के दौरान मुझे ज्ञात हुआ कि चाहमान (चौहान), चन्देल, कलचुरि, परमार और गुर्जर प्रतीहारों के जो इतिहास प्रकाशित हैं उनमें उनके साम्राज्यवादी युग की तो विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है, किन्तु उनके परवर्ती इतिहास की पूर्णतया अवहेलना की गई है। गुर्जर-प्रतीहारों के सम्बन्ध में भी यही तथ्य सामने आया। प्रतीहार (परिहार) इतिहास पर प्रकाश डालने वाला पहला ग्रन्थ **वंश भास्कर** है जिसे श्री कृष्णसिंह ने वि० स० 1956 (1899 ई०) में लिखा था। यह ग्रंथ जोधपुर से प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात् मुंशी देवी प्रसाद ने **परिहार वंश प्रकाश** की रचना की। यह ग्रन्थ बाकीपुर से संवत 1911 (1854 ई०) में छपा। इसके बाद श्री कल्याण सिंह बडवा ने **परिहारवंश का इतिहास** लिखा। इसका रचना काल ज्ञात नहीं है। ये तीनों ग्रन्थ पारम्परिक पौराणिक शैली में लिखे गये हैं। तीनों ग्रन्थों की वंशावलियां अलग-अलग हैं और बिना किसी प्रमाण के लिखी गई हैं। ग्रन्थ लेखन में पुरातात्त्विक सामग्री का अभाव है। अतः इन्हें वैज्ञानिक विधि से लिखा हुआ इतिहास नहीं कहा जा सकता। वैज्ञानिक पद्धति से लिखा गया पहला ग्रंथ **ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश** है, जिसके लेखक श्री के० एम० मुंशी ने इसे भारतीय विद्या भवन, बम्बई से 1944

ई० में प्रकाशित कराया था। तत्पश्चात् 1931 और 1936 में डा० हेमचन्द्र रे ने लन्दन विश्वविद्यालय की डाक्ट्रेट के लिए **डाइनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया** शीर्षक शोध प्रवन्ध प्रस्तुत किया। डॉ० वैजनाथपुरी ने गुर्जर-प्रतीहारों पर अपना शोध प्रवंध आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में **हिस्ट्री ऑफ गुर्जर प्रतीहाराज** शीर्षक से प्रस्तुत किया। कालान्तर में उनका यह शोध प्रवन्ध 1957 ई० में वम्वई से प्रकाशित हुआ। डा० पुरी ने प्रतीहारों की विप्र हरिशचन्द्र शाखा का विस्तृत राजनीतिक इतिहास लिखा है। उनका कथन है कि हरिचन्द्र से भी पहले अनेक प्रतीहार शाखाएं विद्यमान थीं। हरिचन्द्र की दो पत्नियाँ थीं – एक व्राह्मण और दूसरी क्षत्रिय। हरिचन्द्र के मन में सत्ता प्राप्ति की महत्वाकांक्षा न थी। किन्तु उसकी क्षत्रिय रानी से उत्पन्न पुत्र सत्ता के आकर्षण से मुक्त न थे। अतः उन्होंने मण्डोर के चारों ओर अपने मातृपक्ष की सहायता से एक छोटे राज्य की स्थापना कर ली। कालान्तर में इस शाखा ने उज्जैन होते हुए कन्नौज पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार प्रतीहार उत्तर भारत की सार्वभौम शक्ति बनने में सफल हुए। डा० पुरी ने अपने ग्रन्थ में यशःपाल प्रतीहार तक के इतिहास का वर्णन किया है। किन्तु साम्राज्यवादी प्रतीहारों के पतन के पश्चात् उनकी स्थानीय शाखा पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया।

1965 ई० में श्री विभूतिभूषण मिश्र ने **दि हिस्ट्री आफ दि गुर्जर-प्रतीहाराज** ग्रंथ की रचना की। श्री मिश्र ने अपने ग्रंथ लेखन में साहित्यिक और पुरातात्विक स्रोतों का भरपूर उपयोग किया है। किन्तु वे आधुनिक ग्रन्थों के प्रति उतने सावधान नहीं रहे। उदाहरणार्थ 1957 ई० में प्रकाशित डा० पुरी के ग्रंथ का उन्होंने अवलोकन नहीं किया। अतः यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है उन्होंने क्या लिखा है ? डा० विशुद्धानन्द पाठक का **उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास** (1973) एक विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ है। इसके पांचवें अध्याय में गुर्जर-प्रतीहारों के उद्भव और विकास के साथ-साथ उसके अधीन कन्नौज साम्राज्य के इतिहास का विस्तृत विवेचन है। इसमें गुर्जर-प्रतीहारों की महान उपलब्धियों और उनकी सत्ता के क्रमिक पतन का विशेष अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। किन्तु इस ग्रंथ में भी प्रतीहारों की साम्राज्यवादी शाखा के पतन के पश्चात् विकसित स्थानीय शाखाओं की पूर्णतया उपेक्षा की गई है। इस प्रकार उपर्युक्त सभी लेखकों ने प्रतीहारों की साम्राज्यवादी शाखा के पतन के पश्चात् अपना अध्ययन समाप्त कर दिया है। अतः एक ऐसे ग्रंथ की अत्यन्त आवश्यकता थी जिसमें प्रतीहारों के कन्नौज के पतन के पश्चात् का इतिहास लिखा जावे। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर प्रस्तुत ग्रंथ की रचना की गई है।

सबसे पहले सामग्री संकलन का कार्य किया गया। हमने विभिन्न ग्रंथों को पढ़कर प्रतीहार वंश के सम्वन्ध में जानकारी प्राप्त की। तत्पश्चात् पुरातात्विक स्रोतों से इस जानकारी के प्रमाणीकरण का कार्य किया। इसके लिए हमने प्रतीहारों के कन्नौजी साम्राज्य के पतन के बाद का इतिहास जानने के लिए ग्वालियर तथा भूतपूर्व नागौद राज्य का व्यापक सर्वेक्षण किया है। इस सर्वेक्षण से मुझे ज्ञात हुआ कि प्रतिहारों की एक शाखा कन्नौज-ग्वालियर होते हुए दमोह पहुँची और यहां पर व्यारमा नदी के किनारे वस कर एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना का उद्योग करने लगी। यहीं व्यारमा नदी के तट पर उन्होंने शिव का एक मंदिर वनवाया और नदी के नाम पर इसका नामकरण वरमेन्द्रनाथ किया। नागौद के परिहार वंश के यही इष्टदेव हैं और इन्हीं के नाम से नागौद राज्य को वरमेन्द्र गद्दी कहते हैं।

सामग्री संकलन में मुझे अनेक विद्वानों से सहयोग प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम ग्वालियर के पं० हरिहरनिवास द्विवेदी ने मुझे अपना ग्रंथ **ग्वालियर राज्य के अभिलेख** प्रदान कर इस इतिहास को लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। सामग्री संकलन और लेखन में कठिनाइयाँ आने पर हमारे समधी डा० सी० वी० सिंह प्रोफेसर, चिकित्सा महाविद्यालय, रीवा ने प्रो० अख्तर हुसैन निजामी का नाम बताया। प्रो० निजामी इस क्षेत्र के जाने-माने इतिहासकार हैं। उन्होंने बड़ी लगन और रुचिपूर्वक इस इतिहास लेखन में समय-समय पर महत्वपूर्ण सुझाव दिये। प्रो० निजामी ने मूलतः अंग्रेजी और उर्दू में लिखा है अतः ग्रन्थ की भाषा संशोधन के लिए उन्होंने वाणिज्य महाविद्यालय, सतना में प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति और पुरातत्व के प्राध्यापक डा० कन्हैयालाल अग्रवाल से सम्पर्क स्थापित करने को कहा। इस प्रकार मेरा परिचय डा० अग्रवाल से हुआ। आपने भाषा संशोधन के साथ प्रेस कापी तैयार करने में मेरा सहयोग किया। इन दोनों विद्वानों की तत्परता और लगन से प्रतीहारों का यह इतिहास पूरा हुआ। अतः हम इनके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं। श्री लाल भार्गवेन्द्रसिंह कोठी, नागौद, उरदना निवासी श्री भोजराज और अमकुई निवासी श्री हीरामन सिंह ने प्रस्तुत ग्रन्थ के खण्ड दो के सचरों को पूर्णता प्रदान करने में महत्वपूर्ण सहयोग किया। आप लोगों ने व्यक्तिगत रुचि लेकर स्वयं अनेक स्थानों का भ्रमण किया और जानकारी एकत्र कर प्रदान की। अतः आप लोगों को धन्यवाद देना आपके महत्व को कम करना होगा।

माटी केरा बुदवुदा अस मानुस की जात।
देखत ही छिप जायेगा, ज्यों तारा परभात॥

यह उक्ति आज अपनी 67 वर्ष की अवस्था में अस्वस्थ होने के कारण बार-बार याद आ रही है और ऐसा प्रतीत होता है कि संभवतः यह ग्रन्थ मेरे जीवन काल में प्रकाशित न हो सके। अतः इसके प्रकाशन का भार हम अपने कनिष्ठ पुत्र कुं० प्रागेन्द्रप्रताप सिंह पर छोड़े जाते हैं।

विजयदशमी, 1987

रामलखनसिंह

आशीर्वचन

सन 1970 की दहाई में इन पंक्तियों के लेखक का सम्पर्क श्री लालजी साहेब उर्फ रामलखनसिंह से हुआ तो अंग्रेजी एवं फारसी की उपलब्ध सामग्री मैंने पेश की। जव लाल जी साहेब की ड्राफ्ट की रूपरेखा बन चुकी तो उन्होंने इच्छा प्रगट की कि जो पुस्तक पतौरा या सतना से प्रकाशित हो उसमें इतिहास का प्रारम्भ कन्नौज से होना चाहिये और प्रतिहारों के समस्त शिलालेखों का समावेश ग्रन्थ में किया जाय। यह योजना अभी विचाराधीन ही थी कि अचानक परमात्मा ने उन्हें इस दुनिया से उठा लिया और समस्त सामग्री छोटे कुंवर साहेब श्री प्रागेन्द्र प्रताप सिंह को सौंपते हुये फरमा गये कि इसको छपवा कर प्रकाशित कराना तुम्हारे जिम्में है।

श्री प्रागेन्द्रप्रताप सिंह ने न केवल पिता की योजना को कार्यान्वित किया है वल्कि नित नये शिलालेख ढूंढ़ कर एकत्रित किये है। खासकर महाराजाधिराज श्री वीरराजदेव के एक दर्जन शिलालेखों का उल्लेख पुस्तक में किया है।

सुल्तान फीरोजशाह तुगलक के समय के दो तीन राजाओं की जानकारी (ग्वालियर व गहोरा) तो हमको पहले ही से थी किन्तु चन्देरी वाले परिहारों का चित्र जो अधूरा था इन नवीन प्राप्त शिलालेखों से अधिक स्पष्ट एवं उजागर होता है और वीरराजदेव की वंशावली के साथ-साथ इन प्रतापी परिहार नरेश के राज्य की सीमा वर्तमान कटनी से लेकर रीवा और गजं-सलेहा से लेकर सतना तक फैली हुई प्रतीत होती है। सारांश यह कि चौदहवीं शताब्दी ईसवी के अंत से सुलतान फीरोज के विस्तृत शासन काल में वीरराजदेव एक शक्तिशाली राजा थे जो दिल्ली सुल्तान की आधीनता उसी प्रकार स्वीकार से थे जिस प्रकार ग्वालियर के तोमर तथा गहोरा के वघेल।

मैं (लाल) प्रागेन्द्र प्रताप सिंह को इन उपलब्धियों के लिये वधाई देता हूँ और पुस्तक के लिये अपनी शुभ कामना प्रगट करता हूँ।

ईदुल फित्र 14 हिजरी

अख्तर हुसैन निजामी

दो-शब्द

स जातो येन जातेन याति वंश समुन्नितिम ।
परिवर्तिन संसारे मृत को वा न जायते ।।

'उसी का जन्म लेना सार्थक है जिससे वंश की उन्नति हो। अन्यथा इस परिवर्तनशील संसार में जन्म लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति मरता है।' यह कहावत दाऊ साहब श्री रामलखन सिंह के बारे में बिल्कुल खरी उतरती है।

प्रारम्भ में इतिहास में उनकी रुचि न थी। किन्तु एक बार गुर्जर-प्रतीहारों के इतिहास का अध्ययन करने के बाद वे इस राजवंश के सम्बन्ध में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए उन्मुख हुए।

क्योंकि लालजी साहब स्वयं भी परिहार (गुर्जर-प्रतीहार) वंश के थे, अतः अपने वंश के बारे में जानना उनका शौक हो गया। इसी शौक के कारण वे जब भी पतौरा से बाहर लखनऊ, बनारस अथवा दिल्ली जाते तब प्रतीहार इतिहास से सम्बन्धित पुस्तकें तलाशते और मिलने पर खरीद लेते। इस प्रकार राजपूत-इतिहास से सम्बन्धित पुस्तकों का उनके पास एक अच्छा-खासा संग्रह हो गया था।

नागौद क्षेत्र (भूतपूर्व नागौद राज्य) कई शताब्दियों तक कला का एक महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। इसमें भरहुत, खोह, भूमरा, पतियानदाई और गोबराव (सिद्धनाथ) भारतीय कला के मानक स्मारक माने जाते हैं। इनमें से अधिकांश पर प्रचुर सामग्री उपलब्ध है। किन्तु यहां के इतिहास पर अब तक किसी प्रामाणिक ग्रंथ का अभाव था।

दाऊ साहब स्वयं नागौद क्षेत्र के इलाकेदार थे। अतः नागौद के इतिहास और पुरातत्व के साथ ही वहाँ की संस्कृति, भाषा, साहित्य तथा कला के प्रति उनका विशेष आकर्षण तथा निष्ठा होना स्वाभाविक ही है। प्रतीहारों का इतिहास-मण्डौर से नागौद तक का अध्ययन उनकी मौलिक रचना है। अंग्रेजी अथवा अन्य किसी भाषा में इस प्रकार का ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। महमूद गजनवी के कन्नौज आक्रमण और विद्याधर चन्देल के सामन्त वज्रदामन कच्छपघात के द्वारा राज्यपाल के वध के पश्चात गुर्जर-प्रतीहारों का साम्राज्यवादी युग समाप्त हो जाने के बाद भी वे एक स्थानीय राजवंश के रूप में राजनीतिक रंगमंच पर बराबर विद्यमान रहे। प्रस्तुत ग्रंथ में कन्नौज के प्रतीहारों के परवर्ती काल के अन्धकारावृत्त इतिहास को प्रकाश में लाने का विशेष प्रयास किया गया है।

परिहारों के इतिहास लेखन के दौरान 1981 ई० में मेरी भेंट दाऊ साहब से हुई। मेरी और उनकी आयु में पर्याप्त अन्तर होने के बावजूद यह परिचय निरन्तर प्रगाढ़ होता गया और उनके अन्तिम समय तक बना रहा। वे बड़े अध्ययनशील थे और तेजी से पढ़ते थे। उनकी स्मरण शक्ति अच्छी थी और वे विषय अथवा समस्या के तह तक पहुँचने का प्रयत्न करते थे। इसलिए वे परिहारों के इतिहास के विषय में गम्भीर चर्चा

करते थे। उन्होंने भूतपूर्व नागौद राज्य के अतिरिक्त नागौद के परिहारों के आदिस्थान व्यारमा नदी घाटी का व्यापक सर्वेक्षण किया था। यही कारण है कि इस ग्रंथ में पाठकगण अनेक मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक सामग्री पायेंगे जो इसके पहले उपलब्ध न थी। दुर्भाग्यवश ग्रंथ का प्रकाशन उनके जीवनकाल में न हो सका।

दाऊ साहब के निधन के पश्चात इस ग्रंथ के प्रकाशन का भार उनके छोटे पुत्र श्री प्रागेन्द्रप्रतापसिंह पर आया। काम कुछ आगे बढ़ा। किन्तु कुछ परिस्थितिजन्य कठिनाइयों के कारण इसके प्रकाशन की व्यवस्था न हो सकी। इस दौरान तीन-चार वर्ष का समय और निकल गया। किन्तु इस अत्यधिक विलम्ब का कुछ लाभ भी हुआ। इस बीच हमनें खलेसर, भड़ारी और सिगदई बावा तालाब के सती लेखों का पता लगाया। ये सभी लेख महाराजाधिराज वीरराजदेव परिहार के शासनकाल के हैं और अभी तक अप्रकाशित हैं। इनमें से कुछ का प्रकाशन दैनिक देशबन्धु (सतना) में सतना के पुरातत्व नाम से प्रकाशित लेखमाला में हुआ है। इनकी विस्तृत चर्चा अध्याय दस में की गई है। इन अभिलेखों की जानकारी के बाद कुंवर साहब के साथ एक बार फिर से गंज, लखूराबाग, रानी तालाब (सलेहा), दमचुआ तालाब (कल्दा पहाड़) पिपरा पठार, रामपुर पाठा आदि स्थानों का सर्वेक्षण किया गया जिससे वीरराजदेव के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त हुई। जहाँ तक संभव हो सका है प्रस्तुत ग्रंथ में प्रतीहारों के इतिहास और संस्कृति सम्बन्धी बिखरी सामग्री एकत्र कर दी गई है। हमें आशा है कि प्रतीहार इतिहास में रुचि रखने वाले विद्वान और सुधी पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

मकर संक्रान्ति
14. 1. 1995

डा० कन्हैयालाल अग्रवाल
प्राध्यापक
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति और पुरातत्व
वाणिज्य महाविद्यालय, सतना (मध्य प्रदेश)

प्रकाशकीय

किसी भी देश, समाज और जाति को जानने के लिए उसका इतिहास जानना बहुत जरूरी होता है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का कथन है— अन्धकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं। मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं। इसी बात को ध्यान में रखकर दाऊ साहब ने प्रतीहार (परिहार) वंश का इतिहास लिखना प्रारम्भ किया था। कन्नौज के प्रतीहारों के सम्बन्ध में डा० बैजनाथपुरी और डा० विभूतिभूषण मिश्र ने स्वतंत्र ग्रंथों की रचना की है। इसके हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल (भारतीय विद्या भवन) और कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री आफ इण्डिया (इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस) के अनेक जिल्दों वाले इतिहास में कन्नौज के प्रतीहारों के इतिहास का वर्णन किया गया है। किन्तु कन्नौज के साम्राज्यवादी प्रतीहारों के पतन के पश्चात् का उनका इतिहास अभी तक अज्ञात है। अतः इसी बात को ध्यान में रखकर प्रतीहारों का इतिहास मण्डीर से नागौद तक लिखने की योजना बनाई गई। सामग्री का चयन हुआ और ग्रंथ का लेखन भी समाप्त हो गया। किन्तु दाऊ साहब के निधन के कारण ग्रंथ प्रकाशित न हो सका।

बहुत समय तक यह ग्रन्थ बस्ते में बंधा पड़ा रहा। यहां तक कि अनेक महानुभव जो इस ग्रंथ में रुचि रखते थे और इसके प्रकाशन की राह देख रहे थे पूछने लगे कि ग्रन्थ का प्रकाशन क्यों नहीं हो रहा है ? अतः ग्रन्थ का काम पुनः शुरू किया गया। इसी समय महाराज वीरराज के कुछ नये अभिलेखों की जानकारी डा० कन्हैयालाल अग्रवाल, प्राध्यापक, वाणिज्य महाविद्यालय, सतना से प्राप्त हुई। अतः यह आवश्यक समझा गया कि इन अभिलेखों को भी अध्ययन में सम्मिलित किया जाय। इसी बात को ध्यान में रखकर खलेसर, भड़ारी, कुसुमहट, बम्हनगवां, गंज, नागदमन, डोडी-पिपरा आदि के सती लेखों का अध्ययन किया गया। डा० कन्हैयालाल अग्रवाल ने पुस्तक प्रकाशन के समय तक हमारा सहयोग किया। अतः हम उनके हार्दिक आभारी हैं। श्री गोविन्दसिंह बाघेल सर्वेक्षण के दौरान बराबर साथ रहे।

हम अपने चाचा श्री गोपालशरणसिंह (भूतपूर्व मंत्री) और ज्येष्ठ भ्राता श्री रामप्रताप सिंह (भूतपूर्व विधायक) के विशेष आभारी हैं जो ग्रंथ के शीघ्र प्रकाशन के लिए सदैव प्रेरित एवं प्रोत्साहित करते रहे हैं।

हम उमरी हाउस के श्री ब्रजनन्दन सिंह एवं श्री भोजराज सिंह (उरदना) के भी आभारी हैं जो सजरा-खानदान के संशोधन में समय-समय पर मदद करते रहे। मेरे भतीजे चि० गगनेन्द्रप्रताप सिंह और पुत्र चि० राजवेन्द्रप्रताप सिंह, चि० शिवेन्द्रप्रताप सिंह और चि० अतुलप्रताप सिंह आशीर्वाद के पात्र हैं जिन्होंने सर्वेक्षण के समय अनेक प्रकार से सहायता की।

शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद के प्रोप्राइटर श्री द्वारका प्रसाद अग्रवाल के प्रति हम आभार प्रदर्शित करते हैं जिनकी तत्परता, लगन और मार्गदर्शन के कारण ग्रंथ शीघ्र प्रकाशित हो सका।

मैं मातुश्री पूजनीया भुवनेश्वरी देवी को नमन करता हूँ जिनके चरणों के आशीर्वाद से यह ग्रंथ शीघ्र प्रकाशित हो सका। हमारी धर्मपत्नी श्रीमती नीना सिंह, ने हमें गृह कार्यों से मुक्त रख पुस्तक प्रकाशन में सहयोग प्रदान किया। अतएव वे धन्यवाद की पात्र हैं।

सजरों के प्रकाशन में पूर्ण सावधानी बरती गई है। यदि सुधी पाठकों को इसमें कोई अशुद्धि समझ में आवे तो वे प्रकाशक को सूचित करने का कष्ट करें ताकि आगामी संस्करण में उसका शोधन किया जा सके।

सुविज्ञ जन इस ग्रंथ की उपलब्धि के लिए पहले से ही उत्सुक रहे हैं। अप्रत्याशित कठिनाइयों के कारण इसके प्रकाशन में पर्याप्त समय लग गया। अब ग्रंथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। आशा है अभिलाषी जन इसे प्राप्त कर प्रसन्नता का अनुभव करेंगे एवं त्रुटियों और कमियों से हमें अवगत करायेंगे ताकि द्वितीय संस्करण में उन्हें परिमार्जित किया जा सके।

विजयदशमी
3 अक्टूबर 1995

प्रागेन्द्रप्रताप सिंह

खण्ड अ

प्रतीहारों का इतिहास

सचरा खानदान

खण्ड व

अध्याय 1

राजपूतों की उत्पत्ति

राजपूत शब्द संस्कृत 'राजपुत्र' का अपभ्रंश है। प्राचीन भारत में राजपुत्र शब्द का प्रयोग क्षत्रिय राजकुमारों के लिए होता था।[1] शासक वर्ग से सम्बन्धित होने के कारण क्षत्रिय लोग राजकुमार, महाराजकुमार, राजपुत्र अथवा महाराजपुत्र की उपाधियों से सम्बोधित किये जाते थे। पं० गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा ने अर्थशास्त्र (कौटिल्य), सौन्दरानन्द (अश्वघोष), मालविकाग्निमित्र (कालिदास), हर्षचरित और कादम्बरी (वाण) आदि ग्रंथों में प्रयुक्त 'राजपुत्र' शब्द का उल्लेख किया है। उन्होंने अभिलेखों में भी 'राजपुत्र' का उल्लेख ढूँढ निकाला है। वि०सं० 1287 के तेजपाल मंदिर अभिलेख[2] में 'राजपुत्र', वम्हनी के वाघदेव प्रतीहार अभिलेख[3] तथा वि० सं० 1344 (1287 ई०) के हिण्डोरिया (जिला दमोह) अभिलेख[4] में चन्देल हम्मीरवर्मा के महासामन्त को 'महाराजपुत्र' कहा गया है। तो भी, हर्षवर्द्धन-काल में भारत भ्रमण करने वाले चीनी तीर्थयात्री ह्वेनसांग (629-45 ई०) ने 'राजपूत' शब्द के स्थान पर राजाओं को 'क्षत्रिय' ही कहा है। इस प्रकार 'राजपुत्र' शब्द का प्रयोग अनेक शिलालेखों में मिलता है।

600-1200 ईसवी का काल पूर्व मध्यकाल कहलाता है। इस सम्पूर्ण काल में राजपूतों का बोलवाला रहा और अधिकांश भारत पर उन्होंने शासन किया। इसीलिए आधुनिक इतिहासकारों ने एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन कर उन्हें विदेश से आये शकों तथा हूणों की सन्तान अथवा स्थानीय आदिम जातियों से उत्पन्न बताया। इस दिशा में कर्नल जेम्स टाड ने उन्नीसवीं शती के प्रथम चरण में राजस्थान के इतिहास पर 'एनल्स एण्ड एण्टीक्वटीज ऑफ राजस्थान' नामक ग्रंथ प्रकाशित किया। यह ग्रंथ टाड की अपूर्व लगन, कठोर परिश्रम तथा वर्षों के अनुसंधान का फल था। विद्वानों में इस ग्रंथ का बड़ा आदर हुआ। टाड का कथन है कि राजपूत शक-सीथियन के वंशज हैं। क्योंकि इस समय तक राजपूतों की उत्पत्ति का अग्निकुल[5] सम्बन्धी सिद्धान्त लोकप्रिय

---

1. एते रुक्मरथानाम 'राजपुत्रा' महारथाः। रथेष्वस्त्रेषु नागेषु च विशापते।। महाभारत 7. 112. 2.
2. भालिभाडा प्रभृति ग्रामेपु संतिष्ठमान श्री प्रतिहारवंशीय सर्वराजपुत्रैश्च।
3. एपि०इण्डि० , खण्ड 16, पृ० 10 टिप्पणी 4; वही, खण्ड 20, पृ० 135, टिप्पणी।
4. इन्क्रिप्सन्स सी०पी० एण्ड बरार , पृ० 56
5. अग्निकुल सिद्धान्त के अनुसार जब परशुराम ने प्राचीन क्षत्रियों का विनाश कर दिया तब ऋषि-मुनियों ने वशिष्ठ की सहायता से अर्बुदगिरि (आबू पर्वत) के पवित्र अग्निकुंड में से प्रतीहार, परमार, सोलंकी तथा चाहमान वीरों को उत्पन्न किया। इन्हीं वीरों के नाम पर उनके वंशज क्रमशः प्रतीहार, परमार, सोलंकी और चाहमान (चौहान) कहलाए। आबू पर्वत पर उक्त अनुष्ठान क्षत्रियों की ह्रासोन्मुखी शक्ति को पुनर्जीवित करने का एक प्रयत्न था। पृथ्वीराजरासो की बीकानेर से प्राप्त प्राचीनतम प्रति में चौहान (चाहमान) वीर की उत्पत्ति ब्रह्मा के यज्ञ से बताई गई है। सोलहवीं शती के उत्तरार्द्ध की रचना 'सुरजनचरित्र' में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है। रासो में वर्णित उपर्युक्त अर्बुद-यज्ञ का वर्णन अन्यत्र नहीं मिलता। यज्ञ के विध्वंस के लिए राक्षसों, दैत्यों, असुरों तथा दानवों के रूप में उपद्रव की घटनाएँ सोलहवीं शती के अन्त (अकबरकाल) और सत्रहवीं शती के प्रारम्भ में (जहाँगीर काल) में उक्त ग्रंथ में सम्मिलित कर ली गई। सी०वी०वैद्य भी वर्तमान रासो को अकबरकालीन मानते हैं। रासो

हो चुका था अतः टाड ने इसे विदेशी जातियों का शुद्धिकरण निरूपित किया। इस मत को परवर्ती इतिहासकारों ने भी मान्य किया। टाड का कथन है कि अग्निकुल राजपूतों का रंग-रूप और आकृति पार्थियनों से मिलती-जुलती है और इनके शौर्यपूर्ण कार्य सीथियनों के समान हैं। इनके अतिरिक्त दोनों जातियों की निम्नलिखित साम्यताएं भी विचारणीय हैं – (1) अश्व पूजा, (2) अश्वमेध, (3) अस्त्र पूजा, (4) अस्त्र शिक्षा, (5) सुरापान के प्रति अनुराग, (6) शकुन-विचार, (7) अन्धविश्वास, (8) युद्ध में प्रयुक्त होने वाले रथ, (9) चारण प्रथा, (10) समाज में स्त्रियों का स्थान तथा (11) युद्ध से सम्वन्धित धर्म। पं० ओझा इसका खण्डन करते हुए लिखते हैं कि "राजपूतों के रीति-रिवाज शकों और कुषाणों के आने के पहले भी भारत में प्रचलित थे। सूर्य पूजा वैदिक काल में भी प्रचलित थी। अश्वमेध यज्ञ भी वहुत पहले से ज्ञात था जैसा कि महाकाव्यों के साक्ष्य से प्रमाणित होता है। अश्व पूजा भारत में क्षत्रियों द्वारा हमेशा की जाती थी। राजपूतों के गोत्र और प्रवर भी वे ही हैं, जिनका उल्लेख वैदिक सूत्रों में मिलता है।

कैम्पवेल और जैकसन[6] संभवतः पहले विद्वान हैं, जिन्होंने राजपूतों की उत्पत्ति गुर्जर (गूजर) जाति से वतलाई है। कालान्तर में मजूमदार और भण्डारकर[7] ने इस मत को स्वीकार किया। इन विद्वानों को खजर और गूजर अथवा गुर्जर आदि शव्दों के ध्वनि साम्य बड़े आकर्षक प्रतीत हुए। अतः उन्होंने गुर्जर-प्रतीहार में गुर्जर शव्द जाति वोधक मानकर उन्हें खजरों से मिला दिया।

एक जाति अवश्य 'हूण' है और दूसरी 'वड़गूजर' जिसका उल्लेख चारणों ने छत्तीस कुलों में किया है। कालान्तर में इनके वैवाहिक सम्वन्ध अन्य राजपूतों के साथ भी हुए।

गुर्जर-प्रतीहारों की विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त का जोरदार खण्डन चिन्तामणि विनायक वैद्य और महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा ने किया। उनका कथन है कि व्राह्मणों के सम्पर्क में आने वाली युद्धप्रिय-विदेशी जातियों के द्वारा वैदिक स्वीकार कर लिए जाने पर उन्हें हिन्दू समाज में मिला लिया गया। इसलिए सोलहवीं शताव्दी के अग्निकुल के सिद्धान्तों के आधार पर प्रतीहारों, सोलंकियों, परमारों और चाहमानों को अग्नि संस्कार के पश्चात् हिन्दू समाज में मिलाये जाने का तथ्य प्रामाणिक नहीं ज्ञात होता। वैद्य का कथन है कि "कोई आश्चर्य की वात नहीं कि अग्नि से इन वीर क्षत्रियों की उत्पत्ति वतलाई गई है। क्योंकि सूर्यवंश और चन्द्रवंश को सभी लोग मानते हैं, इसलिए अग्निवंश को स्वीकारने में भी कोई आपत्ति नहीं होना चाहिए। शिलालेखों और साहित्य में परमारों का अग्निकुलीय होना स्वतः प्रमाणित है। यह उत्पत्ति चन्द वरदाई की कपोल-कल्पना मात्र नहीं है। वाल्मीकि रामायण में उल्लेख मिलता है कि जव विश्वामित्र ने वशिष्ठ की कामधेनु का हरण कर लिया तव विश्वामित्र से युद्ध करने के लिए वशिष्ठ ने अनार्य जातियों को अग्नि से पैदा किया। वूंदी के राजकवि सूरजमल ने 'वंश भास्कर' में लिखा है कि सूर्य तथा अग्नि एक ही वस्तु के दो नाम हैं।

"इसके अतिरिक्त चाहमान वीर को कलियुग में होना वताया गया है जवकि म्लेच्छों के

का यही संशोधित, परिवर्द्धित संस्करण टाड को उपलव्ध था। इसी के आधार पर उन्होंने राक्षसों का तादात्म्य व्राह्मणों के प्रति अविनयी सीथियनों से स्थापित किया। टाड की गवेषणाओं के परिणामस्वरूप राजपूतों की सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी उत्पत्ति के सम्वन्ध में विद्वानों में गम्भीर मतभेद है। टाड का यह कथन कि विदेशी सीथियन और उन्हें मानने वाले अग्निवंशी लोग दोनों एक ही जाति के थे। यह मत मान्य नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार दोनों जातियों में पाई जाने वाली आकृति-साम्यता अथवा आदर्शों की एकरूपता राजपूतों को विदेशी सीथियन सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

6. वम्वई गजेटियर, खण्ड 1, भाग 1, परिशिष्ट 3।
7 ज०रा०ए०सो०, वम्वई शाखा, जिल्द 21, पृ० 413 और आगे।

आक्रमण प्रारम्भ हो गये थे। तव क्या चन्दवरदाई का तात्पर्य यह है कि ये क्षत्रिय कुल नवनिर्मित थे ? ऐसा होना संभव प्रतीत नहीं होता, क्योंकि चार में से कम से कम तीन (प्रतीहार, सोलंकी और चाहमान) के अभिलेखों में उन्हें सूर्य और चन्द्र वंशों से सम्वन्धित वताया गया है। मात्र परमार ही अपने शिलालेखों में स्वयं को अग्निकुल में उत्पन्न वताते हैं। ग्वालियर से प्राप्त भोज प्रतीहार के शिलालेख में कन्नौज के प्रतीहारों को राम के प्रतीहार लक्ष्मण के कुल का होना वताया गया है। अतः चन्दवरदाई कुल-परम्परा के विरुद्ध कैसे लिख सकता था ? अग्निकुल वाली वात को समझने में लोगों को भूल हुई है। चन्द ने काव्य में एक काल्पनिक कथा लिखी, जिसे लोगों ने अक्षरशः सत्य मान लिया। प्रतीहार, चालुक्य, परमार, चाहमान आदि जातियाँ म्लेच्छों अर्थात् अरव-तुर्कों से लड़ने के कारण प्रसिद्ध हुई। इसलिए चन्द ने उनका वर्णन करते समय अपने आश्रयदाता चाहमानों को विशेष महत्व दिया है। कवि चन्द ने छत्तीस राजवंशों के वर्णन में उपर्युक्त चार जातियों को सूर्य, चन्द्र अथवा यादव वंशान्तर्गत ही रखा है। चन्द का यह अर्थ कदापि नहीं है कि वशिष्ठ ने इन चार क्षत्रिय-जातियों का नवनिर्माण किया। अग्निकुण्ड की उत्पत्ति से उनका तात्पर्य इतना ही है कि ये चार वीर वशिष्ठ की आज्ञा से युद्ध के निमित्त अग्नि से वाहर आये।''[8]

वि०सं० 872 (815 ई०) से वि०सं० की चौदहवीं शताब्दी तक के प्रतीहारों के जितने भी अभिलेख प्राप्त हुए हैं, उनमें से किसी में भी इन्हें अग्निवंशी नहीं स्वीकार किया गया। भोज की ग्वालियर प्रशस्ति में उन्हें सूर्य वंशी वताया गया है –

मन्विक्ष्वाककुस्थ (त्स्थ) मूल पृथवः स्मापालकल्पद्रुमाः
तेषां वंशे सुजन्मा क्रमनिहतपदे धाम्नि वजेपु घोरं,
रामः पौलस्त्यहिन्स्र (हिस्रं) ज्ञत विहित समिन्कर्म्मचकपालशेः ।
श्लाध्यस्त्त हयानुजोसो मघव मद मुपोमेघनादस्य संख्ये
सौमित्रिस्तीव्रदण्डः प्रतिहरण विधेर्य प्रतीहार आसीत् ।।2।।

इसी प्रकार चाहमानों के अनेक अभिलेख, दानपत्र तथा ऐतिहासिक संस्कृत ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। इनमें से किसी में भी इनको अग्निवंशी नहीं वताया गया। पृथ्वीराज विजय[9] और हम्मीर महाकाव्य[10] में अनेक वार उनको सूर्यवंशी लिखा गया है। हरकेलिनाटक और ललितविग्रहराज नाटक में भी चाहमानों को सूर्यवंशी कहा गया है।[11]

मालवा के परमार राजा मुंज के दरवारी पंडित हलायुध ने पिंगलसूत्रवृत्ति में मुंज को व्रह्मक्षत्र कुल का कहा है।[12] प्राचीनकाल में व्रह्मक्षत्र शव्द का प्रयोग ऐसे राजवंशों के लिए होता था,

---

8. वैद्य, हिस्ट्री ऑफ मेडिकल हिन्दू इण्डिया, जिल्द 2,

रवि ससि जाधव वंस। ककुस्थ परमार सदावर।।
चाहुवान-चालुक्य। छंदक सिला अभी आ।।
दोयमन्त (दोयमत्) मकरान। गुरुअ गेहिल गोहिल पुत्ता।।
चमोत्कट परिहार। राव राठोर रोस जुत।।
देवरा टांक सैंधव अनिक। यौतिक प्रतिहार दधिपट।।
धन्यपालके निकुंभ वर। राजपाल कविनीस।।
कालच्छर कै आदि दे। वरने वंस छत्तीस

पृथ्वीराज रासो,..........

9. सुतोप्यपरगांगेयो निन्येस्य रविसनुना। उन्नतिं रविवंशस्य पृथ्वीराजेन पश्यता ।।8.54
10. हम्मीरमहाकाव्य, सर्ग 1.
11. देवो रवि पातु व ।।33।।
12. व्रह्मक्षत्रकुलीनः प्रलीनसामन्तचक्रनुतचरणः । सकल सुकृतैकपुंज श्रीमान्मुंजश्चिर जयति ।।

जिनमें ब्रह्मत्व तथा क्षत्रियत्व दोनों गुण विद्यमान हों।[13] कालान्तर में परमारों के मूलपुरुष की उत्पत्ति आबू पर्वत के यज्ञकुण्ड से बताई जाने लगी। इसीलिए अभिलेखों में उनके मूल पुरुष को धूमराज अर्थात् धुआं (अग्नि) से उत्पन्न कहा गया है।[14] इस प्रकार प्रतीहार, चाहमान, सोलंकी और परमार सोलहवीं शताब्दी तक स्वयं को अग्निवंशी नहीं मानते थे। किन्तु पृथ्वीराजरासो की रचना के बाद वे अपने को अग्निवंशी कहने लगे।

पुराणों, अनुश्रुतियों तथा अभिलेखों से ज्ञात होता है कि ब्राह्मणों के एक वर्ग ने क्षात्रधर्म स्वीकार कर लिया गया।[15] डा० दशरथ शर्मा[16] का मत है कि प्राचीन काल में व्यवसाय के परिवर्तन से वर्ण का भी परिवर्त्तन हो जाता था। इसलिए क्षत्रिय वर्ण में सम्मिलित होने में ब्राह्मणों के लिए कोई बाधा उत्पन्न नहीं हुई। अग्निवंशियों में चौहानों तथा परमारों के अभिलेखों से विदित होता है कि ये लोग ब्राह्मण मूल पुरुषों से उत्पन्न हैं। अग्निवंशियों के अतिरिक्त मध्यकाल के राजपूत शिरोमणि मेवाड़ के गुहिलवंशी भी ब्राह्मणों की सन्तान हैं। उन्होंने क्षात्रधर्म अपना लिया था। इस सम्बन्ध में मण्डोर के प्रतीहारों के भी दो अभिलेख[17] प्राप्त हुए हैं। इसप्रकार के वर्ण परिवर्तन हिन्दू परम्परा और शास्त्र सम्मत माने गये हैं। मारवाड़ से ही कन्नौज पहुँचकर वहाँ अपना प्रभुत्व स्थापित करने वाले प्रतीहारवंशी राजाओं में से राजा महेन्द्रपाल के ब्राह्मण गुरु राजशेखर की विदुषी पत्नी अवन्तिसुन्दरी चौहान वंश की थी।

पृथ्वीराजरासो में चन्दवरदाई द्वारा चाहमानों, परमारों, चालुक्यों और प्रतीहारों को आबू पर्वत के यज्ञकुण्ड से उत्पन्न बताने का मुख्य कारण यह है कि उन्होंने ही पहले अरबों से और बाद में तुर्कों से चार सौ वर्षों तक लोहा लिया। पश्चिमी भारत के चारणों ने इस संघर्ष को स्मरण रखा। इसलिए कालान्तर में सोलहवीं शताब्दी में **पृथ्वीराजरासो** में यह अनुश्रुति सम्मिलित कर दी गई।

विदेशियों का भारतीय समाज में समावेश होना कोई नई बात नहीं है। जिस प्रकार शक, यवन, पह्लव तथा कुषाण हिन्दू समाज में विलीन हो गये, उसी प्रकार हूण और गुर्जर भी उनमें मिल गये। इन नवदीक्षित हिन्दुओं की सामाजिक स्थिति उनके व्यवसाय द्वारा निश्चित की गई। जिन लोगों ने अपने स्वतंत्र राज्य स्थापित कर शासन करना प्रारम्भ कर दिया वे राजपूत कहलाने लगे। इस प्रकार नये उत्पन्न वंशों का सम्बन्ध ब्राह्मणों तथा चारणों ने प्राचीन क्षत्रियों से जोड़ दिया। धीरे-धीरे इनमें सादृश्य और समानता आती गई। इस सन्दर्भ में यह तथ्य भी विचारणीय है कि यदि भारत का सम्पूर्ण क्षत्रिय वर्ण विदेशी है, तब यहाँ की प्राचीन क्षत्रिय जाति का क्या हुआ ? राजपूतों का अरबों और तुर्कों से किया गया संघर्ष किसी से छिपा नहीं है। **रामायण** और महाभारत में क्षत्रियों ने नैतिक आचरण का जो ऊँचा मानदण्ड निर्धारित किया गया था, उसका पालन इस वीर जाति ने सदैव किया। आज भी क्षत्रियों के परिवारों में कुछ ऐसे ही रीति-रिवाज प्रचलित हैं।

---

13. तस्मिन् सेनान्वये प्रतिसुभटशतोत्सादनब्र (ब्र) ह्मवादी ।।
    स ब्र (ब्र) [illegible] क्षत्रियाणामजनि कुलशिरोदाम सामन्तसेनः ।। एपि०इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 307.
14. श्रीधूमराजः प्रथमं वभूव भूवासवस्तत्र नरेन्द्रवंशे ।।33।।
    आबू के तेजपाल मंदिर के वि०सं० 1287 के लेख से।
    अआनीतधेन्वे परनिर्जयेन मुनिः स्वगोत्र परमारजातिम्।
    तस्मै तदायुन्द्धत भूरिभाग्यं तं धीमराजं घ चकार नाम्ना।।
    पाटनारायण के मंदिर की वि०स० 1344 की प्रशस्ति।
15. चाउहाणकुलमौलिआलिआ राअसेहरकिंदगोहिणी ।
    भतुणो किदिमवंति सुंदरी सा पउंजिदुमेदमिच्छदि ।। कर्पूरमंजरी 1.11
16. राजस्थान थ्रू द एजेज , पृ० 105
17. कक्कुक का घटियाला अभिलेख, ज०रा०ए०सो०, 1985, पृ० 516-18; बाउक का जोधपुर अभिलेख, वही, 1898, पृ० 4-9; एपि०इण्डि०, खण्ड 9, पृ० 279-80.

गुर्जर-प्रतीहारों का मूलस्थान

प्रतीहारों का मूलप्रदेश उज्जयिनी-मालवा नहीं, अपितु अर्बुदगिरि (आबू पर्वत) सहित भिल्लमाल-जालौर का प्रदेश था। ह्वेनसांग के भारत-भ्रमण करने से पहले ही यह क्षेत्र 'गुर्जर' नाम से प्रसिद्ध हो गया था। प्रतीहार सत्ता का प्रारम्भ मण्डौर-मेड़ता से हुआ, जो उन दिनों 'मरु-मांड' कहलाता था। जब प्रतीहारों की एक शाखा मण्डौर से जालौर आई तब प्रतीहारों को उनके समकालीन लोग गुर्जर कहने लगे और यही लोग जब स्थानान्तरित होकर कन्नौज आये तब गुर्जर-प्रतीहार नाम से विख्यात हुए। साम्राज्य की अवनतिकाल में अन्हिलवाड़ापट्टन के चालुक्यों ने स्वतंत्र राज्य स्थापित कर गुर्जर देश या गुजरत्रा का स्वामित्व ग्रहण किया। तभी से गुर्जर नाम उनके लिए प्रयुक्त होने लगा। तुर्कों द्वारा चालुक्यों की सत्ता समाप्त कर दिये जाने पर दिल्ली सुलतानों के प्रतिनिधि भी गुर्जर कहलाने लगे। कहने का तात्पर्य यह कि प्रतीहार, चालुक्य और तुर्कों के साथ गुर्जर शब्द जुड़ने का कारण उनका गुर्जर नामक प्रदेश पर शासन करना था। गुर्जर क्षत्रियों के अतिरिक्त गुर्जर ब्राह्मणों और गुर्जर वैश्यों के उदाहरण क्रमशः स्कन्दपुराण तथा अभिलेखों में मिलते हैं।[18]

बड़गूजर

गुर्जर (गूजर) जाति का उल्लेख न तो साहित्य में मिलता है और न ही उनकी गणना 36 राजपूत कुलों में की गई है। *किन्तु बड़गूजर जाति को 36 कुलों में गिना गया है। बड़गूजर स्वयं* को सूर्यवंशी बताते हैं तथा अन्य राजपूत वंशों में अपने विवाह करते हैं। इनके बड़े-बड़े इलाके जयपुर राज्य में स्थित हैं। वहाँ से कछवाहों द्वारा निकाले जाने पर उन्होंने अपना ठिकाना गंगा नदी के किनारे अनूपशहर में स्थापित किया। वे भूतपूर्व अलवर राज्य में माचेड़ी क्षेत्र के शासक थे। उनकी राजधानी राजोरगढ़ थी। वि०सं० 1016 (960 ई०) के राजोरगढ़ अभिलेख से ज्ञात होता है कि राज्यपुर (राजोरगढ़) पर परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर क्षितिपालदेव के सामंत सावट के पुत्र प्रतीहारगोत्रीय गुर्जरराजा महाराजाधिराज परमेश्वर मथनदेव का राज्य था। सबसे पहले बड़गूजर नाम का उल्लेख वि०सं० 1439/1382 ई० के एक अभिलेख में मिलता है। इस समय महाराजाधिराज गोगदेव बड़गूजर सुल्तान फिरोजशाह तुगलक का सामन्त था।[19] बड़गूजर लोग दिल्ली सुल्तान बहलोल लोदी के समय तक इस क्षेत्र पर शासन करते रहे। संभव है कि गोगदेव और उसकी सन्तान, सावट तथा मथनदेव के ही वंशज हों। डॉ० हल्दर[20] का मत है कि मथनदेव के अभिलेख में गुर्जर प्रतीहार का अर्थ 'गुर्जर जाति का प्रतीहार वंश' न कर 'गुर्जरदेश का प्रतीहार कुल' करना अधिक उपयुक्त होगा। उनका[21] यह भी अनुमान है कि मथनदेव का पिता सावट गुर्जर जाति का था और उसकी माता प्रतीहार कुल की थी। इस कथन में सत्यता प्रतीत होती है। ह्रासोन्मुखी प्रतीहार वंश की कोई राजकुमारी गूजर सामन्तों के यहाँ ब्याही गई हो, जिसकी सन्तान बड़गूजर कहलाई।

गूजरकुल

अधिकांश राजपूत कुल गुर्जरों (गूजरों) की सन्तान हैं। बाम्बे गजेटियर में कहा गया है

---

18. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का भी कथन है कि प्रतीहार शब्द जाति का सूचक नहीं अपितु पद का सूचक है। अभिलेखों में ब्राह्मण प्रतीहार, क्षत्रिय प्रतीहार और गुर्जर (गूजर-प्रतीहारों) का उल्लेख मिलता है। आधुनिक विद्वानों ने प्रतीहारों को गूजर मान लिया है, जो उनका भ्रम है। राजपूताने का इतिहास, खण्ड 1, पृ० 147
19. राजस्थान का इतिहास, खण्ड 1, पृ० 133-36.
20. इण्डि० एण्टि०, खण्ड 57, पृ० 181 तथा आगे।
21. वही.

कि गुर्जर 'खजर' का भारतीय रूपान्तर मात्र है। खजर कवीला श्वेत हूणों के साथ मध्य एशिया से चलता हुआ भारत आया। कैम्पवेल और वागची का भी ऐसा ही कथन है। किन्तु उपर्युक्त लेखकों के पास इस तथ्य का कोई प्रभाव नहीं है कि राजपूतों का सम्वन्ध गूजरों से है और गूजर तथा खजर एक ही कवीले हैं। केवल गूजर तथा खजर शव्द साम्य के आधार पर इन विद्वानों का कथन सत्य नहीं माना जा सकता। डा० वैजनाथपुरी[22] का कथन है कि अभिलेखों, साहित्य, विदेशी यात्रा-वृत्तान्तों तथा नृविज्ञान और भाषा विज्ञान के आधार पर गुर्जर भारतीय ठहरते हैं। उनके आवू क्षेत्र में रहने के कारण उक्त भूभाग गुर्जरत्रा (गुजरात) नाम से प्रसिद्ध हो गया। कनिंघम[23] ने गुर्जरों का अभिज्ञान यूह-ची कुषाणों से, स्मिथ ने हूणों से और कैम्पवेल तथा भण्डारकर ने खजरों से किया है। किन्त उपर्युक्त सभी मतों का खण्डन वहुत पहले ही ओझा कर चुके हैं। ओझा के वाद अधिक पुष्ट आधारों पर डा० दशरथ शर्मा[24] ने भण्डारकर, जैक्सन और मजूमदार की इस धारणा का कि प्रतीहार और चालुक्य गूजर कवीले से सम्वन्धित हैं, खण्डन कर दिया है।

प्रतीहारों की उपाधि गुर्जर

कन्नौज के प्रतीहार सम्राटों, समकालिक राष्ट्रकूटों, विहार और वंगाल के पाल शासकों के लिए अरव लेखकों ने 'गुर्जर' एवं 'गुर्जरेश्वर' के विरुद प्रयुक्त किये हैं।[25] किन्तु प्रश्न यह है कि गुर्जर शव्द जाति सूचक है या देश सूचक। चीनी यात्री ह्वेनसांग (629-645 ई०) 'किउ-चेलो' (गुर्जर) नामक एक देश का उल्लेख करता है। इसकी राजधानी 'पिलो-मिलो' (भिल्लमाल, भीनमाल आधुनिक श्रीमाल) थी और यहां का राजा वड़ा धर्मात्मा था।[26] वाणभट्ट[27] ने हर्षचरित में प्रभाकरवर्द्धन की दिग्विजय के सम्वन्ध में उसको गुर्जरों की नींद उड़ानेवाला कहा है। हूणों तथा अन्य उत्तर-पश्चिमी नरेशों का उल्लेख अलग से किया गया है। ऐहोल शिलालेख[28] में लाट-मालव और गुर्जरों को पुलकेशी द्वितीय के अधीनस्थ शासक वताया गया है। नवसारी ताम्रपत्र (लगभग 738 ई०) में लाट देश के पुलकेशी को सैन्धव, कच्छेल, सौराष्ट्र, चावोटक, मौर्य, गुर्जरादिराज को नष्ट करने वाला अंकित किया गया है। क्योंकि सिन्ध के सेनापति जुनैद को अरव लेखकों ने 'भीनमाल तथा जुर्ज' का विजेता लिखा है, अतः इससे स्पष्ट होता है कि जुर्ज (गुर्जर) वही क्षेत्र है जिसको गुर्जरत्रा और गुर्जर भूमि आदि कहा गया है। अरवी भाषा में 'गकार' न होने के कारण ही 'जकार' का प्रयोग करके 'जुर्ज' लिखा गया है। इसी प्रकार अरवी में भकार का अभाव होने से 'वकार' का प्रयोग किया जाता है। इसलिए भिल्लमाल या भीनमाल को अंग्रेजी में Bailman पढ़ा गया है जिससे वल्लमण्डल (जैसलमेर) का भ्रम होना स्वाभाविक है।[29] दसवीं शती ई० के ग्रंथ यशस्तिलक चम्पू में सैनिकों की नाक-नक्श, वेशभूषा सहित अनेक देशों की सेनाओं के साथ गुर्जर सेना का भी उल्लेख मिलता है। स्कन्दपुराण के अतिरिक्त कृष्णदेव यादव के 1250 ई० के एक अभिलेख[30] में 'गुर्जर व्राह्मण' का उल्लेख मिलता है। यह शव्द भी देशसूचक है न कि जाति सूचक।

---

22. गुर्जर प्रतीहाराज, पृ० 1-18.
23. वही
24. राजस्थान थ्रू दि एजेज , पृ० 108-19.
25 प्रो० इं०हि०कौ०, 1957, 123-32; ज०इं०हि०, 1961, पृ० 89-104, इं०हि०का०, खण्ड 13, पृ० 137-66
26 वील, खण्ड 1, पृ० 165
27 हर्षचरित (कावेल और टामस), पृ० 101.
28 एपि० इण्डि०, खण्ड 6, पृ० 1 तथा आगे।
29. डा० दशरथ शर्मा, राजस्थान थ्रू दि एजेज, खण्ड 1, पृ० 3.
30. एपि०इण्डि०, खण्ड, 27, पृ० 209 तथा आगे।

प्रतीहारों के पतन के पश्चात् गुर्जर देश में जव चालुक्य शक्तिमान हुए तव यही गुर्जर शव्द उनके लिए अगली तीन शताव्दियों तक प्रयुक्त होता रहा। चालुक्यों से पहले चावड़ा और वाद में तुर्क शासकों के लिए भी समकालीन लेखकों ने गुर्जर शव्द का प्रयोग भौगोलिक अर्थ में उसीप्रकार किया गया है जिस प्रकार गौड़ देश के पालों के लिए गौड़, चेदि या डाहल के कलचुरियों के लिए चेदि अथवा डाहलेश्वर, महाराष्ट्र के राष्ट्रकूटों के लिए कर्णाट और दक्षिण के पल्लवों के लिए द्रविण शव्द का। उत्तर प्रतीहारकाल में गुर्जर शव्द पुनः प्राचीन गुर्जर के भौमिक अर्थ में प्रयोग होने लगा। डा० दशरथ शर्मा[31] ने तत्कालीन साहित्य के आधार पर स्पष्ट किया है कि सातवीं शती से लेकर चौदहवीं शताव्दी तक गुर्जर तथा गुर्जरत्रा, गुर्जरराष्ट्र, गुर्जरभूमि, गुर्जरदेश, गुर्जर मण्डल इत्यादि का प्रयोग देश के रूप में तथा गुर्जर, गुर्जरेश, गुर्जरपति, गुर्ज्जराधिपति, गुर्ज्जराधरा, गर्जरराज, गुर्जरेश्वर, गुर्जरेन्द्र प्रभृति शव्द शासकों के लिए प्रयुक्त किये गये हैं। गुर्जर वालों के लिए गुर्जरलोक भी मिलता है और एक टीका में 'गुर्जर' का अर्थ गुर्जर नामक देश में जन्म लेने वाला किया गया है।[32] गुर्जर की सीमा पर स्थित अणहिलपाटक (अणहिलवाडापाटन) को गुर्जरपुर और गुर्जरनगर कहा गया है। शनैः-शनैः गुर्जर शव्द चालुक्यों द्वारा शासित समूचे भूभाग के लिए प्रयुक्त होने लगा। प्राकृत में उसी को गुजरात कहा जाने लगा। यह भौगोलिक संज्ञा अव तक प्रचलित है। इसका कारण यही है कि चालुक्य (सौलंकी) उस पुर या नगर (अणहिलवाड़) से शासन करते थे जो 'गुर्जरराष्ट्र' की सीमा पर स्थित था और जिसके अन्तर्गत गुर्जरदेश सम्मिलित था। डा० वैजनाथ पुरी[33] का कथन सत्य प्रतीत होता है कि गुर्जरों का सम्पर्क प्राचीनकाल से अर्वुदगिरि (आवू पर्वत) से रहा है, और आवू क्षेत्र के गुर्जर जनपद में भिल्लमाल (भीलमाल) तथा जालोर समय-समय पर राजधानियाँ रहीं। दसवीं शताव्दी में आवू क्षेत्र पर परमारों का राज्य स्थापित हो गया था। परमार, गुजरात के चालुक्य-सौलंकी शासकों के करद थे। गुर्जरेश्वर की पदवी अन्हिलवाड़ा के शासक धारण करने लगे थे। देवड़े चौहानों ने जव परमारों से 1311 ई० के आस-पास आवू क्षेत्र जीत लिया तव गुर्जर शव्द देश और जातिसूचक तो वना रहा (यथा गुर्जर व्राह्मण) किन्तु माण्डलिक राजाओं को गुर्जर उपाधि से उल्लिखि.। नहीं किया गया। तो भी, गुजरात के तुर्क माण्डलिकों तथा सुलतानों के लिए यह उपाधि जैनसाहित्य में प्रयुक्त होती रही।

मण्डोर के प्रतीहार

मण्डोर के प्रतीहारों का इतिहास वाउक के जोधपुर अभिलेख[34] और कक्कुक के घटियाला अभिलेख[35] पर आधारित है। वाउक और कक्कुक दोनों सौतेले भाई थे और दोनों ने क्रमशः शासन किया – पहले वाउक ने और फिर कक्कुक ने। जोधपुर अभिलेख[36] से ज्ञात होता है –

स्व-भ्राता रामभद्रस्य प्रातिहारायं कृतं यतः ।
श्री प्रतिहार-वंशोयं - अतश्चोन्नतिम आप्नुयात ।।4।।
विप्रः श्रीहरिचन्द्राख्य पत्नी भद्रा च क्षत्रिया ।
ताभ्यां तु ये सुता जाता प्रतिहारांश्चा तान विन्दु ।।5।।
वभूव रोहिल्लध्यंको वेद-शास्त्रार्थ पारग ।
द्विज श्री हरिचन्द्राख्य प्रजापति - समो गुरुः ।।6।।

---

31. राजस्थान थ्रू दि एजेज खण्ड 1, पृ० 108-9; 118.
32. हेमचन्द्र के द्वयाश्रय महाकाव्य की टीका अभयतिलक मणि VI, 6.
33. हिस्ट्री ऑफ गुर्जर प्रतीहाराज, पृ० 7
34. ज०रा०ए०सो०, 1894, पृ० 4-9
35. वही, 1895, पृ० 516-18; एपि०इण्डि० , खण्ड 9, पृ० 279-80
36. ज०रा०ए०सो०, 1894, पृ० 4-9

तेन श्री हरिचन्द्रेण परिणीता द्विजात्मजा ।
द्वितीया क्षत्रिया भद्रा महाकुल गुणान्विता ।।7।।
प्रतिहारा द्विजा भूवा ब्राह्मण्यांये भवन सुताः ।
रजनी भद्रा च यान सुते ते भुता मधु पायिनः ।।8।।

रामभद्र (रामचन्द्र) के अनुज (लक्ष्मण) ने ही प्रतीहार का कार्य किया था। इसीलिए यह वंश प्रतीहार नाम से विख्यात हुआ। यही तथ्य कक्कुक के घटियाला अभिलेख[37] में भी दोहराया गया है। उपर्युक्त दोनों अभिलेखों में प्रतीहार वंश के आद्य पुरुष हरिचन्द्र को विप्र कहा गया है। क्षत्रिय राजा हरिचन्द्र के लिए 'विप्र' शब्द का उपयोग उल्लेखनीय है। बृहदोरण्यकोपनिषद[38] के अनुसार सबसे पहले क्षत्रिय हुए और उनके बाद अन्य वर्णों का जन्म हुआ। इसी प्रकार वज्रसूचिकोपनिषद[39] में निम्नांकित श्लोक मिलता है –

जन्मना जायते शूद्र संस्काराद्विज उच्यते ।
वेदपाठ वदेः विप्रः ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः ।।

अर्थात् व्यक्ति जन्म से 'शूद्र', संस्कार से 'द्विज', वेद का ज्ञाता 'विप्र' और ब्रह्म को जानने वाला ब्राह्मण कहा जाता है। जन्म से सभी शूद्र होते हैं, उनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जातियों का उपनयन होता है। इससे उन्हें द्विज कहा जाता है। याज्ञवल्क्यस्मृति[40] में कहा गया है कि जन्म के बाद मौञ्जिबंधन संस्कार होने के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ये तीनों वर्ण द्विज कहलाते हैं। इसी प्रकार वेदों का जानने वाला 'विप्र' कहलाता है। डा० बैजनाथ पुरी ने हरिचन्द्र को प्रतीहार तो लिखा है, किन्तु उसके लिए प्रयुक्त द्विज और विप्र शब्दों की व्याख्या नहीं की।

विप्र हरिचन्द्र वेदशास्त्र पारंगत और प्रतीहार वंश का गुरु अर्थात् पूर्वज था। कवि राजशेखर महेन्द्रपाल[41] को 'रघुकुलतिलक' और 'रघुग्रामणी' तथा महीपाल[42] को 'रघुवंशमुक्तामणि' जैसे विशेषण देता है। श्री ए०के०व्यास[43] का कथन है कि 'विप्र' शब्द क्षत्रिय राजाओं के लिए ऋषि अर्थ में प्रयोग किया गया है। यहां भी विप्र हरिचन्द्र को वेद और शास्त्र में निष्णात बताकर उसे प्रतीहार वंश का गुरु अर्थात् पूर्वज कहा गया है और प्रजापति (ब्रह्मा) से उसकी उपमा दी गई है। डा० बी०एन०पुरी[44] का कथन है कि "यह स्पष्ट है कि हरिचन्द्र भी प्रतीहार था, किन्तु

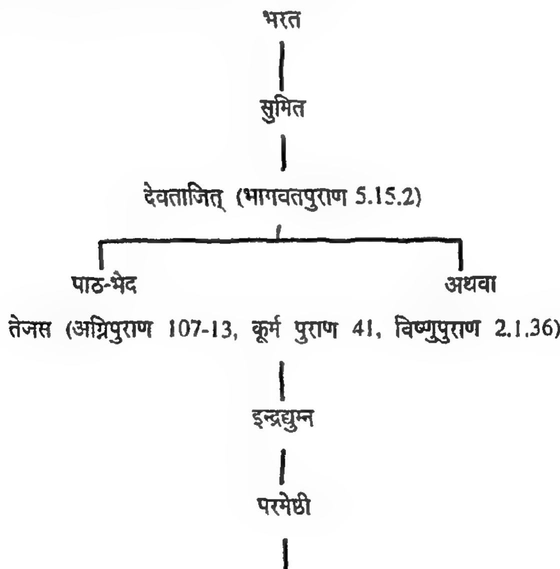
---

37. वही, 1895, पृ० 516.
38. 1.4.11 "ब्रह्म वा इदमग्र असीद एकमेव तदेकं सन्नव्य भवत तचछ्रयोरूपमत्य सृजन क्षत्रम्।"
39. संस्कृत में वज्रसूची नाम की एक छोटी पुस्तक है। इसे वज्रसूचिकोपनिषद भी कहते हैं। 1829 ई० में श्री हडसन को यह पुस्तक नेपाल में मिली थी। वहाँ उन्हें यह बताया गया था कि यह अश्वघोष की रचना है। अश्वघोष का समय ईसा की प्रथम शती माना जाता है। 1710 ई० में लिखी गई इसकी एक प्रतिलिपि नासिक से भी मिली थी। वहाँ के पंडितों ने बताया था कि इसकी रचना शंकराचार्य ने की है। 973-81 ई० के मध्य इस पुस्तक का चीन देश में चीनी अनुवाद किया गया था। चीन में इसे धर्मकीर्त्ति की रचना माना जाता है। इस पुस्तक में जातिप्रथा का खण्डन बड़ी ही युक्तपूर्वक किया गया है।
40. मतुर्यदग्रे जायन्ते द्वतीय मौञ्जीवन्धनात। ब्राह्मणः क्षत्रियः विशस्तस्मादेतेद्विजः स्मृताः।। आचाराध्याय, श्लो० 39 तुलना कीजिए – द्विजात्यग्रजन्म भूदेव वाडवाः। विप्रश्चब्राह्मणोऽसौषटकर्माया गादिभिवृत्ति।। अमरकोष, ब्रह्मधर्मकाण्ड
41. विद्धसालभंजिका, प्रथम श्लोक 6, बालभारत, प्रथम श्लोक 11.
42. बालभारत, प्रथम श्लोक 7, "देवायस्य महेन्द्रपाल नृपति शिष्यो रघुकुलग्रामणि। तेन महीपाल देवेन च रघुवंशमुक्तामणिना ।। "
43. एपि०इण्डि०, खण्ड 26, पृ० 89-90.
44. It is clear that Harichandra was also a Pratihara, who had no pretention for kinship, but his sons from his kshatriya wife Bhadra could not ckeck

राजा न था। उसकी क्षत्राणी स्त्री भद्रा से उत्पन्न पुत्र शासक बनने की महत्वाकांक्षा को न रोक सके। भोगभट, कक्क, रज्जिल और दद्दनामी नामक इन क्षत्रिय कुमारों ने माण्डव्यपुर (मण्डोर) का दुर्ग जीतकर उसकी प्राचीरों को ऊँचा किया। घटियाला अभिलेख से ज्ञात होता है कि प्रतीहार वंश की परम्परा तीसरे भाई रज्जिल से प्रारम्भ हुई। इस प्रकार प्रतीहार सत्ता का प्रारम्भ मण्डोर-मेड़ता[45] से हुआ। पूर्व मध्यकाल **में इसे मरु-माण्ड कहा** जाता था।

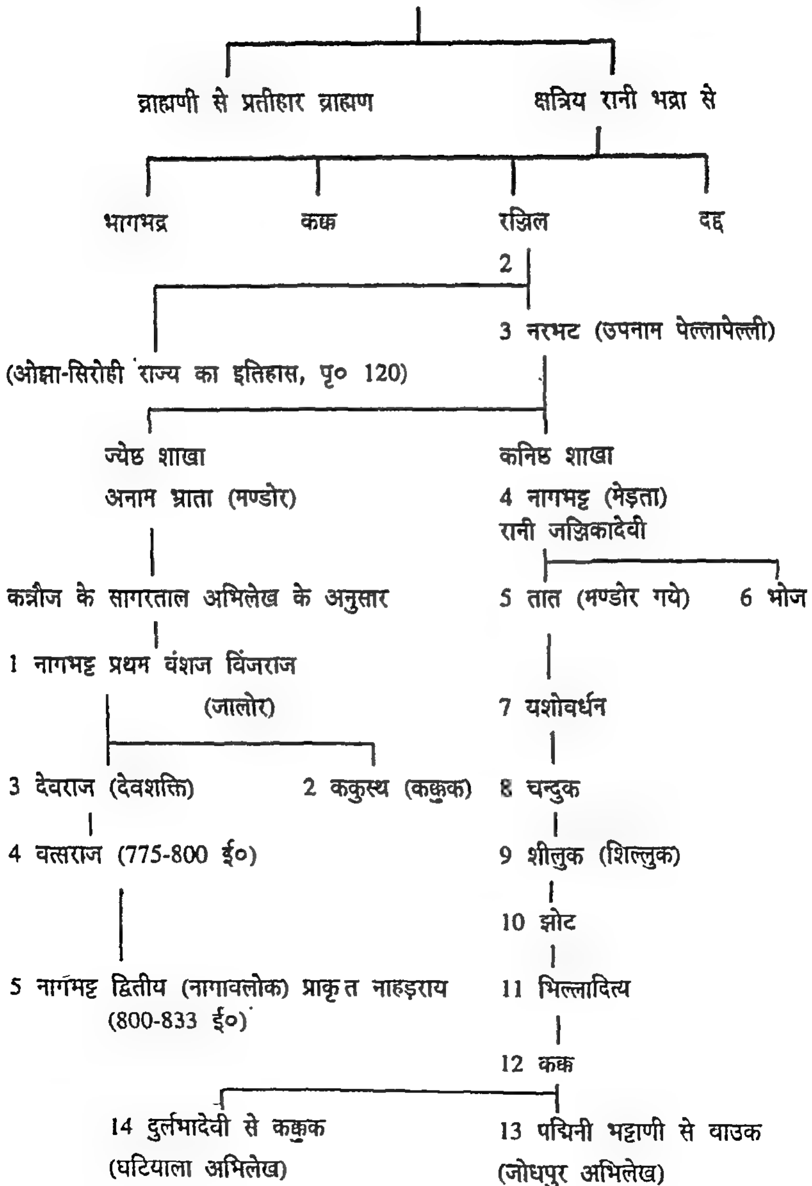
रज्जिल का पुत्र नरभट हुआ। अत्यधिक वीर होने के कारण उसे पेल्लापेल्लि कहा जाता था। रज्जिल के पौत्र नागभट उपनाम नाहड़राव की रानी जज्जिकादेवी से उसके दो पुत्र तात और भोज हुए। उन्होंने मण्डोर से 90 कि०मी० उत्तर-पूर्व में स्थित मेड़ता (मेदन्तकपुर) में अपनी राजधानी स्थापित की। पं० ओझा[46] का मत है कि अभिलेखों में मिलने वाली वंशावली उपरिवर्णित कनिष्ठ शाखा की है। मण्डोर में शासन करने वाली ज्येष्ठ शाखा की वंशावली उपलब्ध नहीं है। इसी मण्डोर की मूल शाखा का नागभट्ट जिसे जैन साहित्य में विजंराज कहा गया है, जालोर (भिनमाल-गुर्जरत्रा) आया।[47] नागभट्ट के बाद की वंशावली कन्नौज-सम्राट भोज प्रथम के ग्वालियर सागरताल अभिलेख से ज्ञात होती है। मण्डोर तथा जालोर की वंशावलियों का मिलान करने से बनने वाली नामावली इस प्रकार है –

पुराणों[48] में भी प्रतीहार कुल अथवा प्रतिहारान्वय (प्रतीहार वंश) का उल्लेख मिलता है। इस प्रतीहार वंश में निम्नांकित शासक बताये गये हैं –



their veneer for power. The four sons conquered the fort of Mandavyapura by their own arms, and erected a high rampart (which was) calculated to *increase the fear of the enemies.* **History of Gurjara- Pratihiras, p. 20.**

45. मण्डोर के भग्नावशेष राजस्थान के जोधपुर जिला मुख्यालय से छह कि०मी० की दूरी पर विद्यमान हैं।
46. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ० 120.
47. विश्वेश्वरानन्द इण्डोलाजिकल जर्नल, खण्ड 2, पृ० 386.
48. वायुपुराण, 33-35.


प्रतीहार
विप्र हरिचन्द वेद-शास्त्री (उपनाम रोहिल्लद्धि - योगी)
ब्राह्मणी से प्रतीहार ब्राह्मण
क्षत्रिय रानी भद्रा से
भागभद्र
कक्क
रज्जिल
दद्द
2
3 नरभट (उपनाम पेल्लापेल्ली)
(ओझा-सिरोही राज्य का इतिहास, पृ० 120)
ज्येष्ठ शाखा
अनाम भ्राता (मण्डोर)
कनिष्ठ शाखा
4 नागभट्ट (मेड़ता)
रानी जज्जिकादेवी
कन्नौज के सागरताल अभिलेख के अनुसार
5 तात (मण्डोर गये)
6 भोज
1 नागभट्ट प्रथम वंशज विंजराज
(जालोर)
7 यशोवर्धन
3 देवराज (देवशक्ति)
2 ककुस्थ (कक्कुक)
8 चन्दुक
4 वत्सराज (775-800 ई०)
9 शीलुक (शिल्लुक)
10 झोट
5 नागभट्ट द्वितीय (नागावलोक) प्राकृत नाहड़राय
(800-833 ई०)
11 भिल्लादित्य
12 कक्क
14 दुर्लभादेवी से कक्कुक
(घटियाला अभिलेख)
13 पद्मिनी भट्टाणी से वाउक
(जोधपुर अभिलेख)

भोज की मृत्यु के बाद उसका पुत्र चंदुक शासक हुआ। उसके शासनकाल की कोई घटना ज्ञात नहीं है। चंदुक की मृत्यु के बाद उसका पुत्र शीलुक राजा हुआ। उसने त्रवणी और वल्ल देशों को जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया और वल्ल मंडल के स्वामी भट्टिक (भाटी) देवराज को पराजित कर उसका छत्र छीन लिया।[49] शीलुक मृत्यु के बाद उसका पुत्र झोट शासक हुआ। उसने राज्य सुख भोगने के बाद गंगा नदी में मुक्ति लाभ किया। तत्पश्चात् उसका पुत्र भिल्लादित्य शासक हुआ। उसने अपने यौवनकाल में राज्य करते हुए संन्यास ले लिया। वह हरिद्वार चला गया जहाँ अठारह वर्ष तक जीवित रहा। अन्त में व्रत-उपवास करते हुए उसने अपना शरीर त्याग दिया।

कक्क रघुवंशी प्रतीहार जालोर (गुर्जरत्रा) के शासक नागभट्ट द्वितीय का सामन्त था। प्रतीहार बाउक के जोधपुर अभिलेख से ज्ञात होता है कि नागभट्ट द्वितीय ने बंगाल के पाल शासक को मुद्गगिरि (मुंगेर) के युद्ध में पराजित किया। इसी युद्ध में कक्क ने नागभट्ट के सामन्त की हैसियत से भाग लिया और गौड़ों के विरुद्ध लड़कर यश प्राप्त किया।[50] कक्क व्याकरण, ज्योतिष, तर्क और सभी भाषाओं के कवित्व में दक्ष था। उसकी भाटी वंश की रानी पद्मिनी से बाउक और दूसरी रानी दुर्लभादेवी से कक्कुक का जन्म हुआ।

कक्क का उत्तराधिकारी बाउक हुआ। उसकी प्रशंसा करते हुए जोधपुर प्रशस्ति में लिखा गया है कि जब नंदावल्ल को मारकर शत्रुसेना आगे बढ़ आई और स्वजनों ने साथ छोड़ दिया तब राणा बाउक ने घोड़े से उतरकर तलवार द्वारा अपने शत्रु राजा मयूर को मार गिराया।[51]

बाउक की मृत्यु के पश्चात् उसका सौतेला भाई कक्कुक राजसिंहासन का अधिकारी हुआ। उसने मरु, माड, वल्ल, तमणी (त्रवणी) अज्ञ (आर्य) एवं गुर्जरत्रा के लोगों का अनुराग प्राप्त किया। उसने वडणाणय मंडल के पर्वतवासी आदिवासियों के ग्रामों का विध्वंस किया; रोहिन्सकूप के समीप हाट-बाजार बनवाकर व्यापारियों को बसाया तथा मण्डोर और रोहिन्सकूप में जयस्तम्भ स्थापित किये। वह न्यायी, प्रजापालक, विद्वान तथा संस्कृत का लोक-विश्रुत कवि था। घटियाला शिलालेख के निम्नांकित श्लोक की रचना उसी ने की थी –

यौवन विविधैर्भोगैर्म्मध्यमं च वयः श्रिया ।
वृद्धभावश्च धर्म्मेण यस्य याति स पुण्यवान् ।।
अयं श्लोकः श्रीकक्कुकेन स्वयं कृतः । [52]

---

49. ततः श्रीशिलुको जातः पुत्रो दुर्व्वारविक्रमः ।
येन सीमा कृता नित्यात्र (त्र) वणी वल्लदेशयो ।।
भट्टिक देवराजं यो वल्लमण्डलपालकं ।
निपात्य तत्क्षणं भूमौ प्राप्तवान छं (वांश्ठ) त्रिचिह्नकं ।।
ज०रा०ए०सो०, 1894, पृ० 6

50. ततोऽपि श्रीयुतः कक्कः पुत्रो जातो महामतिः।
यशो मुद्गगिरौ लब्धं येन गौडैः समं रणे।। ज०रा०ए०सो०, 1894, पृ० 4.

51. नन्दा वल्लं प्रहत्वा रिपुबलमतुलं भूअकूप प्रयातं दृष्ट्वा भग्नां (न्) स्वपक्षां (न्) द्विजनृपकुलजां (न्) सत्प्रतिहार भूपां (न्) धिग्भूतैकेन तस्मिन्प्रकटियशसा श्रीमता बाउकेन स्फूर्जन्हत्वा मयूरं तदनु नरमृगा घातिता हेतिनेव।। कस्यान्यस्य प्रमग्नः ससचिवमनुजं त्यज्य राण (णः) सुतंत्रः कनैकेनातिभीते दशदिशितु वले (बले ?) स्तम्भ्य घातानमेकं। धैर्यान्युत्तमा श्वपृष्ठं क्षितिगतचरणेनासिहस्तेन शत्रुं छित्वा (त्वा) भित्वा (त्वा) श्मशानं कृतमतिभयदं बाउकान्येन तस्मिन्।। नवमंडलनवनिचये भग्ने हत्वा मयूर मतिगहने। तदनु [ह] तासितरंगा श्रीमद्बाउक नृसिंघे (हे) न।। ज०रा०ए०सो०, 1894, पृ० 7-8

52. एपि० इण्डि०, खण्ड 9, पृ० 280.

मूलपुरुष हरिचन्द का समय हार्नले के अनुसार 640 ई० और मजूमदार के अनुसार 550 ई० है। डा० पुरी[53] इस तिथि को 600 ई० स्वीकार करते हैं। यही तिथि उपयुक्त प्रतीत होती है।

जालोर और मण्डोर राजवंशों के आपसी सम्बन्धों की हमें विस्तृत जानकारी नहीं है और यह जानकारी भी मिहिरभोज के ग्वालियर सागरताल अभिलेख पर आधारित है। अभी हाल में ही जैन स्रोतों के आधार पर जालोर के नागभट्ट के इतिहास पर कुछ प्रकाश पड़ा है। नागभट्ट जैन मुनि यक्षदेव का (क्षमाश्रमण यक्षदत्त) का आश्रयदाता था। उसने जालोर को अपनी राजधानी बनाकर उसे मंदिरों से सुशोभित किया और आबू पर्वत पर एक तालाब का निर्माण कराया।

मण्डोर राजधानी के पतन के पश्चात् जब शत्रुओं ने वहाँ के राजा का वध कर दिया, तब विधवा रानी ने बम्भनपुर (बर्मन, आबू के निकट) में शरण ली। यहीं गर्भवती रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम नाहड़राय या नागभट्ट रखा गया। नाहड़राय ने सांचोर में एक जैन मंदिर बनवाया और अपने पूर्वज विजंराज की एक प्रतिमा स्थापित की। स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार उसने पुष्कर में एक तालाब का भी निर्माण कराया।

मण्डोर की वंशावली में विंजराज का नाम नहीं मिलता। अतः उसके बारे में समुचित जानकारी नहीं है। जैन ग्रंथों में उसे नागभट्ट प्रथम का पूर्वज बताया गया है। नागभट्ट द्वितीय के शासनकाल में कन्नौज सेना के साथ मेड़ता शाखा के कक्क ने मुद्गगिरि (मुंगेर) के युद्ध में पालों को हराया था। इसके अतिरिक्त इस शाखा के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती।

कक्कुक के बाद मण्डोर राजवंशावली अज्ञात है। तो भी, प्रतीहार दर्लभराज के पुत्र जसकरण का वि०सं० 993 (934 ई०) का एक अभिलेख प्राप्त है। प्रतीत होता है कि यह जसकरण बाउक अथवा कक्कुक के उत्तराधिकारियों में से कोई रहा होगा। जसकरण के पश्चात् कन्नौज साम्राज्य के पतन तक की लगभग एक शताब्दि का इतिहास ज्ञात नहीं है।

कन्नौज साम्राज्य के पतन के एक सौ वर्षों बाद नाडोल के चौहानों के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि चौहान रायपाल ने वि०सं० 1200 (1143 ई०) के आस-पास मण्डोर प्रतीहारों से छीन लिया। रायपाल के पुत्र सहजपाल का एक अभिलेख मण्डोर से प्राप्त हुआ है।[54] वंशभास्कर जैसे ग्रन्थ से विदित होता है कि चारणों ने परवर्ती प्रतीहार वंशावली में कल्पित नामों की भरमार कर दी है। उन्हीं नामों में से एक प्रतीहार राजा नाहर को कन्नौज के गाहड़वाल जयचन्द्र, चित्तौड़ के सिसौदिया (गुहिल) समरसिंह रावल, दिल्ली के अनंगपाल तोमर, अजमेर के सोमेश्वर चौहान और गुजरात के भीमदेव सोलंकी (भोला भीम) का समकालीन बताया गया है।[55] इसी प्रकार शिलालेखों के नाम राजस्थानी ख्यातों में नहीं मिलते।[56]

चारणों ने लिखा है कि (गुहिल वंशी) राजा राहुप (सिसोद, मेवाड़) के शत्रुओं में मण्डोर का प्रतीहार राजा मुकुल के नाम से पुकारा जाता था। राजा राहुप ने अपनी सेना लेकर मण्डोर पर आक्रमण किया और मुकुल को पराजित करके एवं उसकी राजधानी में उसे बंदी बनाकर सिसोदा में ले आया। उसके बाद उसकी राणा उपाधि तथा जोध्वाड़ नगर लेकर उसे छोड़ दिया।

---

53. हिस्ट्री ऑफ गुर्जर-प्रतीहारज़, पृ० 24; पं० ओझा इस तिथि को 597 ई० मानते हैं।
54. आ०स०इ०रि०, 1909-10, पृ० 102-3
55. पृथ्वीराजरासो में भी इसी प्रकार की कल्पित कथाएं दी गई हैं।
56. ओझा, भाग 1, पृ० 152-53

तब से राहुप ने स्वयं राणा की उपाधि धारण करना प्रारम्भ कर दिया।[57] राहुप (राहप) का लगभग वही समय है जो मण्डोर पर नाडोल के चौहानों के अधिकार करने का है। इस तथ्य से यह अनुमान किया जा सकता है कि मण्डोर पर पुनः प्रतीहारों का अधिकार कब स्थापित हुआ? जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि चित्तौड़ के महारावल क्षेमसिंह के भाई एवं सिसोदा के जागीरदार माहप के छोटे भाई राहप ने प्रतीहारों को पराजित कर उनकी राणा की उपाधि स्वयं ग्रहण कर ली। जोधपुर अभिलेख में बाउक प्रतीहार को 'राणा' की पदवी से विभूषित किया गया है।[58] राणा राहप के उत्तराधिकारियों में राणा लक्ष्मसिंह अलाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध चित्तौड़ की रक्षा के लिए युद्ध करते हुए अपने सात पुत्रों सहित वीरगति को प्राप्त हुआ। 1303 ई० में जब रावल रत्नसिंह दुर्ग छोड़कर सुलतान के आश्रय में चला गया, तब राणा लक्ष्मसिंह के पौत्र राणा हम्मीरसिंह ने खिलजियों के करद मालदेव सोनिगरा के वंशज से दुर्ग छीनकर पुनः चित्तौड़ पर गुहिलों का राज्य स्थापित किया। मण्डोर के प्रतीहारों से ली हुई राणा की पदवी के कारण ही कालान्तर में चित्तौड़ के सिसोदिया शासक 'महाराणा' कहलाये।[59]

वंशभास्कर के अनुसार परिहारों की वंशावली में प्रसिद्ध नाहड़राव (नागभट्ट) से छठवीं पीढ़ी में राजा अमायक के बारह पुत्रों से बारह शाखाएं चली। इन बारह राजकुमारों में शोधक के पौत्र इंदा से प्रतीहारों की प्रसिद्ध इंदा शाखा का जन्म हुआ। इंदा परिहारों की जागीर ईदावटी जोधपुर से पचास किलोमीटर पश्चिम की ओर स्थित थी।[60] टाड का कथन है कि कन्नौज से अपदस्थ होने के अठारह वर्ष बाद जयचन्द्र राठौर के पुत्र, पौत्रों ने मारवाड़ में एक छोटा-सा राज्य स्थापित कर लिया। उनके उत्तराधिकारियों में मण्डोर जीतने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। मण्डोर विजय-अभियान में दूहड़ राठौर मारा गया। दूहड़ के उत्तराधिकारी रायपाल ने परिहार राजा का वधकर मण्डोर दुर्ग पर अधिकार कर लिया। किन्तु अल्प समय में ही परिहारों ने संगठित होकर राठौरों से मण्डोर दुर्ग को मुक्त करा लिया।[61] इससे प्रतीत होता है कि इस दुर्ग के स्वामित्व के लिए राठौरों और परिहारों में निरन्तर संघर्ष होता रहा। अंत में जैसा कि पं० ओझा ने वंशभास्कर के आधार पर लिखा है, चौदहवीं सदी ईसवी के अन्त में मण्डोर का राणा हम्मीर था। संभवतः यह हम्मीर ईदा शाखा का था। मण्डोर गढ़ ईदा शाखा ने हम्मीर के दुराचारी होने के कारण राव वीरम राठौर के पुत्र चूड़ा को 1394 ई० में दहेज में दे दिया। मण्डोर के परिहार राणाओं की संतान वीरुटंकनपुर, सोंधीवाड़ा (मालवा), राणानगर (भिणाय) में स्थानान्तरित हो गई। क्योंकि हम्मीर के भाई गूजरमल मीणा जाति की स्त्री से विवाह कर लिया, इसलिए मीणा परिहारों की उत्पत्ति भी उसी से बतलाई जाती है। हम्मीर परिहार के पौत्र भुद्ध से गुजरों ने राणनगर छीन लिया। अतः परिहारों को वहां से हटना पड़ा। भुद्ध से चौथी पीढ़ी के भीम परिहार के पुत्र किशनदास ने उचेहरा (नागौद राज्य) में अपनी राजधानी स्थापित की। इस प्रकार बघेलखण्ड के परिहारों का सम्बन्ध राजस्थान से जोड़ा गया है।[62] नागौद राज्य की वंशावली में किशनदास का नाम राजस्थानी बड़वा चारणों द्वारा सम्मिलित किया गया प्रतीत होता है। इसलिए वंशभास्कर से ज्ञात उसके पूर्वाधिकारियों के नाम नागौद राज्य की वंशावली से मेल नहीं खाते।

---

57. टाड, राजस्थान का इतिहास ,
58. ओझा, रा०इ०, पृ० 151.
59. चारणों ने अन्तिम मण्डोर शासक हम्मीर को ' राणा' ही लिखा है। राठौर चूड़ा ने इसी से 1394 ई० में दुर्ग छीना था।
60. ओझा, पृ० 169
61. टाड, राजस्थान, पृ०
62. ओझा, पृ० 169-70

नागौद राज्य के अतिरिक्त परिहार पंजाव तथा उत्तर प्रदेश में मिलते हैं। कन्नौज राज्य के पतन के पश्चात् उन्होंने नव स्थापित राज्य में उच्च पद स्वीकार कर लिए। किन्तु राजसत्ता के अभाव में उनका प्रभाव क्षीण हो गया। इसीलिए चौदहवीं शती ईसवी के ग्रन्थ कान्हड़देवप्रवन्ध में 36 राजकुलों के स्थान पर केवल 16 राजकुलों का उल्लेख किया गया है और उसमें भी प्रतीहारों का नाम छोड़ दिया गया है।[63]

जालोर के गुर्जर-प्रतीहार

कुछ समय पूर्व तक नागभट्ट प्रथम (नाहड़राय) का वंश मालवा का शासक माना जाता था। किन्तु डा० दशरथ शर्मा ने साहित्यिक और पुरातात्त्विक स्रोतों के आधार पर उसे गुजरत्रा या भिल्लमाल-जालोर क्षेत्र का शासक प्रमाणित किया है। पुरातन प्रवन्ध संग्रह से विदित होता है कि नागभट्ट प्रथम ने अपनी राजधानी जालोर में स्थापित की। कुवलयमाला नामक जैन कथा की रचना वत्सराज के शासनकाल में शक् संवत् 700 (778 ई०) में जालोर में ही हुई थी। हरिवंशपुराण[64] से ज्ञात होता है कि शाके 705 (783 ई०) में पश्चिम देश का राजा वत्सराज था।

नागभट्ट प्रथम 730-756 ई०

जालोर वंशावली का मूलाधार ग्वालियर अभिलेख है जिसमें रावण का वध करने वाले राम के अनुज लक्ष्मण को इस वंश का मूल पुरुष वताया गया है। तो भी, इस शाखा का पहला ऐतिहासिक पुरुष नागभट्ट प्रथम है। उसका समय आठवीं शताब्दी के तीसरे और पांचवे दशकों के मध्य माना जा सकता है। अरवों ने आठवीं शताब्दी ईसवी के प्रारम्भ में जब सिन्ध तथा मुलतान को जीत लिया तव सिन्ध के राज्यपाल जुनैद के नेतृत्व में मालवा, भड़ौच तथा मारवाड़ पर आक्रमण किया गया। विलादुरी लिखता है कि जुनैद ने अपने सेनापतियों को मरमाड़ मण्डल, भड़ौच, उज्जैन, मालवा और अन्य स्थानों में भेजा और भिल्लमाल तथा जुर्ज (गुर्जर) पर विजय प्राप्त की। इन धावों को असफल सिद्ध कर उनको पीछे ढकेलने का श्रेय नागभट्ट को है। ग्वालियर प्रशस्ति में कहा गया है कि म्लेच्छ शासक की विशाल सेनाओं को चूर करने वाला वह मानों नारायणस्वरूप लोगों की रक्षा के लिए उपस्थित हुआ।[65] इसका परोक्ष समर्थन पुलकेशिराज अवनिजनाश्रय के 738-39 के नौसारि ताम्रपत्र से होता है, जिसमें ताजिकों के सैन्धव, सुराष्ट्र, चावोत्कट, मौर्य और गुर्जर राज्यों की विजय की चर्चाएं तो हैं, लेकिन उनके द्वारा उज्जैन अथवा मालवा विजय का कोई उल्लेख नहीं है। अरवों के विरुद्ध नागभट्ट की सफलता अल्पकालिक मात्र न थी। उसने आगे वढ़कर अरवों की सेनाओं को वहुत पीछे खदेड़ दिया।[66] चाहमान सामन्त भर्तृवड्ढ (द्वितीय) के वि०सं० 813-755 ई० के हांसोट अभिलेख से इसकी पुष्टि होती है। यह ताम्रपत्र नागभट्ट के शासनकाल में प्रवर्त्तित किया गया था।[67] अतः इससे सिद्ध होता है कि

---

63 राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 440-41, सर्ग 3, छन्द 38, पाद टिप्पणी।

64. शाकेष्वव्दशतेषु' राभगु दिशां पंचोत्तरेपूत्तराम्।
पातिइन्द्रायुधनाम्नि कृष्णनृपजे श्रीवल्लभे दक्षिणाम्।।
पूर्वां श्रीमदवंान्तभूभृतिनृपे वत्साधिराजे पराम्।
सौर्याणामधिमण्डले जययुते वीरे वराहेवति।। 66 53

65 ग्वालियर प्रशस्ति, श्लो० 4.

66 तद्वंशे (वंशे) प्रतिहार केतनभृति त्रैलोक्यरक्षास्पद
देवोनागभटः पुरातनमुने मूर्तिवर्वभूणाद्भुतम्।
येना सौ सुकृतप्रभाथिवलयम्लेच्छाधिपाक्षौहिणी
नुन्दानस्फुर दुग्रहेतिरुचिरोर्दोर्भिश्चतुर्भिर्व्वभो।। आ०स०इ०रि० 1903-4, पृ० 280.

67 एपि० इण्डि०, खण्ड 12, पृ० 197 तथा आगे।

महासामन्ताधिपति भर्तृवड्ढ नागभट्ट का सामन्त था। प्रतीत होता है कि जयभट्ट तृतीय को पराजित कर अरबों ने भड़ौच के आस-पास अधिकार कर लिया था। किन्तु नागभट्ट ने उन्हें उखाड़कर चाहमान भर्भृवड्ढ को अपनी ओर से भड़ौच का शासक नियुक्त किया। इस निष्कर्ष की पुष्टि विलादुरी के इस कथन से भी होती है कि जुनैद के कमजोर उत्तराधिकारी तमीम को अनेक विजित प्रदेशों से हटना पड़ा।[68] अरब सेनाओं पर विजय प्राप्त करना नागभट्ट प्रथम की विशेष उपलब्धि है।

कक्कुस्थ

नागभट्ट प्रथम की मृत्यु के वाद उसका भ्रातृज कक्कुस्थ राजसिंहासन का उत्तराधिकारी हुआ। उसका एक दूसरा नाम कक्कुक (सदैव अच्छी वातें कहते हुए हंसते रहने वाला)[69] भी था। ग्वालियर प्रशस्ति में उसे 'वंश का यश वढाने वाला' कहा गया है। संभवत वह एक साधारण शासक था, जिसका शासनकाल घटनापूर्ण न था।

देवराज

ककुस्थ के वाद उसका अनुज देवराज अथवा देवशक्ति राजगद्दी का उत्तराधिकारी हुआ। ग्वालियर प्रशस्ति से विदित होता है कि उसने 'अनेक राजाओं तथा उनके शक्तिशाली पक्षधरों की स्वतंत्र गति को रोका।' ऐसा प्रतीत होता है कि उसे अपने शत्रुओं के विरुद्ध सफलता मिली।

वत्सराज (775-800 ई०)

देवराज का उसकी रानी भूयिकादेवी से उत्पन्न वत्सराज नामक पुत्र अगला शासक हुआ। वह अत्यन्त तेजस्वी, प्रतापी और प्रजा-वत्सल सम्राट था। गुर्जर-प्रतीहार साम्राज्य की नींव डालने का श्रेय उसी को दिया जाता है। ग्वालियर प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि उसने भण्डिकुल से उसकी साम्राज्यश्री छीन ली थी।[70] इतिहासकारों को हर्ष के ममेरे भाई भण्डि के अतिरिक्त तन्नामक अन्य किसी व्यक्ति का ज्ञान नहीं है। किन्तु इस भण्डि ने अपना कोई राजवंश नहीं स्थापित किया। एक मत के अनुसार भण्डिकुल राजस्थान स्थित भट्टिकुल है।[71] इसका उल्लेख वाउक के जोधपुर अभिलेख में भी मिलता है। वाउक के जोधपुर-अभिलेख में कहा गया है कि शिलुक ने भट्टिराज को पराजित किया। वत्सराज और शिलुक प्रायः एक ही समय क्रमशः उज्जैन और मण्डोर की शाखाओं के शासक थे। उपर्युक्त अभिलेख से यह भी ज्ञात होता है कि वाउक के पिता कक्क ने नागभट्ट द्वितीय की अधीनता में गौड़राज के विरुद्ध यश प्राप्त किया।[72] अतः अनुमान होता है कि जोधपुर की गुर्जर-प्रतीहार शाखा ने वत्सराज के शासनकाल से उज्जैन शाखा की अधीनता स्वीकार कर ली। संभवतः शिलुक ने वत्सराज के लिए भट्टिराज देवराज को पराजित किया।

गौड़ विजय

राष्ट्रकूट राजा गोविन्द तृतीय के राधनपुर अभिलेख से ज्ञात होता है कि वत्सराज ने गौड़ के पालवंशी शासक धर्मपाल को वुरी तरह पराजित किया था। लेख में कहा गया है कि

---

68 इलियट और डाउसन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृ० 1, पृ० 126.

69. भ्रातुस्तस्यात्मजोऽभूत कलित कुलयशः ख्यातकाकुस्थ नामा।

70 ख्याताद् भण्डिकुलां मदोत्कटकारि प्राकारतुलंघतो यः साम्राज्यमधीज्यकार्मुकसखा सख्ये हटादग्रहीत। एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 108.

71 ज०इ०हि०, खण्ड 23, पृ० 98

72. एपि०इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 96.

गदान्ध वत्सराज ने गौड़ की राज्यलक्ष्मी को सरलतापूर्वक हस्तगत कर उसके 'दो राजछत्रों को छीन लिया था।'[73] पृथ्वीराजविजय से ज्ञात होता है कि चाहमान शासक दुर्लभराज ने गौड़ देश की विजय कर अपनी तलवार को गंगाजल से पवित्र किया। इस दुर्लभराज के पुत्र गूवक ने नागावलोक की सभा में यश प्राप्त किया।[74] नागावलोक का अभिज्ञान नागभट्ट द्वितीय से किया गया है। अतः यह प्रायः मान्य है कि दुर्लभराज वत्सराज का सामन्त था और उसने अपने स्वामी के साथ ग्वालों के विरुद्ध युद्ध किया था।

राष्ट्रकूटों का आक्रमण

राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव वत्सराज का समकालिक था। गोविन्द तृतीय के वनि-दिन्दोरी और राधनपुर अभिलेखों से ज्ञात होता है कि उसने वत्सराज को पराजित कर मरुदेश (राजस्थान) में शरण लेने को विवश किया। इतना ही नहीं उसने वत्सराज के यश के साथ ही उन दो राजछत्रों को भी छीन लिया, जिन्हें उसने गौड़राज से विजयश्री के रूप में प्राप्त किया था।[75] वत्सराज ने जावालिपुर (जालोर) के अपने पुराने सत्ता क्षेत्र में आश्रय लिया। जैन ग्रंथ कुवलयमाल[76] में वहां उसके राज्य करने का उल्लेख मिलता है। ध्रुव के प्रत्यावर्त्तन के साथ ही गौड़ नरेश धर्मपाल ने प्रायः सम्पूर्ण उत्तर भारत को रौंद कर इन्द्रायुध के स्थान पर चक्रायुध को कन्नौज का राजा बनाया। उज्ञयिनी के प्रतीहारों के लिए ये कठिन परीक्षा के दिन थे, जिसकी चुनौती वत्सराज के पुत्र नागभट्ट द्वितीय ने सहर्ष स्वीकार की।

नागभट्ट द्वितीय (800-833 ई०)

वत्सराज की मृत्यु के बाद उसकी रानी सुन्दरीदेवी से उत्पन्न पुत्र नागभट्ट द्वितीय प्रतीहार वंश की राजगद्दी पर बैठा। यद्यपि उसकी राज्यारोहण तिथि ज्ञात नहीं है तथापि अनुमान है कि वह 800 ई० के लगभग शासक बना। मिहिरभोज की ग्वालियर प्रशस्ति में उसकी सैनिक उपलब्धियों का सविस्तार वर्णन है। तदनुसार उसने आन्ध्र, सिन्ध, विदर्भ और कलिंग के राजाओं को अधीन किया, कन्नौज में चक्रायुध को हराया, आगे बढ़कर गौड़नृपति (धर्मपाल) को पराजित किया तथा बलपूर्वक आनर्त्त, मालव, किरात, तुरुष्क, वत्स और मत्स्य के पर्वतीय दुर्गों को छीन लिया।[77] उसके सैनिक अभियानों का वर्णन इस प्रकार है –

राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय का आक्रमण

नागभट्ट द्वितीय के राज्यारोहण के समय उज्जैन के प्रतीहार साम्राज्य के दो प्रबल शत्रु थे गौड़ का धर्मपाल और राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय। अपने पिता ध्रुव की भाँति गोविन्द तृतीय ने उत्तर भारत पर सैनिक अभियान किये। इस अभियान का पहला शिकार नागभट्ट हुआ। अमोघवर्ष के संजन अभिलेख से ज्ञात होता है कि गोविन्द ने 'नागभट्ट के सुयश को युद्ध में हर लिया।'[78] पथरी स्तम्भ लेख (वही, जिल्द 9, पृ० 225) से भी यह ज्ञात होता है कि कर्कराज ने 'नागावलोक (नागभट्ट द्वितीय) को शीघ्र ही वापस जाने को विवश कर दिया।' कर्कराज गोविन्द का सामन्त

---

73 हेलास्वीकृतगौड़राज्यकमलां मत्तं प्रवेश्याचिरात्। इण्डि० एण्टि०, खण्ड 11, पृ० 157; एपि०इण्डि०, खण्ड 6, पृ० 248.

74 एपि० इण्डि०, खण्ड 2, पृ० 121, 126

75 गौडीय सरदिन्दुपादधवलं छत्रद्वयं केवलं, तस्मानाहृततत्यशोऽपि ककुभ प्रान्ते स्थितं तत्क्षणात्।। राधनपुर अभिलेख, श्लोक 8.

76 पंचम, 21; ए०भा०ओ०रि०इं०. जिल्द 18, पृ० 397-8.

77 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 108-112 श्लो० 8 से 11.

78 वही , जिल्द 18, पृ० 235.

था और उसे मालवा की रक्षा के लिए गुर्जरराज (नागभट्ट) के विरुद्ध नियुक्त किया गया था (इण्डि० एण्टि०. जिल्द 12. पृ० 160)। इसके अतिरिक्त मन्ने अभिलेख,[79] सिसवै अभिलेख[80] और राधनपुर अभिलेख[81] में भी उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि होती है। डा० ए०एम० अल्तेकर[82] के मतानुसार यह युद्ध बुन्देलखण्ड क्षेत्र में लड़ा गया था। यहीं से आगे बढ़कर गोविन्द ने चक्रायुध और धर्मपाल को भी आत्मसमर्पण के लिए विवश किया।[83]

कन्नौज पर अधिकार

गोविन्द तृतीय के उत्तर भारत से पीठ मोड़ते ही नागभट्ट ने अपनी शक्ति संगठित कर कन्नौज के शासक चक्रायुध पर आक्रमण कर दिया।[84] उसने चक्रायुध को अपदस्थ कर कन्नौज पर प्रभुत्व स्थापित किया और वहां के प्रथम गुर्जर-प्रतीहार सम्राट के रूप में परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर की उपाधियां धारण की।[85]

मुंगेर-युद्ध

चक्रायुध को पराजित कर अपदस्थ करने से नागभट्ट द्वितीय की महत्त्वाकांक्षाएं जाग उठीं। ग्वालियर प्रशस्ति[86] से ज्ञात होता है कि वंग का राजा (धर्मपाल) 'अपने हाथियों, घोड़ों और रथों के साथ काले घने बादलों के अन्धकार की तरह आगे बढ़कर उपस्थित हुआ, किन्तु त्रिलोक को प्रसन्न करने वाला नागभट्ट उगते हुए सूर्य की तरह उस अन्धकार को काटने' में सफल रहा। इससे स्पष्ट है कि धर्मपाल युद्ध में पराजित हुआ। बाउक के जोधपुर अभिलेख[87] में मुद्गगिरि (मुंगेर) को युद्धस्थल बताया गया है। कक्क ने इस युद्ध में नागभट्ट के सामन्त के रूप में भाग लिया था। इस युद्ध में उत्तरी गुजरात के गुहिल वंशी बाहूकधवल और चालुक्यवंशी शंकरगण ने भी सामन्तों की हैसियत से भाग लिया था।[88]

ग्वालियर अभिलेख[89] के अनुसार नागभट्ट ने आनर्त्त (उत्तरी काठियावाड़), मालव (मध्यभारत), मत्स्य (पूर्वी राजस्थान), किरात (हिमालय की तराई का जंगली प्रदेश), तुरुष्क (पश्चिमी भारत के मुसलमानी अधिकार-क्षेत्र) और वत्स (प्रयाग-बघेलखण्ड) के पर्वतीय दुर्गों पर भी बलपूर्वक अधिकार कर लिया था। प्रशस्ति का उपरिवर्णित अभियान पारम्परिक प्रतीत होता है। अतः यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि ये सभी राज्य उसके प्रत्यक्ष शासन में थे अथवा वहां के शासक नागभट्ट की संप्रभुता स्वीकार करते थे।

विग्रहराज के हर्ष प्रस्तर लेख[90] से ज्ञात होता है कि उसके पूर्वज चाहमान गूवक (प्रथम) ने 'नागावलोक के दरबार में यश प्राप्त किया। पृथ्वीराजविजय[91] से भी ज्ञात होता है कि गूवक

---

79 उत्तर भारत राजनीतिक इतिहास, पृ० 136.
80 एपि० इण्डि०. खण्ड 23, पृ० 204 तथा आगे.
81 वही, खण्ड 6, पृ० 242 तथा आगे
82 दि एज आफ इम्पीरियल कन्नौज , पृ० 7
83 'स्वयमेव उपनतौ च यस्य महतस्तौ धर्मचक्रायुधौ।'
84 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 108
85 बुचकला अभिलेख, एपि० इण्डि०, खण्ड 9. पृ० 199 तथा आगे।
86 वही, खण्ड 18, पृ० 99-114, श्लो० 10.
87 वही, जिल्द 18, पृ० 96-98.
88 मजूमदार, ज०डि०लै०, खण्ड 10, पृ० 40; दि एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ० 25, ... अभिलेख की 10-11 और 14-15वीं पंक्तियाँ।
89 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 99-114, श्लो० 11
90 वही, जिल्द 2, पृ० 121-26
91 पंचम, श्लो० 30-31

की वहिन कलावती ने कन्नौज नरेश (नागभट्ट) से विवाह किया। प्रतीत होता है कि शाकम्भरी के चाहमानों ने कन्नौज के प्रतीहारों की अधीनता स्वीकार कर ली थी। निस्सन्देह नागभट्ट द्वितीय प्रतीहार वंश का एक शक्तिशाली शासक था। चन्द्रप्रभसूरि कृत प्रभावकचरित[92] के अन्तर्गत बप्पभट्टिचरित में नागभट्ट के ग्वालियर के भव्य दरबार का वर्णन मिलता है। उसके दरवार के नवरत्नों में से एक जैनाचार्य वप्पभट्टिसूरि के परामर्श से ग्वालियर में जैन प्रतिमाएं प्रतिष्ठित कराई गयीं थी। पं० गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा[93] का कथन है कि जिस नाहड़राव परिहार ने पुष्कर सरोवर (अजमेर) का निर्माण कराया था, वह नागभट्ट द्वितीय ही था। यह सरोवर पुष्कर नामक नगर से चार मील की दूरी पर स्थित है। मानसरोवर के समान ही पुष्कर तीर्थ का भी महत्व है। इस तीर्थ के सम्वन्ध में अनेक दन्तकथाएं प्रचलित हैं जिनका संकलन कर्नल टाड[94] ने अपने लोकविश्रुत ग्रंथ में किया है।

नाहड़राव का थान

नागभट्ट द्वितीय अथवा नाहड़राव अत्यन्त लोकप्रिय शासक था। उसकी लोकप्रियता की एक कहानी कर्नल टाड[95] ने इस प्रकार लिखी है – मण्डोर में एक गुफा के भीतर मण्डोर के प्रसिद्ध राजा नाहड़राव के स्मारक में वनी हुई वेदी को देखा। नाहड़राव अरावली पर्वत के भयानक स्थान पर चौहानों के साथ युद्ध करते हुए मारा गया था। नाहड़राव के स्मारक की देखभाल और दूसरे कार्यों के लिए एक नाई रखा गया है जो निरन्तर वहां पर रहकर अपना कार्य करता है। यहां नाहड़राव का पुजारी एक माली है जो रोज झाडू लगाकर चार जगह फूल चढ़ाता है और धूप वत्ती करता है। एक स्थान पर दीवार पर वहुत-सा सिन्दूर लगा है और माली पन्ना नाम लिखा है। यह स्थान भी नाहड़राव से सम्वन्धित वताया जाता है।

नाहड़राव देवता माना जाता है। गुरुवार के दिन वहां भारी संख्या में स्त्री-पुरुष दर्शनार्थ आते हैं और अपनी मुराद मांगते हैं। कभी-कभी वे रात्रि में यहां रुककर जागरण भी करते हैं। फूल मण्डली होती है। जिसकी इच्छा पूरी हो जाती है, वह भोजन पकाकर थाल भी रखता है। कभी-कभी वकरे की वलि दी जाती है और मदिरा चढ़ाई जाती है। नाच-गाना होता है। वहुत से लोग नाहड़राव को पिडयार भी वोलते हैं और इस स्थान को नाहड़राव की गुफा और नाहड़राव की साल भी कहते हैं।

रामभद्र (833-836 ई०)

चन्द्रप्रभसूरि कृत प्रभावकचरित[96] से विदित होता है कि वि०सं० ८९० (833 ई०) में नागभट्ट द्वितीय ने पवित्र गंगा में जलसमाधि लेकर प्राण विसर्जित कर दिये। तव उसकी रानी

92 प्रभावकचरित में वप्पभट्टि प्रवन्ध, पृ० 177.
विक्रमतो वर्षाणां शताष्टके सनवतौ च भाद्रपदे।
शुक्ले सितपचम्यां चन्द्रे चित्राग्व्यऋक्षस्थे।। 720 ।।
साभूत्संवत्सरोऽसौ वसुशतनवतेर्मा च ऋक्षेपु चित्रा।
धिग्मास [illegible] नभस्य क्षयमपि स खलः शुक्लपक्षोऽपि यातु।
संक्रांतिर्या च सिंहे विशतु हुतभुजं पंचमी यातु शुक्रे
गंगातोयाग्निमध्ये त्रिदिवमुपगतो यत्र नागावलोकः ।। 725 ।।
93 राजपूताने का इतिहास, पृ० 161.
94 राजस्थान का इतिहास (हिन्दी), पृ० 954.
95 वही पृ० 908. परिहारवंशप्रकाश (मुंशी देवी प्रसाद)
96 (सिंघी ग्रन्थमाला प्रेस), पृ० 177 (वप्पभट्टिप्रवन्ध का 725 वां श्लोक)

इष्टादेवी से उत्पन्न पुत्र रामभद्र शासक हुआ। उसे राम अथवा रामभद्र भी कहा जाता है। ग्वालियर प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि रामभद्र ने "सर्वोत्तम घोड़ों वाले अपने सामन्तों से शत्रु सेनाओं के नायकों को बलपूर्वक बंधवाया।"[97] डा० रमेशचन्द्र मजूमदार[98] का कथन है कि पालों के दवाव के कारण रामभद्र को अपने सामन्तों की सहायता लेना पड़ी। देवपाल ने मुंगेर अभिलेख में सम्पूर्ण उत्तर भारत की विजय का उल्लेख किया है। इसी प्रकार नारायणपाल के बादल स्तम्भ लेख से ज्ञात होता है कि देवपाल ने 'उत्कल कुल को उखाड़ फेंका, हूणों के दर्प को चूर किया एवं द्रविड और गुर्जर राजाओं के घमण्ड को विखेर दिया।'[99] उपर्युक्त गुर्जर राजा रामभद्र प्रतीत होता है। रामभद्र की कमजोरी के कारण ही गुर्जरत्रा भूमि एवं कालंजर मंडल के कुछ क्षेत्रों से उसका शासन समाप्त हो गया। तो भी, ग्वालियर जैसे सुदूर क्षेत्रों पर अब भी रामभद्र का शासन था। उसने गोपाचलगढ़ (ग्वालियर) पर वैलभट्ट को मर्यादाधुर्य (सीमाओं का रक्षक) नियुक्त किया और जब आदिवराह भोज प्रथम को त्रैलोक्य जीतने की इच्छा हुई तब उसने अल्ल को गोपाद्रि पर उसी प्रयोजन से नियुक्त किया। वैलभट्ट और अल्ल लाटमण्डल से आये थे और बलाधिपति तत्तक भी उसी ओर का ज्ञात होता है। परन्तु चम्बल क्षेत्र के प्रतीहारों को स्थानीय सामन्तों के सहयोग की अपेक्षा रही होगी। जाउल तोमर के वंशज इस क्षेत्र में उस समय प्रभावशाली थे।[100]

गुर्जर-प्रतीहार शक्ति का चरमोत्कर्ष

मिहिरभोज (836-885 ई०)

रामभद्र के बाद उसकी रानी अप्पादेवी से उत्पन्न पुत्र मिहिरभोज अथवा भोज 836 ई० में उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसे ग्वालियर अभिलेख में मिहिरभोज, दौलतपुर अभिलेख में प्रभास और ग्वालियर चतुर्भुज अभिलेख में आदिवराह कहा गया है। सिंहासनारोहण के बाद ही उसने प्रतीहार शासन को संगठित किया।

सत्ता का दृढ़ीकरण

मिहिरभोज का सर्वप्रथम अभिलेख वराह ताम्रपत्र[101] (वि०सं० 893-836 ई०) का है जिसमें कहा गया है कि उसने कान्यकुब्जभुक्ति के कालंजरमण्डल के उदुम्बर विषय में स्थित बलाकाग्रहार के दान को पुनः चालू किया। यह दान सबसे पहले सर्ववर्मन द्वारा दिया गया था और कालान्तर में उसे नागभट्ट द्वितीय के शासनकाल में पुनः स्वीकृत किया गया था। इसी प्रकार दौलतपुर अभिलेख[102] से ज्ञात होता है कि गुर्जरत्राभूमि (जोधपुर में) मे महाराज वत्सराज द्वारा दिया गया दान रामभद्र के शासनकाल में बाधित हो गया था। मिहिरभोज ने उपर्युक्त दोनों दानपत्रों की पुनः पुष्टि की।

भोज के सैनिक अभियान

भोज के सैनिक अभियानों के क्रम के बारे में कोई निश्चित जानकारी नहीं है। उसकी

---

97 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 108, श्लो० 12
98 ज०डि०ले०, खण्ड 10, पृ० 46
99 एपि० इण्डि० खण्ड 2, पृ० 162 श्लो० 13
100 वही खण्ड 1 पृ० 156-57, श्लो [illegible] और हरिहरनिवास द्विवेदी, दिल्ली के तोमर, पृ० 169
101 एपि० इण्डि० खण्ड 19, पृ० 15-19
102 वही खण्ड [illegible] पृ० 208 तथा [illegible]।

ग्वालियर प्रशस्ति[103] में कहा गया है कि 'अगस्त ऋषि ने तो केवल एक पर्वत विन्ध्य की वृद्धि रोकी थी-किन्तु भोज ने अनेक राजाओं पर आक्रमण कर शासन किया और इस प्रकार अगस्त्य से भी अधिक चमका। डा० रमाशंकर त्रिपाठी का कथन है कि मिहिरभोज के अधीन कन्नौज के राज्य का बहुत विस्तार हुआ। उसका राज्य उत्तर-पश्चिम में सतलज, उत्तर में हिमालय की तराई, पूर्व में पाल साम्राज्य की पश्चिमी सीमा, दक्षिण-पूर्व में बुन्देलखण्ड व वत्स की सीमा, दक्षिण-पश्चिम में सौराष्ट्र तथा उत्तर में राजस्थान के अधिकांश भाग पर फैला हुआ था।'[104]

प्रतीहार-पाल संघर्ष

मिहिरभोज के समय में पालवंश का शासक देवपाल बड़ा वीर तथा यशस्वी था। उसके मुंगेर ताम्रलेख[105] में कहा गया है कि उसकी विजयी सेनाओं ने विन्ध्यगिरि और काम्बोज तक अभियान किया और उसने रामचन्द्र द्वारा बांधे गये पुल के पास तक की भूमि पर शासन किया। इसी प्रकार नारायणपाल के बादल स्तम्भलेख[106] से ज्ञात होता है कि उसके मंत्री दर्भपाणि की सफल कूटनीति ने रेवा (नर्मदा) के पिता (उद्गम स्थल) विन्ध्याचल और गौरी (पार्वती) के पिता हिमालय के बीच स्थित पश्चिम पयोनिधि से पूर्व पयोनिधि तक के सारे क्षेत्र को देवपाल का करद बना दिया। इस अभिलेख में यह भी कहा गया है कि दर्भपाणि के पौत्र केदार मिश्र की कुशाग्र बुद्धि की सहायता से उसने उत्कलों को उखाड़ फेंका, हूणों का दर्प चूर किया एवं द्रविण तथा गुर्जर राजाओं के घमण्ड को बिखेरकर समुद्रों से आवृत पृथ्वी का उपभोग किया। [107] भोज देवपाल के समान ही शक्तिशाली था। अतः दोनों में मुठभेड़ होना स्वाभाविक थी। उसकी ग्वालियर प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि जिस 'लक्ष्मी ने धर्म (धर्मपाल) के पुत्र (देवपाल) का वरण कर लिया था, वही बाद में भोज की पुनर्भू (दूसरा पति करने वाली) हो गयी, अर्थात् राज्यलक्ष्मी देवपाल के अधिकार से निकलकर भोज के अधिकार में चली गई।[108] दोनों ही राजवंश अपनी-अपनी विजयों की गर्वोक्तिपूर्ण घोषणा करते हैं। ऐसी स्थिति में देवपाल ने जिस गुर्जरनाथ का दर्प चूर किया था, वह भोज ही था। बादल स्तम्भलेख में इस कार्य का श्रेय देवपाल के मन्त्री केदार मिश्र को दिया गया है। यह भोज के प्रारम्भिक वर्षों की घटना थी, जिसमें वह पराजित हुआ। किन्तु ग्वालियर प्रशस्ति में भोज भी देवपाल को पराजित करने का दावा करता है। यह देवपाल के अन्तिम दिनों की घटना हो सकती है। अतः पाल-प्रतीहार संघर्ष में भोज की विजय हुई। संभवतः इसी घटना की ओर सोढ़देव का कहल अभिलेख[109] इंगित करता है जिसमें कहा गया है कि भोज से भूमि प्राप्त करने वाले कलचुरि सामन्त गुणाम्बोधिदेव ने गौड़राज की लक्ष्मी का हरण कर लिया। इस अभियान में दूसरे महासामन्त ब्राह्मणवंशी बालदित्य के पितामह चाटसू (जयपुर राज्य, राजस्थान) के गुहिल ने समुद्रतट से लाई हुई अश्वसेना द्वारा गौड़ नरेश को हराकर पूर्वी राज्यों से कर वसूल किया।[110] उपर्युक्त गुहिल का पिता शंकरगण भोज के पितामह नागभट्ट का सामन्त था। शंकरगण की रानी पद्मा से उसका पुत्र हर्षराज हुआ जिसने उत्तरी भारत के राजाओं को जीता और भोज को अश्व प्रदान किये। इसी हर्षराज की रानी शिल्ला से उत्पन्न पुत्र का नाम गुहिल था। नारायणपाल

---

103 वही, खण्ड 18, पृ० 109.

104 हिस्ट्री ऑफ कन्नौज, पृ० 246.

105 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 305.

106 आरेवाजनकान्मतङ्गजमदस्तिम्यच्छिलासंहतेरागौरीपितुरीश्वरेन्दुकिरणैःपुष्यत्सितिम्नो गिरेः।
मार्तण्डास्तमयोदयारुणजलादावारिराशिद्वयान्नीत्यायस्य भुवं चकार करदां श्रीदेवपालो नृपः।। वही, खण्ड 2, पृ० 162-165.

107 वही, श्लो० 13.

108 वही, खण्ड 18, पृ० 109 'धर्मापत्ययशः प्रभृतिरपरा लक्ष्मीः पुनर्भूर्त्रया।'

109 वही खण्ड 7 पृ० 86-89.

110 एपि० इण्डि० खण्ड 12, पृ० 15 तथा आगे।


THE GURJARA - PRATĪHĀR
EMPIRE
72°
76°
80°
84°
88°
KASHMIR
TAKKA
MULTAN
PEHOA
AHAR
OSIA
SEWA
BAYANA
JODHPUR
GURJARA PRATIHĀRAS
KANYAKUBJA
GWALIOR
SIYADONI
ASNI
KARA
DIGHWA-DUBAULI
CHITRAKUTA
PARTABGARH
KALINJIR
BIHAR
RAMGAYA
UJJAYINI
CHANDELLAS
MAGADHA
PALAS
TĀMRALIPTI
RAVI
HANSOT
BAGUMRA
NAVASARI
UTKALA
RĀSTRAKŪTAS
KALINGA
MANYAKHETA
EASTERN
CALUKYAS
VENGI

के सत्रहवें शासन वर्ष से विहार प्रदेश में पालों के अभिलेख नहीं मिलते। इससे अनुमान होता है कि उक्त अवधि के वाद सम्पूर्ण विहार पर प्रतीहारों का अधिकार हो गया।[111]

उत्तर-पश्चिम विजय

बालादित्य के चाट्सु अभिलेख से ज्ञात होता है कि हर्षराज ने 'उत्तरी दिशा के सभी राजाओं को जीतकर भक्तिपूर्वक भोजराज को घोड़ों की भेंट दी।''[112] इस अभिलेख से प्रमाणित होता है कि राजस्थान के उत्तर-पूर्वी भागों पर भोज का अधिकार था।

पेहवा (जिला करनाल) से प्राप्त 882 ई० के एक अभिलेख[113] से यह प्रमाणित होता है कि उत्तर-पश्चिम में पूर्वी बंगाल के क्षेत्र उसके साम्राज्य में सम्मिलित थे। उक्त अभिलेख में 'भोजदेव के कल्याणकारी और विजयी शासन के दिनों में घोड़ों के व्यापारियों द्वारा कुछ मंदिरों को दिये गये धन के लिए क्रय-विक्रय पर लगाये जाने वाले कर-सम्बन्धी एक संविदा का उल्लेख है। कल्हण की राजतरंगिणी[114] से ज्ञात होता है कि पंजाब के उत्तरी भागों में अधिकृत थक्कियक नामक राजवंश के किसी राजा से अधिराज भोज ने कुछ भूमि छीन ली और उसे द्वारपाल का कार्य करने को विवश किया था। उस भूमि को शंकरवर्मा ने थक्कियकराज को वापस दिला दी थी। इसी थक्कियकराज्य के पास का गुर्जर राजा अलखान भोज का मित्र अथवा सामन्त प्रतीत होता है। शंकरवर्मा के कारण उसे टक्कदेश छोड़ना पड़ा।[115] अलखान पश्चिमी पंजाब के गुजरात और गुजरांवाला का शासक था।

गुजरत्रा-राजस्थान

बाउक के जोधपुर शिलालेख से ज्ञात होता है कि भोज के शासनकाल में मण्डोर के महासामन्त बाउक ने नन्दवल्ल का वध किया, मयूर को मारा और संगठित नवमण्डलों का दमन किया। इस प्रकार कक्कुक के घटियाला लेख में उसे त्रवणि, वल्ल, माड़, आर्य गुजरत्रा, लाट तथा पर्वत का विजेता कहा गया है। दक्षिणी राजस्थान के प्रतापगढ़ से प्राप्त महेन्द्रपाल द्वितीय के अभिलेख से[116] ज्ञात होता है कि वहां का एक चाहमानवंशी राजा भोजदेव के लिए महान् प्रसन्नता का स्रोत था। यह चाहमान राजा गोविन्दराज था, जो उपर्युक्त अभिलेख के प्रकाशक इन्द्रराज का पितामह था। डा० हेमचन्द्र रायचौधरी[117] ने स्कन्दपुराण के प्रभासखण्डान्तर्गत वस्त्रापथमाहात्म्य के आधार पर सुदूर पश्चिम में स्थित सुराष्ट्र-कठियावाड़ तक भोज का अधिकार क्षेत्र स्वीकार किया है। यद्यपि उपर्युक्त तथ्य को विश्वसनीय नहीं माना जा सकता तथापि कन्नौज नरेश भोज ने वस्त्रापथ (आधुनिक गिरनार) के रेवतक पर्वत के क्षेत्रों पर अपना एक वनपाल नियुक्त किया था और वहां अपनी एक सैनिक चौकी स्थापित की थी।

प्रतीहार-राष्ट्रकूट संघर्ष

राष्ट्रकूटों के अपनी ही समस्याओं में उलझे रहने का लाभ उठाकर भोज उत्तरी तथा मध्यभारत और राजस्थान के अधिकांश क्षेत्रों का निष्कण्टक स्वामी वन गया। मिहिरभोज के समय अमोघवर्ष और कृष्ण द्वितीय राष्ट्रकूट शासन कर रहे थे। अमोघवर्ष ने अपने पिता गोविन्द तृतीय

---

111 शर्मा, राजस्थान थ्रू दि एजेज पृ० 153.
112 एपि० इण्डि० खण्ड 12, पृ० 15, श्लो० 19.
113 वही, खण्ड 1, पृ० 186-88
114 पंचम, 151
115 वही, पंचम, 149-50.
116 एपि० इण्डि०, खण्ड 14, पृ० 176
117 इं०हि०क्वा०, खण्ड० 5, पृ० 129-33

की उत्तरी भारतीय सैनिक अभियान नीति का पालन नहीं किया। वह उदार तथा शान्तिप्रिय शासक था। अमोघवर्ष की इस भीरू नीति का लाभ उठाने के लिए भोज ने गुजरात शाखा के सामन्त ध्रुव द्वितीय पर आक्रमण कर दिया। किन्तु वह पराजित हुआ। ध्रुव के वागुम्रा अभिलेख से यह ज्ञात होता है कि "उसने अपने ज्ञातियों (कुल्यों) की सहायता से सज्ञ, लक्ष्मी से युक्त, युद्ध के लिए लालायित गुर्जर की अत्यन्त बलवान सेना को वड़ी आसानी से परांगमुख कर दिया।"[118] भोज अपनी इस पराजय का बदला लेने के लिए निरंतर प्रयत्नशील था। अतः प्रतीहारों और राष्ट्रकूटों में पुनः संघर्ष होना आवश्यक था। वारतो संग्रहालय के एक खण्डित लेख से ज्ञात होता है कि भोज ने मान्यखेट की मुख्य शाखा के राष्ट्रकूट राजा कृष्ण द्वितीय (878-911 ई०) को अपने देश को वापस लौट जाने को विवश किया।[119] संभवतः यह युद्ध नर्मदा नदी के किनारे अवन्ति पर अधिकार के लिए लड़ा गया। देवली[120] और करदह[121] अभिलेखों में भी कृष्ण द्वितीय द्वारा गुर्जर (भोज) को भयभीत करने की बात कही गई है। किन्तु इसे मात्र प्रशंसा ही मानना चाहिए। राष्ट्रकूटों और प्रतीहारों का संघर्ष अनेक वर्षों तक चलता रहा। दोनों ही अवन्ति क्षेत्रों पर अधिकार करने को लालायित थे। अवन्ति पर प्रतीहारों का अधिकार भोज के शासनकाल से प्रारम्भ हुआ और महेन्द्रपाल द्वितीय के समय तक अवाधरूप से बना रहा। एक नवीनतम[122] मत के अनुसार गुजरात शाखा के राष्ट्रकूटों का 888 ई० के बाद का कोई अभिलेख न मिलने का कारण यह है कि अल्पकाल के लिए प्रतीहारों ने गुजरात पर अधिकार कर लिया। गोविन्द चतुर्थ के एक *अभिलेख[123] में खेटकमण्डल (खेड़ा) से किसी शत्रु का अधिकार समाप्त करने का श्रेय कृष्ण द्वितीय* को देता है। संभव है यह शत्रु प्रतीहार वंश से ही सम्बन्धित हो।

स्कन्दपुराण के वस्त्रापथमाहात्म्य में सुरक्षित एक अनुश्रुति के अनुसार भोज ने अपने पुत्र के लिए सिंहासन त्याग दिया। उपर्युक्त अनुश्रुति को अगर अस्वीकार भी कर दिया जावे तब भी इस तथ्य में कोई सन्देह नहीं कि उसने पांच दशकों तक राज्य किया। वह प्रतीहार वंश का सर्वाधिक प्रतिभाशाली शासक था। उसका राज्य हिमालय की तराई से लेकर बुन्देलखण्ड तक तथा पूर्व में पाल राज्य से लेकर पश्चिम में गुजरात तक फैला हुआ था। अपनी महान् राजनीतिक तथा सैनिक योग्यताओं से उसने इस साम्राज्य की सदैव रक्षा की। सुलेमान[124] लिखता है कि 'इस राजा के पास बहुत बड़ी सेना है और अन्य किसी दूसरे राजा के पास उस जैसी घुड़सवार सेना नहीं है। वह अरबों का शत्रु है, यद्यपि वह अरबों के राजा को सबसे बड़ा मानता है। भारतवर्ष के राजाओं में उससे बढ़कर इस्लामधर्म का कोई शत्रु नहीं है। उसका राज्य जिह्वा के आकार का है। वह धन-वैभव सम्पन्न है और उसके पास बहुत अधिक संख्या में घोड़े तथा ऊंट हैं। भारतवर्ष में उसके अतिरिक्त कोई राज्य नहीं है, जो शत्रुओं से इतना सुरक्षित हो।' शत्रुभाव रखने वाले लेखक के ये प्रशंसात्मक उल्लेख भोज की महत्ता को प्रकाशित करते हैं। उसके कुशल प्रशासन, समृद्ध राजकोष, शक्तिशाली सेना और अरबों के रूप में भारत के सामने उपस्थित महान् संकट के प्रति उसकी सतत् जागरूकता के बारे में इस उद्धरण से अधिक प्रामाणिक अन्य कोई टिप्पणी नहीं दी जा सकती। उसके अभिलेखों और मुद्राओं पर अंकित 'आदिवराह' विरुद से प्रतीत होता है कि वह वराहावतार की तरह मातृभूमि को अरबों (म्लेच्छों) से मुक्त कराना अपना कर्त्तव्य समझता था।

---

118 एपि० इण्डि०, खण्ड 12, पृ० 179, 184, 189.
119 एपि० इण्डि०, खण्ड 19, पृ० 176, पं० 11-12.
120 एपि० इण्डि० खण्ड 5, पृ० 188-97
121 वही० खण्ड 4, पृ० 278 तथा आगे।
122 त्रिपाठी, हिस्ट्री ऑफ कन्नौज, पृ० 241-42; मजूमदार, दि एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ० 31
123 एपि० इण्डि० खण्ड 7, पृ० 29.
124 इलियट और डाउसन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, खण्ड 1, पृ० 4

शासन प्रबन्ध

भोज के साम्राज्य में उत्तरप्रदेश, मध्यभारत, मालवा, राजस्थान, सौराष्ट्र, दक्षिण-पूर्वी पंजाब, पश्चिमी पंजाब का कुछ भाग और बिहार सम्मिलित थे। भोज की मृत्यु से पहले इसमें गुजरात का लाट (भड़ौच) क्षेत्र भी शामिल हो गया था। इतने बड़े साम्राज्य पर शासन करने के लिए उसने महासामन्त नियुक्त कर दिये थे। इनमें गुणाम्बोधिदेव (गोरखपुर), बाउक तथा कक्कुक प्रतीहार (मण्डोर-गुर्जरत्रा), हर्षराज ब्राह्मण (चाटसू), बाहुकधवल (काठियावाड़) चण्डमहासेन चाहमान आदि उल्लेखनीय हैं। ये सामन्त सम्राट के साथ युद्धों में भाग लेते थे। देवगढ़ (ललितपुर, उ०प्र०) ग्वालियर तथा उज्जयिनी में साम्राज्य सुरक्षार्थ विशेष व्यवस्था थी, जहाँ राज्यपाल और कोट्टपाल नियुक्त थे। इस सन्दर्भ में हरिहरनिवास द्विवेदी ने अपने ग्रंथ ''दिल्ली के तोमर'' में स्पष्ट किया है कि ''आदिवराह'' भोज के समय में प्रतीहारों का ग्वालियर और चम्बल क्षेत्र से सम्बन्ध बहुत स्पष्ट हो जाता है। भोज प्रतीहार ने अपने आवास के लिए ग्वालियर गढ़ पर महल का निर्माण कराया था और वहां उसकी रानियां भी रहती थीं। चतुर्भुज मंदिर के ग्वालियर गढ़ के वि०सं० 933 (876 ई०) के शिलालेख[125] में यह उल्लेख मिलता है कि यह मंदिर उस स्थान पर निर्मित था, जो भोजदेव के अन्तःपुर के झरोखे से दिखता था। भोज प्रथम के समय में गोपाचलगढ़ प्रतीहारों का प्रमुख स्कन्धावार था और वे चम्बल के दक्षिणी किनारे तक सुदृढ़ रूप से अधिकार किये हुए थे। चम्बल क्षेत्र के तोमरों को भी भोज प्रतीहार ने अपना सामन्त बना लिया। प्रतीहार राजाओं ने ग्वालियरगढ़ की प्रतिरक्षा का भार लाटमण्डल के ब्राह्मणों को दिया था। भोजकालीन कोट्टपाल ने अपने तथा अपनी पांच पत्नियों की पुण्यवृद्धि के लिए एक शैलोत्कीर्ण विष्णु मंदिर बनवाया था। मंदिर में अंकित शिलालेख से ज्ञात होता है कि बार्जार वंश में नागरभट्ट नामक एक कुमार लाटमण्डल के तिलक आनन्दपुर नगर से आया था। उसके बाइल्लभट्ट नामक पुत्र हुआ। वह वैयाकरण के साथ-साथ समशूर भी था। उसे रामभद्र प्रतीहार ने गोपाचलगढ़ का 'मर्यादाधुर्य' (सीमा रक्षक) नियुक्त किया था। इस बाइल्ल का पुत्र अल्ल हुआ जो पिता के बाद कोट्टपाल नियुक्त हुआ। कोटपाल (दुर्ग-रक्षक) अपने शास्त्र ज्ञान के विषय में मौन है; शस्त्र कौशल का ही बखान करता है। नागरभट्ट की आगामी पीढ़ियाँ शास्त्र भूलती गईं और मात्र क्षात्रधर्म से परिचित रह गईं।

पेहवा अभिलेख[126] के अनुसार दिल्ली के आदि तोमर राजा जाउल (736 ई०) के वंशज वज्रट (लगभग 850 ई०) ने प्रतीहार सम्राट भोज द्वितीय का पक्ष ग्रहण कर चम्बल क्षेत्र के दस्युओं का उन्मूलन करने में उसकी सहायता की। यही कार्य उसके पुत्र और पौत्र भी करते रहे। तोमरों की यह शाखा उनके आदि राजा जाउल की उस शाखा से सम्बन्धित थी जो उसके साथ न जाकर चम्बल क्षेत्र में ही रह गई।[127]

महेन्द्रपाल प्रथम (885-912 ई०)

भोज की मृत्यु के बाद उसकी रानी चन्द्रभट्टारिकादेवी से उत्पन्न उसका पुत्र महेन्द्रपाल कन्नौज की राजगद्दी पर बैठा। अभिलेखों में उसे महेन्द्रपाल, महेन्द्रपालदेव (गुनेरिया और ऊणा अभिलेख), महिन्द्रपाल, महेन्द्रायुध (एपि० इण्डि०, खण्ड 9, पृ० 2,5) और महिपपालदेव (इण्डि० एण्टि०, खण्ड 16, पृ० 174) कहा गया है। संस्कृत और प्राकृत के उसके दरबारी कवि राजशेखर ने उसे निर्भयराज और निर्भय नरेन्द्र भी कहा है, जो उसके विरुद जान पड़ते हैं। उसके शिलालेख

---

125 ग्वालियर राज्य के अभिलेख, क्र० 8; एपि०इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 156 पंक्ति 6 'श्रीभोजदेव प्रतोल्यावर्नार।'

126 एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 242.

127 दिल्ली के तोमर, पृ० 169-70.

वंगाल से काठियावाड़ तक तथा पेहोवा (कर्नाल, पंजाब) से सीयदोणि (सेरोन खुर्द, ललितपुर, उ०प्र०) तक फैले हुए हैं। इन अभिलेखों के प्राप्ति स्थान से प्रमाणित होता है कि उसने उत्तराधिकार में प्राप्त साम्राज्य को यदि विस्तृत नहीं किया तो सुरक्षित अवश्य रखा। उसका यह साम्राज्य उत्तर में हिमालय पर्वत से होकर दक्षिण में नर्मदा तक विस्तृत था।

पालों से सम्बन्ध

शिलालेखों के अवलोकन से विदित होता है कि मगध (दक्षिणी विहार) और उत्तर-पूर्वी वंगाल (पहाड़पुर, राजशाही जिला, बांगलादेश) तक गुर्जर-प्रतीहारों का प्रभुत्व अगले वीस वर्षों तक वना रहा। इस अवधि में नारायणपाल का कोई अभिलेख इस क्षेत्र से प्राप्त नहीं हुआ। इस विजय का श्रेय महेन्द्रपाल को देना चाहिए। महेन्द्रपाल की सेना के साथ चाटसू का गुहिल द्वितीय भी था जिसने गौड़ शासक को पराजित कर पूर्व देश के राजाओं से कर वसूल किया था।

चालुक्यों से सम्बन्ध

ऊणा से प्राप्त दो शिलालेखों से ज्ञात होता है कि सौराष्ट्र में महेन्द्रपाल के महासामन्त वाहुकधवल के पौत्र वलवर्मा चालुक्य तथा उसके पुत्र अवनिवर्मा द्वितीय उपनाम योग ने प्रतीहार साम्राज्य की निष्ठापूर्वक सेवा की। उपर्युक्त लेखों में क्रमशः सौराष्ट्र मण्डल के जयपुर और अम्बुलक नामक गांवों के तरुणादित्यदेव (सूर्य) के मंदिर को दान दिये जाने का उल्लेख है। ये दोनों महासामन्त और समधिगतपंचमहाशव्द[128] कहे गये हैं तथा उनके लेखों में परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर महेन्द्रायुधदेव का उल्लेख है, जिससे उन पर प्रतीहार सत्ता स्वीकार करने का वोध होता है। इसी प्रकार का एक दूसरा सामन्त चापवंशी धरणिवराह भी था जिसका 836 शक संवत् 914 ई० का हड्डाला (काठियावाड़ में स्थित) से एक अभिलेख[129] प्राप्त हुआ है। स्पष्टरूप से तो वह महीपाल (महेन्द्रपाल के पुत्र) का सामन्त ज्ञात होता है, किन्तु असंभव नहीं कि वह महेन्द्रपाल का भी सामन्त रहा हो।

कश्मीर के साथ सम्बन्ध

भोज प्रथम के राज्यकाल में कश्मीर की सीमा तक प्रतीहार साम्राज्य का विस्तार हो चुका था, जहां अलखन नामक प्रतीहारवंशी सामन्त कश्मीर नरेश से लोहा ले रहा था। अन्ततः कश्मीर नरेश ने प्रतीहार अलखन को पराजित कर उसकी कुछ भूमि टक्किय वंश को सौंप दी। इसके अतिरिक्त शेष पूर्वी पंजाव यथावत महेन्द्रपाल के प्रभुत्व में रहा।

मध्यभारत के साथ सम्बन्ध

सीयदोणी (सेरोन, ललितपुर, झांसी) के दो अभिलेखों से महाप्रतीहार महासामन्त उण्डभट नामक अधिकारी का ज्ञान होता है तथा वि०सं० 969 के एक तीसरे अभिलेख से सीयदोणी के प्रशासक धुर्भट का नाम ज्ञात होता है। उण्डभट तथा ग्वालियर क्षेत्र के महासामन्ताधिपति गुणराज के वीच मोहवर नदी के तट पर युद्ध हुआ जिसमें गुणराज का सहायक चांडियण कोट्टपाल मारा गया। राजस्थान-दिल्ली क्षेत्र में गूवक द्वितीय के पुत्र चन्दनराज तथा रुद्र तोमर के वीच भी इसी प्रकार के विवाद का उल्लेख मिलता है। मालवा में वाक्पति परमार प्रतीहारी सत्ता स्वीकार करता था। सामन्तों पर कड़ा नियंत्रण भविष्य में प्रतीहार साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुआ।

---

128 'समधिगत पंचमहाशव्द' का तात्पर्य उन सामन्तों से है जो शृंग, शंख, भेरी, जयघण्टा और तम्मट नामक पांच वाद्यों का प्रयोग कर सकते थे।

129. एपि० इण्डि० भाग 12, पृ० 193 तथा आगे।

महेन्द्रपाल और राजशेखर

महेन्द्रपाल एक अच्छा प्रशासक होने के साथ-साथ साहित्य का भी महान् आश्रयदाता था। महाकवि राजशेखर उसका आध्यात्मिक गुरु था। राजशेखर स्वयं को एक महामंत्री का पुत्र बतलाता है और भवभूति के माध्यम से अपने कवित्व का सम्बन्ध वाल्मीकि से जोड़ता है। उसका प्राकृत नाटक 'कर्पूरमंजरी' तथा संस्कृत 'महानाटक', 'बालरामायण' सर्वप्रथम महेन्द्रपाल के शासनकाल में अभिनीत किये गये। महेन्द्रपाल की मृत्यु के बाद भी राजशेखर उसके उत्तराधिकारी महीपाल के दरबार में बना रहा।

गुर्जर-प्रतीहार साम्राज्य अब अपने उच्च शिखर को प्राप्त हो चुका था। शत्रु शक्तिहीन बना दिये गये थे और अरबों के बढ़ते हुए प्रभाव को रोक दिया गया था।

महीपाल (912-931 ई०)

डा० पुरीका कथन है कि महेन्द्रपाल लगभग 910 ई० में मर गया और महीपाल सिंहासनारूढ़ हुआ। किन्तु राष्ट्रकूट शासक कृष्ण द्वितीय के पौत्र इन्द्र तृतीय के साथ कोकल्लदेव कलचुरि ने कन्नौज पर आक्रमण कर दिया और महीपाल को पराजित कर भोज द्वितीय को सिंहासन पर बैठा दिया। महीपाल कन्नौज छोड़कर चन्देलों की शरण में चला गया। भोज द्वितीय ने कुछ समय तक राज्य किया और जब उसके मित्र वापस गये तो महीपाल ने कन्नौज पर पुनः अधिकार करने की तैयारी की। इस समय कोकल्लदेव संभवतः जीवित नहीं था और राष्ट्रकूट भी सहायतार्थ नहीं आये। खजुराहो अभिलेख के अनुसार महीपाल या क्षितिपाल को चन्देल हर्ष भोज द्वितीय का विरोधी होने के कारण मदद पहुँचा रहा था।[130] यह धारणा विचार योग्य है कि महेन्द्रपाल प्रथम का अंतिम शिलालेख 908 ई० का है। उसके बाद 914 ई० के शिलालेख से ज्ञात होता है कि महीपाल शासनारूढ़ हो गया। कुछ विद्वानों का मत है कि महेन्द्रपाल प्रथम की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार का युद्ध हुआ और अल्पकाल के लिए महीपाल का सौतेला भाई भोज द्वितीय कन्नौज साम्राज्य का स्वामी बन बैठा। किन्तु यह धारणा अनुमान पर आधारित है। डा० कीलहार्न ने सर्वप्रथम यह मत प्रतिपादित किया कि विनायकपाल और महीपाल एक ही व्यक्ति हैं।

महीपाल के शासनकाल की मुख्य घटना राष्ट्रकुट नरेश इन्द्र तृतीय का आक्रमण है। इस इन्द्र की माता और दादी चेदि कुल की थी। भोज प्रथम की सेनाएं भृगुकच्छ (भड़ौच) तक आक्रमण कर चुकी थी। यद्यपि 910 ई० के आस-पास राष्ट्रकूट कृष्ण द्वितीय खेटकमण्डल पर पुनः अधिकार कर चुका था, फिर भी इन्द्र तृतीय ने पुराने घटनाक्रम को एक बार पुनः दोहराने का उपक्रम किया। खम्भात ताम्रपत्र लेख से ज्ञात होता है कि उसके 'मदस्रावी हाथियों के दांतों की चपेट से कालप्रिय मंदिर का मण्डप ऊबड़-खाबड़ हो गया; उसके घोड़ों ने 'सिन्धुप्रतिस्पर्द्धिनी' और तलहीन यमुना नदी को पार किया और उसने कुशस्थल नाम से प्रसिद्ध महोदयनगर (कन्नौज) को समूल उखाड़ फेंका।[131] इस संदर्भ में कालप्रिय (महाकाल) देवता के मंदिर के उल्लेख से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि इन्द्र की सेनाओं ने उज्जैन होते हुए अवन्ति के मार्ग प्रतीहार साम्राज्य पर धावा बोला था और उन्होंने यमुना नदी को पार कर प्रतीहार राजधानी (कन्नौज) को रौंद डाला था। किन्तु इन्द्र ने मालवा के कठिन मार्गों से होकर अपना आक्रमण नहीं किया, अपितु उसका मार्ग भोपाल-झांसी और कालपी (हमीरपुर उ०प्र०) से होकर था। इसके समर्थन में कालप्रिय देवता

---

130. एपि० इण्डि० खण्ड 1, पृ० 121 तथा आगे।

131. यस्माद् द्विपदन्तघातविषयं कालप्रिय प्रांगणम्।
तीर्णा यत्तुरगैरगाधयमुना सिन्धुप्रतिस्पर्द्धिनी।।
येनेदं हिं महोदयारिनगरं निर्मूलमुन्मूलितम्।
नाम्नाधापि जनैः कुशस्थल मिति ख्याति परांनीयते।। एपि० इण्डि०, खण्ड 7, पृ० 38, श्लो० 19.

का अभिज्ञान उज्जैन के महाकाल से न कर कालपी (कालप्रिय) के सूर्य (कालप्रिय) मंदिर से किया गया है।[132] इन्द्र के आक्रमण की घटना का उल्लेख कन्नड़ कवि पम्प ने भी किया है। कवि अपने आश्रयदाता के पिता नरसिंह द्वितीय की विजयों का वर्णन करते हुए लिखता है कि उसने 'घुर्ज्जरराज की सेनाओं को पराजित कर भगा दिया और अपनी विजय द्वारा विजय अर्थात् अर्जुन को भी मात कर दिया।' आगे कहा गया है कि महीपाल को 'मानों बिजली मार दी, वह भयभीत होकर भाग गया, यहाँ तक कि आराम करने, सोने अथवा भोजन के लिए भी नहीं रुका। उसका पीछा करते हुए नरसिंह ने अपने घोड़ों को गंगा के समुद्र से संगम पर स्नान कराया।[133] इस प्रकार राष्ट्रकूट आक्रमण से महीपाल कन्नौज छोड़ने को विवश हुआ।

धंग के खजुराहो अभिलेख में उपर्युक्त घटना का उल्लेख मिलता है। अभिलेख में कहा गया है कि हर्ष ने 'क्षितिपालदेव को पुनः सिंहासन पर स्थापित किया।'[134] इस क्षितिपाल की पहचान महीपाल से की गई है। चन्देलराज हर्ष प्रतीहारों का सामन्त था। उसने महीपाल को पुनः कन्नौज के राजसिंहासन पर बैठाया।

विजय

अपनी सत्ता और प्रभाव सीमा का विस्तार करते हुए महीपाल ने अनेक दिशाओं में विजय की। राजशेखर उसकी विजयों का वर्णन करते हुए कहता है कि "महीपालदेव ने मुरलों के शिरों के बालों को नमित किया, मेकलों को अग्नि के समान जला डाला, कलिंगराज को युद्ध में भगा दिया, केरलेन्दु अर्थात् केरलराज की केलि का अन्त किया, कुलूतों को जीता, कुन्तलों के लिए कुल्हाड़ी का काम किया तथा रमठ की राज्यश्री को बलपूर्वक जीत लिया।"[135] इन विजयों का वर्णन इस प्रकार है –

केरल – आज भी दक्षिण का प्रसिद्ध राज्य है।[136]

मुरल – यह हैदराबाद प्रान्त का उत्तरी भाग था।[137]

कुन्तल – कर्पूरमंजरी में विदर्भनगर (बरार) को कुन्तल में स्थित बताया गया है। इस समय यहाँ वल्हरा (वल्लभराज) या राष्ट्रकूट शासक राज्य करते थे।[138]

मेकल – यह बघेलखण्ड क्षेत्र था, जहां कलचुरि शासक राज्य करते थे।

कलिंग – उड़ीसा प्रदेश का एक भाग है।

कुलूत – कांगड़ा प्रान्त है। कुलूत की राजधानी नगर (कोट) की स्त्रियां हिमालय में महीपाल का यशोगान करती थीं।[139]

---

132. देखिए- मिराशी, भारती, मार्च 1951, पृ० 34-36.
133. राष्ट्रकूटाज एण्ड देयर टाइम्स, पृ० 101-02; मजूमदार, ज०डि०ले०, खण्ड 10, पृ० 66; गांगुली, इ०हि०क्वा०, जिल्द 10, पृ० 619.
134. एपि०इण्डि० खण्ड 1, पृ० 122 'पुनर्येन श्रीक्षितिपालदेव नृपति सिंहासने स्थापितः।'
135. नमित मुरलमौलिः पाकलो मेकलानाम्।
रणकलित कलिंगः केलितट केरलेन्दोः।
अजनि जितकुलूतः कुन्तलानां कुठारः।
हठहतरमठश्रीः श्रीमहीपालदेवः।। बालभारत, प्रथम, 17.
136. अवस्थी, प्राचीन भारत का भौगोलिक स्वरूप, पृ० 69.
137. वही, पृ० 70.
138. वही, पृ० 63-64.
139. वही, पृ० 88.

रमठ – पंजाब का एक प्रान्त है।[140]

पंजाब प्रदेश पर भोज का अधिकार था। किन्तु महेन्द्रपाल के शासनकाल में काश्मीर के राजा ने इसे जीतकर ठक्किय वंश के राजा को वापस दिला दिया। अतः महीपाल ने कुलूत और रमठ प्रदेशों को जीता। इसीप्रकार इन्द्रतृतीय की मृत्यु के बाद उसने कुन्तल देश की विजय की। परन्तु शेष देशों की विजयों का समर्थन अन्य स्रोतों से नहीं होता।

क्षेमीश्वर के चण्डकौशिकम् नामक नाटक में एक श्लोक आता है, जिससे कुछ विद्वानों ने महीपाल की कर्णाट पर विजय स्वीकार की है। कवि का कथन है कि 'चन्द्रगुप्त ने आचार्य चाणक्य की नीति का अनुसरण कर नन्दों को हराया और कुसुमनगर (पाटलिपुत्र) को जीता। वही पुनः कर्णाट रूप से पुनर्जात नन्दों का वध करने के लिए महीपाल के रूप में प्रकट हुआ।[141] उपर्युक्त महीपाल का अभिज्ञान प्रतीहार महीपाल से किया गया है। इसी प्रकार विद्वानों ने कर्णाट शासक की पहचान मान्यखेट के राष्ट्रकूटों से की है। इन्द्र तृतीय लगभग 929 ई० तक जीवित रहा किन्तु उसने उत्तर भारत पर दोबारा आक्रमण नहीं किया। कर्णाटों पर महीपाल की विजय का समर्थन बालादित्य के चाट्सु अभिलेख के एक श्लोक[142] से होती है, जो महीपाल की आज्ञा में रत उसके सामन्त भट्ट की दक्षिण विजयों का उल्लेख करता हुआ कहता है कि दक्षिणी समुद्र ने उसे रत्न भेंट किये।

इस प्रकार महीपाल ने प्रतीहार साम्राज्य का विस्तार किया। राजशेखर के कथन की पुष्टि दसवीं शताब्दी के फारसी भाषा में लिखे भौगोलिक ग्रंथ हुददुल आलम[143] से भी होती है। इसमें लिखा गया है कि भारत के अधिकांश शासक "किनौज के राय' की आज्ञा को शिरोधार्य करते थे। तदनुसार उत्तरप्रदेश और पंजाब से भी आगे काबुल के शाही राजा उसकी अधिसत्ता स्वीकार करते थे। उसकी सेना में 150,000 घोड़े तथा 800 हाथी थे।" प्रतीहार शासक अश्वसेना पर जोर देते थे। इसलिए इतनी अधिक घुड़सवार सेना का उल्लेख मिलता है। अलमसूदी ने लिखा है कि कन्नौज में चार दिशाओं की चार सेनायें हैं और कन्नौज के सम्राट का राज्य सिन्ध में भी है।

मूल्यांकन

महीपाल केवल योद्धा ही न था अपितु कला और साहित्य का महान् आश्रयदाता था। उसके शासनकाल में राजशेखर ने 'प्रचण्डपाण्डव' तथा क्षेमीश्वर ने 'चण्डकौशिकम्' नाटक लिखे और संभवतः दोनों ही नाटकों का महीपाल के दरबार में अभिनय किया गया। राजेश्वर का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ 'काव्यमीमांसा' उसी के शासनकाल में लिखा गया। क्षेमीश्वर का एक दूसरा ग्रंथ 'नैषधानन्द' की भी रचना इसी समय हुई।

इस प्रकार महीपाल का जीवन सफल रहा। उसने न केवल अपने सामन्तों की सहायता

---

140. वही, पृ० 93.
141. यः संसृत्यप्रकृतिगहनामाचार्यचाणक्य नीतिं,
     जित्वा नन्दान्कुसुमनगरं चन्द्रगुप्तो जिगाय।
     कर्णाणत्वं ध्रुवमुपगतानद्य तानेव हन्तुं
     दोर्दाद्र्यः स पुनरभवच्छी महीपालदेवः।। चण्डकौशिक नाटक की प्रस्तावना, जीवानन्द विद्यासागर संस्करण, पृ० 5.
142. अक्रान्ता वीक्ष्य सैन्यैर्व्वि ... तटीर भग्नानानगौधः
     भीतो वन्धादिवालं पनरमृदु भरुद्वेपमानोर्विवाहुः।
     यस्यादाद्दक्षिणाब्धिः समिति जितवतो दाक्षिनात्यान क्षितीशान
     ईशदेशादशेपान लसदसम रूचो वेलया रत्नराजीः।। एपि० इण्डि०, खण्ड X, पृ० 10 टिप्पणी.
143. देखिए, इण्टरनेशनल कांग्रेस ऑफ ओरियण्टलिस्ट्स, 1964, नई दिल्ली, लेखों का संक्षेप, पृ० 77-78.

से इन्द्र राष्ट्रकूट की सेना को अपने साम्राज्य से वाहर खदेड़ किया वल्कि राष्ट्रकूटों के सामन्तों और मित्रों पर आक्रमण करके उसने राष्ट्रकूट शत्रु से अपनी हार का प्रतिशोध लिया। जीवनकाल की संध्यावेला में उसकी कुछ भूमि पर पाल शासक नारायणपाल ने अधिकार कर लिया,[144] किन्तु उसने इसकी पूर्ति उत्तर-पश्चिम के क्षेत्रों को जीतकर कर ली। सामन्ती व्यवस्था से साम्राज्य भीतर ही भीतर कमजोर हो रहा था फिर भी उनकी वाहरी शान शौकत ज्यों की त्यों वनी हुई थी और कन्नौज भारतीय संस्कृति का केन्द्र वना हुआ था।[145]

विनायकपाल प्रथम (931-43 ई०)

विनायकपाल के वंगाल एशियाटिक सोसायटी दानपत्र में उसके एक सौतेले भाई भोज का उल्लेख है, किन्तु उसके शासनकाल की कोई जानकारी उपलव्ध नहीं है। भोज द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका भाई विनायकपाल प्रथम हुआ। वह महादेवी देवी के गर्भ से उत्पन्न महेन्द्रपाल का पुत्र था। कुछ इतिहासकार विनायकपाल और महीपाल को एक ही मानते हैं। इसका मुख्य आधार खजुराहो अभिलेख (वि०सं० 1011) के हयपति देवपाल और सीयदोणि अभिलेख के देवपाल को एक ही व्यक्ति स्वीकार करना है। डा० दशरथ शर्मा इस मत का खण्डन करते हैं।[146]

विनायकपाल के शासनकाल में राष्ट्रकूटों का पुनः आक्रमण हुआ। अमोघवर्ष तृतीय के युवराज कृष्ण ने चेदियो (कलचुरियों) को हराते हुए उत्तर की ओर प्रस्थान किया और प्रतीहारों के दुर्ग कालिंजर तथा चित्रकूट (चित्तौड़) छीन लिए। किन्तु शीघ्र ही चेदि देश के युवराजदेव प्रथम ने राष्ट्रकूटों को मार भगाया। हर्ष के उत्तराधिकारी यशोवर्मा चन्देल ने राष्ट्रकूट आक्रमणों का लाभ उठाकर कालंजर वैसे ही हथिया लिया जैसे उसके पिता हर्ष ने चित्रकूट ले लिया था। म०प्र० के सतना जिले में मैहर - अमरपाटन मार्ग पर स्थित जूरा नामक स्थान में राष्ट्रकूट शासक कृष्ण तृतीय का एक अभिलेख है[147] जो प्रतीहार साम्राज्य के कुछ दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्रों पर उसके अधिकार का द्योतक है। वास्तव में अपने नाममात्र के प्रतीहार सम्राट महीपाल से यशोवर्मा चन्देल कालिंजर पहले ही ले चुका था और राष्ट्रकूटों के आक्रमण के परिणामस्वरूप प्रतीहारों के मन में उन्हें पाने की आशा धूमिल हो चुकी थी।[148]

राजस्थान में भी वाक्पतिराज प्रथम, शाकम्भरी के राजा ने महाराज की उपाधि ग्रहण कर ली और सम्राट के तन्त्रपाल क्षपाल की हस्तिसेना को अपने अश्वारोहियों द्वारा पीछे धकेल दिया।

इसी प्रकार गुजरात में मूलराज सोलंकी ने अनहिलवाडापट्टन के स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की किन्तु मालवा में वैरिसिंह (वज्रट) परमार के धारा के एक स्वतंत्र राज्य निर्माण करने के प्रयत्न को विनायकपाल के सेनापति भामनदेव कलचुरि ने असफल वना दिया।

विनायकपाल की मुद्राओं में 'द्रम्म' नामक सिक्के मिले हैं। ये सिक्के प्रतीहार साम्राज्य की प्रतिष्ठा के सूचक हैं। चन्देरी के पास रखेत्र के शिलालेख से ज्ञात होता है कि विनायकपाल ने 95-96 करोड़ मुद्रा खर्च करके उर नदी के जल की व्यवस्था की।[149] उसका साम्राज्य वाराणसी से एक ओर ग्वालियर और दूसरी ओर उज्जैन तक विस्तृत था।

---

144. एपि० इण्डि०, खण्ड XLVII, पृ० 110.
145. राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 185-87.
146. राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 189.
147. ज०बि०ओ०रि०सो०, 1928, पृ० 476 तथा आगे।
148. यस्यपरुपेक्षिताखिलदक्षिणदिग्दुर्गविजयमाकर्ण्य गलितागुर्ज्जरहृदयात्कालंजर चित्रकूटाशा। अभिलेख, श्लो० 30; देवली अभिलेख, श्लो० 25.
149. वार्षिक रिपोर्ट आ० स० इ०, 1924-25, पृ० 168.

महेन्द्रपाल द्वितीय (ल० 943-48 ई०)

विनायकपाल के वाद रानी प्रसाधनादेवी से उत्पन्न उसका पुत्र महेन्द्रपाल द्वितीय प्रतीहार राजसिंहासन पर वैठा। उसकी जानकारी केवल एक अभिलेख[150] से होती है, जो वि०सं० 1003=946 ई० में महोदय (कन्नौज) से प्रकाशित हुआ था और दक्षिण राजपूताना के प्रतापगढ़ नामक स्थान में मिला था। इस अभिलेख के प्रथम भाग से ज्ञात होता है कि महेन्द्रपाल ने घोण्टावार्षिका (घोटार्सी ग्राम, परतावगढ़ से सात मील दूर) के समीप पश्चिमी पथक में स्थित एक ग्राम वटयक्षिनी देवी के मंदिर को समर्पित किया गया था। अभिलेख श्री विदग्ध द्वारा हस्ताक्षरित है। डा० दशरथ शर्मा[151] के अनुसार श्री विदग्ध महेन्द्रपाल का उपनाम है।

उक्त अभिलेख के दूसरे भाग से ज्ञात होता है कि इन्द्रराज नामक उसका कोई चाहमानवंशी सामन्त था और माधव उज्ञयिनी में महेन्द्रपाल के महासामन्त दण्डनायक तंत्रपाल तथा श्रीशर्मा मंडपिका अर्थात् मांडू में वलाधिकृत रूप में शासन करता था।[152] इस भाग में दशपुर (मन्दसौर) में हरि ऋषीश्वर के मठ को दिये गये दान का उल्लेख है। प्रकट है कि महेन्द्रपाल के समय में भी प्रतीहारों का अवन्ति मालवा के दशपुर, माण्डू, उज्जैन और प्रतापगढ़ जैसे स्थानों पर अधिकार पूर्ववत बना हुआ था। शासन प्रणाली संगठित थी, किन्तु तन्त्रपाल के हस्ताक्षर स ग्रामदान प्रारम्भ हो गया था। इससे स्पष्ट है कि प्रान्तीय प्रशासक असीमित अधिकारों का उपयोग करते थे।

देवपाल (ल० 948-59)

महेन्द्रपाल का शासनकाल अत्यल्प रहा। सीयदोणी प्रस्तर अभिलेख[153] के अनुसार वि०सं० 1005 = 948 ई० में महीपाल-क्षितिपाल के पुत्र का शासन प्रारम्भ हो चुका था। अभिलेख से ज्ञात होता है कि महोदय (कन्नौज) के उस शासक ने सीयदोणी (ललितपुर जिले के सिरोन खुर्द) में ब्राह्मणों को भूमिदान किया था। दानकर्त्ता शासक महेन्द्रपाल का छोटा भाई प्रतीत होता है। खजुराहो से प्राप्त एक अभिलेख में कहा गया है कि चन्देल शासक यशोवर्मा ने वलपूर्वक हेरम्वपाल के पुत्र हयपति देवपाल को वैकुण्ठ की एक मूर्ति भेंट करने को विवश किया, जिसे उसने (देवपाल ने) स्वयं हाथियों और घोड़ों की एक सैनिक टुकड़ी देकर कीर के शाही राजा से प्राप्त किया था। कीर के शासक को वह मूर्ति भोटराज से मित्रता में उपहारस्वरूप मिली थी, जिसे उसने (भोट शासक ने) कैलाशपर्वत से मंगाया था।[154] देवपाल के समय में ही चन्देल शासक यशोवर्मा ने कालंजर का दुर्ग बड़ी आसानी से जीत लिया। यहाँ तक.कहा गया है कि वह 'गुर्जरों के लिए एक जलती हुई अग्नि के समान था।[155] प्रतीत होता है कि प्रतीहारों की राजनीतिक सत्ता और प्रतिष्ठा का तेजी से हास हो रहा था और उनके स्थान पर चन्देल प्रवल हो रहे थे।

आहाड़ से प्राप्त एक अभिलेख[156] में कहा गया है कि गुहिलराज अल्लट ने किसी

---

150. एपि० इण्डि० खण्ड 14, पृ० 176-88.
151. राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 195.
152 डा० शर्मा का मत है कि गी०ही० ओझा ने भूल से मण्डपिका को मण्डप अथवा माण्डू दुर्ग समझ लिया है। वही, पृ० 194 पादटिप्पणी.
153. एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 162-79.
154. कैलाशाद्भोटनाथः सुहृददिति चततः कीरराजः प्रपेदे।
साहिस्तस्मादवापद्विप तुरंग वलेनानु हेरम्वपालः।।
तत्सूनोर्देवपालातमथ हयपतेः प्राप्य निन्ये प्रतिष्ठां।
वैकुण्ठं कुण्ठितारिः क्षितिधरतिलकः श्री यशोवर्मराजः।। एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 129.
155. वही, खण्ड 1, पृ० 132, श्लो० 23 तथा 31.
156. वही, जिल्द 2, पृ० 428.

देवपाल को युद्ध में मार डाला। क्योंकि अल्लट का वहीं से वि०सं० 1008-951 ई० का दूसरा अभिलेख[157] भी मिला है, इसलिए ऊपर के अभिलेख की तिथि न ज्ञात होते हुए भी यह घटना उसके आसपास की ही मानी जा सकती है। यही समय देवपाल का भी था। डा० ओझा[158] भी अल्लट द्वारा हत देवपाल को प्रतीहार वंशी देवपाल मानते हैं। अब सीयक ने अपना सम्बन्ध प्रतीहारों से तोड़कर राष्ट्रकूटों से जोड़ लिया था।[159] वाक्पतिराज द्वितीय या मुंज ने बिना प्रतीहार सम्राट के नामोल्लेख के ही भूमिदान प्रारम्भ कर दिया था।[160] उसने परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर की उपाधि धारण करना प्रारम्भ कर दी थी। इस प्रकार अब वह सर्वथा स्वतंत्र शासक की हैसियत से शासन कर रहा था। उदयपुर प्रशस्ति[161] में कर्णाटों, लाटों (दक्षिणी गुजरात) केरलों (केरल), चोलों और चेदियों पर मुंज ने विजय प्राप्त की। यह वही मुंज है जिसने गुहिलों की राजधानी आघाट को ध्वंस करके चित्तौड़ तक अपने राज्य में मिला लिया था। मुंज की मुठभेड़ नाडोल को चौहानों से भी हुई। इसी समय परमार कुल की शाखाएं चन्द्रावती (आबू) जालोर, अर्थूणा (वागड़) में राज्य कर रहीं थी। मेदपाट (मेवाड़) के गुहिलों ने राष्ट्रकूटों तथा चाहमानों से वैवाहिक सम्बन्ध करके अपनी स्थिति सुदृढ़ बना ली थी। अल्लट के उत्तराधिकारी नरवाहन ने किसी चाहमान राजा की पुत्री से विवाह किया, जबकि दो पीढ़ी पहले से राष्ट्रकूटों से गुहिलों की नातेदारी चली आ रही थी।

शाकम्भरी के चौहान

शाकम्भरी के चाहमानों ने भी स्वतंत्रता घोषित कर ली। सिंहराज ने दिल्ली के तोमर सलवण का युद्ध क्षेत्र में वधकर उसके कई राजकुमार-मित्रों को बन्दी बना लिया और उन्हें तब छोड़ा जब 'रघुकुल भू चक्रवर्ती' (प्रतीहार सम्राट) स्वयं उसके घर (शाकम्भरी) उन्हें छुड़ाने हेतु आया। विग्रहराज के हर्ष प्रस्तर अभिलेख[162] से ज्ञात होता है कि सिंहराज का पुत्र विग्रहराज द्वितीय अधिक पराक्रमी हुआ। उसने सम्राट की उपाधि ग्रहण कर ली और नये प्रदेशों को विजित करने लगा। इसी समय 967 ई० में विग्रहराज के चाचा लक्ष्मण ने नादोल का स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया था।

उत्तरी राजस्थान में राजोर का राजा मथनदेव प्रतीहार अपने शिलालेख[163] में सम्राट विजयपाल को तो मानता है किन्तु अपने को महाराजाधिराज परमेश्वर कहता है। महाराजाधिराज निष्कलंक सीयदोणी अभिलेख में कन्नौज सम्राट का नाम नहीं देता। इसी प्रकार वि०सं० 1040/984 ई० में नीलकंठ का पुत्र जो संभवतः निष्कलंक का पौत्र था, शिलालेख में किसी सम्राट का उल्लेख नहीं करता।

विजयपाल (ल० 959-84 ई०)

वि०सं० 1016/959 ई० के राजोर अभिलेख से ज्ञात होता है कि मथनदेव 'गुर्जर

---

157. इण्डि० एण्टि०, खण्ड 55, पृ० 162.
158. राजपूताने का इतिहास, खण्ड 1, पृ० 429.
159. एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 235.
160. इण्डि०एण्टि०, खण्ड VI, पृ० 48-53; खण्ड 14, पृ० 156-61.
161. कर्णाट लाट केरल चोल शिरो रत्न रागि पदकमलः।
     यश च प्रणयि गणार्थित दाता कल्पद्रुमप्रख्या।। एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 235.
162. तोमरनायकं सलवणं सैन्याधिपत्योद्धतं
     युद्धे येन नरेश्वराः प्रतिदिशं निर्ना (ण्णा) शिता विष्णुना।
     कारावेश्मनि भूरयश्च विधृतास्तावद्धि यावद्गृहे।
     तन्मुक्त्यर्थमुपागतो रघुकुले भूचक्रवर्ति स्वयं।। एपि० इण्डि०, खण्ड 2, पृ० 121-122, श्लो० 19
163. वही, खण्ड 3, पृ० 226.

प्रतीहारान्वय' सावट का पुत्र था। वह महाराजाधिराज और परमेश्वर के विरुदों को धारण करता था। राजोर (अलवर क्षेत्र के राजगढ़ जिले में स्थित) से शासन करने वाला यह प्रतीहारवंशी शासक अपने वड़े विरुदों के वावजूद कन्नौज के प्रतीहारों की अधिसत्ता स्वीकार करता था। यह इस वात से प्रमाणित है कि उसी अभिलेख में परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्री क्षितिपालदेवपादानुध्यात परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्री विजयपालदेव के उस समय शासन करने की वात कही गई है। तो भी, यह समय प्रतीहार साम्राज्य के विघटन का था। राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय ने विजयपाल के प्रारम्भिक काल में ही (ल० 963 ई०) प्रतीहार साम्राज्य पर आक्रमण कर दिया। इस अभियान में उसका सेनापति गंगवाड़ी का मारसिंह था जिसके वारे में श्रवणवेलगोल (हासन जिला, कर्नाटक) के अभिलेख[164] में वर्णन आता है कि उसने उत्तरी भारत को जीत लिया। इस सफलता के उपलक्ष में मारसिंह को 'घूर्जरराज' (गुर्जरराज) की उपाधि मिली थी। इस आक्रमण के परिणामस्वरूप सामन्तों पर प्रतीहार सम्राट का प्रभाव ढीला हो गया। प्रतीत होता है कि कृष्ण तृतीय ने एक दूसरा आक्रमण भी किया जिसकी पुष्टि जूरा प्रशस्ति (मैहर तहसील, सतना, म०प्र०) से होती है।

सामन्त

चन्देल

समीपवर्ती चन्देलों का राज्य विस्तार तेजी पर था। चंदेल धंग अव प्रयाग और वाराणसी तक अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार कर चुका था।[165]

कलचुरि

गोहरवा दानपत्र[166] में लक्ष्मणराज कलचुरि को वंगाल, पाण्ड्य, लाट (दक्षिणी गुजरात) गुर्जर मारवाड़ तथा कश्मीर के राजाओं का जीतने वाला कहा गया है। प्रतीत होता है कि गुर्जरों के साथ युद्ध में कलचुरि लोग चन्देलों के साथी थे।

सोलंकी - परमार

मूलराज सोलंकी ने भड़ौच पर विजयप्राप्त कर अव उसने सौराष्ट्र को हाथ लगाया। मालवा का कुछ भाग परमार सीयक के अधिकार में जा चुका था। निर्वल पाल शक्ति के कारण विजयपाल को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँची। तो भी, प्रतीहार साम्राज्य अव अन्तर्वेदि (गंगा-यमुना दोआव) में ही सीमित रह गया था।

राज्यपाल

त्रिलोचनपाल के झूसी ताम्रपत्र[167] (वि०सं० 1084/1026 ई०) से यह स्पष्ट नहीं होता कि राज्यपाल, विजयपाल का पुत्र था या भाई। सिन्ध तथा मुलतान के अरवों के विरुद्ध कई पीढ़ियों तक जिन लोगों ने वीरता, शौर्य और धैर्य का परिचय दिया था, उनकी सन्तानों में अव न वे सद्गुण शेष थे और न देश की परिस्थिति ऐसी थी कि वे किसी नये विदेशी संकट का सामना कर सकते। गुर्जर-प्रतीहार साम्राज्य पतन की अवस्था को ही पहुँच चुका था कि विजयपाल प्रतीहार के शासनकाल में भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर एक नये शक्ति केन्द्र की स्थापना हुई

164. वही, खण्ड 5. पृ० 176.
165. इण्डि०एण्टि०, खण्ड 16, पृ० 203, 206; एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 139-146.
166. एपि० इण्डि०, खण्ड 9, पृ० 146.
167. इण्डि० एण्टि०, खण्ड 18 पृ० 34.

जहाँ से गजनी के पहले शासक सुबुक्तगीन तुर्क ने भारत के विरुद्ध सैनिक अभियान प्रारम्भ किया। इस समय प्रतीहार साम्राज्य के प्रदेश एक-एक कर कन्नौज सत्ता की अधीनता से पृथक् होते जा रहे थे। कावुल का हिन्दू शाही वंश पहले तो तुर्क पड़ोसियों से लोहा लेता रहा, जिससे भारत के अन्य भागों के राजाओं के तुर्कों के खतरे को महसूस नहीं किया। किन्तु राज्यपाल के सिंहासनारोहण के समय तक गजनी की सैनिक शक्ति वढ़ने लगी (986 ई) और सुवुक्तगीन के लगातार हमलों के कारण राजा जयपाल को कावुल छोड़कर पीछे हटना पड़ा। अव उसने अपनी राजधानी ओहिन्द (पंजाव) में स्थापित की। हस्ति सेना को सुदृढ़ किया और पूर्व में राज्य की सीमा का विस्तार लाहौर तक कर लिया (999 ई०)। इस समय गजनी का राज्य सुवुक्तगीन के पुत्र महमूद जैसे होनहार तथा प्रतिभाशाली के हाथों में आ चुका था (997 ई०) और जव सन् 1001 में महमूद जयपाल पर हमला करने चला तो दिल्ली (तोमर) अजमेर (सांभर के चौहान), कालंजर (चंदेल) तथा कन्नौज (गुर्जर-प्रतीहार) की सेनाएं सहायता को आईं। उत्तरकालीन फरिश्ता के इस कथन का उल्लेख समकालीन गजनी के इतिहास में नहीं मिलता। गजनी के रिसाले (अश्व सेना) की रोक के लिए जो हाथी जयपाल ने एकत्र किये थे, वे हरजाने में देना पड़े। जयपाल ने चिता में जलकर अपनी हार का क्लेश मिटाया। उसके उत्तराधिकारी आनन्दपाल के शासनकाल में अधिक तैयारी सहित महमूद ने शाही राज्य पर चढ़ाई की (1008 ई०)। इतिहासकार फरिश्ता का कथन है कि कन्नौज सेना महमूद से लड़ने के लिए आई और उज्जैन (परमार), ग्वालियर (कच्छपघात) कालंजर (चंदेल), दिल्ली (तोमर) तथा अजमेर (सांभर के चौहान) के राजाओं ने भी सहयोग दिया। इस संघ की चर्चा भी गजनी के राजकीय इतिहास में नहीं मिली। ओहिन्द (पंजाव) के युद्ध में महमूद ने शानदार विजय प्राप्त कर नगरकोट कांगड़ा के चक्रस्वामी के मंदिर को लूटा और आनन्दपाल को महमूद की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। अव पंजाव का रास्ता साफ था और पंजाव के आगे वे नवीन राज्य थे जो कन्नौज की प्रतीहारी सत्ता से स्वतंत्र हो गये थे। 1014 ई० में महमूद की सेनाएं थानेश्वर के आक्रमण में पूर्वी पंजाव तक पहुँच गईं। थानेश्वर का नगर तोमरों के अन्तर्गत था जो पहले प्रतीहार साम्राज्य के तन्त्रपाल, फिर महासामन्त और दिल्ली के राजा थे। सांभर के चाहमानों से इनकी शत्रुता चल रही थी और एक के स्थान पर दो दो तोमर राजा चाहमानों के हाथों मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। थानेश्वर लूटा गया और चक्रस्वामी की विष्णु की मूर्ति महमूद उठा ले गया। उसके कुछ समय पश्चात् महमूद ने हिन्दू शाही राजा आनन्दपाल के पुत्र त्रिलोचनपाल को हटाकर पंजाव का अधिकांश भाग गजनी साम्राज्य में मिला लिया।

1018 ई० में महमूद वृहद् सेना लेकर कन्नौज के भाग्य का निपटारा करने के लिए गंगा-यमुना क्षेत्र की ओर वढ़ने का साहस करता है और अव उसका मार्ग रोकने वाला कोई नहीं था। दिल्ली के आगे वरन (वुलन्दशहर) में डोड़ राजपूतों का राज्य था यमुना नदी पार करके महमूद वरन (राजा हरदत्त) का दुर्ग जीतकर महावन (राजा कुलचन्द्र) पर अधिकार करते हुए मथुरा को लूटता-खसोटता है। किन्तु उस समय कन्नौज की सेना का कहीं भी पता नहीं था। महमूद अन्तर्वेद की भूमि को पार करके सीधा गंगा के पश्चिमी तट पर स्थित कन्नौज की राजधानी के फाटक पर 20 दिसम्वर 1018 ई० को आ धमका। उत्तरी भारत के वड़े-वड़े राजाओं का स्वार्थ विचारणीय है कि सवके सव अपनी-अपनी जगह पर जमे वैठे वे टस से मस नहीं हुए और तुर्कों की विशालसेना के मुकाविले पर अकेले सम्राट राज्यपाल को छोड़ दिया गया। यद्यपि कन्नौज एक सुरक्षित नगर था और एक छोड़ सात-सात गढ़ उसकी रक्षा कर रहे थे तथापि कौन-सी परिस्थितियाँ राज्यपाल को विवश कर रही कि उसने महानगर को छोड़कर गंगा पार वारी के दुर्ग में शरण ली।। वारी सरयू नदी, राहव नदी तथा कामनी नदी के संगम पर गंगा की पूर्व दिशा में स्थित है। वह कन्नौज से पूर्व दिशा में है। राज्यपाल किले में वन्द तो हो गया। किन्तु नगरवासियों को विदेशी आक्रामक की दया पर छोड़ दिया गया। महमूद ने एक दिनमें सातों गढ़ों

पर कब्जा करके नगर को लूटा और नगरवासियों का कत्लेआम किया। महमूद तो केवल धन लेने के लिए आया था, अतः ध्येय पूरा करके लौट पड़ा। महीपाल प्रतीहार के समय में जव जव राष्ट्रकूट इन्द्र तृतीय ने कालपी के मार्ग से यमुना पार करके कन्नौज पर चढ़ाई की थी, तव भी इस राजधानी का विध्वंस किया गया था। विक्रमार्जुन विजय में लिखा है कि दक्षिण का यह हमला एक प्रकार की कयामत ही थी। इस प्रकार दोनों ही अवसरों पर डट कर मुकाविला किया गया। डा० दशरथ शर्मा का कथन है कि राजस्थानी सैनिक जिनके वल पर प्रतीहारों ने कन्नौज का साम्राज्य स्थापित किया था, अव वही लोग सामन्तों की ओर से प्रतीहारों के विरुद्ध लड़ने लगे थे और प्रतिहारों के उत्तरकालीन युद्ध किराये के टट्टू' लड़ते थे, जिनकी भक्ति प्रतीहार वंश के साथ नहीं थी।[168] जो भी हो महमूद ने कन्नौज से लौटते हुए मार्ग में मुंज, असी, शर्वा जैसे स्थानों को अधिकार में किया और कन्नौज की लूट तथा पकड़े हुए दासों को लेकर गजनी लौट गया (1019 ई०)।[169]

जिस समय शत्रु के आक्रमण साम्राज्य की जड़ें खोखली कर रहे थे, उस समय सभी राजा चुपचाप वैठे थे। किन्तु जैसे ही उसकी पीठ फिरी कि खजुराहो के चन्देल राजा गण्ड को प्रतीहारों के साथ पुराने वैर भंजाने की सूझी। राज्यपाल पर यह अपराध लगाया गया कि महमूद गजनवी के आक्रमण में उसने कायरता क्यों दिखलाई? राज्यपाल के इस दोप के लिए उसे दण्डित करने के लिए उसने अपने युवराज विद्याधरदेव के सेनापतित्त्व में राज्यपाल के विरुद्ध एक सेना भेजी। दुवकुण्ड के शिलालेख[170] से ज्ञात होता है कि चन्देलों के सामन्त, ग्वालियर के कच्छपघात अर्जुन का वाण राज्यपाल के कण्ठ पर लगा जिससे उसकी मृत्यु हो गई।

त्रिलोचनपाल (1019 ई०)

महमूद राज्यपाल प्रतीहार को अपना अधीनस्थ जानकर चन्देलों से वदला लेने के लिए अगले वर्प पुनः लौटकर आया। किन्तु इस वार परिस्थितियॉ परिवर्तित थीं। हिन्दू शाही आनन्दपाल का पुत्र त्रिलोचनपाल तथा गुर्जर-प्रतीहार राज्यपाल का उत्तराधिकारी त्रिलोचनपाल ये दोनों एक नामवाले राजा - विद्याधर चन्देल के मित्र और पक्षधर थे। पहले तो शाही त्रिलोचनपाल ने राहव नदी (रामगंगा) पर महमूद का रास्ता रोकना चाहा। मगर सफल न हुआ। महमूद का दूसरा आक्रमण प्रतीहार त्रिलोचनपाल पर हुआ। त्रिलोचनपाल जिसकी राजधानी अव वारी थी, मुकाविले का साहस न कर सका क्योंकि न तो चंदेल ही उसकी सहायता के लिए आये और न महमूद की सेना से निपटना कोई आसान काम था। जव विद्याधर की लड़ने की वारी आई तो दिन में कुछ हलचल दिखलाकर रात को अंधेरे में वह युद्धभूमि छोड़कर चला गया।

महमूद के आक्रमण के पश्चात् त्रिलोचनपाल का राज्य वना रहा। यद्यपि 1026 ई० में पालवंशी महीपाल का अधिकार वाराणसी पर था तथापि 1030 ई० में अलवीरूनी के उल्लेख से ज्ञात होता है कि प्रतीहारों की राजधानी वारी में वर्तमान थी। किन्तु राज्य का विस्तार कितना था इसकी जानकारी नहीं है। त्रिलोचनपाल के वि०सं० 1048/1027 ई० के झूसी (प्रतिष्ठान इलाहावाद) ताम्रपत्र में सम्राट की परम्परागत उपाधि 'परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर' का प्रयोग किया गया है। 1034 ई० में वाराणसी पर कर्णदेव (कलचुरि) का अधिकार था। त्रिलोचनपाल के मृत्यु की तिथि अज्ञात है।

यशःपाल

1036 ई० के कड़ा (इलाहावाद) में मिले महाराजाधिराज यशःपालदेव के अभिलेख के आधार पर इतिहासकारों ने अनुमान लगाया है कि यशःपाल, त्रिलोचन का उत्तराधिकारी,

---

168 राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 208-9.
169 इलियट, जिल्द 2, पृ० 42-43.
170 इपि० इण्डि० खण्ड 2, पृ० 232.

कौशाम्बी[171] मण्डल (जिला इलाहाबाद) का राजा था। हो सकता है कि वह कड़ा से ही शासन करता रहा हो। उसके बाद का इतिहास अन्धकार में है। कन्नौज पर एक स्थानीय राष्ट्रकूट (राठौर गाहड़वाल) वंश ने अधिकार कर लिया जिसके अस्तित्व का पता 1050 ई० के लाट के चालुक्यों के शिलालेख तथा बदायूँ के लखनपाल (राठौर) के शिलालेख से चलता है।

सिंहावलोकन

राजस्थान के अन्य राजवंशों को मिलाकर और दन्तिदुर्ग राष्ट्रकूट के साथ मिलकर, नागभट्ट प्रथम ने अरबों को लाट देश (राजधानी भड़ौच) से भगाया, जालौर में राजधानी स्थापित की और उज्ञयिनी में आयोजित राजाओं के हिरण्यगर्भ महादान में सम्मिलित होकर मानों पृथ्वी के उद्धार के लिए नया अवतार लिया। इसीलिए भोज प्रथम की ग्वालियर प्रशस्ति में अंकित है कि पीड़ित जनों की प्रार्थना पर नामभट्ट ने नारायण के समान प्रकट होकर शक्तिशाली म्लेच्छ शासक की विशाल सेनाओं का दमन कर दिया। नागभट्ट द्वितीय ने भी तुरुष्कों (अरबों) के दुर्ग छीने थे। अतः उसकी तुलना धरती का उद्धार करने वाले विष्णु के अवतार आदिवराह से की गई है। उत्तरकालीन सम्राटों-भोज प्रथम तथा विनायकपाल ने आदिवराह की उपाधि ग्रहण की। उसका भी तात्पर्य यही है कि प्रतीहारों का ध्येय ही यह था कि आर्यावर्त तथा आर्य संस्कृति के संरक्षक बनें। *जब इस आदर्श को उनके वंशजों ने छोड़ा तो पतन की अवस्था में पहुँचकर अपना राजनीतिक* अस्तित्व खो दिया।[172]

प्रतीहारों की अन्तिम असफलता को देखकर उनकी महत्वपूर्ण सेवाओं को विस्मृत नहीं करना चाहिए। जिस समय अधिकांश एशिया, उत्तरी अफ्रीका तथा दक्षिणी यूरोप अरबों के अधीन हो चुका था, प्रतीहारों और उनके साथियों ने आर्यावर्त को उनकी अधीनता में जाने से बचा लिया। प्रतीहारों ने उत्तर भारत में जो साम्राज्य बनाया वह विस्तार में हर्षवर्धन के साम्राज्य से बड़ा तथा अधिक संगठित था। देश का राजनीतिक एकीकरण करके शांति, समृद्धि और संस्कृति, साहित्य, कला आदि में वृद्धि तथा प्रगति का वातावरण तैयार करने का श्रेय प्रतीहारों को न देना उनके साथ बड़ा अन्याय होगा। प्रतीहारकालीन मंदिरों की विशेषता तथा मूर्तियों की कारीगरी द्वारा ही प्रतीहार शैली के अस्तित्व का बोध होता है।[173]

भिल्लमाल अथवा श्रीमाल मण्डल के जालोर नगर से उन्नति करते हुए प्रतीहार जब कन्नौज के सम्राट बन गये तब न केवल आबू से मण्डौर का दक्षिण-उत्तर का समूचा क्षेत्र गुर्जरदेश कहलाने अपितु समूचे साम्राज्य के लिए गुर्जर नाम का प्रयोग होने लगा। दक्षिण के राष्ट्रकूट कन्नौज के सम्राट को 'घूर्जरराज' तथा पश्चिम के अरब उसको 'जुर्ज' और महान् भोज को 'बोझ' कहते थे। भोज प्रथम के उत्तराधिकारी महेन्द्रपाल प्रथम के शासनकाल तक (910 ई०) एक शताब्दी से अधिक समय के बीच प्रतीहारों के एकच्छत्र राज्य का बोलबाला रहा। अरब यात्रियों ने भी साम्राज्य की प्रशंसा की है। महेन्द्रपाल के पश्चात् महासामन्तों पर सम्राट की पकड़ ढीली होने लगी। अब न अरबों का खतरा था और न वह सांस्कृतिक चेतना शेष थी जो समाज को एकता के सूत्र में बाँधती। कन्नौज साम्राज्यवादी राजधानी बनने से कई पीढ़ियों तक राजस्थान के लोगों को स्वामिभक्त का लाभ मिलता रहा और सम्राटों ने अपने 'स्व-विषय' राजस्थान से नाता टूटने नहीं दिया। किन्तु शनैः शनैः नये निकटवर्ती लोगों से सम्पर्क बढ़ता गया। चंदेलों जैसे महासामन्तों ने

---

171 यह प्राचीन जनपद इलाहाबाद से 30 मील पश्चिम में यमुना नदी के किनारे पर कोसम गाव के नाम से विद्यमान है। यही पर प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रो० गोवर्द्धनराय शर्मा के निर्देशन मे बड़े स्तर उत्खनन कार्य कराया गया है।

172 राजस्थान थ्रू दि एजेज. पृ० 120-21

173 वही. पृ० 209

केवल ऊपरी तौर पर स्वाभिभक्ति का प्रदर्शन किया किन्तु साम्राज्य की आन्तरिक स्थिति खोखली करने में लगे रहे। प्रतीहारों के घरेलू झगड़ों को बढ़ाने में सहायता करते रहे और यदि विदेशी शत्रुओं के आक्रमण के विरुद्ध प्रतीहारों की सहायता की तो अपने स्वार्थ को सर्वोपरि रखा। नागभट्ट प्रथम, नागभट्ट द्वितीय, भोज प्रथम, महेन्द्रपाल प्रथम और महीपाल का व्यक्तित्व ऐसा नहीं था जो इतिहास के किसी अन्य शक्तिशाली राजवंश के साथ प्रतियोगिता में पीछे रह जाय। किन्तु देवपाल, विजयपाल तथा राज्यपाल के राज्यकालों में जहाँ सम्राट चरित्रहीन थे, वहीं भीतरी तथा वाहरी समस्याएं वड़ी विकट थी। पहले तो महासामन्तों ने सिर उठाया, उसके वाद महमूद गजनवी जैसे यशस्वी तथा प्रतापीं सेनापति के आक्रमण प्रारम्भ हो गये जिन्होंने अरवों के आक्रमणों को भी मात कर दिया।

सन् 1000 ई० में देश के अन्दर केन्द्रीय सत्ता का अभाव रहा। फलस्वरूप सम्पूर्ण उत्तरी भारत की सैनिक शक्ति को शत्रु के सामने खड़ा करना संभव न था। वह राष्ट्रीय भावना का युग भी न था। जो भी युद्ध करने जाता था स्वामिभक्त से प्रेरित होकर ही लड़ता था। देश भक्ति से प्रेरित होकर कोई लड़े इसके उदाहरण विरले ही मिलेंगे। हां, इतना अवश्य था कि आर्यावर्त तथा आर्यधर्म और संस्कृति को सुरक्षित रखना भारतीय राजा तथा सम्राट अपना परम कर्त्तव्य समझते थे। यह कल्पना भी ईसा की दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जाती रही।

राजपूतों की पारस्परिक फूट और प्रतिद्वन्दिता ही देश को पतन के गड्डे में ले जाने के लिए पर्याप्त थी। वर्णाश्रम के अनुसार शत्रुओं से लोहा लेना केवल क्षत्रियों का काम था। शत्रु की शक्ति यदि प्रवल है तो दूसरे वर्णों के लोग उनका हाथ वटाने नहीं आ सकते थे और आक्रमणकारी की विजय हो जाने पर निम्न श्रेणी वाले लोग विशेपतः वर्णाश्रम के वाहर की जातियां अछूत समझी जाने के कारण शत्रुओं से सहयोग करने लगती थीं। कहीं-कहीं अस्पृश्यता ही हार का मुख्य कारण वन गई। इसके अलावा टोटका और अन्धविश्वास भी समाज को कमजोर वना रहा था। उदाहरण के लिए जव महमूद गजनवी ने सोमनाथ पर आक्रमण किया तव वहां के पुजारियों ने कहा कि युद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। भगवान् शंकर स्वयं अपनी रक्षा करेंगे। इन्हीं कमजोरियों के कारण हिन्दू समाज तथा हिन्दू राज्यों का शीघ्रता से पतन हुआ।

जिस समय तुर्कों से राजपूतों की मुठभेड़ प्रारम्भ हुई उस समय तक पश्चिमी एशिया की युद्ध प्रणाली तथा अस्त्र-शस्त्र में वड़ा परिवर्तन आ गया था। किन्तु राजपूतों के हथियार और उनकी सेना परम्परागत ढंग की ही चली आ रही थी। यद्यपि प्रतीहारों ने अच्छी नस्ल के घोड़ों का एक विशाल रिसाला वनाया था, तथापि जिस समय महमूद अपनी फुर्तीली चाल वाली अश्वसेना लेकर आया, पश्चिमी भारत के क्षेत्र, जहां से घोड़ों का आयात होता था, प्रतीहारों के हाथ से निकल गये। वे आर्थिक दृष्टि से भी इतने समृद्ध नहीं रह गये थे कि एक स्थाई सेना रखते। जागीरदारी प्रथा के कारण सामन्तों की सेनाएं सम्राट की ओर से लड़ने आती थीं, और जव सामन्त अपनी सेनाएं लेकर न आयें तव कन्नौज सेना के लिए विदेशी शत्रु का मुकाविला करना दुष्कर था। पैदल सेना घुड़सवार सेना से लोहा नहीं ले सकती थी और न हाथी अधिक काम दे सकते थे। राजपूत लोग पहाड़ी दुर्गों से सुरक्षा का काम लेते थे, किन्तु प्रतीहारों को इसका भी अवसर प्राप्त नहीं हुआ। न ही इस प्रकार का कोई गढ़ दोआव क्षेत्र (गंगा-यमुना घाटी) में उपलव्ध था, जहां किलावन्द होकर युद्ध किया जा सके। फलस्वरूप यमुना नदी से सीधे चलकर महमूद ने कन्नौज को घेर लिया था।

गुर्जर- प्रतीहार और समसामयिक शक्तियाँ

महोवा क्षेत्र में प्रचलित अनुश्रुतियों के अनुसार चन्देलों के आगमन के पूर्व गुर्जर-प्रतीहारों का राज्य था।[174] महोवा के कानूनगो वंश में सुरक्षित किम्वदन्ती से भी ज्ञात होता है कि चन्देलों के मूलपुरुष चन्द्रवर्मन उपनाम नन्नुक ने गुर्जर प्रतीहारों से महोवा छीनकर चन्देल राज्य की नींव रखी थी। चन्द्रवर्मन का समय नवीं शताव्दी ई० का प्रथम चरण है। यद्यपि चन्द्रवर्मन या नन्नुक ने प्रतीहार माण्डलिक को पराजित कर अपनी सत्ता स्थापित की तथापि उसके 'नृप' तथा 'महीपति' विरुद से स्पष्ट होता है कि वह कन्नौज के गुर्जर-प्रतीहार सम्राट का सामन्त था। वराह ताम्रपत्र[175] से ज्ञात होता है कि 836 ई० में भोज प्रतीहार कालजंरमंडल का शासक था।

नन्नुक के वाद वाक्पति और वाक्पति के वाद क्रमशः जयशक्ति, विजयशक्ति और राहिल शासक हुए। राहिल के उत्तराधिकारी हर्ष ने राष्ट्रकूट शासक इन्द्र तृतीय द्वारा कन्नौज राजसिंहासन से पदच्युत प्रतीहार नरेश क्षितिपालदेव (महीपाल प्रथम) को पुनः सिंहासनारूढ़ कराया। इसी प्रतापी राजा के शासनकाल में चन्देल वंश का महत्त्व वढ़ा। उसने चाहमान कुमारी कंचुका से विवाह किया। उसके परम भट्टारक महाराजाधिराज आदि विरुदों से भी प्रमाणित होता है कि वह चन्देल वंश का पहला महान् शासक था।

हर्ष के वाद उसका पुत्र यशोवर्मा (925-950 ई०) शासक हुआ। उसका दूसरा नाम लक्षवर्मा था। उसकी सवसे वड़ी उपलव्धि कालंजर तथा चित्रकूट (मड़फा) की विजय है। उसने ये दुर्ग राष्ट्रकूटों से जीते या गुर्जर-प्रतीहारों से, यह निश्चित नहीं है। यशोवर्मा के पश्चात् उसका महान् प्रतापी पुत्र धंग (950-1002 ई०) सिंहासन पर वैठा। इस समय तक कन्नौज के प्रतीहार सम्राटों की शक्ति का ह्रास हो रहा था और नाममात्र की अधीनता मानने वाले चन्देल अव पूर्णरूपेण स्वतन्त्र हो गये।

कच्छपघात शासक वज्रदामा के शासनकाल तक गुर्जर-प्रतीहारों के सामन्त थे। वज्रदामा ने दासता का जूआं उतारकर स्वयं को ग्वालियर का अधिपति घोषित कर दिया। किन्तु धंग चन्देल की वढ़ती हुई शक्ति से भयभीत होकर उसने चन्देलों की अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार धंग ने न केवल प्रतीहार शक्ति से अपना नाता तोड़ लिया, अपितु मध्यदेश का नेतृत्व भी अपने हाथ में लिया। चन्देलों के पास कालिंजर तथा ग्वालियर जैसे अजेय दुर्ग थे और वे चम्वल से तमसा नदी (टमस नदी) क्षेत्र के स्वामी थे।

महमूद गजनवी के 1018-19 ई० के आक्रमण के फलस्वरूप प्रतीहारों की रही-सही सत्ता भी समाप्त हो गई और राज्यपाल प्रतीहार को मुस्लिम अधीनता स्वीकार करना पड़ी।

धंग के वाद क्रमशः गण्ड और विद्याधर शासक हुए। विद्याधर के कहने पर ग्वालियर दुर्गरक्षक कच्छपघातों के पट्टीदार, दुवकुण्ड के युवराजदेव के पुत्र अर्जुन ने राज्यपाल प्रतीहार का

174. डा० मिश्र के अनुसार महोवा में एक मोहल्ला का नाम 'परिहारन टोला' था।
175. एपि० इण्डि०, खण्ड 19, पृ० 17 तथा आगे।

वध कर दिया और त्रिलोचनपाल प्रतीहार को कन्नौज का शासक वनाया। जव महमूद गजनवी को यह समाचार मिला तव 1021-22 ई० में वह चन्देल शासक को दण्डित करने के लिए गजनी से आगे वढ़ा। सवसे पहले ग्वालियर को जीतकर उसने कालिंजर के दुर्ग को घेर लिया। ग्वालियर में स्वयं कीर्तिराज कच्छपघात तथा कालिंजर में विद्याधर ने महमूद से संधि कर ली। इसके पश्चात् महमूद गजनवी की मृत्यु पर्यन्त चन्देल साम्राज्य पर कोई आक्रमण नहीं हुआ।

महमूद गजनवी के वाद चन्देलों का प्रमुख संघर्ष त्रिपुरी के कलचुरियों से हुआ। कलचुरियों में गांगेयदेव (1030-40 ई०) तथा लक्ष्मीकर्ण (1040-60 ई) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इस समय तक गुर्जर-प्रतीहार शक्ति का ह्रास हो चुका था और कन्नौज पर गाहड़वालों ने अपना अधिकार कर लिया था। कलचुरि-चन्देल संघर्ष में पहले तो लक्ष्मीकर्ण कलचुरि विजयी हुआ, किन्तु कीर्तिवर्मा चन्देल ने उसको पराजित कर अपने पूर्वाधिकारी की हार का वदला ले लिया। मदनवर्मा चन्देल के शासनकाल (1129-63 ई०) में भी कलचुरियों को यमुना नदी और विन्ध्य पठार (उपरिहार)[176] के वीच की समथर भूमि (तरिहार)[177] से पीछे हटना पड़ा। अव कलचुरियों का राज्य उत्तर में कैमूर क्षेत्र तक ही सीमित रह गया। मदनवर्मा की मृत्यु पर परमर्दिदेव चन्देल (1165-1202 ई०) के शासनकाल में मुहम्मद विन साम (शहावुद्दीन गोरी) ने गजनी और लाहौर पर अधिकार करने के पश्चात् 1192-93 ई० में चौहान साम्राज्य पर आक्रमण कर दिया तराइन के द्वितीय युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की पराजय से भारत में तुर्की सत्ता के प्रसार का मार्ग प्रशस्त हो गया। चौहानों के वाद चन्देलों की वारी थी। परमर्दिदेव मुहम्मद गोरी के सेनापति कुतुवुद्दीन ऐवक की तुर्की सेना के सामने ठहर न सका और पराजित हुआ। चन्देलों के, खजुराहो, कालिंजर तथा महोवा क्षेत्र को मिलाकर वनाये गये नये प्रान्त का शासक मलिक हजव्रुद्दीन हसन अर्नी नियुक्त किया गया। अव चन्देल शासक कालिंजर से दक्षिण-पूर्व जयपुर दुर्ग (अजयगढ़) से राज्य करने लगे। परमर्दिदेव की उपर्युक्त पराजय से लाभ उठाकर त्रिपुरी के कलचुरि नरेश कैमूर के उत्तर में अपनी सत्ता सुदृढ़ करने का प्रयत्न करने लगे। ककरेड़ी[178] का महाराणक (कौरव वंश) जो पहले चन्देलों का सामन्त था अव कलचुरियों की अधीनता स्वीकार करने लगा था।

त्रैलोक्यवर्मा चन्देल (1203-1250 ई०)

त्रैलोक्यवर्मा की "कालंजराधिपति" विरुद से प्रमाणित होता है कि सिंहासनारोहण के उपरान्त 1205 ई० तक उसने तुर्कों से कालिंजर छीन लिया।[179] तो भी, आगामी एक शताव्दी तक चन्देलों की राजधानी अजयगढ़ ही वनी रही। सुलतान इल्तुतमिश तथा सुलतान नासिरुद्दीन महमूद के शासनकाल में नसरतुद्दीन तायसी ने ग्वालियर की ओर से तथा उलुगखान वलवन (1251 ई०) ने कड़ा-मानिकपुर की ओर से क्रमशः कालिंजर क्षेत्र की लूट-पाट की। चन्देल साम्राज्य अव भी काफी विस्तृत था। इसमें पन्ना, छतरपुर, विजावर से लेकर सागर तथा झांसी तक त्रैलोक्यवर्मा के अभिलेख पाये गये हैं। 1210 ई० के विजयसिंह के अभिलेख से प्रतीत होता है कि रीवा और उसके समीपवर्ती स्थान तथा तमसा से सोन नदी तक का क्षेत्र चन्देलों ने कलचुरियों से जीत लिए गये। कलचुरि संवत् 963 के धुरेटी ताम्रपत्र में त्रैलोक्यवर्मा को त्रैलोक्यमल्ल कहा गया है। काजी मिनहाज ने अपने ग्रंथ तवकाते नासिरी में 'दलकी व मलकी' नामक एक शासक का उल्लेख किया है। यह शासक कालिंजर क्षेत्र में शासन कर रहा था। सौ वर्ष पूर्व जव अनेक अभिलेखों

---

176. कैमूर पहाड़ से लेकर सोहागी घाट तक का क्षेत्र उपरिहार कहलाता है।
177 सोहागी घाट से लेकर इलाहावाद तक का क्षेत्र तरिहार कहा जाता है।
178. ककरेड़ी के खण्डहर तमसा नदी के पश्चिम, रीवा जिले की सिमरिया तहसील में सिमरिया के निकट विद्यमान हैं।
179. एपि० इण्डि०, खण्ड 16, पृ० 272-77.

का पता न ही चला था और नहीं 'वीरभानूदय काव्य' प्रकाश में आया था, तव कनिंघम ने अनुमान लगाया था कि दलकी व मलकी वघेल शासक दलेकश्वर और मलकेश्वर नामों के अपभ्रंश हैं। किन्तु विद्वानों के एक वर्ग का अव भी मत है कि दलकी व मलकी त्रैलोक्यमल्ल नाम का ही विकृत रूप है।[180]

वीरवर्मा चन्देल (1250-1286 ई०)

त्रैलोक्यवर्मा के वाद वीरवर्मा चन्देलों का शासक हुआ। उसका राज्य भी पश्चिम में सिन्ध, वेतवा तक विस्तृत था। ऐसा प्रतीत होता है कि जव 1205 ई० में चन्देलों ने तुर्कों से कालिंजर छीन लिया तव वुन्देलखण्ड क्षेत्र से तुर्कों के पैर उखड़ गये। अव नाम मात्र के लिए ही यह क्षेत्र कड़ा-मानिकपुर के अन्तर्गत रहा।

चन्देलों ने लगातार तुर्क आक्रमणों से वचने के लिए अपनी राजधानी अजयगढ़ वना ली थी। इसीलिए कालिंजर जीत लेने पर उन्होंने इसे पुनः राजधानी वनाने की ओर ध्यान नहीं दिया। महोवा किम्वदन्ती के आधार पर डा० स्मिथ का कथन है कि 1250-80 ई० में कालिंजर पर भर जाति के राजा कीरतपाल जू के अधीन था। यह शासक अवश्य ही वीरवर्मा चन्देल का करद रहा होगा। भरों की सत्ता कालिंजर से महोवा तक थी। कालान्तर में 1300 के लगभग महोवा पर खंगारों ने अधिकार कर लिया और 1352 ई० में यहाँ वुन्देलों का वर्चस्व स्थापित हुआ। किन्तु कालिंजर के आस-पास भर लोग अपना राज्य वनाये रहे। महाराज रीवा के राजघराने में प्रचलित किम्वदन्ती[181] के अनुसार उसके पूर्वज कालिंजर पहुंच कर भर राजा के यहां रहने लगे। कई पीढ़ियों वाद लोधी जाति के आदिवासियों से वघेलों ने जमींदारी प्राप्त की और कालान्तर में उनके मंत्रियों तथा हरना के तिवारियों के सहयोग से स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने में सफल हुए।[182]

भोजवर्मा चन्देल (1286-88 ई०) के उत्तराधिकारी और जेजाकभुक्ति के अन्तिम शासक हम्मीरवर्मा (1288-1310 ई०) के चरखारी ताम्रपत्र में उसे 'महाराजाधिराज परमेश्वर' न कहकर केवल 'कालंजराधिपति' कहा गया है। दमोह तथा जवलपुर जिलों के भूभाग (डाहल-चेदि) में कोई महाराजपुत्र वाघदेव राज्य कर रहा था। यह वाघदेव पहले भोजवर्मा और वाद में हम्मीरवर्मा की अधीनता स्वीकार करता है।[183] पाटन के संवत् 1361 (1304 ई०) के एक सती लेख में उसे प्रतीहार वताया गया है। संवत् 1366 (1309 ई०) के सलैया सती लेख में राजा वाघदेव के साथ ' अलायदीन सुतान' (अलाउद्दीन सुल्तान) का उल्लेख मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि इस तिथि के समय तक दमोह-जवलपुर क्षेत्र से चन्देलों का प्रभुत्व समाप्त हो गया।

1315 ई० के एक शिलालेख से वीरवर्मा द्वितीय नामक एक अन्य चन्देल शासक का नाम ज्ञात होता है। इससे सिद्ध होता है कि चन्देल वंश के लोग कालंजर तथा अजयगढ़ पर आगामी दो सौ वर्षों तक शासन करते रहे। कड़ा-मानिकपुर के तुर्की माण्डलिकों से महोवा का सम्वन्ध तो रहता था, किन्तु महोवा के अधिकारियों का कार्यक्षेत्र यमुना नदी और विन्ध्याचल पठार के वीच के मैदान तक ही सीमित था जो एक पट्टी के रूप में पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ था और जिसे नगिहार कहा जाता था। पन्द्रहवीं शताब्दी में जव मलिक जादा खानदान ने कालपी में राजधानी स्थापित की, तव कुण्डार, हमीरपुर, महोवा, सेंहुड़ा और उसके पूर्व सिमौनी, गहोरा आदि पर तो उसका प्रभाव था, किन्तु कालिंजर को अपने अधिकार में लेने का उसमें अभी साहस न था।

180. एपि० इण्डि०, खण्ड 25, पृ० 1-6; कार्पस, खण्ड IV, क्रमांक 72
181. यह किम्वदन्ती रीवादरवार ने कायस्थों ने तथा पंडित रूपणी शर्मा ने अपने ' वघेलवंशम्' में लिखी है।
182. भगन्वये वीसलदेव सूचितो धनेश्वरार्निवहु राजमानितः।
कलिञ्जरं निर्भर नायकार्जितं सुशोभिता यत्र गुणास्ततः परं।। वघेलवंशम, श्लो० 12.
183. हिन्दोरिया का अभिलेख, वमनी सती लेख, इण्डि० एण्टि० , खण्ड 16, पृ० 10.

अव प्रश्न यह है कि डाहल-चेदि का प्रतीहार शासक वाघदेव त्रिपुरी के कलचुरियों का उल्लेख क्यों नहीं करता। प्रतीत होता है कि उचेहरा-मैहर नाम से प्रसिद्ध तमसा घाटी का क्षेत्र और मैहर के दक्षिण का विलहरी क्षेत्र जहां कलचुरियों का वैद्यनाथ मंदिर तथा मठ और जवलपुर-दमोह मार्ग पर नोहलेश्वर महादेव मंदिर विद्यमान हैं, से कलचुरियों की सत्ता समाप्त हो चुकी थी। लक्ष्मण द्वितीय (945-70 ई०) के पश्चात् त्रिपुरी वंश का पतन प्रारम्भ हो गया था। यद्यपि गांगेयदेव और लक्ष्मीकर्ण ने कलचुरि साम्राज्य की पुनर्प्रतिष्ठा का प्रयत्न किया, किन्तु यह सफलता अस्थायी ही सिद्ध हुई। लक्ष्मीकर्ण के उपरान्त उत्तर में कन्नौज के गाहड़वाल तथा दक्षिण में मालवा के परमारों का प्रभाव वढ़ा। यशःकर्ण कलचुरि के शासनकाल (1073-1123 ई०) में मालवा के लक्ष्मदेव परमार (1086-94 ई०) ने त्रिपुरी जीतकर अपने हाथियों को नर्मदा (रेवा) नदी में स्नान कराया। तभी से कलचुरि साम्राज्य संकुचित होकर सोन नदी तथा कैमूर पहाड़ तक सीमित हो गया था। गयाकर्ण कलचुरि के समय में (1123-51 ई०) में छत्तीसगढ़ अथवा रतनपुर की शाखा ने स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया था। इस वंश का अन्तिम शासक विजयसिंह (1173 ई०) माना जाता है। उसने दक्षिण स्थित देवगिरि के सिंहण यादव का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया था। उसका राज्य कव तक चला और युवराज महाराज कुमार अजयसिंह (कुम्भी ताम्रपत्र) सिंहासनारूढ़ हुआ या नहीं, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। तो भी, मलकापुरम् के शिलालेख से 1240 ई० तक कलचुरि राज्य के अस्तित्व का प्रमाण प्राप्त होता है। कृष्ण यादव (1246-60 ई०) ने त्रिपुरी में भी राज्य किया।[184] वस इसी समय से डाहल-चेदि का प्रभुत्व यादवों के हाथों से निकलकर चन्देलों के हाथ आया और अजयगढ़ के भोजवर्मा चन्देल के साथ स्थानीय प्रतीहार राजा वाघदेव ने अपना सम्वन्ध जोड़ दिया।

1305 ई० में ऐनुलमुल्क मुलतानी ने याज्चपेल्लों से चन्देरी छीन लिया। इसके साथ ही उत्तरी-पूर्वी मालवा और दमोह-जवलपुर तक का क्षेत्र भी खिलजियों के माण्डलिक के अधीन हो गया। देवगिरि के रामचन्द्र यादव (1271-1311 ई०) ने संभवतः त्रिपुरी वापस लेने के लिए हम्मीरवर्मा चन्देल को पराजित किया। रामचन्द्र ने त्रिपुरी को केन्द्र वनाकर सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध अभियान करने का निर्णय लिया था। किन्तु उसकी योजना के क्रियान्वित होने से पहले ही अलाउद्दीन ने दक्षिण भारत पर आक्रमण कर दिया। इस समय उसने अपने चाचा सुल्तान जलालुद्दीन फिरोज के शासनकाल में कड़ा-मानिकपुर के माण्डलिक के रूप में देवगिरि को लूटा था। जैन स्रोतों से ज्ञात होता है कि अलाउद्दीन ने 1294 ई० में देवगिरि जाते समय साडिया घाट के समीप (नर्मदा तट पर सोहागपुर से 23 मील पूर्व) से नर्मदा पार की थी। वर्तमान होशंगावाद जिले से होता हुआ वह भैसदेही का घाट लांघकर अचलपुर (एलिचपुर) पहुँचा था।[185] देवगिरि से लौटकर अलाउद्दीन ने इसी एलिचपुर (उत्तरी वरार) के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। कालन्तर में यही अलाउद्दीन दिल्ली का सुलतान वना।

ग्वालियर के प्रतीहार

नवीं शताब्दी के अनेक शिलालेख ग्वालियर दुर्ग तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं। नागभट्ट द्वितीय (795-833 ई०) के अभिलेख में ग्वालियर के समीपवर्ती क्षेत्र पर शासन करने वाले एक कोट्टपाल का उल्लेख मिलता है।[186] यह कोट्टपाल गुजरात निवासी नागरभट्ट था। उसका पुत्र वैल्लभट्ट सम्राट रामभद्र प्रतीहार (833-836 ई०) के शासनकाल में 'मर्यादाधुर्य' अर्थात् सीमा रक्षक था। वैल्लभट्ट का वेटा इल्ल भोज प्रतीहार के शासनकाल (836-89 ई०) में कोट्टपाल (दुर्ग रक्षक) वना। भोज प्रतीहार ने ग्वालियर गिरि पर एक गढ़ तथा राजप्रासाद वनवाया। यहां वह

---

184. इण्डि० एण्टि०, खण्ड VI, पृ० 196; वही, खण्ड XIV, पृ० 69.
185. इण्डि० एण्टि०, खण्ड 42, पृ० 220.
186. ग्वालियर राज्य की वार्षिक रिपोर्ट, 1984, पृ० 3.

रानियाँ सहित निवास करता था। ग्वालियर केन्द्र से चम्बल के दक्षिण का देश शासित होता था। यहां के सामन्त बड़े प्रभावशाली थे। दिल्ली राज्य के संस्थापक जाउल तोमर के वंशज तथा कन्नौज के प्रतीहारों के सामन्त वज्रट तोमर ने चम्बल घाटी के लुंटेरों का दमन किया। उसके उत्तराधिकारी उसकी नीति का अनुसरण करते रहे।[187]

दसवीं शताब्दी में राष्ट्रकूटों ने उत्तर भारत का स्वामित्व प्राप्त करने के लिए प्रतीहार साम्राज्य पर आक्रमण कर महीपाल को पराजित कर दिया और कन्नौज पर अधिकार कर लिया। चन्देलों की सहायता से कन्नौज मुक्त तो हो गया, किन्तु देवपाल प्रतीहार को इस सहायता के लिए अपनी प्रिय भगवान् वैकुण्ठ की मूर्ति चन्देलों को देना पड़ी। भगवान् वैकुण्ठ की यह प्रतिमा यशोवर्मा चन्देल ने खजुराहो के लक्ष्मण मंदिर में स्थापित कराई। वहां यह मूर्ति अद्यावधि विद्यमान है। उत्तरी भारत के सत्ता संघर्ष में स्थानीय सामन्त पक्ष-विपक्ष की ओर से लड़ा करते थे। ऐसी स्थिति में गुर्जर-प्रतीहारों की प्रतिष्ठा निरन्तर गिरती गई। धीरे-धीरे प्रतीहार साम्राज्य के प्रान्त-स्वतन्त्र होते गये और जब ग्वालियर दुर्ग भी प्रतीहारों के हाथ से निकल गया (950 ई०) तब यह मानना चाहिए कि उत्तर भारत का प्रभुत्व प्रतीहारों के स्थान पर चन्देलों को प्राप्त हो गया। अब चन्देल धंग उत्तर भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली राजा था। एक अभिलेख[188] से ज्ञात होता है कि लक्ष्मण के पुत्र वज्रदामा कच्छपघात ने गाधिनगर (कन्नौज) शक्ति का दमन किया और उसके नगाड़े की गूंज गोपगिरि (ग्वालियर) दुर्ग तक सुनाई दी।[189] वज्रदामा द्वारा पराजित प्रतीहार शासक को ग्वालियर के एक खण्डित जैन अभिलेख (वि०सं० 1034-977 ई०) में 'महाराजाधिराज' कहा गया है।[190] यह कदाचित विजयपाल (959-84 ई०) था। इस प्रकार धंग चन्देल के शासनकाल में चन्देल साम्राज्य का विस्तार हुआ और प्रतीहारों से राजनीतिक सम्बन्ध विच्छेद हो गया। वि०सं० 1002 के खजराहो शिलालेख[191] के अनुसार उसका साम्राज्य 'भास्वत' (विदिशा) से तमसा नदी तथा यमुना से नर्मदा नदी तक फैला हुआ था और गोपगिरि भी उसके अन्तर्गत था।

पंडित हरिहरनिवास द्विवेदी[192] ने कक्कक के वि०सं० 1038 (981 ई०) के शिलालेख में उल्लिखित 'कच्छपान्वय' वंश के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण सुझाव दिया है। कच्छपान्वय वंश का एक शिलालेख गंगोलाताल में भी मिला है। द्विवेदी का कथन है कि आज जो लोग काछी नाम से इस क्षेत्र में फैले हुए हैं वे आयुधजीवी नागक एक जाति से पराजित होकर सत्ताच्युत हो गये। ये विजेता कच्छपघात कहलाये। पद्मनाभ (सास-बहू) मंदिर के दोनों शिलालेखों में इन कच्छपघात राजाओं की पूरी वंशावली वर्णित है। इस वंश का पहला राजा लक्ष्मण का पुत्र वज्रदामा था जिसने कन्नौज के शासक को पराजित किया तथा गोपाचलगढ़ पर भी विजय पाई। राजा महीपाल प्रतीहार 1093 ई० में गोपाचलगढ़ पर राज्य कर रहा था। एक अन्य शिलालेख से ज्ञात होता है कि उसके उत्तराधिकारी भुवनपाल का पुत्र मधुसूदन वि०सं० 1161 (1104 ई०) में ग्वालियर दुर्ग पर राज्य कर रहा था। कच्छपघातों के शासनकाल में ही ग्वालियर पर महमूद गजनवी का आक्रमण हुआ।

तेजकर्ण कच्छपघात उर्फ दूल्हाराय, रणमल बड़गूजर की पुत्री कुमारी मारोनी से ब्याह करके जब देवसा जाने लगा तब ग्वालियर अपने भांजे परमालदेव प्रतीहार को सौंप गया और एक साल तक वापस न आया। ढोलामारु की कथा आज भी ग्वालियर क्षेत्र में लोकगीतों के रूप में प्रचलित है। चन्देल शक्ति इस समय पतनोन्मुखी थी। अतः कच्छपघातों का पक्ष लेने वाला कोई न

187. द्विवेदी, दिल्ली के तोमर, पृ० 169-70; ग्वालियर राज्य के शिलालेख , वर्ष 875, 876 तथा 880 ई० के सन्दर्भ में।
188. इण्डि० एण्टि०, खण्ड 15, पृ० 36-41.
189. वही, पृ० 36-40.
190. प्रो० ए०सो०बं०, XXI, 6-293; 399-400.
191. एपि०इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 129.
192. ग्वालियर के तोमर, पृ०

था। इस स्थिति में ग्वालियरगढ़ सदैव के लिए तेजकर्ण कच्छपघात के हाथ से निकल गया।

श्री द्विवेदी आगे लिखते हैं कि इस प्रतीहार वंश का कोई शिलालेख प्राप्त नहीं हुआ। ग्वालियर और नरवर के वीच चिटौली ग्राम में वि०सं० 1207 (1150 ई०) के एक अभिलेख में रामदेव संभवतः परमर्दिदेव के पुत्र का उल्लेख है। इसके पश्चात् ग्वालियरगढ़ के गंगोलाताल के वि०सं० 1250 तथा 1251 (1193 ई० तथा 1194 ई०) के दो अभिलेखों में उल्लिखित अजयपालदेव प्रतीहार राजा की मुद्राएं भी प्राप्त हुई हैं। इन मुद्राओं को भ्रमवश शाकम्भरी के तन्नाम राजा की मुद्राएं मान ली गई हैं। हसन निजामी (ताजुल-मआसिर) द्वारा वर्णित 'सोलंखपाल' इसी अजयपाल का उत्तराधिकारी रहा होगा। संभवतः उसका वास्तविक नाम 'सुलक्षणपाल' था। संक्षेप में परमालदेव प्रतीहार के उत्तराधिकारी रामदेव (1148 ई०), हम्मीरदेव (1155 ई०) कुवेरदेव (1168 ई०), रत्नदेव (सल्लक्षण) (1179 ई०), लोहंगदेव (1194 ई०) तथा सारंगदेव (1211 ई०) आदि सात प्रतीहार शासक अनुमानतः कन्नौज के गाहड़वालों की अधीनता में ग्वालियर गढ़ से राज्य करते रहे।[193] नरायन की[194] की दूसरी लड़ाई (1193 ई०) में जव दिल्ली के तोमरों का पतन हो गया तव तुर्की आक्रमणकारियों को रोकने वाला कोई न रहा। इस समय ग्वालियर तथा चन्देरी राज्य के अन्तर्गत वेतवा नदी के पश्चिम का चम्वल-यमुना संगम से लेकर उत्तरी मालवा तक का क्षेत्र प्रतीहारों के अधीन था। सन् 1195-96 ई० में मुइज्जुद्दीन मुहम्मद विन साम गोरी ने स्वयं ग्वालियर दुर्ग पर आक्रमण किया था। किसी ओर से सहायता न मिलने पर प्रतीहारों ने मुहम्मद गोरी से समझौता कर लिया। समझौता हो जाने पर भी मुहम्मद गोरी मलिक वहाउद्दीन तुगरिल को वयाना का हाकिम वनाकर उसे ग्वालियर दुर्ग जीतने का आदेश देकर वापस चला गया।[195] तुगरिल डेढ़ वर्ष तक लूटपाट करता हुआ पड़ोसी गांवों को उजाड़ता रहा और दुर्ग के पहाड़ी आवागमन के मार्ग मैदानों से काटता रहा। जव दुर्गवासियों की दशा शोचनीय हो गई तव राजा लोहंगदेव प्रतीहार ने 1199 ई० में इस शर्त पर ग्वालियर शत्रु को सौंपने का निश्चय किया कि सुल्तान मुहम्मद गोरी का प्रथम सेनापति (कुतुवुद्दीन) ऐवक स्वयं यहां आने का कष्ट करे।

मुहम्मद गोरी जव तक जीवित रहा ग्वालियर पर ऐवक की ओर से इलतुतमिश शासन करता रहा। 1206-10 ई० तक ऐवक कुतुवुद्दीन की उपाधि धारण कर दिल्ली से शासन करता रहा। उसकी मृत्यु के वाद आरामशाह (1210-11 ई०) के आरामवाले शासन से लाभ उठाकर नट्टुल के पौत्र तथा प्रतापसिंह के पुत्र विग्रह प्रतीहार ने तुर्कों की संरक्षण टोली को ग्वालियर दुर्ग से खदेड़ कर चौदह वर्ष के अन्तराल से पुनः वहीं अपनी सत्ता स्थापित की।[196] विग्रह प्रतीहार और उसके भाई नरवर्मा की वंशावली दो ताम्रपत्रों से प्राप्त होती है।[197] इस वंशावली के नट्टुल, प्रतापसिंह, विग्रह, मलयवर्मा (नाडोल के कल्हणदेव चाहमान की पुत्री रानी आल्हण देवी से उत्पन्न) आदि नामों से प्रतीत होता है कि यह कोई नया प्रतीहार वंश है जिसका कन्नौज के प्रतीहारों के साथ क्या सम्वन्ध था, अव तक अज्ञात है। नरवर, ग्वालियर तथा झांसी से मलयवर्मा के सिक्के प्राप्त हुए हैं। इन पर सं० 1280 (1223 ई०), 1282 (1225 ई०), 1283 (1226 ई०) और 1209 (1233 ई०) आदि तिथियां अंकित हैं।[198] फारसी इतिहासकारों के अनुसार इलतुतमिश ने देवयल (देवमल ?)

---

193. ए०एस०आर०, खण्ड 2 पृ० 379.
194. फारसी लिपि में नरायन का नकार तकार में पढ़ लिये जाने से तरायन प्रचलित हो गया। किन्तु कुछ वर्षों पूर्व इस भूल को सुधार लिये जाने से अव तरायन के स्थान पर नरायन शब्द का प्रयोग ही प्रचलित हो गया है। तरायन तथा नरायन नाम के दो गांव अव भी दिल्ली क्षेत्र में विद्यमान है। वास्तव में युद्ध नरायन गांव में ही हुआ था।
195. रेवर्टी, तवकाते नासिरी, पृ० 546-47.
196. ए०एस०आर०, खण्ड 2, पृ० 279. 314-15.
197. ग्वा० आ० रि०, 1962, 64-65.
198. क्वायन्स आफ मेडिकल इण्डिया, पृ० 89-90; आ०स०रि० खण्ड 2, पृ० 314-15.

से ग्वालियर दुर्ग लिया था। वह देववल मलयवर्मा का उत्तराधिकारी रहा होगा।

सुल्तान इलतुतमिश (1211-36 ई०) ने अपनी राजपूत दमननीति के अन्तर्गत 1230-31 ई० में ग्वालियर का घेरा डाला। प्रतीहारों के राजा मलयवर्मा को, जिसके साथ ऐसाह के तोमर राजा अचलब्रह्म की पुत्री व्याही थी, फारसी इतिहासकार मर्गलदेव कहते हैं। ग्वालियर राज्य इस समय नरवर तक फैला हुआ था। उसकी सुरक्षा व्यवस्था इतनी प्रवल थी और दुर्ग इतना अजेय था कि सुल्तान वार-वार मौलवियों को वुलाकर घेरा डालने वाले सैनिकों के प्रोत्साहन हेतु जुमा (शुक्रवार) की नमाज में धार्मिक प्रवचन का आयोजन करता था। सुल्तान के दृढ़ निश्चय तथा प्रतीहारों के धैर्य के कारण लगभग एक वर्ष तक घेरा चलता रहा। ग्यारह माह के वाद राजपूतों ने हथियार डाल दिये। राजा किसी तरह भाग निकलने में सफल हो गया, किन्तु सुलतानी छत्र के सामने 800 राजपूतों का वध कराया गया।[199] वादशाह शाहजहाँकालीन खड्गराय ने अपने काव्य 'ग्वालियर आख्यान' में तीन सौ वर्ष पश्चात् राजपूतों के जौहर का विस्तार से वर्णन किया है। द्विवेदी जी के शव्दों में खड्गराय लिखते हैं कि "सुल्तान पश्चिम की ओर से आंतरी पहुँचा। सवेरे ग्वालियर की घाटी के पास आया। उसने वजीर से पूछा की गढ़ पर कौन राज्य कर रहा है ? उसे वतलाया गया कि गढ़ पर परिहार राजा राज्य कर रहा है। सुल्तान ने अपने अमीर वुलाकर उनसे गढ़ लेने की मंत्रणा की। उसने चारों ओर से गढ़ घेर लिया। गढ़ वहुत समय तक घिरा रहा। परन्तु प्रतिरोध में कमी नहीं हुई। तव हैवत खां चौहान को वसीठ (दूत) वनाकर गढ़ के भीतर भेजा गया। हैवत खाँ ने परिहार राजा के सम्मुख प्रस्ताव रखा कि वह सुलतान को वेटी दे दे और उसकी शरण में जाये। राजा ने उससे कहा कि उसे मरना न हो तो वह तुरन्त लौट जाये। राजा ने मंत्रियों से सलाह ली। पटरानी चौहान थी। उससे भी मंत्रणा की। सवने युद्ध करने की सलाह की। फिर भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ। तुर्क कटहरों (सावात) की ओट में आगे वढ़े और गढ़ के कंगूरों तक पहुँच गये। गढ़ के ऊपर से वड़े-वड़े पत्थर लुढ़काये गये, जो सुलतानी कटक पर गिरने लगे। तुर्क सैनिक खुदा का नाम लेकर मरने लगे। क्रोधित होकर तुर्कों ने कलमा पढ़कर खाई को पार किया और गढ़ की ओर चले। हैवत खां मारा गया। वीरभानु चौहान ने वहुत शौर्य दिखलाया। यादव और पांडव वंशी तोमर, सिकरवार, सूर्यवंशी राजपूत अत्यन्त पराक्रम से लड़ रहे थे। विवश होकर सुलतान को पीछे हटने का आदेश देना पड़ा।

कुछ समय पश्चात् सुलतान ने पुनः आक्रमण किया। सारंगदेव (मलयवर्मा) के अनेक शूर सामन्त पहले युद्ध में मारे जा चुके थे, अतएव अव उसे अपनी पराजय के आसार दिखाई देने लगे। वे रनिवास में गये। तोंवरि रानी तथा अन्य रानियों ने उससे कहा – "राजा आप निश्चिन्त होकर युद्ध करें। हम आपके समक्ष ही जौहर की ज्वाला में प्राण दे देंगी।[200] जौहर का प्रवन्ध किया गया। चन्दन की चिता वनाकर उसमें अग्नि प्रज्वलित की गई। समस्त रानियां श्रृंगार कर हंसती हुई अग्नि में कूदने लगीं और राम-राम का उच्चारण करने लगीं।[201] आज जिसे जौहर ताल कहते हैं उसके पास यह जौहर हुआ था। जौहर हो जाने के पश्चात् राजा क्रुद्ध होकर अपने भाई-वन्दों के साथ सुलतानी फौज पर टूट पड़ा। खड्गराय युद्ध का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

राजा हाकि करतु हथियार, मनु दामिनि चमकै असवार ।
लागी मार दुहू दल हौन, रवि थकि रहयी न डुलई पौन ।
झरै हथयार सार सौ सार, मनु दुपहर टूटै अंगार ।
जूझे वहुत सिपाही जान, भयो संदेह साहि मन आनि ।

---

199. तवकाते नासिरी, पृ०
200. पहले हमें जू जौहर पारी, तव तुम जूझौ कन्त सम्हारी।
201. स्वर्ग अपछरा आई लेन, देव त्रिया भरि देखें नैन। धन्य-धन्य तेऊ ऊचरैं, सुर मुनि देख सवै जै करैं।

आपुनु साहि उतारै भये, अति रिसि लागि सामुहें भये ।
आतसवाजी वरने कोई, जमकर मार दुहूँ दिसि होई ।
अति हीं माचौ गीध मसान, देखत ताहि भई अवसान ।
रूधिरू प्रवाह महाधरू परै, रुंड मुंड तहां लोटत फिरै ।
पांच हजार तीन सौ साठि, परै अमीर लोह धरि पाटि ।
जूझौ सांरगद्यो रनरंग, एक हजार पांच सौ संग ।

मलयवर्मा ने जव तुर्की सेना पर आक्रमण किया तव अनेक तुर्की सैनिक धराशायी हुए। इलतुतमिश अपनी सुरक्षित सेना के साथ पास से ही युद्ध देख रहा था। अपनी सेना के अग्रभाग को विपत्ति में देखकर उसने इस सुरक्षित सेना के साथ स्वयं आक्रमण कर दिया। युद्ध अत्यन्त भयंकर हो गया। तुर्कों के पांच हजार तीन सौ साठ सैनिक मारे गये। उनके शवों से धरती पट गई। परन्तु इस युद्ध में सारंगदेव (मलयवर्मा) भी अपने डेढ़ हजार योधाओं के साथ रणक्षेत्र में धराशायी हुए।

1225 ई० के पश्चात् मलयवर्मा या उसके किसी राजकुमार (हरिवर्मा, जयवर्मा और वीरवर्मा) का उल्लेख अभिलेखों में नहीं मिलता। इसके विपरीत उनके भाई नरवर्मा का एक अभिलेख गोपाचलगढ़ के गंगोला ताल पर ही प्राप्त हुआ है और दूसरा 1247 ई० का कुरैठा का ताम्रपत्र है, जिसमें उसे स्वयं राजा कहा गया है। इससे ज्ञात होता है कि 12 दिसम्बर 1232 ई० के भीषण युद्ध में अजयवर्मा और उसके तीनों राजकुमार मारे गये और नरवर्मा ने तुर्कों का साथ दिया। इस विश्वासघात के फलस्वरूप तुर्की सुलतान इलतुतमिश ने उसे गोपाचल पर कुछ समय तक अपने अधीन रहने दिया। उसी नरवर्मा ने अपनी विजय के उपलक्ष में गंगोला ताल में अपना लेख खुदवाया। परन्तु ज्ञात होता है कि कुछ दिन वाद ही इलतुतमिश ने नरवर्मा को गढ़ से भगा दिया और वर्तमान शिवपुरी के पास किसी इलाके का उसे राजा बना दिया। संभवतः वह स्वयं को ग्वालियर का राजा ही कहता रहा। चन्देल वीरवर्मा के 1281 ई० के शिलालेख से ज्ञात होता है कि उसके सेनापति मल्लय ने गोपाचल के राजा हरिराज को परास्त किया। 1291 ई० में गोपाघल तुर्कों के अधीन था। ज्ञात होता है कि हरिराज प्रतीहार नरवर्मा प्रतीहार का वंशज था, यद्यपि उसका राज्य कहीं शिवपुरी के आस-पास के क्षेत्र पर था।[202]

मलयवर्मा प्रतीहार के भाई नरवर्मा प्रतीहार के कुरैठा (शिवपुरी) ताम्रपत्र सं० 1304 (1247 ई०) से प्रतीत होता है कि जव 1236 ई० में इलतुतमिश का देहान्त हो गया तो उसके बेटे रुकनुद्दीन (फीरोज) के शासन काल में प्रतीहारों ने पुनः ग्वालियर दुर्ग तुर्कों से छीन लिया। वीरवर्मा चन्देल के शासनकाल (1250-1286 ई०) में वलभद्र मल्लय ने गोपगिरि के हरिराज को हराया था। ऐसा अनुमान किया गया है कि यह हरिराज नरवर्मा का उत्तराधिकारी था।

सुलतान रजिया के शासनकाल में पुनः दिल्ली सेना ने ग्वालियर का घेरा डाला। इस प्रकार कभी तुर्क तो कभी राजपूत इस दुर्ग पर अधिकार करते रहे। अन्ततः यहां नरवर के याज्वपेल्लवंशीय चाहड़देव प्रतीहार का शासन स्थापित हुआ। पहले चाहड़देव प्रतीहार ग्वालियर राज्यान्तर्गत नरवर का स्वामी था (1304/1247 ई०)। यहां उसके वंश ने 1357/1300 ई० तक चार पीढ़ी राज्य किया। सुलतान रजिया ने ग्वालियर दुर्ग प्रतीहारों से छीन तो लिया पर नरवर के प्रतीहार चाहड़ याज्वपेल्ल से गढ़ वचाया न जा सका। चाहड़देव के सिक्के 1237 से 1254 ई० तक के मिले हैं। चाहड़देव ने अपने राज्य का विस्तार दक्षिण की ओर चन्देरी तक कर लिया था। 1251

202./ ग्वालियर के तोमर, पृ० 9-12.

ई० में उलुग खान बलबन ने ग्वालियर पर हमला किया पर दूसरी बार। 1258 ई० में सफल हुआ। गणपति याज्वपेल्ल गोपाल का पुत्र था, जिसको वीरवर्मा चन्देल ने हराया था और गोपाल आसल्लदेव (1236-55 ई०) का पुत्र और चाहड़देव का पौत्र था।[203]

उक्त नरवर के याज्वपेल्लो के सम्बन्ध में पंडित हरिहरनिवास द्विवेदी का कथन है कि "यह सुनिश्चितरूपेण कहा जा सकता है कि चाहड़ के पूर्व परमर्दिदेव का उल्लेख शिलालेखों में मिलता है। यदि यह परमर्दिदेव मनेज परमाल प्रतीहार है, जिसने तेजकर्ण से गोपाचल गढ़ ले लिया, तब वह जज्वपेल्ल सुनिश्चित रूप से प्रतीहारों की ही एक शाखा थी।" आजकल यज्वपेल्ल शाखा परिहारों में प्रचलित नहीं है। किन्तु श्री जागेश्वरसिंह उर्फ सुदामासिंह अपने 'जगतविनोद' में क्षत्रियों के वर्णन के समय जज्वपेलों का उल्लेख परिहारों की शाखा के रूप में करते हैं। इसके अतिरिक्त नरनी परिहारवंश के लोग जिला बलिया, उत्तरप्रदेश में रहते हैं। संभव है यज्वपेल्ल और नरनी दोनों पर्यायवाची हैं। ये लोग बलिया जिला की तहसील बांसडीह के ग्रामों - मैरीयर, सुरिजपुर, सुखपुरा, हरपुर, बांसडीह में आबाद हैं।

चन्देरी का प्रतीहार वंश

यद्यपि मध्य ग्वालियर क्षेत्र से कन्नौज के प्रतीहारों की सत्ता दसवीं शती ई० में समाप्त हो गई, तथापि चन्देरी को राजधानी बनाकर वे उत्तरी मालवा तथा पश्चिमी बुन्देलखण्ड पर शासन करते रहे। चन्देरी वंश के शासकों की वंशावली शिलालेख[204] पर आधारित है। इन शासकों का वंश वृक्ष इस प्रकार है –

नीलकण्ठ
|
हरिराज
|
भीमदेव
|
रणपाल देव
|
वत्सराज
|
स्वर्णपाल
|
कीर्तिराज
|
अभयपाल
|
गोविन्दराज
|
राजराज

203. एपि० इण्डि०, खण्ड 32, पृ० 343 वि०सं० 1355 का नरवर अभिलेख।
204. कदवाहा अभिलेख और चन्देरी अभिलेख, ग्वालियर राज्य के अभिलेख, क्र० 630 और 633.

|
वीरराज
|
जैत्रवर्मा

इस वंशावली के द्वितीय शासक हरिराज के शासनकाल से सम्बन्धित पांच अभिलेख हैं। थूवौन प्रस्तर अभिलेख[205] भारत कला भवन ताम्रपत्र,[206] कदवाहा खण्डित प्रस्तर अभिलेख [207] पचराई शान्तिनाथ प्रतिमा लेख[208] और चन्देरी प्रस्तर अभिलेख।[209] भारत कला भवन ताम्रपत्र[210] वि०सं० 1040 (983 ई०) को जारी किया गया था। इससे पता चलता है कि वह ललितपुर, उत्तर प्रदेश के 15 कि०मी० उत्तर-पश्चिम में स्थित सीयडोणी (आधुनिक सेरोन खुर्द) के आस-पास के क्षेत्र पर शासन कर रहा था। कदवाहा अभिलेख[211] से ज्ञात होता है कि उसे नृपचक्रवर्ती कहा जाता था और वह कदवाहा में किसी अज्ञात आचार्य के उत्तराधिकारी आचार्य धर्मशिव से भेंट करने आया था। थूवौन अभिलेख[212] से प्रमाणित होता है कि थूवौन (गुना जिला) उसके राज्य में सम्मिलित था। इस अभिलेख से यह भी ज्ञात होता है कि वह श्रीहर्ष और धंग जैसे प्रसिद्ध शासकों से भी अधिक श्रेष्ठ था। इतना ही नहीं उसने कुछ राजाओं को अपना करद (सामन्त) भी बनाया था।[213]

उपरिवर्णित अभिलेख धंग चन्देल का शासक है, जिसने पश्चिम में चन्देल साम्राज्य का विस्तार गोपगिरि (ग्वालियर) और मालव नदी (वेत्रवती वेतवा) के तट पर स्थित भास्वत (विदिशा) तक किया था। वि०सं० 1011 के खजुराहो अभिलेख में विनायकपाल प्रतीहार का उल्लेख होने से प्रमाणित होता है कि धंग कन्नौज की प्रतीहार शाखा की अधीनता स्वीकार करता है। अतः कन्नौज के महान प्रतीहार वंश की एक शाखा का प्रतिनिधित्व करने वाले हरिराज का धंग से श्रेष्ठ कहलाना अतिशयोक्ति मात्र ही प्रतीत होता है।

हरिराज के पश्चात् सातवें शासक कीर्तिपाल के सम्वन्ध में कुछ जानकारी उपलब्ध है। उसने चन्देरी का दुर्ग (कीर्त्ति दुर्ग), तालाव (कीर्त्तिसागर) और मंदिर (कीर्त्तिनारायण) का निर्माण कराया। मंदिर अव ध्वस्त हो गया है। किन्तु तालाव अव भी विद्यमान है। दुर्ग को अव चन्देरी दुर्ग कहा जाता है। पुरानी चन्देरी यहां से 10 कि०मी० की दूरी पर जंगल में स्थित है और वूढ़ी चन्देरी के नाम से विख्यात है। वर्तमान चन्देरी का इतिहास अलाउद्दीन खिलजी की विजय (1305 ई०) से प्रारम्भ होता है।

चन्देरी के प्रतीहार ग्यारहवीं शती ई० के प्रारम्भ से तेरहवीं शती के अन्त तक वने रहे। नरवर के गणपति याज्चपेल्ल ने कीर्तिदुर्ग वि०सं० 1355। 1298 ई० में उनसे छीनकर प्रतीहार शासन का अन्त कर दिया। इसके सात वर्ष उपरान्त 1305 ई० में अलाउद्दीन की सेना ने चन्देरी याज्चपेल्लों से हस्तगत कर ली। इस प्रकार ऐनुलमुल्क मुलतानी ने चन्देरी समेत समूचे उत्तरी-दक्षिणी मालवा पर अधिकार कर लिया। खिलजी सुलतान की ओर से चन्देरी में एक माण्डलिक (गवर्नर) की नियुक्ति कर दी गई।

---

205. विश्वेश्वरानन्द इण्डोलाजिकल जर्नल, खण्ड 19, पृ० 1-6.
206 एपि० इण्डि०, खण्ड 31, पृ० 309-313.
207. वही, खण्ड 37, पृ० 117 तथा आगे
208. ग्वालियर राज्य के अभिलेख क्र० 45.
209. वही, क्र० 632 और 633.
210. एपि० इण्डि०, खण्ड 31, पृ० 309-13.
211. वही, खण्ड 37, पृ० 177 तथा आगे
212. वि० इं० ज०, खण्ड 19, पृ० 1-6.
213. वही , खण्ड 19, पृ० 6 'श्रीहर्षधंगादिनिभान्नरेंद्रान्संपश्यति स्वान्करदानिवेतान्' ।

शासन प्रबन्ध

राजा

शासन का प्रमुख राजा होता था। अभिलेखों में प्रतीहार नरेश के लिए 'परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर' की उपाधि का प्रयोग किया गया है। किन्तु प्रतीहार शासक प्रायः स्वयं को 'महाराजा' अथवा 'महाराजाधिराज' ही प्रकट करते थे। नागभट्ट प्रथम को 'नारायण' का 'प्रतिविम्ब' कहा गया है। शक्तिशाली और नैतिक गुणों के विनाशक म्लेच्छ राजा (अरवों) की विशाल सेनाओं का दमन करने के कारण उसे यह विरुद प्रदान किया गया था। इसी प्रकार नागभट्ट द्वितीय को 'आदि पुरुष' तथा भोज और उसके पौत्र विनायकपाल को 'आदिवराह' कहा गया है। वत्सराज के लिए 'रणहस्तिन' महेन्द्रपाल प्रथम के लिए 'निर्भय नरेन्द्र' और महीपाल प्रथम के लिए 'कार्त्तिकेय' की पदवी प्रदान की गई है। सैनिक शक्ति क्षीण हो जाने पर प्रतीहार नरेश महेन्द्रपाल द्वितीय स्वयं को 'विदग्ध' कहता है। इस प्रकार म्लेच्छों के विनाशक, आर्यावर्त्त के प्रतीहार नरेश राजनीतिक शक्ति प्रदर्शन के स्थान पर अपनी उपलब्धियों की ओर प्रजा का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक समझते थे। धार्मिक क्षेत्र में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया। देवशक्ति 'वैष्णव' था। उसका पुत्र वत्सराज 'परममाहेश्वर' और पौत्र नागभट्ट द्वितीय 'भगवती' का तथा उसका उत्तराधिकारी रामभद्र 'सूर्य' का उपासक था। इस उदार धार्मिक नीति से विदेशी आक्रान्ताओं के विरुद्ध समाज के प्रत्येक सम्प्रदाय की सहानुभूति प्राप्त हुई। प्रतीहार शासकों की धार्मिक सहिष्णुता का भी यह तक अच्छा उदाहरण है। जव तक प्रतीहारों ने इस नीति का पालन किया तव तक वे उन्नति करते गये और प्रजा में प्रिय वने रहे। अंतिम शासक राज्यपाल जव मुसलमानों से अपनी राजधानी तथा धार्मिक स्थलों की रक्षा न कर सका तभी समकालीन शासकों ने उसका विरोध प्रारम्भ कर दिया।

प्रतीहार शासक असीमित शक्ति के स्वामी थे। वे सामन्तों, प्रान्तीय प्रमुखों और न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ करते थे। निरंकुश होते हुए भी वे प्रजा के सुख-दुख का ध्यान रखते थे। इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि राजा का पद परम्परागत होते हुए भी उसे वृद्ध और अनुभवी मंत्रियों की सलाह मानना आवश्यक था। सामन्तों की शक्ति राजा के अधिकारों पर रोक लगाती थी। जागीरदारी प्रथा में इन 'सामन्तों' का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक था। ये सामन्त अत्यन्त शक्तिशाली थे और किसी भी समय साम्राज्य के लिए सिरदर्द वन सकते थे। शासक के लिए यह उचित ही था कि वे सामन्तों के अधिकारों की अवहेलना न करे और उनके विरुद्ध कोई ऐसा कदम न उठाये जो जनमत के प्रतिकूल हो। तो भी, सामन्तगण केन्द्रीय सत्ता से आतंकित रहते थे। उनके दानपत्रों पर तंत्रपाल हस्ताक्षर करता था। युद्ध के समय सामन्त सैनिक सहायता देते थे और स्वयं सम्राट के साथ सुदूर अंचलों तक लड़ने जाते थे। प्रतीहार शासक सदैव धर्म तथा देशान्तर का पालन करते रहे और जाति पंचायतों तथा महाजनों के निर्धारित कार्यों में वाधक नहीं वने।

आर्थिक अधिकार

प्रशासन, केन्द्रीय सेना, राजपरिवार, सांस्कृतिक तथा धार्मिक गतिविधियों के लिए धन की आवश्यकता होती है। दलदल, ऊसर भूमि, वन, खनिज, लवण, अमराई, मौहार, हांड़ा (जमीन के अन्दर गुप्त धन) इत्यादि का स्वामी राजा होता था। इसके अतिरिक्त राजकीय आदेशों की दश प्रकार की अवहेलनाओं (दशापराध) पर अर्थ दण्ड वसूल किया जाता था। वेगार लेने और सैनिकों को ग्रामीणों के घर ठहराने का अधिकार राजा को था। निस्सन्तान मरने वालों की सम्पत्ति राजसात कर ली जाती थी। समय-समय पर राजा लोग कुछ अन्य कर भी लगा देते थे।

समकालीन साहित्य और अभिलेखों से राजा के कर्त्तव्यों पर भी प्रकाश पड़ता है। राजा का परम कार्य प्रजा तथा देश की रक्षा करना था। विभिन्न सार्वजनिक समारोहों तथा त्योहारों में सम्मिलित होने की उससे आशा की जाती थी।

युवराज

राजा के पश्चात् युवराज का स्थान था। उसे पंचमहाशव्द सामन्त की श्रेणी प्राप्त थी। ज्येष्ठ पुत्र से ही युवराज नियुक्त किया जाता था। सामन्तों की उपस्थिति में उसकाराज्याभिषेककरके उसके उत्तराधिकार को सुनिश्चित कर दिया जाता था। युवराज पद के प्रतीक चिन्ह के रूप में एक माला होती थी। युवराज प्रशासन के कार्यों में राजा की मदद करता था। वह दानपत्र जारी कर सकता था।

अग्रमहिषी (पटरानी)

राजा की अनेक रानियों में से एक को अग्रमहिषी, महादेवी या पटरानी की उपाधि प्राप्त होती थी। अन्य रानियों से उसका स्थान श्रेष्ठ माना जाता था। राजा की मृत्यु पर युवराज के अल्पायु होने पर वह संरक्षिका के रूप में शासन कर सकती थी।

मंत्रिपरिषद तथा केन्द्रीय शासन

प्रशासनिक कार्यों में राजा को सहायता करने के लिए एक मंत्रिपरिषद थी। इसके दो अंग थे 'वहिर उपस्थान' तथा 'आभ्यन्तर उपस्थान'। वहिर उपस्थान में मंत्री, सेनानायक, महाप्रतीहार, महानरेन्द्र, महासामन्त, महापुरोहित, महाकवि, भाट, वैद्य, संगीत-नाट्य शास्त्री, ज्योतिषी, विद्वान, पंडित तथा वेश्या आदि हर प्रकार के श्रेष्ठ जन सम्मिलित थे। किन्तु 'आभ्यन्तरीय स्थान' में राजा के चुने हुए विश्वासपात्र व्यक्ति ही सम्मिलित होते थे। सत्ता इसी सभा में केन्द्रित थी। मंत्रिगण (अमात्य) सर्वाधिक प्रभावशाली होने के कारण दोनों उपस्थानों में सम्मिलित होते थे। शासन का भार मंत्रियों पर था। इसीलिए राजाज्ञाओं में उनकी सहमति आवश्यक मानी जाती थी। मंत्रियों का पद आनुवंशिक था। कभी-कभी किसी एक वृद्ध और अनुभवी मंत्री को पूर्ण अधिकार देकर उसे गुरु मान लिया जाता था। मंत्रियों के अधिकार राजा की इच्छा पर निर्भर थे। राजा जब चाहे तब स्वयं उनका उपभोग कर सकता था। प्रधानमंत्री को 'महामंत्री' अथवा 'प्रधानामात्य' कहा जाता था।

संधिविग्रहिक (शान्ति तथा युद्ध का मंत्री) विदेशी नरेशों से पत्र व्यवहार करता था और दानपत्र जारी करता था। विद्रोही सामन्तों को शान्त करना उसी का काम था। **अक्षपटलिक** महालेखापाल को कहते थे। इसका प्रमुख कार्य राज्य की आय-व्यय का हिसाब रखना था। दानपत्रों का पंजीकरण अक्षपटलिक के यहाँ ही होता था। **भाण्डागारिक** राजकोष, आभूषण और राजकीय भण्डारों का अधिकारी था। **महाप्रतीहार** राजसभाओं में उच्चपद माना जाता था। शक्तिशाली सामन्त

भी महाप्रतीहार वनना गौरव की वात समझते थे। राजसभा में शान्ति वनाये रखना, गंभीरता तथा गौरव का आचरण वनाये रखना महाप्रतीहार का कार्य था। महाप्रतीहार नये कर्मचारियों को दरवार का शिष्टाचार सिखाता था। उसी के माध्यम से सम्राट के दर्शन होते थे। 'महादण्डनायक' सम्राट का सैनिक अमात्य था। उसके कर्त्तव्यों का वर्णन आगे किया जायेगा। 'महाधर्मस्थ' न्यायाधीश को कहते थे। 'महापुरोहित' सम्राट को अधयात्मिक विषयों पर परामर्श देता था और उसकी देखरेख में पूजा, यज्ञ, संस्कार आदि होते थे। इनके अतिरिक्त राजप्रसाद के अधिकारियों में 'महावैद्य', 'नैमित्तिक' (ज्योतिषी), 'वन्दिपुत्र' (चारण) 'अन्तर्वंशिक' (अन्तःपुर अधिकारी), 'महामुद्राधिकृत') 'महाभोगिक; नौकाध्यक्ष आदि का उल्लेख मिलता है।

आय के स्रोत

दानपत्रों में उल्लिखित करों से राज्य की आय के स्रोतों का ज्ञान होता है। भूमिकर को 'उद्रंग', ' भाग' अथवा 'दानी' कहते थे। इस कर का निर्धारण भूमि के प्रकार अथवा उपज के अनुसार 1/6, 1/8 या 1/12 भाग का होता था। कर की वसूली जिन्स रूप में ही की जाती थी। काश्तकार 1/6 के हिसाव से भूमिकर देते थे। भूमिहीनों को उनकी मजदूरी के रूप में फसल का एक भाग दिया जाता था। करों की नकद अदायगी की राशि को 'हिरण्य' कहते थे। राजा अथवा अधिकारियों को फल, शाक, दूध-दही आदि के उपहार को 'भोग' कहा जाता था। 'मंडपिका' (चुंगी चौकी) पर वसूली की जाने वाली राशि को 'दान' अथवा 'शुल्क' कहते थे। दशापराधों अथवा अन्य कारणों से वसूल किया जाने वाला जुरमाना 'दण्ड' कहलाता था। विविध करों को 'आभाव्य' कहा जाता था। इसके उपरान्त सामन्तों द्वारा प्राप्त शुल्क विशेष महत्व का था। युद्ध के समय लूट का माल भी राजकोष में सम्मिलित कर लिया जाता था।

सैनिक शासन

'महादण्डनायक' अथवा 'महादण्डाधिपति' शब्दों से प्रतीत होता है कि यह पद सेनाधिकारी से सम्वन्धित था (वाहिनीपति, सेनानायक, सेनाधिकारी, सैन्यपति)। नवविजित क्षेत्रों में दीवानी (सिविल) के अधिकार भी महादण्डनायक को सौंपे जाते थे। प्रतीहारों के साम्राज्य विस्तार को देखते हुए यह अनुमान करना अनुचित न होगा कि उनके यहां अनेक क्षेत्रीय सेनानायक रहे होंगे। ऐसा ही एक तंत्रपाल महासामन्त, महादण्डनायक माधव था। वह महेन्द्रपाल द्वितीय के शासनकाल में उज्जयिनी का शासक था। अरव यात्रियों का कथन है कि चारों दिशाओं में चार उपसेनाएं रहती थीं। सेनापति के वाद वलाधिकृत नामक कर्मचारी था। वह नगर की व्यवस्था करता था। महत्तम और कोट्टपाल उसके सहायक थे। मंडपिका में चुंगी वसूली के लिए एक अलग सहायक नियुक्त किया जाता था। 'पंचकुल' के सहयोग से चुंगी वसूली का कार्य होता था।

'महायुधिपति' शस्त्रागार का अधिकारी था। 'पीलुपति' हाथियों का, अश्वपति घुड़सवार सेना का, और पाइक्काधिपति प्यादों का अध्यक्ष होता था। इस समय तक रथसेना का चलन समाप्त हो गया था, फिर भी यदा-कदा 'स्यन्दनपति' का उल्लेख मिलता है। कोट्टपाल कोट (किला) का स्वामी होता था। मुस्लिम युग में इसे कोतवाल कहा जाने लगा। सेना के साथ पुलिस की व्यवस्था भी उसके हाथ में थी। राजा की अनुपस्थिति में राजधानी का काम कोट्टपाल ही देखता था।

'मर्यादाधुर्य' अथवा 'धुरेधिकारी' सीमापति होता था। यह पद इंगलैण्ड के Warden of the Marches के समकक्ष था।

सामन्ती सेना के अतिरिक्त राजकीय सेना भी होती थी। सेना की भरती वंश-परम्परा के आधार पर होती थी। सेना में अधिकांश सैनिक क्षत्रिय ही होते थे और यही सेना राजा का 'मौल वल' था। सेना में गुप्तचर भी काम करते थे, जो दूत प्रेषणिक कहलाते थे। ये गुप्तचर राजा

के आंख-कान थे। गुप्तचरों का कार्य शत्रुपक्ष का समाचार मात्र लाना न था। उनसे यह आशा की जाती थी कि वे शत्रु में मतभेद उत्पन्न करेंगे, शत्रु के दुर्ग को धोखा देकर जीतने, उनके प्रमुख व्यक्तियों का वध कराने आदि में भी सहायता करेंगे। गुप्तचर हर प्रकार का विध्वंस कराते थे और शत्रुओं को परेशान करते थे।

सैनिक अस्त्र-शस्त्र

यशस्तिलक चम्पू से ज्ञात होता है कि गुर्जर-प्रतीहार सैनिकों के सिर के बाल लटकते हुए और मूँछें वड़ी-वड़ी होती थी। वे घुटनों तक धोती, कमर में भैंसे की सींग से जड़ा हुआ खंजर, दोनों कन्धों पर वाणों के ऊँचे-ऊँचे तरकश, धनुष, भाला और तलवार से सज्जित रहते थे। पैदल सैनिक राजपूत सेना की विशेषता थी। अरव यात्रियों ने प्रतीहारों की अश्वसेना की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है।

सैनिक अभियान के पड़ाव के समय राजा का शिविर मध्य में होता था। उस पर राजा की पताका फहराती रहती थी। वड़े सामन्तों की स्त्रियाँ साथ चलती थीं और वेश्याएं उपस्थित रहती थीं। व्यापारी और लवाना[214] लोग सैनिकों की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति करते थे।

प्रतीहार शासकों ने दुर्गों की अच्छी व्यवस्था की थी। मण्डोर, जालोर, गोपदुर्ग (ग्वालियर), तेरही, कालिंजर, कन्नौज और वारी के दुर्ग सुदृढ़ और अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। प्रत्येक दुर्ग का एक कोट्टपाल होता था, जो दुर्ग की व्यवस्था करता था।

सामन्त प्रथा से सेना विशेष रूप से प्रभावित हुई। साहित्य[215] और अभिलेखों से विदित होता है कि सम्राट के अधिकांश युद्ध सामन्ती सेना द्वारा लड़े जाते थे। भूमिदान द्वारा भी सैनिक सेवा प्राप्त की जाती थी। बड़ी-बड़ी जागीरें यथा भटभुक्ति, कुमारभुक्ति, विलाम्भक आदि प्रदान कर राजकुमारों को आश्वस्त किया जाता था, कि वे अपने राजपुत्रों में भूमि को वितरित कर सके।[216] सामन्ती सैनिक सेवा के लिए अवलगन का अपभ्रंश का 'ओलग' आज भी प्रचलित है।[217]

न्यायालय तथा पुलिस व्यवस्था

राजा शास्त्रानुसार न्याय करता था। उसका निर्णय अन्तिम होता था। न्यायाधीश राजा की अधीनता में निर्णय करते थे। ग्राम पंचायतें स्थानीय झगड़ों का निपटारा करती थीं। वादी को अपना दावा लिखित में देना पड़ता था। लिखित दावे के अभाव में साक्षियों द्वारा वह अपना पक्ष प्रस्तुत करता था। साक्षी न होने से वादी प्रतिवादी को अपने-अपने पक्ष में सौगन्ध खाने की अनुमति दी जाती थी। कठिन परीक्षाओं यथा गन्दी वस्तु का पान करने, गहरे पानी में कूदने, आग में कूद कर बच निकलने अथवा गरम लाल लोहे को हाथ से पकड़ने अथवा खौलते हुए तेल में हाथ डालने पर सुरक्षित वच जाने पर अपराधी दोषमुक्त हो जाता था। कानून के समक्ष सव समान न थे और यह उस समय के सामाजिक वातावरण में संभव भी न था। ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय हत्या के दोष से मुक्त थे। उनके लिए प्राश्यचित, सम्पत्ति की जब्ती या देश निकाला की सजा ही काफी समझी जाती थी। चोरी के लिए कभी कठोर सजा, कभी अर्थदण्ड, कभी जनता के समक्ष चोर की मानहानि का व्यवहार किया जाता था। यदि चोरी का माल अधिक मात्रा में होता तव जहाँ अन्य जातियां मृत्युदण्ड की भागीदारी होतीं, वहां ब्राह्मण-क्षत्रियों के हाथ-पैर काटने

---

214. वैल पर सामान लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने वाले व्यापारियों को 'लवाना' कहा जाता था।
215. समराइचकहा, पृ० 688-89, 773
216. धनपाल कृत तिलकमंजरी, पृ० 85, 148, 184; जिनेश्वर कृत कथाकोष, पृ० 164
217 राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 338-42

की सजा ही पर्याप्त समझी जाती थी।

उत्तराधिकार कानून में पुत्री को छोड़कर, सम्पत्ति में स्त्रियों को हिस्सा नहीं मिलता था। भाई के भाग का चौथाई भाग बहिन को मिलता था, जो उनके विवाह के पश्चात् समाप्त हो जाता था। विधवा को आजीवन भोजन-वस्त्र मात्र मिलता था। निस्सन्तान मरने पर मृतक की सम्पत्ति राजसात कर ली जाती थी और यदि मृतक ब्राह्मण होता तब उसकी सम्पत्ति दान में दे दी जाती थी।

वन्दियों का जीवन दुःखमय था। जेल तो मानों उनके लिए दूसरे नरक के ही समान था।[218] मामले की छानवीन करने वाले अधिकारी को 'तलार', 'दण्डपाशिक' अथवा 'आरक्षिक' कहा जाता था। आजकल के वकीलों के समान एक अधिकारी 'साधनिक' कहलाता था। उसका कार्य 'धर्माधिकारी ' के समक्ष अभियुक्त का अपराध प्रमाणित करना होता था। राजा कानून की जानकारी धर्मशास्त्र-पाठकों अथवा 'धर्माधिकरणिकों' से प्राप्त करता था। अपराध का आरोप लगाने से पहले जनता के प्रतिनिधियों- 'नगर महत्तर', 'पंचकुल', तथा 'नगर महल्लक' का सहयोग प्राप्त किया जाता था।[219]

सुलेमान यात्री ने लिखा है कि (प्रतीहार काल में) देश लुटेरों से सुरक्षित था। इससे पुलिस की निपुणता तथा दक्षता प्रकट होती है।

प्रान्तीय शासन

प्रतीहार साम्राज्य अनेक भागों में विभक्त था। ये भाग सामन्तों द्वारा शासित होते थे। इनमें से मुख्य भागों के नाम इस प्रकार हैं – (1) शाकम्भरी (सांभर) के चाहमान (चौहान), (2) दिल्ली के तोमर, (3) मंडोर के प्रतीहार, (4) कलचुरि, (5) मालवा के परमार, (6) मेदपाट (मेवाड़) के गुहिल (राजधानी चाटसू), (6) महोवा-कालिंजर के चन्देल, (8) सौराष्ट्र के चालुक्य (राजधानी वंधवान)। शेष उत्तरी भारत केन्द्रीय राजधानी कन्नौज से सीधे प्रशासित होता था। इन भागों को 'भुक्ति' कहते थे। अभिलेखों में पूर्व में श्रावस्ती तथा वाराणसी, दक्षिण में कालंजर, मध्य में कान्यकुब्ज तथा कौशाम्बी और पश्चिम में देण्डवानक (डीडवाना) आदि भुक्तियों का उल्लेख मिलता है। ग्वालियर को मुख्य स्थान प्राप्त था। वहां का दुर्ग कोट्टपाल द्वारा व्यवस्थित था और सौराष्ट्र एक सामन्त के अधीन था।

राज्यपाल को उपरिक महाराज कहा जाता था। उसकी नियुक्ति सम्राट द्वारा राजपरिवार, सामन्तों अथवा राजकीय अधिकारियों में से की जाती थी। भूमिकर नियत करना इस अधिकारी का काम था। उचित तथा उपयुक्त स्थानों पर सैनिक अधिकारी अपनी सेनाओं के साथ निवास करते थे। दुर्गों का उत्तरदायित्व कोट्टपालों को सौंप दिया जाता था और सीमाओं की रक्षार्थ मर्यादाधुर्य अथवा धुरोधिकारी नियुक्त थे।

'मण्डल' जिला के वरावर होता था। अभिलेखों में कालंजर, श्रावस्ती, सौराष्ट्र तथा कौशाम्बी का उल्लेख मिलने से यह प्रकट होता है कि ये स्थान भुक्ति तथा मण्डल दोनों के ही प्रमुख स्थान थे। 'विषय' आधुनिक तहसील के समान थे। विषय से छोटे पथक ग्रामों के समूह मात्र थे। 84 ग्रामों का समूह 'चतुरशीतिका' और 12 ग्रामों का 'द्वादशक' कहलाता था।

तंत्रपाल अधिकारी अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। सम्राट द्वारा नियुक्त यह अधिकारी 'विषयों' में सामन्तों के दानपत्र पर हस्ताक्षर करता अथवा उसकी स्वीकृति देता था। तंत्रपाल उच्चाधिकारी की हैसियत से कूटनीति तथा राजशक्ति द्वारा सामन्तों पर नजर रखता था और सीमा

---

218. हरिभद्र कृत समराइच्चकहा, पृ० 154, 208; उपमितिभवप्रपंचाकथा, पृ० 276.
219. राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 343.

पर 'मर्यादाधुर्य' का समर्थन करता था। प्रायः महादण्डनायक के अधिकार भी उसको प्राप्त थे।

स्थानीय शासन

साहित्य और अभिलेखों से स्थानीय शासन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ग्वालियर दुर्ग की व्यवस्था ' कोट्टपाल' तथा 'वलाधिकृत' करते थे। किन्तु नागरिकों के प्रकरण निपटाने के लिए अनेक निर्वाचित अधिकारी थे। सियादोणी के अभिलेख में भुक्ति की राजधानी में 'पंचकुल' तथा 'मंडपिका ' नामक दो विभागों का उल्लेख मिलता है। इनके अतिरिक्त व्यवसायिक श्रेणियों का वड़ा महत्व था। 'पंचकुल' प्राचीनकाल की पंचायत मात्र थी। समिति में पांच व्यक्तियों की संख्या की परम्परा मौर्यकालीन है। प्रतीहारकाल में 'पंचकुल' का शासन व्यवस्था में विशेष स्थान था। पंचकुल समिति में दानपत्रों का पंजीकरण होता था तथा वह न्यायिक कार्य भी करती थी। नागरिकों के झगड़ों का निपटारा करना, व्यापारियों को विक्री के तथा रियायती प्रमाणपत्र देना, धार्मिक तथा साधारण दानपत्र लिखे जाने की सूचना रखना पंचकुल का कार्य था। गांव के महाजनों का प्रतिनिधित्व भी 'पंचकुल' समिति करती थी। चोरी की जांच करने का काम 'महाजन' अथवा 'करणिक' नामक अधिकारी मिलकर करते थे।[220]

'मंडपिका' (चुंगी चौकी) भी मौर्यकालीन प्रतीत होती है, जो चुंगी वसूल करने के लिए वनाई गई थी। सियादोणी अभिलेख के अनुसार मंडपिका की जिम्मेदारी 'पंचकुल' के सुपुर्द थी। राज्य की ओर से करों की वसूली करना और शासकीय नियमों के अन्तर्गत वसूल राशि को व्यय करने का अधिकार मंडपिका को था। कर वसूलने वाला अधिकारी 'शौल्किक' कहलाता था। विभिन्न व्यवसायों के लिए श्रेणियां होती थी, जो अपने-अपने व्यवसाय सम्वन्धी संगठन रखती थी। उनके द्वारा वनाये गये नियमों के विरुद्ध कार्यवाही करना कठिन था। ग्वालियर के वैल्लभट्टस्वामी अभिलेख में तैलिक (तेली). और मालिका (माली) का पेशा करने वालों की श्रेणी का उल्लेख है। 'महत्तक' श्रेणी के मुखिया को कहते थे। अन्य अभिलेखों में सिलावटों, पानवालो, मिठाईवालों, कुम्हारों, कलालों तथा घोड़ों का व्यवसाय करने वालों का उल्लेख मिलता है। व्यापार में वस्तुओं की अदला-वदली प्रचलित थी। मुद्रा का भी चलन था। सबसे अधिक प्रचलित सिक्का 'द्रम्म' था जिसके कई भेद सियादोणी अभिलेख में वर्णित है। उनमें मुख्य मिहिरभोज का रौप्यद्रम था।

ग्राम शासन

ग्रामों में गणतंत्रीय शासन की अधिक गुंजाइश थी। अभिलेखों में 'ग्रामपति' (राजकीय मुखिया), महत्तर (श्रेणी प्रमुख), कुटुम्विक तथा मध्यग के नाम मिलते हैं। ग्राम की परामर्शदात्री सभा में 'ग्रामिक' 'महत्तर' अथवा 'महत्तम' (महतो) आदि का प्रमुख स्थान था। महत्तर गांव के प्रभावशाली लोग होते थे। इसका प्रमुख कारण उनकी योग्यता, सम्पत्ति अथवा आयु कुछ भी हो सकता है।

ग्रामपति ग्रामसभा की सहायता से शासन करता था। ग्राम के झगड़ों का निपटारा करना उसका कार्य था। ग्रामपति को फौजदारी के अधिकार प्राप्त थे। जनकल्याण कार्यों के लिए ग्रामपति राजा तथा प्रजा से अनुदान ले सकता था। गांव की चौकीदारी, अभिलेखों की सुरक्षा इत्यादि की व्यवस्था करना ग्रामपति का कार्य था।

प्रतीहार शासक आवागमन के मार्ग व्यवस्थित रखते थे। तालावों, नदियों, और कूपों से पानी चरखे के डोलों द्वारा खींचकर खेतों में पहुँचाया जाता था। इसके लिए शासन उपयुक्त सुविधाएं प्रदान करता था। शासन जन स्वास्थ्य की भी देखभाल करता था। गंदगी फैलाने वालों को उचित दण्ड दिया जाता था।

---

220 राजस्थान थ्रू द एजेज. पृ० 708

उपसंहार

सामन्ती प्रथा उपयोगी तथा अनुपयोगी दोनों ही थी। मंत्रिपरिषद में सामन्तों का अच्छा प्रतिनिधित्व था और उसी अनुपात से सेना में भी उनका भाग था। प्रदेशों में बड़े-बड़े पद सामन्तों के पास थे। भूमि पर उनका अधिकार पुश्तैनी था और उच्चपद भी उन्हें ही प्राप्त थे। यद्यपि सम्राट तंत्रपालों द्वारा सामन्तों को अधीन रखता था। प्रभुत्व के नाते भी ये सामन्त सम्राट के अनुचर थे और आन्तरिक संकट या वाह्य आक्रमण के समय अपनी-अपनी सेनाएं लेकर उपस्थित होते थे। किन्तु ऐसे सामन्ती तत्त्व प्रायः केन्द्र को वलहीन करते थे। रामभद्र के शासनकाल में सामन्तों ने अपना सिर उठाया। शक्तिशाली महेन्द्रपाल प्रथम के शासनकाल में दो सामन्त उन्दभट तथा गुणराज-आपस में संघर्ष करते पाये जाते हैं। इसी प्रकार महीपाल के शासनकाल में मालवा के परमारों ने स्वतंत्र होने की कोशिश की। केन्द्रीय सत्ता के निर्वल हो जाने पर प्रायः सामन्त प्रवल हो जाते हैं। अतः स्थानीय कर केन्द्र तक न पहुँचकर स्थानीय सामन्तों के पास ही एकत्र होने लगते हैं। व्यापार में व्यवसायिक अवरोध उत्पन्न होते हैं और अन्तर्राज्यीय सम्पर्क समाप्त हो जाते हैं। उपरिवर्णित कमियां केवल प्रतीहार साम्राज्य की विशेषता न थी, अपितु सभी भारतीय राज्यों के लक्षण में गिनी जाना चाहिए। ऐसी परिस्थिति में भी प्रतीहार शासक साम्राज्य को ऐसा शासन प्रदान कर सके, जिसकी प्रशंसा विदेशी यात्रियों ने भी की है। यह तथ्य उनकी राजनीतिक योग्यता और वुद्धिमता की सूचक है। हरिषेण ने एक प्रशस्ति में विनायकपाल को 'शक्रोपम' अर्थात् 'इन्द्र के समान' वताया है। सुलेमान यात्री कहता है कि भोज प्रथम के समय में साम्राज्य सैनिक दृष्टि से सुदृढ़ था और देश लुटेरों से सुरक्षित था। सम्राट का प्रथम कर्तव्य देश, प्रजा और उसकी सम्पत्ति की रक्षा करना था। गुर्जर-प्रतीहार साम्राज्य वंगाल से लेकर काठियावाड़ तक विस्तृत था। पश्चिम की ओर से अरवों के आक्रमण होते ही रहते थे और दक्षिण के राष्ट्रकूट राजा उनका साथ देते थे। कभी-कभी वंगाल और विहार के पाल शासक भी आक्रमण करते थे। ऐसे वातावरण में एक विशाल साम्राज्य को छिन्न-भिन्न होने से वचा लेने का अर्थ यही है कि सम्राटों ने प्रादेशिक राजाओं तथा सामन्तों का सहयोग प्राप्त किया। शासकीय तंत्र निर्दोष, ठोस और सुदृढ़ था।"[221]

सामाजिक दशा

आधुनिक विद्वान सामाजिक दशा का वर्णन व्राह्मणों से नहीं करते। इसका मुख्य कारण यह है कि व्राह्मणेतर जातियों की संख्या अधिक है और उनका स्थान भी महत्वपूर्ण है।

म्लेच्छ

म्लेच्छों में विदेशी तथा देशी दोनों ही जातियों की गणना की जाती थी। शकों, यवनों तथा हूणों में कुछ तो ऐसे होंगे जो क्षत्रिय वर्ण में समाविष्ट न हो सके हों। किन्तु शवर, किरात, खस, ओड्र, पुलिन्द, भिल्ल भी आर्य संस्कृति के उपासक न होने के कारण म्लेच्छ कहे जाते थे। उनका संगठन तथा जीवन पद्धति अपनी प्रकार की थी। आर्यों के आगमन के पश्चात् उन्होंने अपना निवास पर्वतीय दुर्गम स्थलों तथा जंगलों में वना लिया और लूटमार से अपनी आजीविका चलाने लगे। उनके धार्मिक कृत्य रक्तमय थे। आर्य उन्हें अधर्मी मानते थे। उनके उपद्रवों और वटमारी के कारण आर्यों का व्यापार प्रभावित होता था। कभी-कभी ये लोग मनुष्यों को वन्दी वना लेते थे तथा वदले में मावजा (फिरौती) मिलने पर ही उसे मुक्त करते थे।[222] ये म्लेच्छ जातियाँ क्षत्रियों से जमकर लड़ती थीं और कहीं-कहीं राजपूतों तथा व्राह्मणों को पराभूत कर देती थीं।

---

221 पुरी गुर्जर-प्रतीहार, पृ० 115.
222 उद्योतन सूरि कृत कुवलयमाला; समराइच्चकहा, पृ० 112

अन्त्यज

निम्नस्तर के कार्य करने के कारण कुछ जातियां नगर के वाहर रहती थी। इन जातियों में भिल्ल, डोम्व, सौकरिक, मत्स्यवंधक या मछुवाहे, रजक (धोवी), चर्मकार (चमार), शाकुनिक (वहेलिया) आदि का उल्लेख मिलता है।[223] उनके निम्नस्तरीय जीवन, दरिद्रता तथा सामाजिक हीनता का संकेत **उपमितिभव प्रपंचाकथा** तथा जिनेश्वर कृत **कथाकोष** प्रकरण में मिलता है। इनमें से कुछ जातियां संगठित होकर रहती थी। इसलिए उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी थी। इसके विपरीत ढ़ाढ़ी जैसी असंगठित जातियों की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। जिनेश्वर ने ऐसी जातियों को 'अधमाधम' कहा है। शहर के वाहर रहने वाली इन जातियों को नगर में प्रवेश करने पर वांस का डण्डा ठोंकना पड़ता था। अतः विदेशी आक्रमण के समय उन्होंने भारतीय समाज के साथ कितना सहयोग किया होगा, यह सन्देहास्पद ही है।

जिनेश्वर तथा अलवेरूनी (ग्यारहवीं शती ई०) के वर्णन से इन अस्पृश्य जातियों की वास्तविक दशा का पूर्ण चित्र सामने आ जाता है। अलवेरूनी से पहले दसवीं शताव्दी के प्रारम्भ में इब्न खुर्दाद्वा तथा ग्यारहवीं शती ई० के अन्त में अल-इद्रीसी ने सात जातियों का उल्लेख किया है, जिनमें से तीन शूद्र हैं।

शुद्र

शूद्रों का वर्ण एक अवश्य है, किन्तु जातियां अलग-अलग हैं। ये जातियां आर्यों के समाज में तो स्थान पा गई थी, तो भी उन्हें चतुर्थ वर्ण के अन्तर्गत रखा गया था। इनमें से कुछ ऐसी थी जो कालान्तर में अपने उद्यम और प्रयत्न से द्विजों में स्थान पा गई।

शूद्रों में श्रमिक, खेतिहार और दस्तकार सभी सम्मिलित थे। कुम्हार, माली, तम्बोली, सिलावट, कलाल (कलार) तेली और मेहर आदि जातियों का उल्लेख शिलालेखों तथा साहित्य में मिलता है।[224] इनके अतिरिक्त सुनार, स्वर्णकार, वढ़ई, तमेर, नाई, गड़रिया, दर्जी, कहार, नाई आदि जातियों के भी उल्लेख प्राप्त होते हैं।[225]

प्रतीहारकाल में शूद्रों को वेद पढ़ने की अनुमति नहीं थी। उन्हें उपहार प्राप्त करने का पात्र भी नहीं समझा जाता था। डा० दशरथ शर्मा[226] ने **वृहत्कथाकोश** का एक उदाहरण दिया है जिसमें कहा गया है कि कलाल जातीय पूर्णभद्र ने शिवमूर्ति व्राह्मण को निमन्त्रण दिया। अतः शिवमूर्ति ने शूद्र का अन्न एक दूसरे व्राह्मण के घर पकवा कर वन में वैठकर ग्रहण किया। कलाल और उनके मित्र लोग जव मदिरा पान करते थे तव व्राह्मण लोग दूध में गुड़ मिलाकर पीते थे। फिर भी व्राह्मण समाज ने शिवमूर्ति को मदिरा के सन्देह में जाति से वहिष्कृत कर दिया। ज्ञान पंचमी के एक कथानक (क्र० 31) से विदित होता है कि एक व्राह्मण ने अपनी स्त्री का हाथ इसलिए काट डाला था क्योंकि वह अपने किसी अहीर मित्र से प्राप्त दूध को अपने पति को देती थी।[227]

अन्य दृष्टिकोणों से पूर्व मध्यकाल में शूद्रों की अवस्था में सुधार हुआ। वहुसंख्यक वैश्य खेती छोड़कर व्यापार करने लगे थे। इसमें परिश्रम कम और लाभ अधिक था तथा कृषि कार्य की हिंसा से वचत होती थी। इस प्रकार किसान शूद्र अपने युग के वैश्य वन वैठे। कोई आश्चर्य

---

223. कुवलयमाला पृ० 40, पं० 29 तथा **समराइचकहा** , पृ० 349.
224. सियादोणी अभिलेख; जिनेश्वर कृत **कथाकोशप्रकरण**, पृ० 115.
225. **राजस्थान थ्रू द एजेज**, पृ० 433-34.
226. वही, पृ० 433-34.
227. वही, पृ० 435.

नहीं कि जैन तथा शैव धर्मों में उनका स्वागत हुआ। मनुस्मृति के प्रसिद्ध टीकाकार मेधातिथि को नवीं शती ई० में लिखना पड़ा कि शूद्र भी सम्पत्ति के स्वामी हो सकते हैं और वे चाहे तो अन्य तीन वर्णों की सेवा न करें। वैदिक मंत्रों के विना भी संस्कार हो सकते हैं।[228] इस प्रकार शूद्र लोग मंदिरों की व्यवस्था करने लगे और अपने गांव की सुरक्षा समिति के सदस्य बनने लगे। इस काल में शूद्र समाज में विधवा विवाह प्रचलित था।

वैश्य

अलवेरूनी के इस कथन से कि यदि "वैश्य अथवा शूद्र" वेद का उच्चारण करें तो उसकी जीभ काट दी जाती थी, आधुनिक विद्वानों को भ्रम में डाल दिया है। इस कथन से वैश्यों की निम्न स्थिति का पता चलता है। किन्तु स्मृतियों से अलवेरूनी के कथन का खण्डन हो जाता है। स्मृतियों के अनुसार वैश्यों को वेद पढ़ने का अधिकार था।

इस युग में वैश्यों ने कृषि करना वन्द कर दिया था। व्यापार में नमक, मदिरा, दूध, दही, मक्खन, लाख, चरसा, मांस, नील, माहुर शस्त्र तथा मूर्तियों का लेनदेन उनके लिए वर्जित था। वैश्य का मुख्य लक्षण उसकी सम्पत्ति थी। यद्यपि युद्धों में भी वैश्य भाग लेते थे, किन्तु विदेश व्यापार द्वारा धन कमाने में उनकी रुचि अधिक थी। राजकीय परिषदों में उनका अच्छा प्रभाव था। नगरों की सम्पन्नता वैश्यों के कारण ही थी। अन्य वर्ण वाले भी व्यापार कर सकते थे। अतः अनेक कुलीन क्षत्रिय वंशों ने जैसे अग्रवाल, माहेश्वरी, जायसवाल, खण्डेलवाल तथा ओसवाल आदि ने जब वैष्णव धर्म स्वीकार किया तब वैश्य वर्ण भी स्वीकार कर लिया। नाडोल के राजा लक्ष्मण चौहान ने एक वैश्य स्त्री से विवाह किया और उसकी संतान का पालन पोषण वैश्यों की तरह कराया था। उन्हीं के वंशज 'भंडारी' कहलाते हैं।

क्षत्रिय (राजपूत)

इस समय समस्त उत्तरी भारत में 'राजपूत' नामक एक नये वर्ग का जन्म हुआ।

राजपूतों के परम्परागत 'छत्तीस' कुल माने जाते हैं। ये राजपूत क्षत्रिय कहलाने के पात्र थे, क्योंकि देश और संस्कृति की रक्षा के लिए प्राणों की वाजी लगाना जानते थे। ब्राह्मणों के क्षत्रिय समाज में समावेश और युद्ध प्रिय विदेशी जातियों का देशी क्षत्रिय वंशों में सम्मिश्रण और वैवाहिक सम्वन्ध करने के प्रमाण पाये जाते हैं। इन आगन्तुक जातियों ने अपना सम्वन्ध सूर्य तथा चन्द्र वंश के राजाओं से जोड़कर वैदिक धर्म परम्परा को स्वीकार कर लिया। अतः उनके क्षत्रिय बने रहने में हिन्दू समाज को कोई आपत्ति न थी। फिर भी अरबों और तुर्कों का इतिहास उनके हिन्दू समाज में विलीनीकरण के तथ्य को स्वीकार नहीं करता। उन्होंने अपने अस्तित्व को समाप्त नहीं किया और यह प्रथम उदाहरण है जब इस्लाम मतानुयायियों ने हिन्दू समाज के समानान्तर एक मुस्लिम समाज का निर्माण किया और इसमें हिन्दू जातियों को भी मिलाया। इस प्रकार हिन्दुओं के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे सामाजिक प्रतिद्वन्दिता का मुकाबला करने के लिए अपने सिद्धान्तों तथा संस्थाओं का पुनर्गठन करें। फलस्वरूप जाति प्रथा में अधिक कट्टरता आने लगी और प्रत्येक समूह अपनी जाति परम्परा को सुदृढ़ करने में लग गया। यही कारण है कि इस समय राजपूत कुल सूर्य, चन्द्र, अग्नि, समुद्र, यादव तथा रघु वंश की चर्चा जोर-शोर से करते हैं।

ब्राह्मण

जाति प्रथा की सबसे अधिक कट्टरता ब्राह्मणों में दिखाई पड़ती है। ब्राह्मणों में उपजातियों का विभेद सूत्रकाल से पाया जाता है। उस समय आर्य-अनार्य भेदभाव की वड़ी चर्चा थी और

228. राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 435-36.

यह विश्वास किया जाता था कि मोक्ष प्राप्ति के लिए आर्यावर्त में जन्म लेना आवश्यक है। यही सांस्कृतिक श्रेष्ठता की भावना अन्तर्वेदी, श्रीमाल, नागर, कान्यकुब्ज और तिवारी ब्राह्मणों को प्रभावित करती हुई प्रतीत होती है।

अरबों-तुर्कों के आक्रमण के फलस्वरूप स्थानीय भावना तीव्र हो गई और भारतीय संस्कृति निर्माताओं तथा संरक्षकों ने वंशानुगत शुद्धता तथा अस्पृश्यता पर जोर देकर उसे बचाने का प्रयत्न किया। अन्तर्जातीय विवाहों पर रोक लगा दी गई, और समुद्र-यात्रा वर्जित हो गई। दासों, चरवाहो, शूद्र मित्रों तथा शूद्र हलवाहों के घर भोजन करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। स्वच्छता के नियमों का पूर्ण निर्वाह करते हुए ब्राह्मण की देखरेख में किसी शूद्र द्वारा बनाया गया भोजन भी ब्राह्मणों के लिए अभक्ष्य हो गया। मुस्लिम जनता के सम्पर्क में आनेवाला ब्राह्मण निम्न समझा जाने लगा। शाकाहारी ब्राह्मणों और मांसाहारी ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति में बड़ा अन्तर आ गया। अपना मूलस्थान छोड़ कर दूरस्थ स्थानों को चले जाने पर, कुछ व्यवसायों के ग्रहण कर लेने पर और दार्शनिक-धार्मिक दृष्टिकोण तथा सामाजिक व्यवहार सम्बन्धी मतभेदों के कारण एक ही जाति के लोग अनेक उपजातियों में विभक्त हो गये।

जैन साहित्य में ब्राह्मणों की श्रेष्ठता पर गम्भीर कुठाराघात किया गया है। उनके संस्कारों तथा चतुर्वर्ण सिद्धान्त की भी खूब आलोचना की गई है। ब्राह्मण निर्मित शास्त्र में ब्राह्मण अपराधी को न तो मृत्युदण्ड दिया जा सकता था और न उनकी सम्पत्ति कुर्क की जा सकती थी। ब्राह्मण को अधिक से अधिक देश निकाले का दण्ड दिया जा सकता था। जैन आलोचकों का कथन है कि "कोई भी व्यक्ति तब तक ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी नहीं है जब तक वह पूर्ण संयम से न रहता हो तथा इन्द्रियों पर उसका पूर्ण वशीकरण न हो। केवल उपनयन पहन लेने से और होम कर लेने से ही ब्राह्मण नही माना जा सकता।"

कायस्थ

लेखन का व्यवसाय करने वाले कायस्थों की अब एक पृथक जाति बन गई थी। पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का कथन है कि कायस्थ ब्राह्मणों-क्षत्रियों की सन्तान है। समूचे मध्यदेश में 'श्रीवास्तव्य' कायस्थों का बड़ा सम्मान था। उनके अतिरिक्त नैगम, गौड, माथुर कुलों का भी उल्लेख अभिलेखों में पाया जाता है। समाज में अपने ऊँचे स्थान के कारण कायस्थ प्रायः 'ठक्कुर' की उपाधि धारण करते थे।

खत्री

खत्रियों का जन्म प्रतिलोम विवाह (क्षत्रिय पिता तथा ब्राह्मण माता) से हुआ। किन्तु स्वयं खत्री अपने को शुद्ध क्षत्रिय मानते है। उनका कथन है कि व्यापार तथा लेन-देन का कार्य करने के कारण ही उनके सामाजिक स्तर में गिरावट आई है।

जाट-गूजर

राजस्थान में जाटों की अनेक बस्तियाँ थीं। उनमें से कुछ राजपूत बन गये तथा शेष चरवाहे बने रहे।

गुर्जर (गूजर)

गुर्जरों के निवास के कारण ही पश्चिमी राजस्थान का नाम गुर्जरत्रा पड़ गया। इनमें से कुछ लोगों को क्षत्री मान लिया गया और उन्हें 'बडगूजर' राजपूत कहा जाने लगा।

स्त्रियों की दशा

समकालीन साहित्य यथा ज्ञानपंचमी, उपमितिभवप्रपंचाकथा, कथाकोष प्रकरण, समराइच्चकहा तथा वृहत्कथाकोष में स्त्री समाज का अच्छा दिग्दर्शन मिलता है। कन्या का जन्म दुःख का कारण माना जाता था। रूद्राणी, कलावती, अवन्तिसुन्दरी, शीलभट्टारिका और प्रभुदेवी जैसी विदुषी स्त्रियों के उदाहरणों से प्रतीत होता है कि कुलीन परिवारों की कन्याओं की शिक्षा-दीक्षा का अच्छा प्रवन्ध किया जाता था। गन्धर्व विवाहों तथा स्वयंवरों का युग वीत चुका था। कन्या का विवाह पिता का उत्तरदायित्व था। विवाह का प्रस्ताव वर पक्ष की ओर से किया जाता था। विवाह के लिए लड़के की आयु सोलह वर्ष और लड़की की आयु वारह वर्ष उपयुक्त मानी जाती थी। सगोत्र विवाह के स्थान पर अलग-अलग गोत्रों में विवाह करना अच्छा माना जाता था।

अनुलोम विवाह पर्याप्त लोकप्रिय थे। मण्डोर के हरिचन्द्र की ब्राह्मण स्त्री से ब्राह्मण प्रतीहार तथा क्षत्राणी से मण्डोर के प्रतीहार राजपूत उत्पन्न हुए। लक्ष्मण की वैश्य स्त्री से भण्डारी जाति के लोग हुए। मनुस्मृति के इस नियम के विपरीत कि सन्तान की जाति पिता की जाति पर आधारित होगी, इस युग में विज्ञानेश्वर के मतानुसार सन्तान की जाति माता की जाति पर चलती थी। ब्राह्मण कवि राजशेखर की सन्तान चाहमान स्त्री अवन्ति सुन्दरी से चली या नहीं, यह ज्ञात नहीं है। प्रतिलोम विवाह समाज में लोकप्रिय न थे। समकालीन साहित्य में विवाह संस्कार का अच्छा वर्णन मिलता है।

स्त्री अपने पति की आज्ञाकारिणी होती थी। वह पति परमेश्वर के सिद्धान्त को मानती थी और दासी के समान पति की सेवा करती थी। इस प्रकार स्त्री का स्थान पिता, पति और पुत्र से निम्नतर था। 1000 ई० में स्त्री अर्द्धगिनी के स्थान पर भोग-विलास का साधन मान ली गई थी। पति की मृत्यु पर सती हो जाना 'स्त्री-धर्म' माना जाता था। अभिलेखों से प्रकट होता है कि राजपूतों में सती प्रथा विशेष रूप से लोकप्रिय थी। ब्राह्मण विधवाएं घर पर रहकर ही सादा जीवन व्यतीत करती थी। इसके विपरीत जैन विधवाएं गच्छ में सम्मिलित होकर समाज-सेवा कर सकती थीं। राजपूत विधवाओं के उदाहरण भी उपलब्ध हैं। राजपूतों में जौहर-प्रथा भी प्रचलित थी। शत्रु के आक्रमण के समय केसरिया वस्त्र पहनकर और तुलसी की माला पहनकर तथा हाथ में तलवार लेकर राजपूत हर-हर महादेव का नारा लगाते हुए युद्ध क्षेत्र में कूद पड़ते थे और विजय की आशा न होने पर दुर्ग के भीतर उनकी स्त्रियां धधकती आग में कूदकर अपने प्राण दे देती थीं।

राजपूतों मे परदे की प्रथा भी प्रचलित थी। धनी तथा प्रभावशाली परिवारों में बहुविवाह प्रथा प्रचलित थी। 'संग्रहणी' (भितरहाई) स्त्रियों का अस्तित्व भी था। उपपत्नियों से सम्वन्धित अनेक कथाएं साहित्य में मिलती हैं। सवर्णों में विधवा विवाह प्रचलित नहीं था। जैन साहित्य से पता चलता है कि विशेष परिस्थितियों में स्त्री-पुरुष अलग हो सकते थे। नियोग प्रथा समाप्त प्राय थी। दुश्चरित्र स्त्री को तलाक नहीं दिया जा सकता था। उसके भरण-पोषण की जिम्मेदारी पति की थी किन्तु आभूषण तथा अच्छे भोजन वस्त्र से वह वंचित रहती थी। वेश्या प्रथा समाज में जड़ पकड़ चुकी थी और वेश्याओं पर कर लगाकर राज्य अपनी आय वढ़ाता था। यही कारण है कि जिनेश्वर सूरि जैसे जैन समाज सुधारकों को अपने अभियान में असफल होना पड़ा। वेश्याएं नृत्य-गान के लिए मंदिरों में भी नियुक्त की जाती थीं।

निस्सन्तान व्यक्तियों की सम्पत्ति राजसात कर ली जाती थी। विधवाओं को उनके आभूषण तथा स्त्रीधन का अधिकार था। स्त्रियों को मृत्युदण्ड माफ था। किन्तु उन्हें देश निकाला दिया जा सकता था।[229]

---

229 राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 450-62.

वस्त्राभूषण

समकालीन साहित्य से ज्ञात होता है कि स्त्रियां कलाई में 'कंकण', पैरों में 'नूपुर' कानों में 'कुण्डल' मस्तक पर 'मुकुट' गले में 'हार' और कमर में 'करधनी' पहनती थीं। **ज्ञानपंचमीकथा** से पता चलता है कि स्त्रियां गले में मोती के हार, स्तनों पर रत्नंगबन्ध तथा पत्रलता, कानों में रत्नचक्रलता (वाला) और माथे पर चूड़ारत्न पहनती थीं। वे आंखों में सुरमा, शरीर पर श्वेत चन्दन का उब्टन, होठों पर लाली लगाती थीं। केशसज्ञा में पुष्पों का प्रयोग किया जाता था। चंदन में केसर मिलाकर लेप करने का प्रचलन था। ग्रीष्म ऋतु में धनवान स्त्रियां वक्षस्थल पर कपूर और शरद ऋतु में मुख पर मोम मलती थीं। ग्रामीण स्त्रियां शंख की चूड़ियां और शीशा जड़े आभूषण पहनती थी। निर्धन स्त्रियां मुंह पर केसर के स्थान पर महावर लगाती थीं। राजशेखर की कर्पूरमंजरी से प्रकट होता है कि शरीर के प्रायः प्रत्येक अंग में कोई न कोई आभूषण पहना जाता था। जनपदों के अनुसार केशसज्ञा अलग-अलग प्रकार की थी जैसे केरल की स्त्रियां वालों को बांधने के लिए ऊपर को खींचती थीं। स्त्री और पुरुषों के वस्त्र में अधोवस्त्र (धोती) को कमर में लपेट कर ऊपर ले जाते थे। राजशेखर का कथन है कि स्त्रियां चोली पहनती थीं। अलवेरुनी ने 'कुर्टक' (कुर्ता) का उल्लेख किया है। वह लिखता है कि कम से कम वस्त्र लंगोट होता है और अधिक से अधिक सुन्थण, जो पश्चिमी पंजाब में पहना जाता होगा।

राजशेखर के नाटकों में स्त्रियों के पहनने के तीन वस्त्रों का उल्लेख मिलता है – (1) दुकूल, (2) चोलक (कंचुलिका या चोली) और (3) नीवी (अधोवस्त्र)। रेशम का खूब प्रचार था। रेशम के अनेक प्रकार थे जैसे चीनांशुक, देवांशुक और पट्टांशुक। ओढ़ने वाले वस्त्र को 'उत्तरीय' कहते थे। सुलेमान यात्री का कथन है कि कोई-कोई वस्त्र इतने वारीक वनाये जाते थे कि पूरा थान एक अंगूठी में से निकाला जा सकता था।

स्त्रियों की साड़ी के कपड़े मौसम के अनुसार होते थे। ऊनी कपड़ों में 'वृहतिका' 'प्रवार' 'रल्लक' और तीनों प्रकार के रेशम का उल्लेख मिलता है।[230] आरामदायक बिछौने, मुलायम रुई से भरे तकिये और हंस के नरम परों से भरी हुई वैठकों का भी उल्लेख प्राप्त होता है। महादेश भारत के विभिन्न भागों में अपने-अपने चलन के अनुसार वस्त्र, आभूषण तथा वाल गूंथने का तरीका राजशेखर ने लिखा है। केवल पश्चिमी भारत के पुरुष पांचाल देश के चलन पर थे जव कि वहाँ की महिलाएं केरल की स्त्रियों का अनुसरण करती थीं।

खान-पान

अभिलेखों में विभिन्न प्रकार के अनाजों के अतिरिक्त खाने तथा साधारण प्रयोग की वस्तुओं का उल्लेख मिलता है। वृहत्कथाकोश में मूंग की दाल, चावल और घी की चर्चा आई है। जिनेश्वर के कथाकोश में 'लड्डुका' के अतिरिक्त खज्जक (खाजा) मंडक (फुलकी), घृतपूर (घेवर), सत्तुक (सत्तू), पायस (खीर) इड्डुरिय (इडली) का वर्णन मिलता है।

अधिकांश क्षत्रिय मांसाहारी थे। श्राद्ध के अवसरों पर व्राह्मण भी मांसाहार करते थे (समराइच्चकहा)। दसवीं शताब्दी में लिखित ग्रंथ वृहत्कथाकोश में मछली तलने और मांस पकाने की अनेक विधियों के साथ विविध प्रकार के मसालों का वर्णन है। व्राह्मण लोग 'चण्डिकादेवी' को अर्पित भैंसे का मांस भी खाते थे। गौमांस वर्जित था। इसी प्रकार मुर्गी, अण्डा तथा मदिरा का प्रयोग भी निषिद्ध था। अरवयात्री सुलेमान का कथन है कि मदिरा पान का आम रिवाज न था। इब्नखुर्दादवा लिखता है कि क्षत्रिय तीन प्याले पी सकते थे। शूद्रों के मदिरापान पर कोई मनाही न थी। व्राह्मण प्याज और लहसुन का प्रयोग नहीं करते थे।

---

230. उपमितिभवप्रपंचा कथा, पृ० 154, देखिए; राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ० 465.

अलवेरूनी ने देवशयनी एकादशी (आषाढ़ शुक्ल पक्ष), उसी मास की अष्टमी को भगवती व्रत, जन्माष्टमी, देवोत्थानी तथा भीष्म पंचरात्री, पौष मास के छठे दिन सूर्य देवता का उपवास, माघ मास में गौरी तृतीया का उल्लेख किया है। त्यौहारों में अक्षय तृतीया, गौरी तृतीया और वसन्तोत्सव का उल्लेख मिलता है। वसन्तोत्सव धूम-धाम से मनाया जाता था। वैशाख त्रयोदशी को स्त्रियां कामदेव का पूजन कर नृत्य गायन और वादन का आयोजन करती थीं। अवीर-गुलाल का जमकर प्रयोग होता था। महानवमी के उपलक्ष में अस्त्र-शस्त्रों का पूजन किया जाता था और अस्त्रधारियों को उपहार प्रदान किये जाते थे। दीपमालिका त्यौहार मनाकर क्षत्रिय नरेश दिग्विजय के लिए निकल पड़ते थे। आश्विन के पूरे माह में भिनमाल के सूर्य देवता का उत्सव मनाया जाता था। हिन्दू तथा जैन देवताओं की यात्राएं (जलूस) प्रायः निकलती ही रहती थीं।

देवताओं के अतिरिक्त पुत्र जन्म, नामकरण, उपनयन, विवाह, मंदिर पर ध्वजारोहण, दिग्विजय, राजा तथा आचार्य का स्वागत, जैनों के यहां पुत्र-पुत्रियों तथा गृहस्थों की दीक्षा आदि पर भी उत्सव मनाये जाते थे। डा० दशरथ शर्मा[231] ने **समराइच्चकहा** से विवाह-संस्कार का एक उदाहरण अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है। इससे प्रकट होता है कि दसवीं शताब्दी के अनेक रीतिरिवाज आज भी पश्चिमी भारत में प्रचलित हैं।

शिष्टाचार

अलवेरूनी[232] का कथन है कि ब्राह्मण भोजन के समय पानी-पीने के लिए अपना पात्र रखते थे। किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा उपयोग किये जाने पर पात्र फेंक दिया जाता था। हिन्दुओं में गोबर से लिपी भूमि पर अकेले बैठकर खाने की परम्परा है। मिट्टी के बर्तन खाना समाप्त होने पर फेंक दिये जाते थे। इसी प्रकार जूठा भोजन भी फेंक दिया जाता था। पान खाने के कारण भारतीयों के दांत लाल हो जाते थे।

भेंट के समय, प्रवास करने तथा गले मिलने का रिवाज था। अलबेरूनी का कथन है कि हिन्दू लोग घर में प्रवेश करते समय अनुमति नहीं लेते थे, किन्तु घर से निकलते समय इजाजत लेते थे। वायु निकालने को शुभ और छींकने को अशुभ मानते थे।

शिक्षा तथा साहित्य

शिक्षा

शिक्षा का प्रारम्भ उपनयन संस्कार से होता था। उपनयन के पश्चात् बालक को उपहार सहित भेजा जाता था। ब्राह्मण बालक को चौदह विद्याओं के साथ कर्मकाण्ड का अध्ययन कराया जाता था। क्षत्रिय बालक को बहत्तर कलाएं दिखाई जाती थीं।[233] किन्तु उसे अस्त्र-शस्त्र विद्या में निपुणता प्राप्त करना आवश्यक था। विद्यार्थी को गुरुकुल में रहकर विद्या अध्ययन करना पड़ता था। अध्ययन समाप्ति पर उसके ज्ञान की परीक्षा ली जाती थी।

'गणदहर-सार्पशतकवृहदवृत्ति' में जैन विद्याओं के विषय की एक सूची वर्णित है। प्राचीन साहित्य में रामायण, महाभारत्त, वृहत्कथामंजरी तथा कवियों में कालिदास, माघ, भारवि, भट्टि, वाक्पति, हर्ष और वाण विशेपरूप से लोकप्रिय थे।

---

231. राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 486-87.
232. अलबेरूनी का भारत।
233. उद्योतन सूरि, कुवलयमाला कथा पृ० 21-22.

मठों का भी उल्लेख मिलता है। यहाँ पर विद्यार्थी निवास करते थे। उनके आवास और भोजन की व्यवस्था निःशुल्क थी। अधिकांश अध्ययन-अध्यापन मौखिक था। छात्रों को शारीरिक दण्ड भी दिया जाता था। विभिन्न विषयों पर आचार्य लोग व्याख्यान देते थे। विश्वविद्यालयों में देश के कोने-कोने से विद्यार्थी आकर एकत्र होते थे। इससे सांस्कृतिक एकता को वल मिलता था।

प्रत्येक राजधानी विद्या का केन्द्र होती थी। चित्तौड़ के जिनभट, हरिभद्र, एलाचार्य, वीरसेन तथा जिनवल्लभसूरि, भिल्लमाल के व्रह्मगुप्त ज्योतिपी तथा माघ, माहुक और धाइल्ल कवियों के अतिरिक्त अजमेर, जालौर, त्रिभुवनगिरि (तहनगिरि), आवू, चन्द्रावती, भदानक तथा चाटसू के विद्वान अपने युग के शिरोमणि थे।

आधुनिक काल की परीक्षा पद्धति दसवीं शताव्दी में प्रचलित न थी। किन्तु पंडित सभा में प्रश्नोत्तरों द्वारा विद्वानों की योग्यता पहचान ली जाती थी। यदि शास्त्रार्थ का अवसर उपस्थित होता था तव राजा की ओर से विजेता को जयपत्र प्रदान किया जाता था और जुलूस निकालकर उसका सम्मान किया जाता था। प्रश्नोत्तर तथा शास्त्रार्थ के अतिरिक्त विद्वान् लोग गोष्ठियों में एकत्र होकर साहित्यक चर्चा करते थे। पूर्व मध्यकाल की इन गोष्ठियों और शास्त्रार्थों में तत्कालीन विद्या की कसौटी निहित थी। उसके कारण विद्वान सदैव सतर्क रहता था और अपना ज्ञानकोष बढ़ाता रहता था। कभी-कभी शास्त्रार्थ का उद्देश्य योग्यता की कसौटी न होकर विरोधी को नीचा दिखाना होता था। इसके लिए छल, कपट आदि का भी प्रयोग किया जाता था। पूर्व मध्यकाल में कान्यकुब्ज (कन्नौज) विद्या का सवसे बड़ा केन्द्र था। राजशेखर ने कन्नौज की गोष्ठियों का वर्णन किया है। उसने शिक्षा पद्धति का वर्णन तो नहीं किया, फिर भी 'काव्यविद्यास्नातक' के अध्ययन विषय, पठन पद्धति परीक्षा और आवश्यक सामग्री का उल्लेख किया है।

राजशेखर ने स्नातकों के तीन प्रकारों का वर्णन किया है – बुद्धिमान, आहार्यवुद्धि और दुर्वुद्धि। उदीयमान कवि को सम्पूर्ण शास्त्रों का अध्ययन करना पड़ता था। समस्त विपयों का ज्ञाता होना तो कठिन था, तथापि वर्णन मिलता है कि मण्डोर का शासक कक्क छन्द, व्याकरण, तर्क, ज्योतिष आदि का ज्ञाता था। वह सभी भाषाओं की कविता में भी निष्णात था।[234] राजकवि राजशेखर वाचन कला पर विशेष वल देते हुए लिखते हैं कि यह कार्य सरल नहीं है। इसके लिए सुसंस्कृत व्यक्ति ही प्रयास कर सकते हैं। उसने पूर्व गौड़, कर्णाट, द्रविण, लाट, सुराष्ट्र, त्रवण तथा कश्मीर के कवियों के वाचन में पांचाल कवियों का उच्चारण अत्यधिक शुद्ध वताया है।

लिपिकला पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। राजशेखर ने लेखनी तथा मासीपिण्ड का भी उल्लेख किया है।

राजशेखर ने 'व्रह्म सभा' की चर्चा की है। ऐसी सभाएं उज्जैन तथा पाटलिपुत्र में हुआ करती थी। राजशेखर का मत है कि इस प्रकार की सभाएं कवियों की परीक्षा के लिए उपयोगी हैं। परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर कवियों को रथ तथा रेशमी पाग द्वारा सम्मानित किया जाता था। उपर्युक्त वर्णन से प्रमाणित होता है कि सम्राट हर्षवर्द्धन की मृत्यु के वाद भी उत्तर भारत से विद्या का वातावरण समाप्त नहीं हुआ था। प्रतीहार शासक स्वयं भी विद्वान थे और वे विद्वानों को राज्याश्रय भी प्रदान करते थे।[235]

साहित्य

साहित्य के क्षेत्र में भिल्लमाल एक बड़ा केन्द्र था। यहां पर अनेक महान् साहित्यकार

---

234. एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 95.
235. गुर्जर-प्रतीहाराज, पृ० 125-28.

हुए। इनमें 'शिशुपालवध' के रचयिता माघ का नाम अग्रणी है। माघ के वंश में सौ वर्षों तक कविता होती रही और संस्कृत तथा प्राकृत भाषा में ग्रंथ रचे गये। विद्वानों ने उसकी तुलना कालिदास, भारवि तथा दण्डिन से की है।

जैन हरिभद्र सूरि माघ का समकालीन था। उसका 'धूर्तापाख्यान' ग्रंथ हिन्दू धर्म की कड़ी आलोचना करता है। सबसे प्रसिद्ध प्राकृत ग्रंथ 'समराइच्चकहा' है। यह ग्रंथ इतना लोकप्रिय हुआ कि पांच सौ वर्षों बाद प्रद्युम्न सूरि ने इसका संक्षिप्त संस्कृत संस्करण तैयार किया।

हरिभद्र सूरि के शिष्य उद्योतनसूरि ने जालोर में प्राकृत ग्रंथ 'कुवलयमाला' की रचना 778 ई० में की। यह ग्रंथ प्रतीहारकालीन सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी के लिए आवश्यक है। भिल्लमाल के ही एक अन्य मनीषी जैन सिद्धार्षी सूरि ने 'उपमितिभवप्रपंचाकथा' नामक ग्रंथ लिखा जो एक दार्शनिक काव्य ग्रंथ है और विद्वानों तथा सामान्य पाठकों में एक समान लोकप्रिय है। जिनेश्वर सूरि खरतरगच्छीय के लेखक हैं। उन्होंने अपने सम्प्रदाय के उपदेशों तथा कर्मकाण्ड के प्रचारार्थ अनेक ग्रंथों की रचना की।

स्वयं प्रतीहार शासकों तथा उनके आश्रित कवियों का उल्लेख करना आवश्यक है। जोधपुर अभिलेख में मण्डोर के बाउक को बड़ा विद्वान बताया गया है। उसका लिखा एक श्लोक उपलब्ध है। प्रथम प्रतीहार सम्राट नागभट्ट क्षमाश्रमण का आश्रयदाता बताया जाता है। जैन विद्वान, बप्पभट्टि, नागभट्ट द्वितीय का मित्र तथा गुरु था। उसके लिखे ग्रंथ अब उपलब्ध नहीं है। भोज प्रथम के दरबार में भट्ट धनेक का पुत्र बालादित्य रहता था। ग्वालियर प्रशस्ति का प्रसिद्ध लेखक यही कवि है। इन कवियों में राजशेखर की प्रसिद्धि सबसे अधिक है। इसकी अनेक कृतियां आज भी उपलब्ध है। कवि और नाटककार राजशेखर सम्राट महेन्द्रपाल का गुरु था। राजशेखर बालकवि से कवि और कवि से राजकवि के पद प्रतिष्ठित हुआ। इस तथ्य का उल्लेखं उसने स्वयं किया है। वह किसी महामंत्री का पुत्र था और भत्रीमेन्ठ तथा भवभूति के माध्यम से स्वयं को वाल्मीकि का वंशज कहता है। राजशेखर का प्राकृत नाटक **कर्पूरमंजरी** और संस्कृत महानाटक **बालरामायण** महेन्द्रपाल के शासनकाल में अभिनीत किये गये थे। महेन्द्रपाल के उत्तराधिकारी महीपाल के शासनकाल में राजशेखर राजकवि बना रहा। महीपाल के शासनकाल में ही उसका **बालभारत** नाटक खेला गया।

राजशेखर की प्रशस्तियों में उसके आश्रयदाताओं का उल्लेख मिलता है। तो भी, उन आश्रयदाताओं का विस्तृत वर्णन उनमें नहीं मिलता।

उपर्युक्त वर्णन से विदित होता है कि प्रतीहार युग में संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश तीनों भाषाओं में साहित्य की रचना हुई। किन्तु प्राकृत का चलन दिनोंदिन कम हो रहा था और अपभ्रंश उसका स्थान ले रही थी।

ब्राह्मणों की तुलना में जैनों द्वारा रचित ग्रंथों की अधिकता है। इसका मुख्य कारण यह प्रतीत होता है कि जैन ग्रंथ जैन भण्डारों में सुरक्षित बच गये, जबकि अधिकांश ब्राह्मण ग्रंथ नष्ट हो गये। स्वयं जैन जिन ग्रंथों का स्वाध्याय करते थे या जिन पर टीकाएं लिखते थे, वे ही आज उपलब्ध हैं।

आर्थिक दशा

व्यवसाय के केन्द्र नगर होते हैं। नगरों की आबादी के लिए यह आवश्यक था कि वहां या तो कोई दुर्ग हो या किसी राजा अथवा सामन्त का निवास स्थान हो। युद्ध अथवा व्यापारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान भी जल्दी नगरों में परिवर्तित हो जाते थे। प्रतीहारों के सुविस्तृत साम्राज्य में इस प्रकार के कस्बों तथा नगरों की संख्या बहुत अधिक थी। समकालीन साहित्य में

नगरों की शान-शौकत और सम्पन्नता का रोचक वर्णन मिलता है।

प्रतीहार साम्राज्य में व्यापार की दशा अच्छी थी। अभिलेखों में अनाज, तेल, पान, मसाले, नमक, हींग, कपूर, कस्तूरी, चन्दन, अगर, नारियल, त्रिफला, लाख, गुड़, शकर, लाल मिर्च, हाथी दांत, महुआ, खजूर, कपड़े, हाथी और घोड़ों का उल्लेख मिलता है। कुवलयमाला से ज्ञात होता है कि कोशल से हाथी, उत्तरापथ से घोड़े, द्वारिका से शंख, बर्वरकूल से हाथी दांत, सुवर्णद्वीप से सोना और चीन से 'नेत्रपट' प्राप्त होता था। जल और थल दोनों प्रकार के व्यापार का वर्णन मिलता है। स्थलमार्ग में व्यापारियों को सबसे बड़ा खतरा लुटेरों से था। ये लुटेरे प्रायः आदिवासी होते थे, जो अपने क्षेत्र में व्यापारियों से चढ़ाई-उतराई का महसूल वसूल कर लिया करते थे। उस समय की दिल्ली से एक मार्ग नागोर, अजमेर होता हुआ आबू, पालनपुर, गुजरात चित्तौड़ तथा मन्दसौर होता हुआ पूर्वी मालवा जाता था। मालवा का केन्द्र उज्जैन था, जहाँ से एक मार्ग भड़ौच और खम्भात को जाता था तथा दूसरा विदिशा होता हुआ एक ओर ग्वालियर और दूसरी ओर कालपी होते हुए कन्नौज जाता था। इसी प्रकार एक मार्ग विदिशा से भरहुत, कौशाम्बी होता हुआ कन्नौज जाता था। उज्जैन से एक मार्ग माहेश्वर, पैठन (प्रतिष्ठानपुर) होता हुआ दक्षिण को चला जाता था।

प्रतीहार काल में विदेश व्यापार में भी भारतीय व्यापारी निपुण थे। विदेशों को प्रस्थान करने से पहले ढिंढोरा पिटवाकर व्यापारियों की तलाश की जाती थी। प्रत्येक व्यापारी का हिसाब-किताब अलग रहते हुए उन्हें मुखिया के नेतृत्व में रहना पड़ता था। यह व्यापारी समुदाय सोपारा (सूरपारक) तथा तमलूक (ताम्रलिप्ति) ने बन्दरगाहों से जहाज पर सवार होकर सुवर्णद्वीप, महाकटाह, बर्वरकूल, चीन और जावा की यात्रा करता था। जैन साहित्य[236] में जहाज के कल-पुर्जों तथा आंधी-तूफान सहित समुद्र यात्रा का वर्णन मिलता है। विदेश यात्राओं से व्यापारी खूब धन कमाकर लौटते थे। जैन साहित्य में उन पदार्थों की सूची दी गई है, जिनका व्यापार जैन सम्प्रदाय के लिए वर्जित था।

शिलालेखों में सैनिक, लेखक, पुरोहित, आचार्य, ज्योतिषी, वहेलिया (शिकारी) डोम, चिकवा (खटीक), तेली, माली, कलाल, कन्दुक (हलवाई), नेमक वणिक (नमकवाले), तम्बोली, गंधिक और दस्तकारों में 'स्थापति', शिलाकूट (सिलावट) कुम्भकार (कुम्हार), कांसकार (या तमेर), शंखकार, वर्द्धकि (वढ़ई), चित्र-लेम्प्य-क्रित (चितेरे), मणिका वन्धक (जड़िया), वैकटिक (जौहरी) सुवर्णकार, लोहकार आदि जातियों का उल्लेख मिलता है। मनोरंजन करने वालों में नट, नर्त्तक, गायक, वादक, चारण के अतिरिक्त अरब यात्रियों ने 'लाहुदों' का उल्लेख किया है, जिनके पुरुष खेल-तमाशा करते थे। संपेरे और भविष्य बताने-वाले अलग थे। इनमें से विमुख व्यवसायों को अलग करके अठारह श्रेणियां प्रमुख थी।[237]

व्यापारी के लिए 'व्यवहारक' का शब्द प्रयुक्त होता था। कुछ व्यापारी काफिले बनाकर चलते थे। उनके नेता को सार्थवाह कहते थे और उन्हें वणजारक (वंजारे) कहा जाता था। उच्च श्रेणी के व्यापारियों की उपाधि 'श्रेष्ठिन' (सेठ) थी। अभिलेखों में घोड़ों के व्यापारियों के भी उल्लेख मिलते हैं।

इस युग में कृषि ने ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा शूद्रों को समान रूप से आकर्षित किया। खेती स्वयं तथा हलवाहों द्वारा की जाती थी। भूस्वामी को वेगार लेने का अधिकार था। अभिलेखों से ज्ञात होता है कि भू-स्वामी जोतने वालों को वदलने का अधिकार रखता था। इसी प्रकार दान के साथ वेगार लेने का अधिकार भी स्थानान्तरित हो सकता था। भूमि के प्रकार, विभिन्न ऋतु की

---

236. कुवलयमाला, तिलकमंजरी, समराइच्चकहा; दे० राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 492.
237. वही पृ० 495.

वोनी, सिंचाई आदि की भी जानकारी प्राप्त है। उपजाऊ खेत हों या ऊसर सिंचाई के लिए रहट (अरघट, अरहट) का प्रयोग किया जाता था। केवल वड़े किसान ही उसके उपयोग करने की स्थिति में थे। खेतों में नाप के आधार पर वीज डाला जाता था। इसके लिए 'द्रोण' और 'माणी' शव्दों का प्रयोग किया जाता था।

श्रेणी

एक ही प्रकार की वस्तुओं का व्यापार करने वाले व्यापारी अपना संगठन वनाते थे। इस संगठन को श्रेणी कहते थे जैसे तेलियों की श्रेणी या मालियों की श्रेणी। विभिन्न व्यापारों के लिए जैसे हाट अलग-अलग होती थी, उसी प्रकार प्रत्येक वाणिज्य के लिए पंचायतें या समाज होती थीं। साहित्य तथा अभिलेखों में उनके लिए 'देशी' का प्रयोग किया गया है। संस्कृत में इसी के लिए 'श्रेणी' शव्द का प्रयोग किया गया है। ग्वालियर अभिलेख[238] में तैलिक (तेली) श्रेणी की ओर से प्रत्येक कोल्हुक (कोल्हू) के पीछे एक पलिका (पली) तेल एक विशेष अवसर पर मंदिर की प्रकाश व्यवस्था के लिए देने का उल्लेख है। इसी प्रकार मालिका श्रेणी (मालियों से) से मन्दिर के लिए पचास मालाएं प्रतिदिन देने को कहा गया था।[239] एक अन्य अभिलेख[240] में मालिका श्रेणी एक निश्चित राशि स्वीकार करके उसके वदले में मंदिर के लिए साठ मालाएं स्थाई रूप से उपलव्ध कराने का ठेका लेती हुई प्रतीत होती है। इस अभिलेख से यह भी पता चलता है कि श्रेणियां वैंकिंग का भी कार्य करती थीं। कुम्हारों के प्रत्येक चाक से एक 'पण' तथा दस्तकारों से एक 'द्रम' मासिक वसूली का निश्चय हुआ था। इन श्रेणियों के कारण समाज में धार्मिक दानों को प्रोत्साहन मिलता था। श्रेणियों को प्रशासनिक अधिकार भी प्राप्त थे। श्रेणी महत्तर (महतों) समाज की ओर से जिम्मेवारी लेकर सदस्यों से उसका पालन कराने का अधिकार रखते थे। श्रेणी महत्तर राज्य कर स्वीकार करते थे और उस पर व्याज लगाकर उसे अदा करते थे। इकरारनामा के विरुद्ध कार्य करने वाले को वे दण्डित भी कर सकते थे। इसका संकेत टीकाकार मेधातिथि के शव्द 'श्रेणिधर्माह' (समाज कानून) से मिलता है। पेहोवा अभिलेख[241] से ज्ञात होता है कि विभिन्न क्षेत्रों से आये घोटक (घोड़े के व्यापारी) स्वयं तय करते थे कि विक्रय करने वाला दो द्रम तथा क्रय करने वाला एक धर्म (एक प्रकार का सिक्का) प्रत्येक रास घोड़े के लिए मंदिरों को दान देगा। किन्तु 'द्रम' सिक्के का वास्तविक मूल्य ज्ञात नहीं है। यह वणिकों द्वारा इस प्रकार की गई कोई भी व्यवस्था राज्य द्वारा भी मान्य होती थी।

मुद्रा

प्रतीहारकालीन साहित्य में दीनार, सुवर्ण, निष्क, पारुत्थ, द्रम, द्रम्मार्ध, रूपक, कार्पापण, काकिनी तथा वराटिका अथवा कवड्डिका आदि सिक्कों का उल्लेख मिलता है।

दीनार

मूलरूप में यह सिक्का रोमनों में प्रचलित था। यूनानी सिकन्दर के आक्रमण के समय से यह सिक्का भारत में भी प्रचलित हो गया। गुप्तकालीन दीनार पर्याप्त मात्रा में मिले हैं। इनका वजन पौन तोला था। हरिभद्र सूरि का कथन है कि दीनार प्रतीहारकाल का सर्वाधिक मूल्य वाला तथा कार्पापण सवसे कम मूल्य वाला सिक्का था।

---

238. एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 159.
239. वही .
240. वही, खण्ड 24, पृ० 331.
241. एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 187.

धर्म और दर्शन

भारतीय संस्कृति धर्ममय है। अतः प्रतीहार कालीन जनजीवन का धर्म से प्रभावित होना कोई नई वात नहीं है। अलवेरूनी का यह कथन ठीक ही था कि ईरान में भारतीय लोग मूर्ति पूजक के रूप में विख्यात हैं। किन्तु अलवेरूनी जव भारत में व्राह्मणों से मिला और दोनों में विचारों का आदान-प्रदान हुआ तो उसने यहां के निवासियों को ईश्वरवादी पाया। विभिन्न देवी-देवताओं को एक ही ईश्वर का अंश समझते थे। यह वात अलग है कि कोई दार्शनिक विचारधारा यह दावा करे कि उसका अपना सिद्धान्त अधिक व्यापक है और सत्य से साक्षात्कार कराने वाला है। यह दृष्टिकोण ऐसा था जिससे विभिन्नता में एकता पैदा होती है और इससे धार्मिक-सहिष्णुता का सिद्धान्त पुष्ट होता है। यही वह सिद्धान्त है जिसके अन्तर्गत प्रतीहार राजवंश में प्रत्येक नरेश चाहे वह मण्डोर का हो अथवा कन्नौज का देवता वदलता रहता था। मण्डोर के कुछ नरेश वैष्णव थे तो कुछ माहेश्वर। भोज प्रथम ने भगवती के उपासक होते हुए भी विष्णु का मंदिर वनवाया था और महेन्द्रपाल द्वितीय ने शैव मतानुयायी होते हुए भी वट-यक्षिणी देवी के लिए दान दिया। उनका दण्डनायक माधव सूर्य देवता को एक ग्राम भेंट करता है। समीप ही शिव की मूर्ति है। इन सव मंदिरों का व्यवस्थापक दशपुर निवासी (आधुनिक मन्दसौर) हरि-रिषिवर था, जो स्वयं पाशुपत मतानुयायी था।[253] हर्षनाथ के शैव मंदिर की सूर्य मूर्ति भी धार्मिक सहिष्णुता की परिचायक है। इस त्रिमुख मूर्ति के वीच के मुख पर सूर्य तथा विष्णु के मुकुट हैं। अन्य दो मुखों पर जटामुकुटों द्वारा शिव तथा व्रह्मा को दर्शाया गया है, मानों व्रह्मा, विष्णु और महेश एक ही प्रधान देवता सूर्य के स्वरूप हों। इसी प्रकार इन तीनों देवताओं के शेष चिन्ह भी अपने-अपने स्थान पर अंकित हैं। इसकी सवसे उल्लेखनीय वात यह है कि यह सूर्य प्रतिमा एक शैव मंदिर में प्रतिष्ठित की गई है, जो पाशुपत सम्प्रदाय का गढ़ था।

वैष्णव मत

कुवलयमाला[254] नामक ग्रंथ से प्रतीत होता है कि जलयात्रा करने वाले व्यापारी संकट के समय और पुत्र की इच्छा से राजा लोग अनेक प्रकार के देवी-देवताओं का पूजन तथा आह्वान करते थे। किन्तु प्रतीहार काल का मुख्य धर्म पौराणिक हिन्दू धर्म था, जिसमें कर्मों के अनुसार पुनर्जन्म का सिद्धान्त गहरी जड़ें जमा चुका था। वौद्ध और जैन धर्मों के मतानुयायी भी पुनर्जन्म को मानते हैं। किन्तु वौद्ध धर्म के अनुसार मनुष्य के कर्म एक सर्वथा नवीन शरीर को जन्म देते हैं। जैन धर्म में पुनर्जन्म की धारणा हिन्दू धर्म से मिलती-जुलती है। विष्णु के अवतारों की पूजा होती थी और उनकी मूर्तियां मंदिरों में प्रतिष्ठित की जाती थीं। ऐसे विष्णु मंदिर पेहोवा (पंजाव), अहार (उदयपुर, राजस्थान), सीयडोणी (ललितपुर, उ०प्र०) ग्वालियर, घोटार्सी (प्रतापगढ़ - राजस्थान), वयाना (भरतपुर) और राजधानी कन्नौज में थे। कन्नौज के मंदिर में चतुर्भुज विष्णु और विराट विष्णु की अत्यन्त सुन्दर प्रतिमाएं प्रतिष्ठित थीं। इनके अतिरिक्त विष्णु के वासुदेव, योगस्वामी, शेषशायी रूपों की भी प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं। खजुराहो[255] से प्राप्त विष्णु की योगासन मूर्ति विलक्षण है। अभिलेखों में भी कुछ मूर्तियों का उल्लेख मिलता है, जैसे गरुड़ासन विष्णु (पेहोवा अभिलेख, एपि०इण्डि०, खण्ड 1, श्लो० 134) और गरुड़ासन चक्रपाणि। संभवतः यह वही मूर्ति है जिसका वर्णन थानेश्वर के चक्रस्वामी के नाम से अलवेरुनी ने किया है। यशोवर्मा चन्देल के खजराहो अभिलेख में वराह, नृसिंह तथा त्रिविक्रम का उल्लेख है।[256] कुरुक्षेत्र में एक त्रिमुख विष्णु की

---

253 एपि० इण्डि०, खण्ड 14, पृ० 187.
254 कुवलयमाला, पृ० 68, 14; राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 368.
255. वनर्जी, डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० 405-06.
256. राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 370.

मूर्ति प्राप्त हुई है जिसके अगल-वगल के मुख वराह तथा नृसिह के है। काशीपुर मे प्राप्त त्रिविक्रम की एक मूर्ति राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली मे सुरक्षित है। इसी प्रकार अहार (उदयपुर, राजस्थान) से प्राप्त मत्स्य तथा कूर्म अवतारो की मूर्तियां उदयपुर संग्रहालय मे प्रदर्शित है।

कृष्णावतार

आठवी शताब्दी तक कृष्णावतार की कल्पना पक्की हो गई थी जैसा कि मण्डोर मे प्राप्त एक अभिलेख मे अकित लेख 'ओम नमो भगवते वासुदेवाय' मे पता चलता है कि मण्डोर के वाउक प्रतीहार के अभिलेख[257] से ज्ञात होता है कि उसमे 'हरि' की स्तुति की गई है। राजस्थान के अन्य स्थानो मेवाड़, चाटसू, कामन (भरतपुर), ओसिया (जोधपुर) आदि से प्राप्त कृष्णोपासना की मूर्तिया का उल्लेख डा० दशरथ शर्मा ने किया है। मथुरा के वाद राजस्थान कृष्णपूजा का दूसरा वडा केन्द्र था और इन्ही दोनों क्षेत्रो से कृष्णपूजा प्रतीहार साम्राज्य मे लोकप्रिय हुई।

रामावतार

यद्यपि रामावतार सम्वन्धी मूर्तिया इस काल मे प्राप्त नही हुई लेकिन प्रतीहारकाल मे राम को अवतार मान लिया गया था। राम की विजय की प्रशंसा मे अनेक नाटक तथा काव्य लिखे गये। वालरामायण मे राजशेखर ने "विष्णु जिनका नाम राम है" तथा 'वैकुण्ठ के सातवे अवतार" ऐसा उल्लेख किया है। इन उल्लेखो से रामावतार की उपासना का पता चलता है।

अभिलेखो मे एक दर्जन वैष्णव मंदिरो का उल्लेख मिलता है। वड़े राज्याधिकारी अथवा व्यापारी मंदिरो का निर्माण पुण्य के लिए करते थे। मंदिर निर्माण के पश्चात् अन्य लोग मंदिर की व्यवस्था के लिए दान देते थे। एक ही मंदिर मे विभिन्न सम्प्रदायों के देवी-देवताओं की प्रतिमाए प्रतिष्ठित की जा सकती थी। विष्णु की उपासना विभिन्न नामो से की जाती थी। वैष्णव मंदिरो की स्थिति देखते हुए पता चलता है कि वैष्णवधर्म गया मे पेहोवा (पजाव) तक, कन्नौज मे काठियावाड़, ग्वालियर, दशपुर, सियडोणी, अहार, परतावगढ़ आदि स्थानो तक फैला हुआ था।

मंदिरो का निर्माण कभी-कभी चन्दे से भी किया जाता था और वे पूरे समाज की जिम्मेवारी पर चलाये जाते थे। इसीलिए व्यापारिक श्रेणिया मदिरो के खर्च के लिए पर्याप्त धन देती थी। मदिरो की व्यवस्था के लिए समितिया वना ली जाती थी। वैष्णव धर्म मे अहिसा पर वल दिया जाता था और इस सिद्धान्त को प्रत्येक सम्प्रदाय ने मान लिया था।

शैवमत

कन्नौज के सम्राट वत्सराज, महेन्द्रपाल द्वितीय और त्रिलोचनपाल शिव के उपासक थे। मण्डोर के शिलुक प्रतीहार ने सिद्धेश्वर महादेव का विशाल मंदिर त्रेता नामक तीर्थ पर वनवाया था।[258] शिव की पूजा लिग तथा मूर्ति दोनो रुपो मे की जाती थी और दोनो की स्थापना मदिरा मे की जाती थी। मेवाड़ मे एकलिग शिव की पूजा होती थी। उज्जैन मे महाकाल शिव का प्रसिद्ध मंदिर था। वुन्देलखण्ड के खजराहो में अनेक शेव मदिर ह। खजुराहो का सवसे विशाल मदिर कन्दरिया महादेव का है। यह दसवी शताब्दी का चन्देलकालीन मंदिर है। इसीप्रकार वघेलखण्ड का सुविख्यात गोलकी मठ (गुर्गी) के पड़ोस का शिव मंदिर है, जिसका तोरण महाराजा रीवा के किले के पूर्वी फाटक मे लगा हुआ हे और जिसकी प्रधान मूर्ति हर-गौरी पद्मधर पार्क की शोभा वढ़ा रही है। गोलकी मठ के अन्तर्गत कोई ऐसा गाव न था जिसमे शिव की मूर्ति न रही हो।[259]

257 एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 97

258 एपि०इण्डि० खण्ड 18, पृ० 96

259 सिरोही राज्य का इतिहास पृ० 26 डा० शर्मा द्वारा उद्धृत पृ० 33, 84

इस धर्म के अन्तर्गत कुआं, तालाव, वावली का निर्माण कराना, सत्र चलाना (सदावर्त चलाना) वाग लगवाना, मंदिरों के लिए दान देना, व्राह्मणों तथा श्रमणों को दान देना आदि कार्य थे। इन कार्यों को किसी भी वर्ण का व्यक्ति सम्पादित कर पुण्यार्जन कर सकता था। पुण्य प्राप्ति के लिए आवश्यक था कि दान कर्ता शुद्ध मन से दान करे।

साहित्य और अभिलेखों से पूर्त धर्म की लोकप्रियता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ग्रहण, श्राद्ध, जातकर्म, नामकरण, संक्रान्ति अक्षयतृतीया इत्यादि अवसरों पर गंगा, यमुना अथवा संगम (प्रयाग) में स्नानकर लोग दान देते थे। पैपखार या धर्मार्थ दिये गये ग्रामों या भूमि कर किसी प्रकार का कर (लगान अथवा वेगार) नहीं लगता था। विदेशी अरवयात्री भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।[269] दान की वस्तुओं में गाय, सुवर्ण, वस्त्र, सज्ञादान, घोड़े आदि भी हो सकते थे। विनायकपाल प्रतीहार,[270] दण्डनायक माधव,[271] त्रिलोचनपाल[272] तथा अश्व विक्रेताओं[273] ने प्रभूत मात्रा में दान दिये थे।[274]

पूर्तधर्म जैनों में भी प्रचलित था। इसकी पुष्टि साहित्य से भी होती है।

तीर्थयात्रा

पवित्र स्थानों या तीर्थों के दर्शन से विचार पवित्र होते हैं, कर्मों के वन्धन ढ़ीले होते हैं, आध्यात्मिक लोगों (सन्तों) से सम्पर्क होता है और पुण्य प्राप्ति से स्वर्ग मिलता है। शंकराचार्य जैसे महान् धार्मिक नेताओं की यात्रा से लोगों में भावनात्मक और धार्मिक समन्वय की स्थापना होती थी। यात्राओं के समय तीर्थों में सन्देश सुनना और उसे सुदूर देशों तक पहुंचाने का कार्य सुगमतापूर्वक सम्पन्न होता था। तीर्थों में धन का दान करने से समाज का आर्थिक सन्तुलन वनता था। यात्रा के समय संयम से रहना, नैतिक अनुशासन का साधन था।

तत्कालीन साहित्य में दस प्रमुख तीर्थों का वर्णन मिलता है। इनके नाम गया, वाराणसी, हरिद्वार, पुष्कर, प्रभास, नैमिषक्षेत्र केदार, कुरुक्षेत्र, उज्ञयिनी तथा प्रयाग हैं। पद्मपुराण में वामन का निवास होने से कान्यकुब्ज को ग्यारहवां तीर्थ वताया गया है। इसके अतिरिक्त द्वारिकातीर्थ (इन्द्रप्रस्थ के समीप), निगमवोधतीर्थ (आज भी इसी नाम से विद्यमान है), सेतुवन्ध (रामेश्वरम्), शिव और विष्णु कांची (दक्षिण भारत), हरि (उत्कल), गंगासागर संगम, गुप्ततारा (कोसल), नैमसा (गोमती नदी के तट पर आधुनिक नीमसार), मथुरा, हस्तिनापुर, वदरिकाश्रम आदि तीर्थों का उल्लेख हुआ है। मही, गंगा, सिन्धु आदि नदियों के संगम भी पवित्र माने गये हैं।

नदियों को प्राकृतिक या दैवतीर्थ होने के कारण अत्यन्त पवित्र माना गया है। सभी नदियों में गंगा को सवसे अधिक पवित्र मानने के कारण त्रिदैवत्यतीर्थ की संज्ञा दी गई है। यह व्रह्मा, विष्णु और शिव के उपासकों के लिए समान रूप से पवित्र थी। वाराणसी, मुलतान, उज्ञयिनी, प्रयाग तथा गंगासागर-संगम अतिशयक्षेत्र माने गये हैं। वाराणसी और उज्ञयिनी शिव की तथा मुलतान सूर्य की उपासना के लिए प्रसिद्ध था।

जैन लेखकों ने हिन्दू तीर्थों की पवित्रता का मजाक उड़ाया है। पुराणों में भी हृदय की पवित्रता और इन्द्रिय निग्रह के विना तीर्थयात्रा को व्यर्थ वताया गया है।[275]

---

269 इलियट-डाउसन (अल-अरवी), खण्ड 2, पृ० 34.
270. इण्डि०एण्टि०, खण्ड 15, पृ० 140-41.
271 एपि०इण्ड०, खण्ड 14, पृ० 185-86.
272 इण्डि०एण्टि०, खण्ड 18, पृ० 34.
273 एपि०इण्डि०, पृ० 242-50.
274 मिश्र, दि गुर्जर-प्रतीहाराज एण्ड देयर टाइम्स, पृ० 112-14.
275 राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 401-04.

कुछ धार्मिक क्रियाएं ऐसी थीं, जिनके वारे कुछ कहना असंगत न होगा। उदाहरण के लिए राजशेखर ने वालरामायण में प्रयाग में आत्महत्या करने का उल्लेख किया है। इसी प्रकार चीनी यात्री ह्वेनसांग ने प्रयाग के अक्षयवट से कूदकर आत्महत्या करने का वर्णन किया है। अलवेरूनी के कथन से भी ऐसा ही संकेत मिलता है। जल-समाधि के अतिरिक्त अग्नि में जल जाना भी मोक्षदायक माना जाता था। कन्नौज के प्रतीहार शासकों में से किसी ने भी इस परम्परा का पालन नहीं किया। किन्तु मण्डोर के प्रतीहार शासक झोट ने अवश्य गंगा में जल-समाधि ले ली और उसके पुत्र भिल्लादित्य ने उपवास करते हुए प्राण त्याग दिये।[276] उपमितिभवप्रपंचाकथा के लेखक सिद्धर्षिसूरि ने इस प्रकार की आत्महत्या की कठोर आलोचना की है।

इस युग में अनेक प्रकार के अन्धविश्वास प्रचलित थे। किसी को छींक आती तो पास वाला कहता "जीते रहो"। किन्तु अपने मन में कहता वहुत अशुभ हुआ।[277] स्वप्न भावी घटनाओं के सूचक माने जाते थे और उनकी व्याख्या भी एक कला थी। ज्योतिषियों पर जनता का विश्वास था। अलवेरूनी का कथन है कि भारतीय ज्योतिष यूनानी ज्योतिष की तुलना में अत्यन्त उन्नत था। किन्तु विद्वान् उसके सिद्धान्तों को आम आदमियों को न सिखाते थे। वे इस विद्या का प्रयोग चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण के समय करते थे। वे आदेश देते थे कि राहु, सूर्य और चन्द्र को डस रहा है, अतः जनता उनके कष्ट निवारण के लिए व्राह्मणों को दान दें। यह अन्धविश्वासों द्वारा लाभ उठाना और स्वयं को धोखा देना था।

डा० पुरी[278] का कथन है कि इस समय शैव और वैष्णव मत प्रभावशाली थे। शैवों के अपने मठ थे, जिनकी देखरेख शैवाचार्य करते थे। कभी-कभी वैष्णव मठ भी उनके निरीक्षण में रख दिये जाते थे। इनकी व्यवस्था गोष्ठियां करती थीं। अनेक व्राह्मण देवताओं की वड़ी प्रतिष्ठा थी। सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण में गंगास्नान या व्राह्मणों का आर्शीवाद प्राप्त करना शुभ माना जाता था। वौद्ध धर्म का तेजी से पतन हो रहा था, किन्तु जैनधर्म राजस्थान, गुजरात तथा उत्तरी वुन्देलखण्ड में फल-फूल रहा था। कौल-कापालिक मत की पंचमकारी पूजा भी प्रचलित थी। सामान्य रूप से जनता का धार्मिक जीवन उदार तथा समन्वयवादी था। इस समय इस्लाम धर्म उत्तर भारत में विकसित न हुआ था।

धार्मिक तथा दार्शनिक विचार

अव यहां उन धार्मिक तथा दार्शनिक विचारों का वर्णन किया जायेगा, जिनके कारण मंदिर और मूर्तियों का निर्माण हुआ। पांचरात्र सिद्धान्त जिसके अन्तर्गत संकर्षण और वासुदेव की पूजा होती थी और वासुदेव के पंचव्यूह का सिद्धान्त माना जाता था, अव फीका पड़ चुका था और उसका स्थान गीता के अवतारवाद ने ले लिया था। एक लम्वे समय तक पांचरात्र वैष्णव धर्म तथा भागवत वैष्णव धर्म दोनों लोकप्रिय रहे। अवतारवाद ने हिन्दू धर्म को ऐसी शक्ति प्रदान की कि किसी भी सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक को विष्णु का 'अंश' मान लेने में कोई कठिनाई न रही और जव किसी को विष्णु का अवतार स्वीकार कर लिया गया, तव उसके सिद्धान्तों तथा अनुयायियों को अपने में सम्मिलित करना कठिन न रहा।

उपमितिभवप्रपंचाकथा में शैवधर्म के पाशुपत, शैव, घोप-पाशुपत, कापालिक, कालामुख और कणाद आदि सम्प्रदायों का वर्णन मिलता है। पाशुपत अथवा पंचार्थाम्नाय का अन्तिम लक्ष 'महेश्वर्य' प्राप्त करना था। इससे वह संसार से मुक्ति और आवागमन में वंधी आत्माओं पर अधिकार प्राप्त कर लेता था। इसकी प्राप्ति के लिए पाशुपत अनुयायी को कठोर अनुशासन का पालन करना

276. वाउक का जोधपुर शिलालेख, श्लोक 21.
277. समराइचकहा, पृ० 695.
278. हिस्ट्री ऑफ गुर्जर-प्रतीहाराज़, पृ० 146.

पड़ता था। योग्य गुरू के मार्गदर्शन में ही साधक इस लक्ष्य तक पहुंच सकता था। पाशुपत मठ की सेवा और महेश्वर की दया में पूर्ण विश्वास द्वारा पुण्य प्राप्ति से ही साधक को मार्गदर्शन प्राप्त होता था।

जीव या आत्मा अज्ञान के बन्धनों में बंधी हुई 'पशु' मात्र है। पशुपति महाप्रभु 'कारण' है। उन्हीं को समर्पण करने से पशुत्व से शुद्धि प्राप्त होती है। प्रथम चरण में पाशुपत सन्यासी अन्य लोगों के समान भस्म मलकर, भस्म पर सोकर, भस्म से स्नान कर रहता था। दूसरे चरण में वह अपनी विद्या को गुप्त रखता था ताकि अन्य लोग उससे घृणा करें। तीसरे चरण में वह इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करना था। चौथे चरण में साधक पशुत्व का दमन करने में सफलता प्राप्त करता था और अन्तिम पांचवें चरण में उसको महैश्वर्य (मोक्ष) की प्राप्ति होती थी।

लिंगपुराण[279] से प्रकट होता है कि पाशुपत सन्यासी नग्न रहते थे। कुछ पाशुपत जटाएं रखते थे और कुछ मुड़ा देते थे। समृद्ध धर्मार्थ के स्वामी होने पर भी हर्षनाथ मंदिर के अल्लट तथा भावद्योत नग्न रहते थे, शरीर पर भस्म रमाते थे, पृथ्वी पर सोते थे और भिक्षा पर जीवन निर्वाह करते थे।[280]

शैव सिद्धान्त भी पाशुपतों से किसी प्रकार कम प्रभावशाली न थे। वे तीन वातों पर वल देते थे – (1) पति अर्थात् शिव (2) पशु अर्थात् जीवात्मा (3) पाश अर्थात् चार प्रकार के वन्धन जैसे मल, कर्म, माया और रोधशक्ति। मल आत्मा के ज्ञान तथा क्रिया को छिपाता है, कर्म अपना शाश्वत प्रभाव छोड़ते हैं, माया ज्ञान को ढंक लेती है और रोधशक्ति शिव प्राप्ति में वाधक होती है। शिव वनने के लिए इन चारों वाधाओं को हटाना आवश्यक है। मुक्त आत्मा यद्यपि महेश्वर से स्वतंत्र नहीं है तथापि वह अनन्त और अनादि ज्ञान से सम्पन्न होती है।[281]

अभिलेखों और साहित्य से कापालिक मत पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उनका भिक्षापात्र मानव-खोपड़ी का होता था और वे तांत्रिक क्रियाएं करने में दक्ष थे। कापालिकों का विचार था कि माला, रुचक (आभूषण), कर्णकुण्डल, कौस्तुभमणि, भस्म तथा यज्ञोपवीत आदि छह चिन्हों का मर्म समझकर भगस्थ आत्मा पर ध्यान केन्द्रित करने वाला निर्वाण प्राप्त करता है।

कालामुखों के संवंध में जानकारी का अभाव है। सामान्य जन कापालिकों और कालामुखों को एक मानते थे। वे नर-कपाल में भोजन करते थे, शरीर पर भस्म रमाते थे, भस्म खाते थे और दण्ड धारण करते थे। वे मदिरापात्र में शिव को विराज मान कर उसकी पूजा करते थे।

शाक्त

शक्ति पूजा अत्यन्त प्राचीन है और प्रायः सभी सम्प्रदायों में विद्यमान है। यह सांख्य की प्रकृति, वेदान्त की माया, वैष्णवों की लीला और वौद्धों की तारा है। शक्ति वह दैवी ऊर्जा है जो प्रत्येक देवता को महानता प्रदान करती है। प्रत्येक वस्तु उससे प्रभावित है और कोई भी वस्तु उससे वाहर नहीं है। किन्तु जव शाक्तों के कर्मकाण्ड के साथ दार्शनिकों को समझौता करना पड़ा तव अनेक नये सम्प्रदायों का जन्म हुआ। इनमें के कुछ सम्प्रदाय तांत्रिक क्रियाओं वाले थे और उनके कार्य घृणास्पद थे।

279. लिंग पुराण, I, XLIII, 13-15.
280. राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 411.
281. वही, पृ० 411-12.

वौद्ध, जैन तथा तंत्रवाद

वौद्धधर्म

प्रतीहारकालीन उत्तर भारत में वौद्धधर्म का प्रभाव समाप्त प्राय था। पश्चिम की ओर सिन्ध प्रदेश में और पूर्व दिशा में विहार तथा वंगाल में वौद्धधर्म की स्थिति सन्तोषजनक थी। यह कथन उपयुक्त प्रतीत नहीं होता कि राजपूत युद्ध प्रिय लोग थे। अतः उन्होंने अहिंसावादी वौद्धधर्म को नहीं अपनाया। सच तो यह है कि गुप्तकाल में ब्राह्मण मतावलम्वियों ने वौद्धधर्म के अधिकांश सिद्धान्त अपना कर वुद्ध को विष्णु का अवतार मान लिया। अतः इससे वौद्ध धर्म प्रभावहीन हो गया।

जैनधर्म

वौद्ध धर्म की तुलना में जैन धर्म अधिक सक्रिय था। वड़े राजनीतिक उथल-पुथल के वावजूद भी जैनधर्म अपने मूल प्रदेश विहार में अन्य सम्प्रदायों के साथ विद्यमान था। मध्यदेश अनेक विख्यात जैन आचार्यों का कार्यक्षेत्र रहा है और वप्पभट्ट सूरि को नागभट्ट द्वितीय का आध्यात्मिक गुरु कहा जाता है, तो भी, प्रतीहारकाल में जैन धर्म जेजाकभुक्ति (वुन्देलखण्ड) और ग्वालियर क्षेत्र तक ही सीमित रह गया था। लेकिन पश्चिमी भारत के राजस्थान, गुजरात, मालवा, सौराष्ट्र जैनधर्म के विख्यात केन्द्र थे। इस क्षेत्र में जैनधर्म को लोकप्रिय वनाने का प्रमुख श्रेय हरिभद्र सूरि जैसे जैन साधुओं को है। जैन साधु 'निर्ग्रन्थ' होने के कारण निरन्तर भ्रमण करते रहे। किन्तु कुछ चैत्य और मठ वनवाकर रहने लगे और मंदिरों की सम्पत्ति अपने ऐश्वर्य और ऐशो-आराम में व्यय करने लगे। वे सुगन्धित और रंगे हुए वस्त्र धारण करते थे, अमीरों के यहां जाते थे, ताम्वूल, लवंग तथा पुष्पों का प्रयोग करते थे। गोष्ठियों और शास्त्रार्थ से दूर रहते थे और कहते थे कि तत्त्वज्ञान हर व्यक्ति की समझ से परे हैं। हरिभद्र के प्रयत्नों के फलस्वरूप इस स्थिति में वदलाव आया। उनके पश्चात् दो प्रसिद्ध जैन दार्शनिकों ने चैत्यवादियों की विचारधारा का खण्डन जारी रखा। इनमें से एक का नाम उद्योतनसूरि और दूसरे का नाम सिद्धर्षिसूरि है।

हरिभद्रसूरि ने विद्वानों और सामान्यजन के उपयोग हेतु अनेक ग्रंथों की रचना की। उनका ' धर्मविन्दु' शीर्षक ग्रंथ जैनधर्म की सांगोपांग व्याख्या करता है। इसमें गृहस्थों और यतियों के सामान्य तथा विशेष धर्मों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। धर्म का अन्तिम ध्येय कैवल्य प्राप्त करना है जिसमें आत्मा कार्मिक पदार्थ से मुक्त होकर उत्कर्ष प्राप्त करती है। गृहस्थ को सत्य, अहिंसा, अस्तेय (चोरी न करना) अपरिग्रह (धन का संग्रह न करना) और ब्रह्मचर्य अणुव्रत पालन का विधान है। तेइसवें तीर्थकंर पार्श्वनाथ के समय केवल सत्य, अहिंसा, अस्तेय और अपरिग्रह चार ही व्रत थे। किन्तु महावीर ने इनमें ब्रह्मचर्य नामक पांचवा व्रत भी जोड़ दिया। इस प्रकार व्रतों की संख्या पांच हो गई। सत्य का तात्पर्य सच वोलने से है। व्यक्ति को सदैव प्रिय सत्य वोलने का प्रयत्न करना चाहिए। प्राणिमात्र की हिंसा न करना अहिंसा है। किसी अन्य की वस्तु विना पूछे ग्रहण करना अस्तेय है। आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह न करना अपरिग्रह है। इन्द्रियों पर संयम रखना ब्रह्मचर्य है। जैन साधक को यति-पथ पर चले विना मुक्ति नहीं मिल सकती। सिद्धर्षिसूरि ने यती के लिए भी अनुशासन वतलाया है। साधना में कार्मिक पदार्थों का क्षय और नये कार्मिक पदार्थों का निषेध करने से कैवल्य प्राप्त होता है।

राजपूत राजाओं ने जैनों के साथ उदारता का व्यवहार किया। मण्डोर शाखा के कक्कुक (८६१ ई०) ने रोहिंसकूप में एक जैन मंदिर वनवाया। नागभट्ट प्रथम, वत्सराज और नागभट्ट द्वितीय के शासनकाल में भी जैन धर्म को राज्याश्रय प्राप्त था।

जैन विद्वान हिन्दू धर्म के अच्छे आलोचक थे। **उपमितिभवप्रपंचाकथा** के चण्डिका मंदिर का वर्णन पहले किया जा चुका है। **कुवलयमाला** का मुख्य उद्देश्य असत्य धर्म और अन्धविश्वासों से जनता की रक्षा करना है। इस ग्रंथ में अपनी इच्छा पूर्ति के लिए पूजित अनेक हिन्दू व्यन्तर देवों का उल्लेख है। इनमें यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच, किन्नर, किंपुरुष, गन्धर्व, महोरग, गरुड़, नाग, अप्सराएं आदि उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार सिद्धर्षिसूरि ने पैंसठ ऐसे सम्प्रदायों का उल्लेख किया है जो समाज में लोकप्रिय न थे। **उपमितिभवप्रपंचाकथा**[282] मे ब्राह्मणों के पूर्त धर्म तथा शैव आचार्यों का खण्डन किया गया है। इसमें ब्राह्मणों की तपस्या, जलसमाधि, पहाड़ से कूदकर आत्महत्या करना आदि को निरर्थक बताया गया है। छींक, स्वप्न, ज्योतिष और अन्य झूठी विद्याओं का वर्णन कर ब्राह्मण धर्म की आलोचना की गई है। इसी प्रकार कुवलयमाला में तीर्थों में जाकर स्नान करने को ढोंग बताया गया है।

तंत्र धर्म के अन्तर्गत दो प्रमुख सम्प्रदाय - कापालिक और कौल थे। कापालिकों का उल्लेख पहले किया जा चुका है। उनकी शाखा सोम सिद्धान्त के मतानुयायी श्मशानों में रहते थे, नरकपाल में भोजन करते थे, मानव हड्डियों की माला पहनते थे और संसार को ईश्वर से भिन्न और अभिन्न दोनों समझते थे। वे मानव, मांस, मज्जा आदि की आहुति देते थे। नरकपाल में मदिरा पीकर अपना व्रत खोलते थे। नर बलि द्वारा महाभैरव की पूजा करते थे। मुक्त अवस्था में सोम सिद्धान्ती शिव का रूप धारण कर लेता था और पार्वती के समान अपनी प्रियतमा के साथ खेलता था।

कौल सम्प्रदाय में मदिरा का सेवन होता था। वे नैतिक तथा सामाजिक नियमों का उल्लंघन करते थे। ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय के बीच सभी प्रकार के भेद समाप्त होने पर कुल की प्राप्ति होती थी। इस सिद्धान्त में नैतिकता से कोई प्रयोजन न था क्योंकि उनका उद्देश्य द्वैत का अन्त करना था। हंस अथवा शिव ही मोक्ष तथा बन्धन दोनों ही प्रदान करने वाले हैं। जो साधक शिव को प्राप्त कर लेता है वह स्वयं को तथा दूसरों को भी बन्धन से मुक्त कराता है।

बौद्धधर्म में भी तंत्रवाद को स्थान मिला। तांत्रिकों के तीन तत्त्व-मंत्र, मुद्रा और मण्डल अन्य भारतीय धर्मों के समान बौद्धधर्म में भी मिलते हैं। इस समय तक तंत्रवाद जोर पकड़ चुका था। तांत्रिकों का कथन था कि हम जो कुछ करते हैं, वह पूर्ण ज्ञान तथा जनकल्याण के लिए करते हैं। किन्तु तांत्रिक सिद्धान्तों के पालन से भारतीय नैतिक स्तर निम्नतम बिन्दु तक पहुँच गया।[283]

प्रतीहारकालीन मंदिर

गुर्जर-प्रतीहार कला के अवशेष हरियाणा और मध्यभारत के एक विशाल क्षेत्र में, जिसमें सम्पूर्ण उत्तरप्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश और राजस्थान के आंशिक भूभाग सम्मिलित है, उपलब्ध हैं। इस युग में प्रतीहारों द्वारा निर्मित मंदिर स्थापत्य और कला की सबसे बड़ी विशेषता इसकी अलंकरण शैली है, जिसमें सज्जा और निर्माण शैली का पूर्ण समन्वय प्रदर्शित हुआ है। मूर्तिकारों की प्रतिभा के अतिरिक्त इसने सांस्कृतिक तथा कलात्मक परम्पराओं से भी प्रेरणा प्राप्त की। अपने पूर्ण विकसित रूप में प्रतीहार मंदिरों में मुखमण्डप, अन्तराल और गर्भगृह के अतिरिक्त अत्यधिक अलंकृत अधिष्ठान, जंघा और शिखर होते हैं। कालान्तर में स्थापत्यकला की इस विधा को चन्देलों, परमारों, कच्छपघातों तथा अन्य क्षेत्रीय राजवंशों ने अपनाया। किन्तु इनमें से चन्देल ही ऐसे थे, जिन्होंने इस शैली को पूर्णता प्रदान की। प्रतीहारकालीन मंदिर निम्नांकित स्थानों पर मिलने हैं –

---

282 पृ० 362-63; राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 108, 399, 406.
283 राजस्थान थ्रू द एजेज, पृ० 426.

नरेसर

नरेसर समूह के प्रतीहारकालीन मंदिर मध्यप्रदेश के मोरेना जिले में ग्वालियर जिला मुख्यालय से 25 कि०मी० उत्तर-पूर्व में नरेसर घाटी में स्थित हैं। ग्वालियर-इटावा मार्ग पर ग्वालियर से 20 कि०मी० दूर वरेठा ग्राम है। यहाँ से 5 कि०मी० पश्चिम की ओर नरेसर घाटी है। अभिलेखों में इसका प्राचीन नाम नलेश्वर था। यहां के सरोवर के निकट एक मंदिर समूह है। इन मंदिरों की निम्नांकित विशेषताएं हैं –

(1) सभी मंदिर पंचरथ प्रकार के हैं। इनमें गर्भगृह और प्रवेशद्वार के मध्य अन्तराल की व्यवस्था की गई है।

(2) इनके साधारण अधिष्ठान में खुर, कुंभ, कलश और कपोतिका का निर्माण किया गया है।

(3) जंघा के ऊपरी भाग पर चारों ओर घण्टमाला अभिप्राय है।

(4) वरण्डिका में दोहरी कपोतिका है।

(5) मंदिरों के शिखर स्थूल हैं, जो तीन या चार भूमियों में विभक्त हैं।

(6) प्रवेश-द्वार में प्रायः चार शाखाएं हैं।

(7) किसी भी मंदिर में मुखमण्डप नहीं है।

महुआ

महुआ ग्राम म०प्र० के शिवपुरी जिले में रनोद से 12 कि०मी० दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यहाँ पर पूर्व मध्यकालीन तीन मंदिर हैं। इनके नाम शिव मण्डपिका, शिवमंदिर और चामुण्डा मंदिर हैं। इन तीनों मंदिरों का निर्माण अलग-अलग समय में हुआ है।

अमरौल

अमरौल ग्राम ग्वालियर नगर से 30 कि०मी० दक्षिण में स्थित है। यह स्थान पूर्वमध्ययुगीन मंदिरों और उनके अवशेषों के लिए प्रसिद्ध है। जैन स्रोतों से ज्ञात होता है कि कन्नौज नरेश यशोवर्मा (725-752 ई०) के पुत्र और उत्तराधिकारी का नाम आमराज था। बप्पभट्टि ने उसे जैनधर्म में दीक्षित किया था। इसी आमराज के नाम पर ही अमरौल नामकरण हुआ होगा। यहाँ का रामेश्वर महादेव मंदिर ग्राम से 2 कि०मी० उत्तर-पश्चिम में स्थित है।

ग्वालियर

ग्वालियर दुर्ग की चहारदीवारी के भीतर एक मंदिर है जिसे तेली का मंदिर कहा जाता है। आयताकार पंचरथ मंदिर में गर्भगृह अन्तराल और एक विशाल प्रवेशद्वार है। ललाट विम्ब पर उड़ते हुए गरुड़ का अंकन है। किन्तु मंदिर की भित्तियों पर शैव परिवार के देवी-देवताओं की प्रमुखता है। इस मंदिर का निर्माणकाल 850 ई० निर्धारित किया गया है।

ग्वालियर दुर्ग के अन्दर ही गूजरीमहल द्वार से ग्वालियर दुर्ग के शीर्ष भाग पर जाने के मार्ग पर चतुर्भुज मंदिर है। सम्पूर्ण मंदिर शैलोत्कीर्ण है। यह मंदिर प्रतीहार कला का एक विलक्षण उदाहरण है। ग्वालियर पहाड़ी के एक विशाल शिलाखण्ड को मंदिर का रूप दिया गया है। इसमें मंदिर स्थापत्य के प्रायः सभी अंगों का समायोजन है। इस प्रकार शैलोत्कीर्ण मंदिर होते हुए भी यह पहाड़ी से विल्कुल अलग है। इसमें शिखर तथा अलंकरण की पूरी व्यवस्था की गई है।

इन्दौर

यह ग्राम म०प्र० के गुना जिले के अन्तर्गत ईसागढ़ से 15 कि०मी० उत्तर की ओर स्थित है। ग्राम के चतुर्दिक भारी मात्रा में कला और स्थापत्य के अवशेष विखरे पड़े हैं। यहां सवसे पहले हिन्दू मंदिरों का निर्माण हुआ। तत्पश्चात् जैन मतावलम्वियों ने यहां अपने जिनालयों का निर्माण कराया। यहीं का गर्गज महादेव का मंदिर महत्वपूर्ण है। पूर्वाभिमुखी यह मंदिर ग्राम की आवादी वाले क्षेत्र में ही स्थित है। मंदिर की सवसे वड़ी विशेषता इसकी वृत्ताकार आयोजना है जिसमें नौ भद्र हैं। ये सभी भद्र (कोण) गर्भगृह के चारों ओर हैं। स्थापत्यकला और मूर्ति शिल्प की दृष्टि से यह मंदिर निश्चित ही प्रतीहार कला का विकास प्रदर्शित करता है।

देवगढ़

देवगढ़ उत्तरप्रदेश के ललितपुर जिले में स्थित है। यह स्थान गुप्तकालीन दशावतार मंदिर के उत्कृष्ट कला और स्थापत्य के लिए विख्यात है। यहाँ हिन्दू और जैन दोनों प्रकार के मंदिरों का निर्माण किया गया। यहां पर प्राप्त आभिलेखिक साक्ष्य से प्रमाणित होता है कि यहां कन्नौज के गुर्जर-प्रतीहारों का शासन था और उन्होंने यहां के मंदिर निर्माण में उत्कृष्ट सहयोग दिया था। भोज प्रतीहार के अभिलेख में इसे लुअच्छगिरि और चन्देल कीर्त्तिवर्मा के अभिलेख में कीर्त्तिनगर कहा गया है। यहाँ का शान्तिनाथ मंदिर और कुरैयावीर का मंदिर प्रतीहार काल का निर्माण है।

केलधर

यह स्थान म०प्र० के शिवपुरी जिले के लुकवास नगर से 10 कि०मी० दक्षिण पश्चिम में स्थित हैं। यहां पर एक झरना है, जिसे स्थानीय जन चौपड़ा कहते हैं। यहां गुर्जर-प्रतीहार मंदिरों के अतिरिक्त कुछ आधुनिक छतरियाँ और छोटे मंदिर हैं। यह स्थान जंगल में है और पूरी तरह वीरान है। चौपड़ा के उत्तर में प्रतीहार कालीन दो मंदिर अगल-वगल स्थित है। पहले मंदिर का अधिष्ठान (चवूतरा) और जंघा के कुछ भागों के अतिरिक्त पूरी तरह नष्ट हो चुका है। किन्तु शिव को समर्पित दूसरा मंदिर जंघा तक सुरक्षित है।

ऊमरी

यह स्थान म०प्र० के टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से 40 कि०मी० दक्षिण-पूर्व-दक्षिण में है। यहां पर ग्राम के पश्चिम में एक सूर्य मंदिर है। मुखमण्डप के वाम प्रवेशद्वारा एक खण्डित अभिलेख की कुछ पंक्तियां दृष्टिगोचर होती हैं। इस लेख के कुछ अक्षर ही पठन योग्य हैं। मंदिर की वास्तुकला के आधार पर इसका निर्माण समय नवीं शती ई० का प्रारम्भ निर्धारित किया गया है।

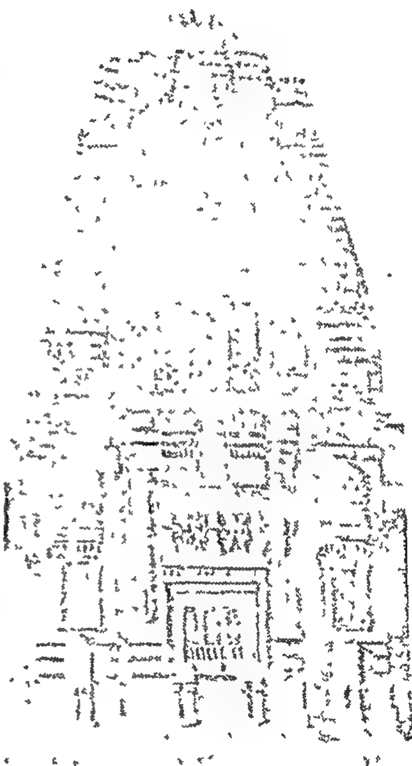
महुआ

यह स्थान म०प्र० के शिवपुरी के रनोद नगर से 12 कि०मी० दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यहां पर चामुण्डा देवी के मंदिर के अतिरिक्त दो अन्य शिवमंदिर भी हैं। इनमें से पहला शिवमंदिर शिखर विहीन है और अभिलेख में इसे शिव मण्डपिका कहा गया है। इसकी निर्माण तिथि सातवीं शती ई० है। दूसरा मंदिर शिखर युक्त है और संभवतः 8 वीं शती ई० में वनाया गया। चामुण्डा देवी को समर्पित मंदिर को स्थानीय जन खेरापति का मंदिर कहते हैं।

तेरही

यह स्थान शिवपुरी के रनोद नगर से 10 कि०मी० दक्षिण-पूर्व में है। रनोद के खोखइ नामक शैवमठ में अंकित अभिलेख मे इसका नाम तेरम्वि वताया गया है। इसी अभिलेख से ज्ञात होता है कि तेरही, रनोद (प्राचीन रणिपद्र) और कदवाहा (कदम्वगुहा) शैवमत के गढ़ थे और यहां पर अनेक शैवमठ थे जिनके अवशेष आज भी विद्यमान है। तेरही का शिवमंदिर शैवमठ के निकट है और स्थानीय जनों में गढ़ी के नाम से विख्यात है।

नचना-कुठरा



यह स्थान पन्ना जिले से 55 कि०मी० दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यहां गुप्तकालीन पार्वती का एक प्रसिद्ध मंदिर है। इसी पार्वती मंदिर के समीप एक अन्य देवालय है जिसे चौमुखनाथ का मंदिर कहते हैं।[285] यह मंदिर प्रतीहारकाल में निर्मित वताया जाता है। मंदिर का गर्भगृह वर्गाकार है जिसमें चतुर्भुज महादेव का एक उत्कृष्ट शिवलिंग प्रतिष्ठि‍ है। गर्भगृह के सामने एक अर्वाचीन वरामदा है। वरामदे (मण्डप) और गर्भगृह के वीच में अन्तराल है। मंदिर् की वाह्य भित्तियो पर अनेक रथिकाएं (आले) है, जिनमें गणेश, यम, कुवेर, सूर्य, महिषासुरमर्दिनी, कामदेव, वृषभारूढ़ तथा नृत्य शिव की प्रतिमाएं थी। अव इन रथिकाओं की प्रतिमाएं लुप्त हो चुकी हैं। यह मंदिर नवीं शती ई० के तृतीय चरण में निर्मित हुआ।

वड़ोह-पठारी (विदिशा)

वड़ोह और पठारी दो अलग-अलग ग्राम है। किन्तु दोनों ग्रामों की निकटता के कारण इन्हें वड़ोह पठारी के संयुक्त नाम से पुकारा जाता है। यहां के मंदिर पूर्व-मध्ययुगीन वास्तुकला की कतिपय विशेषताओं के लिए वहुत प्रसिद्ध है। इनमे गुप्तकाल से लेकर प्रतीहारकाल तक का कला और स्थापत्य का विकास परिलक्षित होता है। पठारी मे भीमगजा के समीप एक शिव मंदिर है, किन्तु ललाट विम्व पर अंकित विष्णु की प्रतिमा से यह वैष्णव मंदिर प्रमाणित होता है। यह मंदिर भीमगजा नामक एक विशाल स्तम्भ के पास स्थित है। इस स्तम्भ पर एक लेख अंकित है, जिसमें कहा गया है कि राष्ट्रकूट वंश से सम्वन्धित परवल नामक शासक ने शौरि का एक मंदिर वनवाया और उसके सामने गरुड़ ध्वज स्थापित कराया। शौरि विष्णु (कृष्ण) का पर्यायवाची हे। यह अभिलेख विष्णु के मुरारि, कृष्ण और हरि नामो के स्तवन से प्रारम्भ होता हैं। अभिलेख की तिथि संवत् 917 (860 ई०) में अंकित है।

285 देखिए – आर०डी० त्रिवेदी, टेम्पिल्स ऑफ दि प्रतीहार पीरियड इन सेण्ट्रल इण्डिया, पृ० 125.

अभिलेख की लिपि ग्वालियर चतुर्भुज मंदिर और देवगढ़ शान्तिमय मंदिर के भोज प्रतीहार लेखों से मिलती-जुलती है। अतः यह मंदिर भोज प्रतीहार के शासनकाल में निर्मित प्रतीत होता है। पठारी का मंदिर शिव को समर्पित है। यह मंदिर भीमगजा के शिव मंदिर के समान है। इसका निर्माण 875 ई० के लगभग हुआ। यहां पर एक और मंदिर है जिसे कूटकेश्वर मंदिर कहते हैं। यह मंदिर भी शिव को समर्पित है।

वड़ोह विदिशा जिले में स्थित है। यहां तालाब के किनारे एक मंदिर स्थित है जिसे गडरमल का मंदिर कहते हैं। अत्यधिक ऊंचाई के कारण यह मंदिर दूर से ही दिखाई देने लगता है। ललाटविम्ब पर शक्ति के अंकन से शाक्त मंदिर प्रतीत होता है। इस मंदिर की आयोजना जराइमठ, वरुआसागर तथा तेली मंदिर, ग्वालियर के समान है। इसकी जगती पर सात लघु मंदिरों के अवशेष प्राप्त होते हैं। इस मंदिर में नृत्त गणेश की एक सुन्दर प्रतिमा है।

मड़खेरा

यह स्थान टीकमगढ़ जिला मुख्यालय से 18 कि०मी० उत्तर में स्थित है। यहाँ का सूर्य मंदिर बहुत अच्छी हालत में है। मड़खेरा का अर्थ है मंदिर का ग्राम। इससे प्रतीत होता है कि इस ग्राम का नामकरण मंदिर के आधार हुआ है। इस मंदिर का निर्माण नवीं शती ई० के उत्तरार्द्ध में हुआ।

ग्यारसपुर

यह स्थान विदिशा के 85 कि०मी० उत्तर-पूर्व में स्थित है। यहाँ ग्राम के चारों ओर विखरे पुरावशेषों से इसकी प्राचीनता का वोध होता है। इन अवशेषों में मालादेवी का मंदिर सवसे वड़ा है, जो एक रमणीय पहाड़ी के ढ़लान पर वना है। गर्भगृह में तीन जिन प्रतिमाएं हैं, किन्तु कोई भी प्रतिमा मूलनायक की नहीं है। इसी प्रकार ललाटविम्व में भी किसी प्रतिमा का अभाव है। अतः यह मंदिर किस तीर्थकंर को समर्पित था निर्धारित करना कठिन है। मालादेवी का मंदिर आयोजना में पूर्ण विकसित है, जिसमें मुखमण्डप, मण्डप, अन्तराल, गर्भगृह और आन्तरिक प्रदक्षिणापथ की संयोजना है। इसकी तुलना इसी जिले के वड़ोह ग्राम स्थित गडरमल मंदिर से की जा सकती है। दोनों मंदिरों में जालक अभिप्राय, पर्णवन्ध और अधिष्ठान (चवूतरा) में एक अतिरिक्त पर्णवन्ध है। इस मंदिर का निर्माणकाल 900 ई० निर्धारित किया गया है।

सेसई

यह ग्राम शिवपुरी जिला मुख्यालय से 12 कि०मी० दक्षिण में स्थित है। यहां का सूर्य मंदिर भग्नावस्था में है। ललाटविम्व पर सूर्य की प्रतिमा अंकित है जिससे यह सूर्य मंदिर प्रमाणित होता है। सूर्य मंदिर के दक्षिण-पूर्व में पश्चिमाभिमुखी एक अन्य छोटा मंदिर है। इसके ललाटविम्व पर एक गरुड़ अंकित है। किन्तु गर्भगृह में शिवलिंग प्रतिष्ठित है और मंदिर के प्रवेशद्वार के सामने सरितदेवी की एक खण्डित प्रतिमा विद्यमान है।

वरुआसागर

यह नगर उत्तर प्रदेश के झांसी जिला मुख्यालय से 22 कि०मी० उत्तर में झांसी-मऊरानीपुर मार्ग पर स्थित है। वरुआसागर नगर से इसकी दूरी 3 कि०मी० है। स्थानीय लोग इसे जराइमाता अथवा जराइमठ कहते हैं। वास्तुकला के आधार पर इस मंदिर का समय 950 ई० निर्धारित होता है।

सिंहावलोकन

प्रतीहारकालीन भारत में सम्पूर्ण उत्तर भारत को एकता के सूत्र में वांधा गया और पहली वार यह प्रयास किया गया कि विदेशी आक्रमणकारियों को देश से वाहर खदेड़ दिया जाय। तीन सौ वर्षों के इस काल खण्ड में प्रारम्भ से ही अरव आक्रामक सिन्ध प्रदेश पर विजय प्राप्त कर समीपवर्ती प्रान्तों को अपने अधिकार क्षेत्र में लाने का प्रयत्न करने लगे। देशभक्त प्रतीहारों ने गुहिलों, चौहानों तथा अन्य राजपूत सामन्तों की सहायता से इस प्रकार उनके विरुद्ध मोर्चा वन्दी की मानों नारायण ने हिरण्याक्ष के पंजे से पृथ्वी को मुक्त करा लिया।'' दो सौ वर्षों तक प्रतीहार यह भूमिका निभाते रहे और अपने विशाल साम्राज्य की रक्षा करते रहे, जिसकी सराहना अरव यात्रियों ने भी की है। किन्तु राजस्थान से सम्वन्ध विच्छेद होने पर और उनकी स्वयं की सैनिक शक्ति तथा प्रशासनिक क्षमता का ह्रास होने पर भारत की रक्षा करना कठिन हो गया। यदि राजपूत प्रारम्भिक गजनवी आक्रमण के वाद ढ़ीले न पड़ जाते और विदेशी आक्रमणों के संकट का सामना करने के लिए किसी ऐसी राजनीतिक प्रणाली का विकास करते जिससे तुर्कों का सफलतापूर्वक सामना किया जा सकता, तो भारतीय इतिहास में उनकी उपलब्धियों को महान् माना जाता।

धार्मिक क्षेत्र में पाशुपत तथा पांचरात्र जैसे सम्प्रदायों का विकास हुआ। जैन धर्म लोकप्रियता की ओर अग्रसर हुआ। उनका साहित्य उच्चकोटि का है और शंकर तथा कुमारिल से किसी प्रकार कम नहीं है। मध्यदेश के विपरीत राजस्थान में जाति प्रथा अधिक उदार थी। फलस्वरूप 'मग' जाति के लोग ब्राह्मण मान लिये गये और अन्य वर्ण के लोग क्षत्रिय मान लिए गये। इसी प्रकार एक वड़ी संख्या में ब्राह्मण क्षत्रियों ने शाकाहारी नियम अपनाकर शैवों की संख्या वढ़ाई। प्रतीहारों के अन्तिम समय में उत्तर-पश्चिम के तुर्क आक्रमणों ने इस सांस्कृतिक आदर्श की प्रगति को अवरुद्ध कर दिया। फलतः लोग जाति प्रथा पर जोर देने लगे।

आर्थिक क्षेत्र में प्रतीहारकालीन व्यापारी समुद्री यात्रा करके मलेशिया, इण्डोनेशिया और अन्य समीपवर्ती देशों से धन कमाकर लाते थे। जव देश में ही जंगलों, पहाड़ों और रेगिस्तानो को पार कर व्यापार करना कठिन था तव जहाजों पर वैठकर झंझावातों से युक्त समुद्रों में यात्रा करना और अपनी सामग्री वहां वेचना और वहां की वस्तुएं देश में लाना वड़े जीवट का काम था।

साहित्यिक क्षेत्र में श्रीमाल (भिनमाल, भिल्लमाल) को चौहानों की ब्रह्मपुरी कहा गया है। यहां माघ तथा ब्रह्मगुप्त जैसे विख्यात रचनाकार हुए। कन्नौज में महाकवि राजशेखर था। प्रतीहारों के अभिलेखों से भी तत्कालीन कवियों की संस्कृत योग्यता का पता चलता है। गोष्ठियों तथा शास्त्रार्थों का आम चलन था। हिन्दू जनता पुराणों तथा जैन कथाओं तथा वादविवाद में प्रश्नोत्तर के माध्यम से अपनी ज्ञानवृद्धि करती थी। शिक्षा प्रणाली में त्रुटियां भी थी। 'निमित्तशास्त्र' तथा 'धातुवाद' का वोलवाला था तथा गणित और ज्योतिष ह्रासोन्मुखी थीं।

कला और स्थापत्य के क्षेत्र में गुप्तकालीन परम्परा को आगे वढ़ाया गया। वड़ी संख्या में प्रतीहारकालीन मूर्तियां और वास्तु अवशेष प्राप्त हुए हैं। देवगढ़ (ललितपुर), ऊमरी तथा मड़खेरा (टीकमगढ़), जराईमाता (झांसी) आदि के मंदिर प्रतीहारकालीन वास्तु का दिग्दर्शन कराते हैं।

इस प्रकार युद्ध और शान्ति दोनों अवस्थाओं में प्रतीहारों की उपलब्धियां यशस्वी हैं। विदेशी आक्रमण के समय उन्होंने वीरता का भरपूर प्रदर्शन किया। जव भिल्लमाल, मालवा, माण्डलगढ़, कच्छ तथा उत्तरी गुजरात को अरवों ने रौंद डाला तव अपने देश और संस्कृति के लिए नागभट्ट प्रथम और उनके मित्र सीना तानकर खड़े हो गये और आक्रमणकारियों को ऐसा खदेड़ा कि शताब्दियों तक वे सिन्ध-मुलतान से वाहर सिर न निकाल सके। किन्तु जव अन्धविश्वास ने धर्म को प्रभावित किया तव अरवों को यह युक्ति सूझी कि वे प्रतीहार सेना को यह कह कर धमका देते थे कि हम मुलतान के सूर्यदेवता की मूर्ति को खण्डित कर देंगें।

नागभट्ट प्रथम, नागभट्ट द्वितीय, भोज तथा उनके सामन्तों को देखते हुए यह कहना कठिन है कि राजपूत अच्छे सेनापति नहीं थे। सैनिक कूटनीति से भी राजपूत अनभिज्ञ नहीं थे। हरिभद्र सूरि जैसे लेखक ने समराइच्चकहा में 'पद्मव्यूह' पद्धति का वर्णन किया है कि किस प्रकार सेना के अग्रिम, दायें, वायें, मध्य तथा पीछे के दलों का निरीक्षण सेनापति करता था। अतः राजपूतों की हार का कारण अन्यत्र तलाश करना पड़ेगा।

भारत के राजनीतिक पतन के लिए प्रतीहार या अन्य राजपूतों को नहीं, अपितु समाज को दोषी ठहराना होगा। उत्तर-पश्चिमी देशों से भारत का सम्पर्क न होने से यहां के लोग ईरान-तूरान की संस्कृति से अनभिज्ञ थे जिससे कला और साहित्य की प्रगति रुक गई। अलवेरूनी लिखता है कि ईरान के किसी विद्वान का उल्लेख करो तो भारतीय ब्राह्मण ध्यान नहीं देते। उनका कथन है कि सारे संसार की विद्या भारत में है और वेद उसके केन्द्र हैं।

भारत के कट्टर जातिवाद नें कई गुण थे, किन्तु राजनीतिक दिशा में उसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ। जाति-पांति प्रथा से कभी सामाजिक समन्वय नहीं हो सकता और एक राष्ट्र निर्माण यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। जाति-पांति के कारण युद्ध करना क्षत्रिय धर्म माना गया और देश की रक्षा अल्पसंख्यक राजपूतों पर छोड़ दी गई। ब्राह्मणों के मंदिरों को आक्रामकों से खतरा हो जाय तो उनकी रक्षा करना राजा का कार्य था। वैश्य व्यापारी तो ऐसे थे कि सर्वप्रथम वे ही आक्रमणकारियों से मेल-मिलाप करते थे। इसका मुख्य कारण उनकी व्यापारिक वृति थी। अन्य जातियां तो तुलसीदास के शब्दों में ''कोउ नृप होय हमैं का हानी। चेरी छांड़ि न होवै रानी'' थी। यही कारण है कि महमूद गजनवी के विरुद्ध कन्नौज के प्रतीहार नेतृत्व नहीं कर सके। गजनवी तुर्क ऐसे समय में आये, जव कन्नौज के प्रतीहार कमजोर हो रहे थे। जागीरदारी प्रथा के कारण शक्तिशाली सामन्तों ने सम्राट को दवा रखा था। भारतीय सेना में अनुभव, अनुशासन तथा एकता की कमी थी, जवकि महमूद ईरान क्षेत्र से लगातार युद्ध करते-करते तत्कालीन युद्ध पद्धति में दक्ष हो गया था। यद्यपि अरव यात्रियों ने कन्नौज साम्राज्य की घुड़सवार सेना की प्रंशसा की है, तथापि महमूद की विजय का एक कारण तुर्की अश्वसेना के अच्छे घोड़े और सवार भी थे।

विन्ध्यक्षेत्र के परिहार (गुर्जर-प्रतीहार) वंश की शाखाएं

सिंगोरगढ़ के प्रतीहार

यद्यपि सम्पूर्ण जेजाकभुक्ति या जुझौती (बुन्देलखण्ड) पर प्रतीहारों का शासन रह चुका था, तथापि चन्देलों के ह्रासोन्मुखी काल में वे ग्वालियर तथा चन्देरी क्षेत्र में अधिक प्रबल रहे। चन्देल साम्राज्य का विस्तार पश्चिम में सिन्ध-बेतवा नदियों के तट तक रहा था, किन्तु बारहवीं शताब्दी से लगभग सवा सौ वर्षों तक (1112-1250 ई०) ग्वालियर दुर्ग और उसके क्षेत्र पर प्रायः प्रतीहारों का ही शासन रहा। इसी प्रकार ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी के तीन सौ वर्षों तक प्रतीहार चन्देरी की गद्दी पर विराजमान रहे।

चन्देलों का मूलस्थान खजुराहो था। वे खजुराहो के दक्षिण स्थित मनियागढ़ के शासक थे। चन्द्रवर्मा चन्देल ने अपनी माता के स्खलन की शुद्धि के लिए नवीं शताब्दी के प्रथम चरण में एक यज्ञ (महोत्सव) किया। यज्ञस्थल का नामकरण महोत्सवनगर किया गया जो अब महोबा के नाम से विख्यात है। भोज प्रतीहार के वराह ताम्रपत्र से विदित होता है कि 830 ई० में *कालंजरमण्डल* पर प्रतीहारों का शासन था। डॉ० स्मिथ का मत है कि जब चन्देल प्रभावशाली हुए तब महोबा के प्रतीहार माण्डलिक को हटाकर वे स्वयं राजा बन बैठे। कहा जाता है कि नन्नुक (चन्द्रवर्मा) ने जब प्रतीहारों को मऊ के युद्ध में पराजित किया, तब कुछ प्रतीहार धसान नदी के पश्चिम चले गये और कुछ दक्षिण की ओर आ गये। दक्षिण की ओर केन नदी का उद्गम है जहां से कुछ दूर पश्चिम में व्यारमा नदी दक्षिण से उत्तर बहकर सोनार में और सोनार केन नदी में मिलती है। महोबा से पश्चिम जाने वालों के लिए एक मात्र मार्ग चन्देरी तथा ग्वालियर से होकर थे और दक्षिण से आने वालों के लिए सुरक्षित क्षेत्र केन नदी घाटी थी, जिसकी दक्षिण दिशा में सिंगोरगढ़, पश्चिम में दमोह, पूर्व में मऊ और कोटरा का परगना है। कोटरा पन्ना से पवई मार्ग पर केन नदी के टेढ़ी दहार के बुधेड़ा ग्राम से एक मील पड़ता है। यहां पर एक कोट है और ग्राम का नाम भी कोट है। यह छोटा-सा गांव इसी कोट के अन्दर बसा है। नदी किनारे का कोट का हिस्सा गिर चुका है। किला भी केन नदी के किनारे पर होने के कारण गिर चुका है। पहले यहां का कोट 12 फीट ऊंचा था। अब टूट जाने पर कहीं कहीं आठ फीट और कहीं कहीं दस फीट ऊंचा है। इसमें दो दरवाजे हैं। मुख्य दरवाजा उत्तर की ओर और दूसरा पूर्व की ओर है। [illegible] अनुश्रुति के अनुसार इस कोट के पत्थरों का प्रयोग करने वाला [illegible] जीवित नहीं रहता। इस भय से कोई भी व्यक्ति कोट के पत्थरों का प्रयोग नहीं करता। यह भी कथन है कि यदि किसी को सांप काटता है और वह कोट के भीतर आ जाता है तब उस पर [illegible] का प्रभाव [illegible]

होता।[285]

कोटरा में तीन साम्राज्यों-परमार, कलचुरि तथा चन्देल-की सीमाओं का मिलान होता है। संभव है कि केन घाटी का प्रतीहारी क्षेत्र कुछ समय तक चन्देरी राज्य का प्रभाव क्षेत्र रहा हो। चन्देरी राज्य के पतन पर केन के प्रतीहारों ने चन्देलों को अपना शासक मान लिया। जव चन्देरी तुर्कों के अधीन हो गया, उस समय केन के प्रतीहार उत्तर-पूर्व की ओर अर्थात् कैमूर तथा पन्ना पर्वत श्रृंखला के वीच में स्थित केन नदी की उपरली घाटी के प्रवल शासक थे। यह तेरहवीं शताव्दी का अंत तथा चौदहवीं शताव्दी का प्रारम्भिक काल था। इस समय केन घाटी पूर्णतया सुरक्षित थी। यहां प्रतीहार अपनी शक्ति का प्रसार स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकते थे।

चेदिदेश में प्रतीहार सत्ता के अवशेष

तेरहवीं शताव्दी के मध्य में ग्वालियर और इसी शताव्दी के अन्त में तीन सौ वर्ष पुराने चन्देरी राज्य का पतन हो गया। चन्देरी का राज्य सुरक्षित था। किन्तु ग्वालियर के प्रतीहारों ने दिल्ली के तुर्कों के साथ एक शताव्दी तक संघर्ष किया। गोपगिरि (ग्वालियर) की मान तथा प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए प्रतीहार सदैव तैयार रहते थे। अतः कन्नौज साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने के कारण एक शताव्दी के भीतर ही उन्होंने ग्वालियर पर पुनः कव्जा कर लिया। दीर्घकालीन तुर्क-प्रतीहार संघर्ष से उत्पन्न उथल-पुथल के समय अनेक प्रतीहार सरदारों ने केन घाटी में शरण लेकर अपने ठिकाने वनाये। डाहल-चेदि में कलचुरियों के स्थान पर अव सुदूरवर्ती देवगिरि के यादव शासक थे। कालान्तर में चन्देलों ने यादवों को पराजित कर इस क्षेत्र पर अपना वर्चस्व स्थापित किया अथवा प्रतीहारों ने यादवों से विमुख होकर अपना सम्वन्ध चन्देलों से जोड़ लिया, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

गजसिंह प्रतीहार-प्रथम युग

तेरहवीं शताव्दी के मध्य में डाहल (जवलपुर-दमोह) के कलचुरि राज्य की समाप्ति पर जव व्यारमा क्षेत्र में प्रतीहारी सत्ता स्थापित हुई तव 'महाराजपुत्र वाघदेव प्रतीहार' भोजवर्मा चन्देल (1286-88 ई०) की ओर से उस क्षेत्र के माण्डलिक थे।[286] उसके अन्य दो अभिलेखी से भी ज्ञात होता है कि वे हम्मीरवर्मा के शासनकाल में भी चन्देलों के माण्डलिक थे। जवलपुर-दमोह मार्ग में जवेरा घाटी पर सिंगोरगढ़ का प्रसिद्ध दुर्ग सिर ऊँचा किये खड़ा है। इस दुर्ग का निर्माण गजसिंह प्रतीहार ने कराया था।[287] इसीलिए राजा वाघदेव के अभिलेखों में पहले गजसिंह का नाम अंकित किया गया है।[288] अनुश्रुति है कि लखूरा (कोटरा) के मंदिर के खण्डहर में एक शिला थी, जिस पर गजसिंह प्रतीहार का नाम अंकित था। यदि यह वही गजसिंह प्रतीहार है तो मालूम होता है कि तेरहवीं शताव्दी ई० के अन्त में प्रतीहारी सत्ता का विस्तार व्यारमा से लेकर मेढ़ासिन नदी तक था। अव यह अभिलेख प्राप्त नहीं होता। सलैया सती लेख से ज्ञात होता है कि 1308 ई० में इस क्षेत्र पर अलाउद्दीन खिलजी का अधिकार स्थापित हो जाने पर वाघदेव दमोह क्षेत्र छोड़कर कोटरा चले आये।[289]

रायवहादुर हीरालाल का कथन है कि सिंगोरगढ़ श्रीगौरीगढ़ का अपभ्रंश है।[290] तपस्वियों

285 इसीप्रकार केन तथा धसान नदियों के वीच का क्षेत्र खटोला, धसान और वेतवा नदी के वीच का प्रदेश काठर और दमोह क्षेत्र हवेली कहा जाता था। जालौन (उरई-कालपी) का पुराना नाम चौरासी था।

286 1287 का हिंडोरिया शिलालेख।

287 कीर्तिस्तम्भ लेख उसे 'गजसिंहदुर्ग' कहता है (सं० 1364/1307 ई०)।

288 सं० 1357 का शिलालेख, दमोह दीपक पृ० 108.

289 इन्स्क्रिप्शन्स ऑफ दि सी०पी०एण्ड वरार, पृ० 57.

290 दमोह दीपक , पृ० 108.

के रहने तथा श्रीगौरी की पूजा के कारण यह स्थान पवित्र माना जाने लगा। इसीप्रकार इसे 'गौरिकुमारिका क्षेत्र' कहा जाने लगा। संकल्पों में भी इसी नाम का उच्चारण किया जाता है।[291] गजसिंह प्रतीहार ने इस पहाड़ी पर अपना किला बनवाकर इसे 'गजसिंह दुर्ग' नाम दिया। किन्तु यह नाम प्रचलित न हो सका। दो सौ वर्ष उपरान्त गोंड राजा आम्हण दास (संग्रामसाह) के अभिलेख में इसे "श्रीगढ़गौरिविषय दुर्ग" कहा गया है।[292]

राजा वाघदेव प्रतीहार-द्वितीययुग

संवत 1357 (1300 ई०) के एक अभिलेख में गजसिंह का नाम अंकित है, परन्तु शासनकर्त्ता का नाम "राजा श्रीवाघदेव" लिखा है। इसी राजा का उल्लेख भोजवर्मा (1286-88 ई०) तथा हम्मीरवर्मा चन्देल (1288-1310 ई०) के अभिलेखों में चन्देलों के माण्डलिक रूप में किया गया है। इन शिलालेखों के आधार पर गजसिंह वाघदेव का पूर्वाधिकारी प्रतीत होता है। गजसिंह के समय से ही संभवतः केनघाटी में प्रतीहार राज्य की स्थापना हुई।

बारहवीं शताब्दी में जब चन्देलों ने नर्मदा घाटी में कलचुरियों को खदेड़कर डाहल-चेदि क्षेत्र में प्रवेश किया तब मुड़वारा (कटनी) के पास विलहरी में अपना राज्यपाल नियुक्त किया। कथन है कि दमोह-जबलपुर मार्ग के तेरहवें मील पर नौहटा के ध्वसांवशेष है, जहां चन्देलों का प्रतिनिधि रहता होगा। संभवतः नौहटा ही महाराजपुत्र वाघदेव प्रतीहार का मुख्यालय रहा हो' तो भी, उस युग में उक्त दुर्ग सैनिक आवश्यकताओं के अनुरूप था। यद्यपि प्रतीहार चन्देलों के माण्डलिक तो थे, परन्तु वे केनघाटी के एक विस्तृत भूभाग के शासक थे। यहाँ से विन्ध्य पर्वत की श्रेणियां झांसी, बांदा, इलाहाबाद, मिर्जापुर को चली गई है। यहां इनका नाम विन्ध्याचल है। दमोह जबलपुर क्षेत्र में इनकी दो शाखाएं हो गई है। पहली 'कैमूर श्रेणी' जो जबलपुर जिले के उत्तर कंटगी से प्रारम्भ होकर पूर्व की ओर कुछ फासले तक जबलपुर-दमोह की सीमा बनाती हुई बहुरीबंध और झुकेही की तरफ मुरवाड़ा तहसील की सम्पूर्ण उत्तरी सीमा के किनारे-किनारे चली गई है और बघेलखण्ड को लांघकर बिहार जा पहुँची है और दूसरी 'भांडेर श्रेणी' कहलाती है जिसका कगार सीधी ऊंचाई वाला, जबलपुर जिले के पश्चिम में ऊँची दीवार बनाता है। इस कगार का शिखर जबलपुर और दमोह जिलों के बीच सीमा निर्माण करता है और उसके नीचे बिल्कुल समीप से हिरन नदी बहती है।[293] भाण्डेर श्रेणी पन्ना की ओर चली गई है। कटंगी के पास से सड़क पहाड़ियों में से होती हुई 'जबेरा' घाटी पर आती है और सिंगोरगढ़ के नीचे से गुजरती है। सिंगोरगढ़ से संग्रामपुर चार मील रह जाता है। संग्रामपुर के पास फलगू नदी, कैमूर श्रेणी को काटकर पूर्व की ओर निकल गई है। इस जगह को कटाव कहते हैं। यह नदी संग्रामपुर घाटी का सम्पूर्ण पानी समेटकर दक्षिण की ओर नर्मदा में ले जाती है। बाकी जिले का बहाव उत्तर-पूर्व दिशा में है। ब्यारमा नदी बीचों-बीच में घने जंगलों से बढ़ती हुई गैसाबाद के पास सोनार में और सोनार केन में मिल गई है। यह वहाँ हटा और (पन्ना जिले की) पवई तहसील की सीमा बनाती है। ब्यारमा चट्टानी मार्ग से बहती है, इसलिए उसका पाट अधिक चौड़ा नहीं है। सुन, गुरैया और पथरी इसकी सहायक नदियां हैं।

प्रतीहारों के गृह प्रदेश की भौगोलिक अवस्था ऐसी थी जहां सुन नदी के किनारे सिंगोरगढ़ से लगभग 15 मील पर रोंड ग्राम है यहां नदी के तट पर एक पत्थर पड़ा है जिससे एक अश्वारोही अंकित है। इस पर "श्री वाघदेवस्य दासी वैजू" तथा संवत् 1359 लिखा है। इससे ज्ञात होता

---

291 वही

292 वही पृ० 78

293 जबलपुर गजेटियर, पृ० 3

है कि यह दमोह का पूर्वी भाग तेरहवीं शताब्दी के अन्त और चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में सिंगोरगढ़ के अन्तर्गत था और यहीं वाघदेव राजा रहता था।[294] सिंगोरगढ़ से चार मील पूर्व राजा संग्रामशाह गोंड का वसाया हुआ संग्रामपुर दमोह मार्ग पर स्थित है और संग्रामपुर तथा दमोह के वीच उसी सड़क पर नौहटा है। सिंगोरगढ़ जिले के पश्चिम में लम्वी-चौड़ी एक विशाल झील थी। किला और झील राजा वेन वसोर के वनाये कहे जाते हैं। संभवतः इसी वसोर जाति के राजा वेन से प्रतीहारों ने किला छीनकर उसको नये सिरे से वनवाया होगा। यह भी संभव है कि राजा वेन अथवा वेलों, चन्देलों का कोई माण्डलिक रहा हो जिससे प्रतीहारों ने दुर्ग छीनकर कीर्तिस्तम्भ स्थापित कराये हों। जो भी हो, सिंगोरगढ़ और नौहटा के केन्द्रों से वाघदेव प्रतीहार, जवलपुर तथा दमोह के आधुनिक जिलों की समूची भूमि के साथ पन्ना जिले की पवई तहसील अर्थात् केन नदी के दायें किनारे तक राज्य करते हुए अजयगढ़ के चन्देलों का आधिपत्य स्वीकार करते थे। अनुश्रुति है कि ग्राम सलैया से आगे रैपुरा के समीप अमवा ग्राम में व्यारमा नदी के पूर्वी तट पर वरमेन्द्रनाथ का मंदिर और एक गढ़ी के खण्डहर विद्यमान हैं। यहां वसन्त पंचमी को मेला लगता है। आस-पास परिहारों की आवादी है जहॉ से लोग आकर इस स्थान पर वच्चों का मुण्डन-संस्कार कराते हैं।

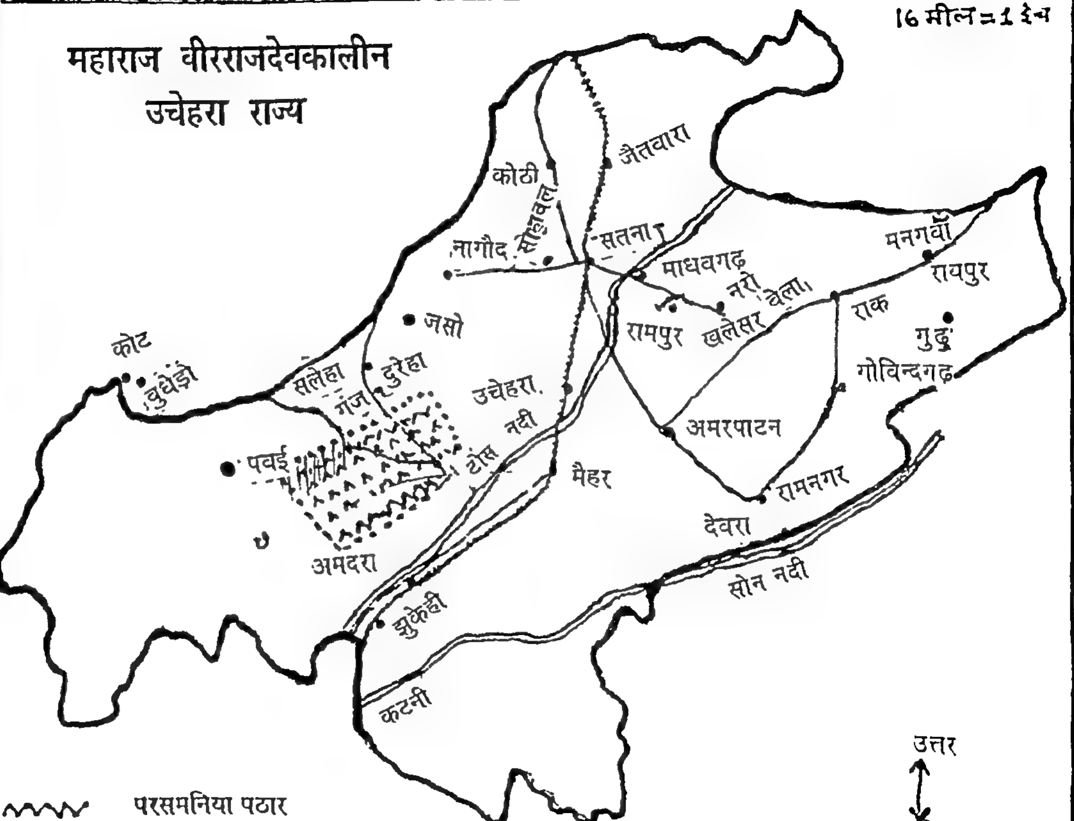
उचेहरा के परिहार - पूर्वकाल

राजा वीरराजदेव (वि०सं० 1397-1431)1340-1374 ई०

पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि तेरहवीं शताब्दी के मध्य में जव ग्वालियर दुर्ग अन्तिम वार प्रतीहारों के हाथ से निकल गया, उसके वाद ही केन की उपरली घाटी में 'गजसिंह दुर्ग' का निर्माण अथवा पुनर्निर्माण श्रीगौरीगढ़ या सिंगोरगढ़ के स्थान पर किया गया था और प्रतीहार केन के दोनों तटों पर राज्य कर रहे थे। गजसिंह के पश्चात् वाघदेव अजयगढ़ के चन्देलों का सामन्त और माण्डलिक रहने के उपरान्त सुलतान अलाउद्दीन खिलजी की अधीनता स्वीकार कर लेता है। वाघदेव की राजधानियाँ सिंगोरगढ़ और संभवतः नौहटा में थी। उत्तरी भारत के इतिहास में यह उथल-पुथल का युग था, जव सुलतान वलवन के वंश को खिलजियों ने समाप्त किया और कड़ा-मानिकपुर के सूवेदार अलाउद्दीन ने अपने चाचा जलालुद्दीन फीरोज का वधकर दिल्ली का सुलतान वना। सुलतान वनते ही उसकी राजपूत दमननीति प्रारम्भ हुई। चन्देलों ने सम्भवतः 'महाराजाधिराज परमेश्वर'' की पदवी सुलतान वलवन के ही समय में त्याग दी थी। किन्तु ''जयपुर दुर्ग'' (अजयगढ़) में रहते हुए भी अपने को ''कालंजराधिपति'' कहते रहे। प्रतीत होता है कि इस समय तुर्कों ने महोवा का थाना सुदृढ़ करके चन्देलों को केन नदी के दायें किनारे में सीमित कर दिया था। वेतवा नदी की ओर अलाउद्दीन ने पहले भेलसा (विदिशा) को लूटा और सुलतान वनने पर 1305 ई० में ऐनुल मुल्क मुलतानी द्वारा चन्देरी क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया। 1298 ई० के पूर्व ही चन्देरी राज्य से पुरानी शाखा के प्रतीहार नई शाखा के याज्यपेल्लों द्वारा अपदस्थ कर दिये गये। अतः अव उनको केन घाटी में ही शरण मिल सकती थी, जहाँ से उनके ठिकानों के विद्यमान होने का प्रभाव उनकी वंशावलियों और अभिलेखों में मिलता है।

खिलजियों का एक मकतेअ (राज्यपाल) चन्देरी में ही रहने लगा था। चन्देरी से प्राप्त एक शिलालेख में इख्तियारुद्दीन तिमर मुलतानी का नाम अंकित है। किन्तु सिंगोरगढ़ तथा चन्देरी से उसके क्या सम्वन्ध थे ? यह ज्ञात नहीं। अलाउद्दीन ने विस्तारवादी नीति का अनुसरण किया। अतः संगठन का कार्य तुगलकों द्वारा सम्पन्न हुआ। सुलतान गयासुद्दीन तुगलक के सत्तारूढ़ होते

294 इक्रिप्सन्स ऑफ दि सी०पी० एण्ड वरार, पृ० 63



महाराज वीरराजदेवकालीन
उचेहरा राज्य
16 मील = 1 इंच
जैतवारा
कोठी
सतना
नागौद
माधवगढ़
मनगवाँ
रायपुर
राक
गुढ़
गोविन्दगढ़
रामपुर
खलेसर
नरो
बेला
जसो
कोट
दुरेहा
सलेहा
गंज
उचेहरा
नदी
टोंस
पवई
मैहर
अमरपाटन
रामनगर
देवरा
सोन नदी
अमदरा
कटनी
उत्तर
दक्षिण
परसमनिया पठार

ही चन्देरी के अन्तर्गत एक उपराज्यपाल नियुक्त हुआ। उसके मुख्यालय वटिहागढ़ (हटा तहसील, जिला दमोह) में किले के खंडहर और अन्य अवशेष पाये गये हैं। गयासुद्दीन तुगलक और मुहम्मद बिन तुगलक के संस्कृत तथा फारसी शिलालेख भी मिले हैं (1324/1326 ई०)। इस प्रकार तुलगलक काल में चन्देरी का पुनः महत्त्व बढ़ता है और वहां के राज्यपाल (मकतेअ) का राज्य ''दमौव देश'' पर छा जाता है। इसी समय में राज्यपाल 'मलिक जुलची' और उपराज्यपाल 'जलालुद्दीन खोजा' की गतिविधियाँ प्रारम्भ हुई। एक शिलालेख में मुहम्मद बिन तुगलक को 'महाराज साहि' और दूसरे में 'महाराजाधिराज सुरताण' कहा गया है। परगनाधीश के लिए 'महामलिक' (मलिकुल आजम) विरुद् का प्रयोग हुआ है। अगली पीढ़ी में तो दतिया का एक संस्कृत शिलालेख फिरोजशाह तुगलक को ''परमभट्टारक परमेश्वर'' कहता है।

एक संस्कृत शिलालेख में ज्ञात होता है कि मुहम्मद बिन तुगलक ने मलिक जुलची को 'चेदि-देश' का राज्यपाल बनाया। 1324-25 ई० के फारसी लेख के अनुसार जुलची ने एक बावली का निर्माण कराया था। जुलची का बसाया हुआ ग्राम जुलचीपुर कभी परगने का मुख्यालय था और अब दुलचीपुर के रूप में सागर जिले की बण्डा तहसील में विद्यमान है। उपराज्यपाल जलालुद्दीन खोजा ने वटिहाडिम में पशुओं के लिए एक 'गोमठ' बनवाया था। उसने एक बावली बनवाई और 1328 ई० में एक उद्यान भी लगवाया। अब यह उद्यान 'जल्लालबाग' कहलाता है। मलिक जुलची अलाउद्दीन खिलजी के समय में मंगोल सैनिकों का सिपहसालार रह चुका था। ऐसे सुदृढ़ अधिकारी को चन्देरी का राज्यपाल नियुक्त किया गया। जुलची ने वटिहाडिम में गढ़ का निर्माण किया। तभी से वह वटिहागढ़ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[295] 'चन्देरी देश' के परिहार सिंगोरगढ़ के क्षेत्र में पिछले सौ वर्षों से केन्द्रित हो चुके थे और वटिहागढ़ की सेना का मुख्य कार्य, जुलची और उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी हिसामुद्दीन के कार्यकाल में इन परिहारों का दमन करना ही था। 1309 ई० के बाद बाघदेव का कोई अभिलेख प्राप्त नहीं हुआ। न जाने उनका क्या हुआ ? वंशावलियों में भी उनके वंश का उल्लेख नहीं मिलता। केवल अठारह पीढ़ियों के अंत में बाघदेव का नाम लिख कर छोड़ दिया गया है। केन नदी के पार परिहार बस्तियाँ पन्ना जिले की पवई तहसील में पहले से ही थीं और वंशावलियों में बाघदेव को 'मऊ' का अन्तिम राजा बताया गया है। यह मऊ केन नदी के दायें तट पर है। केन नदी पार के क्षेत्र में एक सत्ता का विकास हुआ जिसने तमसा नदी के पठार पर कैमूर घाटी के बाहर झुकेही से आगे की ओर जहाँ आज सतना और रीवा के जिले हैं, एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया।

इसप्रकार भाण्डेर श्रेणी से दूर परिहार कैमूर श्रेणी की ओर बेरोक-टोक आगे बढ़े। चन्देलों का प्रभाव क्षीण हो जाने से रिक्त स्थान को भरने के लिए कोटरा परगने का वीर वीरराजदेव परिहार उठ खड़ा हुआ। वि०सं० 1401/1344 इ० के खलेसर सती अभिलेख से ज्ञात होता है कि इस समय महाराजाधिराज कोतपाल के शासनकाल में उनके बन्धु-बान्धव में से गाजणदेव के वंश में विशालदेव हुए। इन्हीं विशालदेव के पुत्र महाराजा वीरराजदेव नलोगढ़ (नरोगढ़) के स्वामी थे। नागौद राजवंश की पारम्परिक वंशावलियों में कोतपालदेव, गाजणदेव, गहलणदेव और विशालदेव के नाम नहीं मिलते। ऐसा प्रतीत होता है कि विवेच्य अभिलेख का गाजणदेव गजसिंह परिहार है जो सिंगोरगढ़ का शासक था। गजसिंह के बाद बाघदेव शासक हुआ जिसका उल्लेख वि०सं० 1344 के हिण्डोरिया अभिलेख, वि०सं० 1355 के सिमरा सतीलेख, वि०सं० 1365 के सिमरा सतीलेख, वि०सं० 1364 के सिंगोरगढ़ स्तम्भ लेख, वि०सं० 1365 के बहुनी सती लेख, वि०सं० 1362 और 1366 के सती अभिलेख प्राप्त हुए हैं।[296] इन अभिलेखों से प्रमाणित होता है कि

295 वटिहागढ़ के तीन शिलालेख, दमोह दीपक, पृ० 91.

वाघदेव प्रतीहार ने 1287 ई० से 1309 ई० तक भोजवर्मा और हम्मीरवर्मा चन्देल के माण्डलिक रूप में शासन किया। इसी समय से इस क्षेत्र में मुहम्मद-बिन-तुगलक और फिरोजशाह तुगलक का अधिकार प्रारम्भ हो गया जिससे सिंगोरगढ़ क्षेत्र से वाघदेव प्रतीहार की सत्ता का अन्त हो गया।

जिस समय वाघदेव प्रतीहार सिंगोरगढ़ में माण्डलिक था लगभग उसी समय कोटरा क्षेत्र में महाराजाधिराज कोतपालदेव का शासन प्रारम्भ हुआ। वि०सं० 1401/1344 ई० के खलेसर सती अभिलेख से ज्ञात होता है कि महाराज वीरराजदेव इस समय नरोगढ़ के शासक थे। संभवतः कोतपालदेव के निस्सन्तान होने से वीरराजदेव उनके राज्य के अधिकारी हुए। इसीलिए वीरराजदेव कालीन खलेसर अभिलेख में कोतपालदेव का श्रद्धापूर्वक स्मरण किया गया है।

वीरराजदेवकालीन बहुसंख्यक सती लेखों से प्रमाणित होता है कि वह उचेहरा के परिहार राजाओं में सर्वाधिक शक्तिशाली राजा था जिसने एक विस्तृत भूभाग पर परिहारी सत्ता स्थापित की। उसका शासनकल वि०सं० 1397/1340 ई०[297] से प्रारम्भ हुआ और उसने 1374 ई० तक शासन किया। उसके शासनकाल का पहला सतीलेख नागौद-सलेहा मार्ग पर स्थित गंजग्राम से प्राप्त हुआ है। यह अभिलेख वि०सं० 1397 अर्थात् 1340 ई० का है। वि०सं० 1401 के खलेसर सती अभिलेख में वर्णित नलोगढ़ के अतिरिक्त अभिलेखों में प्रायः वीरराजदेव को उचेहरा का राजा बताया गया है। इस प्रकार का पहला अभिलेख भड़ारी ग्राम से प्राप्त वि०सं० 1398 के सतीलेख में मिलता है। तत्पश्चात् वि०सं० 1404 के बम्हनगवां सतीलेख[298] में भी उचहड़ा नगर का उल्लेख मिलता है। इस अभिलेख से यह भी प्रमाणित होता है कि वीरराजदेव के अनेक सामन्त थे जो उसकी अधीनता में शासन करते थे। ऐसा ही एक राजा मीलहीय विषय अर्थात् मैहर क्षेत्र पर शासन कर रहा था। अग्रवाल वंश के सामगौरी वंश में उत्पन्न इस राजा का नाम महाराज सहजू बताया गया है। वि०सं० 1418 के लेख में वीरराजदेव को डाहल का शासक बताया गया है। भौगोलिक इकाई डाहल से वीरराज के विस्तृत राज्य का पता लगता है। इस राज्य में पन्ना की पवई तहसील, सतना, रीवा का दक्षिणी भाग और जबलपुर की कटनी तहसील सम्मिलित थी। वीरराजकालीन कुछ सती लेखों में फिरोजशाह तुगलक का उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि दमोह क्षेत्र पर तुगलकों का अधिकार हो जाने से उनका कोई आक्रमण नरो अथवा उसके समीपवर्ती क्षेत्र पर हुआ, जिसमें भीषण नरसंहार हुआ। वीरराज ने फिरोजशाह तुगलक की अधीनता स्वीकार कर ली। यही कारण है कि वीरराज के अभिलेखों में फिरोजशाह तुगलक का उल्लेख मिलता है।

कनिंघम् द्वारा वि०सं० 1404 के रामपुर अभिलेख का किया गया वाचन त्रुटिपूर्ण है। कनिंघम का मत है कि राजा वीरराज के साथ उनकी दो रानियां पटरानी शिरोमणि और तालरानी सती हो गयीं। लेख पर अंकित शूकर के चित्र के आधार पर कनिंघम ने यह मत व्यक्त किया था कि राजा की मृत्यु सुअर का शिकार करते हुए किसी दुर्घटना में हुई। किन्तु कनिंघम को ज्ञात नहीं था कि प्राचीनकाल से ही परिहार वराहावतार को पूज्य मानते हैं तथा इस कुल में सुअर का मांस सेवन वर्जित है। कनिंघम का यह मत भी सत्य प्रतीत नहीं होता कि वि०सं० 1404 में वीरराज की मृत्यु हो गई। डोड़ी-कुसहाई (पिपरा) सतीलेख में वि०सं० 1425 में वीरराज को शासन करते बताया गया है। अतः रामपुर के लेख में वीरराज की नहीं अपितु किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु की सूचना है, जिसके साथ उसकी पत्नियां सती हो गयीं।

वीरराज का एक अन्य अभिलेख रीवा के पास भलुहा ग्राम में प्राप्त हुआ था, जिसे गुरु रामप्यारे अग्निहोत्री ने बघेलों से सम्बन्धित होने के अनुमान पर महाराजा मार्तण्डसिंह को प्रदान कर दिया। उन्होंने श्री वीरराजदेव और बल्लारदेव (बरियारदेव 1400-92) को एक ही शासक बताया

---

296 इन्स्क्रिप्शन्स आफ दि सी०पी० एण्ड बरार, पृ० 46, 55, 56, 57.
297 गंज सती लेख.
298 एपि० इण्डि०, खण्ड 34, पृ० 255-56.

है जो सत्य नहीं है। परिहार परम्परा के अनुसार उचेहरा में परिहार राज्य की नींव वि०सं० 1401/1344 ई० में पड़ी। वंशावलियों में भी यही संवत् मिलता है और कनिंघम ने भी इसी तिथि का उल्लेख किया है। किन्तु वीरराजदेव का सबसे पुराना लेख वि०सं० 1397/1340 ई० का है। अतः यह स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है कि वि०सं० 1397/1340 ई० में सुलतान मुहम्मद-बिन-तुगलक के शासनकाल में मऊ के परिहारों से सिंगोरगढ़ का राज्य छूटने पर वीरराजदेव ने कोटरा से आकर उचेहरा का प्रथम राज्य स्थापित किया। वि०सं० 1425 के डोड़ी कुसहाई सती लेख से उनके शासनकाल का अन्तिम वर्ष 1368 ई० प्रमाणित होता है किन्तु बाबा तालाब के वि०सं० 1431 के लेख में राजा का नाम महाराजाधिराज श्री सिंह दिया गया है और इसी स्थान से प्राप्त एक अन्य अभिलेख में संवत् स्पष्ट नहीं है किन्तु राजा का नाम महाराजाधिराज वीरराजदेव का स्पष्ट उल्लेख है। अतः पहले अभिलेख का श्री सिंह भी वीरराज ही प्रतीत होता है। इसप्रकार वीरराज के शासन का अन्तिम वर्ष 1374 ई० सिद्ध होता है।

अभिलेखों के प्राप्ति स्थानों को देखते हुए वीरराज प्रतीहार की राज्य सीमा जबलपुर जिले की कटनी तहसील से सतना जिले की मैहर, नागौद तथा रघुराजनगर (बरौंधा - पाथरकछार छोड़कर जहाँ रघुवंशियों का राज्य था) और (मऊगंज तहसील सेंगरान छोड़कर जहां सेंगर राजपूत शासन कर रहे थे) रीवा के समूचे पठार तक मानने में कोई आपत्ति नहीं है। इसमें शहडोल जिले की ब्योहारी तहसील का कुछ भाग भी सम्मिलित होने का संभावना है।

वंशावलीय स्रोत

उचेहरा-नागौद की वंशावलियों में उरदना की राजपुरोहितवाली तथा अन्य वंशावलियों में मऊ के परिहारों की अठारह पीढ़ियों का उल्लेख मिलता है। इनमें अन्तिम राजा का नाम बाघदेव बताया गया है। बाघदेव के उत्तराधिकारियों का उल्लेख नहीं हुआ। यदि एक पीढ़ी के लिए पच्चीस वर्ष का समय निर्धारित कर गणना की जाय तो कन्नौज साम्राज्य के पतन काल में अथवा उससे भी पहले मिहिरभोज के शासनकाल में परिहार मऊ आये होंगे और केन नदी के दायें तट पर अपना राज्य स्थापित कर कन्नौज सम्राट के सामन्त बन गये होंगे। बाघदेव के सामन्ती राज्यकाल में मऊ वालों की यह शाखा एकाएक लुप्त हो गई और पुनः इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता। बाघदेव के बाद इस प्रकार का उल्लेख मिलता है -- "कोटरा में रहे राजा वीरसिंह देव, जुगराज, धारासिंह, किसुनदास, विक्रमाजीत। पहले राजा तो वही हैं जिनका नाम शिलालेखों में 'वीरदेव', 'वीरवर्मा' और प्रायः 'वीरराज' के रूप में मिलता है। चन्देल राजाओं के नामों के अन्त में 'वर्मा' शब्द कई पीढ़ियों तक प्रयुक्त हुआ है और वीरराज का विरुद 'परमभट्टारक परमेश्वर' भी चन्देलों की परम्परानुसार है। एक तीसरी वंशावली उचेहरा दरबार की है जिसमें उल्लेख मिलता है कि जब मेवातियों ने मऊ ले लिया तब परिहार कोटरा चले आये। केन तथा मेढ़ासिन के बीच का क्षेत्र 'कोटरा' का परगना कहलाता है जिसका गढ़ी-कोट, नागौद-जसो मार्ग पर नागौद से बीस किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम दिशा पर स्थित है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकला कि केन नदी के पूर्व पन्ना जिले की पवई तहसील की भूमि में परिहारों का केन्द्र था। यहाँ मऊ के अतिरिक्त नचना, गंज-सलेहा इत्यादि ग्रामों का एक समूह है जहाँ प्राचीनकाल से प्रतीहार काल तक के अवशेष पाये गये हैं। कोटरा की गढ़ी के खण्डहर अद्यावधि विद्यमान हैं। गढ़ी के बाहर वाले मैदान को 'लखूरा बाग' कहा जाता है। किसी समय यहाँ एक लाख वृक्षों का एक उपवन रहा होगा। लखूर के मंदिर के खण्डहर में राजसिंह परिहार के नाम का बीजक प्राप्त हुआ बताया जाता है।[200] अब यह अनुपलब्ध है। समीप ही गंज नामक गाँव है। गंज से दो मील पश्चिम गोरैना नाले पर नचना का छोटा-सा गाँव है, जहाँ गुप्तकालीन मंदिरों के अवशेष और महादेव का सुप्रसिद्ध चतुर्मुख लिंग प्राप्त हुआ है।

---

200 इसकी सूचना लाल बलप्रताप सिंह, इटमा मौजा पनागर, जि० सतना से प्राप्त हुई है।

नचना को लोग कोटरा खास भी कहते हैं। गंज से नचना जाने वाले मार्ग पर ईंट की इमारतों के अवशेष मिलते हैं और 'कोटरा खास' ईंटों से पटा पड़ा है। रास्ते भर ढाक का जंगल है। नचना में अब केवल कोलों की बस्ती शेष है। गंज में पान के बहुसंख्यक बरेज बस्ती की प्राचीनता का संकेत करते हैं। ऐसे वातावरण में परिहार कोटरा क्षेत्र में गंज की गढ़ी या कोट में रहते थे, जिससे समूचे परगने का नाम कोटरा पड़ गया। मऊ के बाघदेव खिलजियों के समकालीन थे। किन्तु प्रतीत होता है कि उसके सिंहासनारोहण के साथ ही सिंगोरगढ़ का राज्य समाप्त हो गया। तुगलक काल में परिस्थिति और भी शोचनीय हो गई। वि०सं० 1385/1328 ई० के बटिहागढ़ शिलालेख में उपराज्यपाल जलालुद्दीन खोजा के समय का यह वर्णन उल्लेखनीय है –

अस्ति कलियुगे राजा शकेन्द्रो वसुधाधिपः ।
योगिनीपुर मास्थाय यो भुक्त सकलां महीम। ।
सर्व सागरपर्यन्तं वशीचक्रे नराधिपान ।
महमूद सुरत्राणो नाम्ना शूरोभिनन्दतु । ।

अर्थात् ''कलियुग में पृथ्वी का मालिक शकेन्द्र है जो योगिनीपुर (दिल्ली) में रहकर समस्त पृथ्वी का भोग करता है और जिसने समुद्र पर्यन्त सब राजाओं को अपने वश में कर लिया है। उस शूरवीर सुलतान महमूद (मुहम्मद बिन तुगलक) का कल्याण हो।''[300] लेख की शब्दावली से ध्वनित होता है कि दिल्ली की तुर्क सत्ता का विरोध करना संभव नहीं है। ब्यारमा घाटी में स्वतन्त्र परिहार सत्ता की समाप्ति की यह घोषणामात्र है। इन परिस्थितियों में परिहारों की रही-सही सत्ता तमसा घाटी में ही पनप सकती थी, जहाँ परिहारों का सामना करने वाला कोई न था। भविष्य में आने वाले बघेल इस समय गहोरा के ठाकुर थे। बल्लारदेव बघेला गहोरा का पहला शासक है जिसे 1360 ई० के एक लेख में 'महाराजाधिराज' कहा गया है। उसका राज्य गहोरा के पूर्व गंगा-यमुना तथा विन्ध्याचल के बीच एक पट्टी के रूप में सीमित था। स्थानीय शासकों में बरौंधा-पाथर कछार के रघुवंशी पश्चिम की ओर तथा मऊगंज तहसील (सेंगरान) के सेंगर ठाकुरों ने बीरराज का मार्ग अवरुद्ध नहीं किया। केवल ककरेड़ी के कौरववंशी महाराणक विन्ध्याचल के 'ममनीघाट' के मुहाने पर किसी महत्त्व के शासक अवश्य थे जिनके अस्तित्व का प्रमाण शिलालेखों से प्राप्त होता है। ककरेड़ी से पश्चिम, घाट के पास ही 'कठौली' स्थान है और उसके पूर्व तमसा के दायें तट पर लूक है। वहीं पर क्योटी ग्राम है। क्योटी की गढ़ी के नीचे लूक से पूर्व महाना नदी का प्रपात है। ये महाराणक पहले कलचुरियों के माण्डलिक थे।[301] कालान्तर में चन्देलों ने कलचुरियों से रीवा पठार जीत लिया। इसीलिए 1240 ई० में महाराणक कुमारपालदेव का और 1241 ई० में उसका भ्राता पृथ्वीराजदेव चन्देल शासक त्रैलोक्यवर्मा का प्रभुत्व स्वीकार करते हैं। इसके सौ वर्ष पश्चात् चन्देरी-बटिहागढ़ में तुगलक वंश का शासन प्रारम्भ हुआ। चन्देलों के शक्तिहीन हो जाने पर तमसा घाटी के रिक्त स्थान को भरने के लिए किसी साहसी और होनहार वीर की आवश्यकता थी। ऐसे समय में कोटरा के बीरदेव परिहार आगे आये। इस समय कौरव वंशी महाराणक, लूक के महाराज हमीरदेव तथा कठौली के महाराजाधिराज देचक के बीच पारस्परिक युद्ध चल रहा था।[302]

रीवा नगर के पूर्व उन्नीस किलोमीटर पर मनगवां के निकट सेंगरान (सेंगर देय) तथा रीवा जिले की हुजूर तहसील की सीमा, सेंगरी नदी मानी जाती है। यदि यह मान लिया जाय कि कौरव महाराणकों का राज्य सिरमौर तहसील के भीतर था, तब तो रीवा तहसील की भूमि अवश्य

300. दमोह दीपक, पृ० 13.
301. आ०स०रि०, खण्ड 21, पृ० 145–46.
302. वही, पृ० 141; पवर्भया गर्ता लेख 1333 तथा 1341 ई०.

ही वीरदेव परिहार के द्वारा सीधी शासित होती थी। रायपुर (कर्चुलियान) के समीप स्थित भलुहा ग्राम से प्राप्त एक अभिलेख में वीरराजदेव का उल्लेख है। संभव है महाराणको को वीरराजदेव ने ही समाप्त कर विंझ पहाड़ तक अपने राज्य की सीमा का विस्तार किया हो। हम्मीरवर्मा (1288-1310 ई०) के पश्चात् चन्देलों का कोई अभिलेख प्राप्त नहीं होता, जिससे अनुमान होता है कि अगले दो सौ वर्षों तक वे अजयगढ़-कालिंजर में ही केन्द्रित रहे।

उचेहरा का राजा और सुलतान महमूद खिलजी (1444 ई०)

उचेहरा का पहला परिहार राजा वीरराजदेव ही है। यह नगर बरुआ नाले पर स्थित है। वीरदेव तमसा घाटी के क्षितिज पर एक ज्वाजल्यमान तारे के समान आया और शीघ्र ही लुप्त हो गया। उसके उत्तराधिकारियों के चार नाम वंशावलियों में मिलते हैं। इनमें से दो के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं है। मात्र एक राजा के सम्बन्ध में कुछ जानकारी है। वह गहोरा के राजा नरहरिदेव बघेल का समकालीन था। मआसिर-ए-महमूदशाही से ज्ञात होता है कि उसने माण्डवगढ़ के सुलतान महमूद खिलजी प्रथम का रास्ता रोका था। घटना इस प्रकार है कि 1444 ई० में सुलतान बैतूल के पास 'खरेला' के राजा नरसिंहदेव को साथ लेकर सेना सहित सरगुजा की ओर हाथियों के उद्‌गम की तलाश में जा रहा था। चलते-चलते भटक कर बान्धवगढ़ क्षेत्र में आ निकला। वहां के निवासियों की बोली सुलतान के सैनिक नहीं समझते थे और अपना मतलब समझने के लिए इशारों से काम लेते थे। दरबारी इतिहासकार लिखता है कि वे लोग कहते "कित हम, कित तुम' और कोई सहयोग प्रदान न करते। : आदिवासी तुर्की सेनानियों की परछाहीं से ही डर कर दूर भागते। जब सोने चाँदी के टुकड़े कपड़ों में बांधकर पेड़ों से लटकाये गये तब उन्हें पाकर वे जरा निकट आये और शाही सेना को सरगुजा का रास्ता बताया तथा हाथियों का भी पता बता दिया। मार्ग में सरगुजा के राजा और फिर रतनपुर-रायपुर के दोनों कलचुरि राजा मिले और सुलतान को अच्छी नस्ल के हाथी पेश किये। वापसी में सुलतान को बताया गया कि वे गहोरा के राजा नरहरिदेव के आदमी थे, जो इससे पहले मिले थे। सुलतानी सेना ने उन्हें खदेड़ते हुए कुछ दूर तक पीछा करने के पश्चात् अपना रास्ता लिया। उचेहरा के राजा ने भी पहले खिलजी सुलतान का रास्ता रोका था। बाद में उसने सुलतान की अधीनता स्वीकार कर ली। यह उचेहरा का राजा कौन था ? कोटरा शाखा की नामावली में वीरराज का पहला नाम है। वीरराजदेव के बाद चार नामों का उल्लेख है जिसमें अंतिम राजा विक्रमाजीत है जिन्हें किन्हीं परिहार वंशावलियों में बघेलराजा भैदचन्द्र का समकालीन बताया गया है। उनके समय में भैददेव के पौत्र वीरसिंह देव ने नरो की गढ़ी परिहारों से छीन ली थी। अतः वंशावली में अंकित विक्रमाजीत के पहले का राजा किसुनदास (कृष्णदास) परिहार, नरहरि बघेल तथा महमूदशाह खिलजी का समकालीन होना चाहिए। रीवा की खास कलमी वंशावलियों में कैमूर के समीपवर्ती क्षेत्र का विजेता नरहरि का पिता वीरमदेव बघेला को बताया गया है। वीरमदेव अत्यन्त पराक्रमी था। वह जौनपुर के सुलतान इब्राहीम शाह तथा महमूदशाह शर्की के साथ कालपी (बुन्देलखण्ड) के मलिकजादा वंश के विरुद्ध लड़ने गया होगा अथवा उसके पुत्र राजा नरहरि ने यह उपलब्धि प्राप्त की होगी। क्योंकि वीरभानूदय काव्य में लिखा है कि नरसिंह ने सागर पर्यन्त अपने राज्य की सीमा बढ़ाई। पन्द्रहवीं शताब्दी ई० के प्रारम्भ में बघेल शक्तिशाली थे। जौनपुर के शर्की सुलतानों की अधीनता स्वीकार करते थे। फलस्वरूप जब दिल्ली के लोदियों का उत्थान हुआ तब बघेलराज्य पर एक आक्रमण बहलोल ने और दूसरा सिकन्दर लोदी ने भैददेव के शासनकाल में किया। इसके बाद तीसरा आक्रमण पुनः सिकन्दर ने भैददेव के उत्तराधिकारी सालिवाहन के शासनकाल में किया। पिछले दो आक्रमणों में लोदी सेना बान्धवगढ़ क्षेत्र में घुस गई किन्तु भौगोलिक कठिनाइयों के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा। नरहरि बघेल के समय उचेहरा के परिहारों के शासनान्तर्गत रीवा जिले के परगने तो समाप्त

हो गये। किन्तु सोन की सहायक महानदी घाटी मे अव भी उनका दवदवा शेप था। इसीलिए उचेहरा के राजा को मालवा की सेना की चिन्ता हुई और वे महमूद खिलजी के आने पर अपनी सीमाओं की सुरक्षा के लिए वान्धवगढ़ क्षेत्र चले आये। इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी विचारणीय हे कि वघेल तो जौनपुर के शर्की सुलतानो के करद थे। किन्तु परिहारो का उनके साथ सम्वन्ध अनिश्चित है। उचेहरा के आस-पास जौनपुर के सुलतान महमूद शाह शर्की के सिक्के काफी सख्या मे मिले है। इन सिक्को पर सुलतान महमूद शाह इव्न इव्राहीम शाह 870 हिजरी सवत् अकित है। इन सिक्को मे सिद्ध होता है कि उचेहरा राज्य इस समय अवश्य ही जौनपुर के प्रभाव मे था। ऐसी परिस्थिति मे जव मालवा सुलतान सेना सहित उनकी सीमा पर उपस्थित हो गया, तव परिहार राजा को उसके प्रति शंका होना स्वाभाविक ही है। उचेहरा के राजा ने जो व्यवहार मालवा सुलतान के साथ किया वह वघेलो के सहयोग मे भी हो सकता हे। ये दोनो ही राजा यह न समझ सके होगे कि महमूद खिलजी हाथियो की खोज मे आया था। वघेलो अथवा परिहारो के राज्य लेने की उसकी कोई इच्छा न थी।

विक्रमाजीत - भरों के शासक

राजा किसुनदास के उत्तराधिकारी विक्रमाजीत हुए। कोटरा वशावली के वे अन्तिम शासक थे। अन्य वशावलियो मे वे गहोरा के राजा भैदचन्द्र के समकालीन माने गये है। इसके समय मे जौनपुर के सुलतानो के प्रतिद्वन्दी दिल्ली के लोदी सुलतान थे। वहलोल लोदी की आंख जौनपुर पर लगी हुई थी और वह शर्की सल्तनत को समाप्त करना चाहता था। उसके रास्ते की सबसे वड़ी वाधा गहोरा का वघेल राज्य था। राजधानी गहोरा के आस-पास कोई गढ़ी न थी और वान्धवगढ़, कैमूर के पार वहुत दूरी पर सोन-महानदी घाटी मे था। सभवतः इस अभाव को वघेलो ने अनुभव करके परिहार राजा विक्रमाजीत की गढ़ी 'नरो' को घेर कर जीत लिया। इस युद्ध का वर्णन गहोरा के ऐतिहासिक काव्य 'वीरभानूदय' मे माधव कवि ने किया है। किन्तु इस घटना को भैदचन्द्र के पौत्र वीरसिंह से सम्वन्धित वताया गया है। इसका कारण यह हो सकता है कि इस समय भैद वृद्ध थे और पुत्र शालिवाहन योग्य न थे। अतः सेनापति का कार्य नवयुवक वीरसिंह के कन्धो पर था। किम्वदन्ती है कि रामपुर वघेलान के पास 'वाधा' से वघेली सेना ने प्रस्थान किया और नरो पहाड़ी से पाच किलोमीटर की दूरी पर स्थित ग्राम सोनौरा से गढ़ी पर आक्रमण हुआ। गढ़ी लेने के वाद वीरसिंह कुछ दिनो तक वहा विश्राम करते रहे और दक्षिण आते-आते ठहरते रहे। इससे अधिक परिहारो का उल्लेख वघेलो के यहा नहीं मिला। इसके चार सौ वर्ष वाद महाराजा रघुराजसिंह ने अपने एक साहित्यिक ग्रथ 'आनन्दाम्वुनिधि' मे दी गई वघेल वंशावली मे उल्लेख किया है कि वीरसिंह ने लाड़िल परिहार से नरो की गढ़ी छीन ली। लाड़िल विक्रमाजीत का ही घरेलू नाम था। परिहारो के यहाँ भी विक्रमाजीत का नाम मात्र वशावली मे अकित हुआ है।

नरो राजधानी

नरो की गढ़ी प्राचीन है। यहा से तेरहवी शताव्दी तक के शिलालेख प्राप्त हुए हैं। जनश्रुति के अनुसार यह गढ़ी वीरराजदेव ने तेली राजा धारा सिंह से विजित की थी। किन्तु वीरराजदेव मे सवत् 1412 के कारीतलाई अभिलेख[303] मे 'उचहड़ानगर' अकित होने से यह स्पष्ट है कि वीरराजदेव की राजधानी उचेहरा ही थी। शिहाव हकीम ने अपनी पुस्तक मआसिरे महमूदशाही मे 1444 ई० मे वान्धवगढ़ के नरहरि वघेल के साथ राजा उचेहरा का भी उल्लेख किया है। किन्तु उसका नामोल्लेख नही किया। वंशानुक्रम के अनुसार नरहरि वघेल वल्लारदेव के पौत्र वीरमदेव

---

303 कनिंघम, आ०स०रि०, खण्ड 9, फलक 2, 3

का पुत्र है और वल्लारदेव अपने शिलालेख (1360 ई०) की तिथि के अनुसार वीरराजदेव का समकालीन ठहरता है। अतः नरहरि का समकालीन परिहार राजा किसुनदास ही हुआ। इसप्रकार प्रतीत होता है कि किसुनदास के समय तक राजधानी उचेहरा ही थी और यदि यह अनुमान किया जाय कि उचेहरा छोड़कर वे नरो या कोटरा चले गये तव भी उचेहरा के राजा कहलाते रहे।

वंशावलियों में उल्लिखित नाम भ्रम उत्पन्न करने हैं। इनकी छान-वीन करने से ऐसा आभास होता हैं कि चौदहवीं शताव्दी ई० के अन्तिम चरण में जव गहोरा के वघेलों ने महत्त्व प्राप्त किया और प्रथम वघेल राजा वल्लारदेव के पौत्र वीरमदेव ने 'उपरिहार' अपने आधीन किया तव उचेहरा के वीरराजदेव परिहार के सुदूरवर्ती क्षेत्र, जो विन्ध्याचल तथा कैमूर के वीच आधुनिक सतना-रीवा जिले में शामिल है, परिहारों से छूटने लगे। ऐसा प्रतीत होता है कि राजा किसुनदास के समय भैदचन्द्र वघेल की सेना यहां आई होगी। यद्यपि उस समय का कोई उल्लेख नहीं मिलता तथापि अनुश्रुति है कि मैहर की गढ़ी भैददेव की वनवाई हुई है। इस समय व्यौहारी-उमरिया से मिला हुआ उचेहरा के दक्षिण का भाग राजा किशुनदास न वचा सके। अतः विवश होकर परिहारों को राजधानी उचेहरा छोड़कर मूल प्रदेश कोटरा को चला जाना पड़ा। किसी-किसी वंशावली में किशुनदास (किशुन साहि, किशोरपाल) उर्फ मझकर साहि अंकित मिलता है और इसी नाम के नीचे भोजराज लिखा है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दूसरी वंशावलियों के विक्रमादित्य जिनका नाम किशुनदास के वाद लिखा गया है, नरो के राजा नहीं, अपितु वन्धु-वांधव किलेदार थे। उन्होंने तथा उनके राजपूतों ने वीरता का प्रदर्शन किया किन्तु वे नरो न वचा सके। वंशावलियों में अंकित उनका तथा उनके उत्तराधिकारियों के तीन नामों में से एक भी नाम राजा का नहीं है। किशुनदास के वाद जव भोजराज आये तब उचेहरा नगर में परिहारी राज्य का अस्तित्व न था। खोहगढ़ में इस क्षेत्र के पुराने शासक तेलियों का और उचेहरा पर सन्यासियों (परिव्राजकों) का अधिकार था। सन्यासी भी इस भूभाग के प्राचीन शासक रह चुके थे और अव भी स्थान-स्थान पर उनके अड्डे थे। इन दोनों जातियों का अधिकार समाप्त करके भोजराज के समय में नये सिरे से राजधानी की व्यवस्था की गई।

नरो राजधानी पर वीरसिंह बघेला का आक्रमण

राजा वीरसिंह वघेलों में सवसे प्रतापी शासक हुआ है। वीरभानूदय काव्य के दूसरे सर्ग में उसकी युद्ध यात्रा का वर्णन है। उसके अवलोकन से ज्ञात होता है मानों इस समय राजा विक्रमादित्य परिहार की राजधानी नरो ही थी क्योंकि इस ग्रंथ में उचेहरा का उल्लेख नहीं मिलता। ग्रन्थकार माधव कवि का कथन है कि ''वीरसिंह ने दिग्विजय हेतु शुभ मुहूर्त में अपनी राजधानी गहोरा से दक्षिण की ओर सेना लेकर प्रस्थान किया और 'श्रीविक्रमादित्यपुर' की वृहद् तथा सम्पन्न राजधानी के पास आया। सिंह रूपी विक्रमादित्य गजरूपी शत्रुओं के समूह में कूद पड़े और योद्धाओं में अग्रणी परिहार जाति की उस समय ऐसी शोभा हुई जिस प्रकार से देवराज (इन्द्र) की शोभा देवताओं के झुरमुट में हुई थी। सवारों ने सवारों से तथा पैदलों ने पैदलों से और हाथी-नशीनों ने हाथी-नशीनों से युद्ध किया। यह युद्ध अत्यन्त भयंकर था। युद्ध के वाजों का नाद दोनों ओर से गंभीर हो रहा था और वाजों का यह शव्द वीरपुरुषों के हर्प को वढ़ाने वाला था। ऐसी गर्जना के समय, समुद्र जैसे शान्त प्रकृति के वीर भयभीत हो जाते हैं। किन्तु यहां योद्धा लोग कोई वैठे थे तो कोई स्थिर हो चुके थे और विक्रमादित्य की महती सेना में कोई रणभूमि रूपी सुख के आंगन में अपने शरीर का परित्याग कर चुके थे। श्रीवीरसिंह के वल और शौर्य ने श्री विक्रमादित्य की सेना को जीत लिया और अपनी सेना को दिग्विजयी देखकर वे स्वयं धनुष वाण लेकर रणभूमि में उतर पड़े। श्रीवीरसिंह के वल को मंथन करने के लिए श्री वीर विक्रमादित्य अपने हाथियों, घोड़ों तथा पैदलों से मानों ऐसे घिरे हुए थे जैसे साहसांङ्क। विक्रमादित्य रूपी सेना ने शत्रु की सेना

को ऐसा मथ डाला था जैसा कि राम ने निशाचरों की सेना का विध्वंस किया था। विक्रमादित्य ने अत्यन्त कुपित हो अपनी सेना को इतना उत्तेजित किया कि वह भूमिपाल विक्रम को जीत ले। गहोरा वालों के लिए नरो नगर में वाणिज्य के सम्पूर्ण पदार्थ विद्यमान थे। नगर के कोट का चक्र (घेरा) श्री वीरसिंह ने अत्यंत ऊंचा बनवाया जिससे नरोपुरी ऐसी प्रतीत होने लगी मानो साक्षात् उज्जयिनी अथवा माहिष्मती (महेश्वर) हो। वीरसिंह की वाटिकाएं अत्यन्त सुन्दर दिखाई दे रही थीं। वहां बावलियां और पुष्प-फलों की अधिकता थी (अब वे नरोपुरी के शासक बन गये थे)। यहां की पूजा शुद्धभाव संयुक्त थी और पृथ्वी खेतों से सम्पन्न थी। यहां की स्त्रियां पतिव्रत में आरुढ़ ऐसी थीं मानो जगतवासियों के मन को हरण कर लेंगी। मृग के समान नेत्रों वाली स्त्रियों के आभूषणों का शब्द रमणीक था। अपनी मंदगति के कारण वे मन को चुराती थीं। स्त्रियां अपने पति की आज्ञाकारिणी थीं, जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि मानों वे इन्द्र की पुरी में देव-वनिताएं हों। किन्हीं भवनों में कुछ स्त्रियां को अन्य स्त्रियां घेरे रहती थीं। श्री वीरसिंह के विशालधर्म में यह पुरी साक्षात् स्वर्ग के समान मालूम पड़ रही थी और उसकी जय जयकार शत्रु लोग भी कर रहे थे।

नरो से वीर सिंह गढ़ापति को जीतने चले तो उनके आगमन को सुनकर उसकी सेना भयभीत हो गई और गढ़ा का राजा गढ़ छोड़कर भाग गया। कुछ समय गढ़ा में व्यतीत कर नर्मदा नदी में स्नान के पश्चात् पुनः वीरसिंह नरोपुरी में आ गये। तत्पश्चात् बान्धव दुर्ग नारायण नाम के कुरु राजा से छीनकर कुरु जाति के दूसरे व्यक्ति को दे दिया और गढ़ में अपनी स्त्री, पुत्र तथा सेना सहित निवास करने लगे। शांति भंग करने वालों का दमन और अन्य कुरु लोगों को वीरसिंह के प्रधान साल्ह और अन्य योद्धाओं ने परास्त किया। अब बान्धवगढ़ से वीरसिंह गंगातट पर स्थित अलर्क (अरैल) नगर को गये। दिल्लीपुरी स्वामी से सन्धि हो गई जैसा कि उनके वंश में परम्परा से चला आ रहा था। वीरसिंह उन राजाओं का दमन करते थे जो उनके विरोधी थे और जो उनके पक्ष में थे उनका मान बढ़ाते थे। अब वीर सिंह ने रत्नपुरी के राजा को परास्त किया और इस प्रकार गढ़ा, रत्नपुर, सहजोर देश तथा समस्त परिहार राजाओं को जीतकर पुनः वे बान्धवदुर्ग चले गये। श्री वीरसिंह ने निज प्रताप के द्वारा राजाओं को जीता तो ऐसे अद्भुत कार्य को देखकर बब्बर (बाबर बादशाह) भी डर गया।[304]

बघेल काव्य के उक्त वर्णन से कई महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। उचेहरा के राजा अथवा राजा के भाई या किलेदार इस समय नरो में रहते थे। नरो व्यापार का अच्छा केन्द्र था और यहाँ की बस्ती भी बड़ी थी। इसके चारों ओर उद्यान और बावलियां थीं। दूसरी बात यह कि बघेल शत्रुओं की कृपि, सेना तथा योधाओं और स्वयं विक्रमादित्य की वीरता की प्रशंसा करते हैं। तीसरी बात यह है कि वहां से दक्षिण के आवागमन के लिए नरोगढ़ एक अच्छा विश्रामस्थल था और यहां से रतनपुर तथा गढ़ा के राजाओं के साथ-साथ वीरसिंहदेव ने 'डहार' के परिहार राजाओं को पराजित करने में सफलता प्राप्त की। इसी समय से ऊचेहरा के परिहारों के पूर्वकाल की समाप्ति समझनी चाहिए।

विवेच्यकाव्य में वर्णित निम्नांकित अंश उल्लेखनीय हैं –

ययाव वाचीमथ सयतोऽसौ रिपुव्रजोच्छेदन लब्धवर्णः ।
प्रापतदल्पेतरदर्थगाढ श्रीविक्रमादित्यपुरं च खड्गी ।।40।।
तं विक्रमादित्य नृपः प्रपेदे युद्धाय चोन्मत्तकरीन्द्रयूपः [थः] ।
योधाग्रणीभिः परिहारजातैर्वृतो मरुत्वानिव देनजातैः ।।41।।

---

304 माधव कृत वीरभानूदयकाव्य, रीवा दरबार द्वारा प्रकाशित, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ 1937, सर्ग 2, श्लो० 40-67.

अथाश्ववारा ययुरश्ववारान् पदातयः पत्त [त्ति] गणान्निहन्तुम ।
आधोरणा हस्तिपकान्निजघ्नुर्यद्धं वभूवेत्थमतीव धोरम ।।42।।
ढक्का जगर्जेर्मियतो गभीरं भृशं युयुत्सून्प्रतिदत्तहर्पाः ।
यथोदधिर्गजति · गोत्रमन्थो यथाऽम्बुदोधीरमवीरभीति ।।43।।
तिष्ठ स्थरोऽस्मीत्यभिधाय योधाः स्वानृरायमापुर्मृध विक्रमेण ।
नृपाः [पात्कृ] कृतानन्त सुखाद्रणग्रेन्यत्त्वा तनुं केचिदवापुरीशम् ।।44।।
श्रीवीरसिंहस्य वलेन शौर्यात् श्रीविक्रमादित्य चूर्वि जिग्ये ।
जितां स्वसेनां महतीं विलोक्य स्वयं जगामाथ रणाय धन्वी ।।45।।
श्रीवीरसिंहस्य वलं ममन्थ श्री विक्रमादित्य नृपस्तरस्वी ।
गजैर्हयैः पत्तिभिरावृतोऽसौ स साहसाङ्कः किमु भूय आसीत् ।।46।।
प्रमथ्यमाना युयुधेऽस्य सेना सा विक्रमार्केण निराकुलेन ।
रामस्य सेनेव निशाचरेण मायाविना शास्त्रविदा विदीर्णा ।।47।।
तथाविधां स्वां स समीक्ष्य सेनां श्री विक्रमादित्यमियाय कोपात् ।
तस्यायतं शौर्य विधिं विधूय जिगाय तं विक्रम भूमिपालम् ।।48।।
ततो गहोरामिव देशयुक्तां जितां पुरं चैत्य नरोऽभिधानाम् ।
स भासयाभास वनि [णि] क्पथेन मनोरमां सर्वपदार्थभाजाम् ।।49।।
या कोट्टचक्रेण चकास्ति दीर्घा श्रीवीरसिंहेन विधायितेन ।
यक्षाधिराजस्य पुरीव पुराया माहिष्मती वोज्जयिनीपुरीव ।।50।।
या भ्राजते वाटिकया नृपस्य वापीयुजाः पुष्पफलप्रवृद्धया ।
मातेव शुद्धप्रजया पवित्रा धरा सुराणां सरितेव साध्या [सांध्या] ।।51।।
पतिव्रताभिर्निलया यदीया देदीप्यमाना जगतो हरन्ति ।
चेतांसि सर्वेऽपि गृहा न ताभिर्विना भुजङ्गैरिव सङ्गभाजः ।।52।।
यदीय हट्टो मृगलोचनानां मञ्जीर झंकार रवेणरम्यः ।
जेहीयते मन्दगतिप्रसूनां लोकस्य हृदृस्य [दृश्य] विशेषकाणाम् ।।53।।
यत्रोष्यते कान्तकथैर्विदग्धैर्जनैर्नृपाज्ञाद्रविणैः प्रकृष्टैः ।
इन्द्रस्यपुर्यामिव देव वृन्दैरधर्मवैमुख्य विरोचमानैः ।।54।।
परम्पराभिः परितः परीता प्रासादजातस्य विराजते या ।
साक्षादिव स्वः समुपेतमस्यां श्रीवीरसिंहस्य विशालधर्मैः ।।55।।
तस्यां जयन् स प्रतिपक्षहन्तारराज राजा रचितप्रमोदः ।
गढ़ापतिं जेतुमगाद्य वीरः सेनावृतः शक्र इवाद्रिवर्गम् ।।56।।
नये नगर्यामुषितं नृपेण यावन्न यज्ञेन जगर्ज तावत् ।

गढ़ापतिस्तस्य पुनः प्रयागं श्रुत्वा दिशः सेवितवान् सभीतः ।।57।।
पत्नी गढ़ायाश्च पलायमाने कृत्वा यश [:] पुञ्जमदभ्रकीर्ति ।
कालं कियन्तं किल नर्मदायां स्नात्वा जगाम स्वनरो पुरीं सः ।।58।।
श्रीवान्धवाख्यं सततृश्चदुर्ग जग्राह भेदेन विनीतविश्वः ।
नारायणाख्यान्नृपतेः कुरूणां वितीर्णदेशः परकीरवाया ।।59।।

उसने पहले दक्षिण की ओर प्रयाण किया और विक्रमादित्य के महान और समृद्ध नगर पहुँचा ।। 40 ।।

वह हाथियों और परिहार सैनिकों से युक्त अपनी विशाल सेना के साथ उससे मिलने आया ।। 41 ।।

एक भयंकर युद्ध हुआ ।। 42 ।।

युद्ध का कोलाहल भयानक था। किन्तु यह उसके सैनिकों के लिए उत्साहवर्द्धक था ।। 43 ।।

सैनिकों ने वीरतापूर्वक युद्ध किया ।। 44 ।।

इस विक्रमादित्य ने अपने प्राचीन नामवाले शासक के समान युद्ध किया ।। 45 ।।

लेकिन वह पराजित हुआ ।। 48 ।।

व्यापार से समृद्ध उसकी राजधानी नरो जीत ली गई ।। 49 ।।

जब वीरसिंह ने इसकी किलेबन्दी की तब यह उद्यानों और सरावरों से युक्त उज्जैन अथवा महेश्वर के समान प्रतीत होती थी ।। 50 ।।

इस नगर की स्त्रियां अपने शील के लिए प्रसिद्ध थी ।। 52 ।।

नगर में अनेक योग्य अधिकारी थे, जो अपने स्वामी की आज्ञाओं को कानून के समान मानते थे ।। 54 ।।

वीरसिंह ने इस नगर को पृथ्वी पर स्वर्ग के समान बना दिया ।। 55 ।।

तब वीरसिंह ने गढ़ा के अधिपति को जीतने के लिए प्रयाण किया ।। 56 ।।

जब वीरसिंह नरो में था, तब गढ़ाधिपति शेखी बघार रहा था, लेकिन जब उसने वीरसिंह का प्रयाण सुना, तब अपनी राजधानी छोड़कर भाग गया ।। 57 ।।

नर्मदा नदी के तट पर कुछ समय रुकने के पश्चात् वह नरोनगर वापस आ गया ।। 58 ।।

तब कूटनीति से उसने बान्धवगढ़ नारायण नामक कुरु राजा से छीन लिया और उसे एक अन्य कुरु शासक को दे दिया ।। 59 ।।

अनुश्रुति है कि बघेलराजा भैधदेव ने मैहर की गढ़ी बनवाई थी। इससे प्रकट होता है कि बघेलों ने उचेहरा छोड़कर मैहर और उसका समीपवर्ती इलाका अपने अधिकार में ले लिया था। नरो की गढ़ी वे पहले ही ले चुके थे। "बरमै" का क्षेत्र अब भी खाली पड़ा था और किसी परिहार शासक की बाट जोह रहा था।

ब्यारमा घाटी के परिहार

इस समय ब्यारमा क्षेत्र के परिहार भी शान्ति से न बैठ पाये होंगे। उचेहरा के राजा

वीरराजदेव के वाद अर्द्ध शताव्दी में ही दिल्ली में होने वाली उथल-पुथल में 'दमोवा देश' कैसे अप्रभावित रह सकता था। तुगलक वंश के पतन के समय ही 1398 ई० में समरकन्द के अमीर तैमूर ने दिल्ली पर आक्रमण किया। उसके हत्याकाण्ड से भयभीत जनता दिल्ली छोड़कर सुरक्षित स्थानों में भाग गई। मुहम्मद विन तुगलक के उत्तराधिकारी फिरोजशाह के कमजोर प्रशासन और वृद्धावस्था से लाभ उठाकर गुजरात, मालवा, जौनपुर इत्यादि के राज्यपाल पहले ही से स्वतन्त्रता का उपभोग कर रहे थे। दिल्ली पतन के वाद जव वहाँ का सुलतान महमूद तुगलक स्वयं सुरक्षित स्थान ढूंढ़ रहा था तव एक के वाद एक प्रान्त स्वतन्त्र होने लगे। मालवा का हाकिम दिलावर खाँ यहाँ का प्रथम सुल्तान है, जो धार से चन्देरी तक शासन करता था। उसके दो पुत्रों का उल्लेख मिलता है। प्रथम अलपखां, जो दिलावर खां के पश्चात् गद्दी पर वैठा। द्वितीय कद्र खां जो चन्देरी का मकतेअ (राज्यपाल) था। उसने 'खाने आजम खाकाने मुअज्ज़म' की उपाधियां धारण की थी। पन्द्रहवी शताब्दी के शिलालेखों तथा जैन प्रशस्तियों में इस उपाधि का अपभ्रंश 'महाखान भोजखान' लिखने का चलन हो गया था। चन्देरी के एक ओर कालपी में मलिकजादा वंश के तुर्क राज्य करते थे। दूसरी ओर जवलपुर के पास 'गढ़ा' में राजगोड़ों के एक नये वंश की स्थापना हुई थी। चन्देरी के राज्यपाल का क्षेत्र शिवपुरी-देवगढ़ से लेकर दक्षिण में केन के उद्गम तक फैला हुआ था। सौ वर्ष उपरान्त वीरसिंह वघेला का समकालीन गोंड राजा आम्हणदास उर्फ संग्राम साह (1503-33 ई०) वड़ा वीर, प्रतापी और साहसी हुआ जिसके वावन गढ़ों में सिंगोरगढ़, मणियादो, हटा वगैरह के गढ़ गिनाये जाते हैं। मालवा के सुलतान महमूद खिलजी (1436-69 ई०) के वान्धवगढ़ आने का वृत्तान्त पहले दिया जा चुका है। इस सुलतान के शासनकाल के प्रारम्भ में ही उपराज्यपाल का मुख्यालय वटिहागढ़ से हटाकर दमोह लाया गया (1436 ई०) जो व्यारमा घाटी के मध्य में स्थित है। महमूद खिलजी के उत्तराधिकारी गयासशाह (1469-1500 ई०) और उसके उत्तराधिकारियों के अनेक शिलालेख इस क्षेत्र में पाये गये हैं जिनमें शाहे मालवा को 'राजाधिराज' अथवा 'महाराजाधिराज' कहा गया है।

सोनार-व्यारमा के संगम के पास गैसावाद (गयासावाद) की स्थिति से स्पष्ट होता है कि मालवा सुलतान ग्यासशाह का प्रभाव केन नदी की दिशा में वढ़ रहा था। यह स्थान इसी सुलतान के नाम पर वसाया गया प्रतीत होता है। सिंगोरगढ़ के दक्षिण गढ़ा के आम्हणदास अपने पिता से लड़कर गहोरा के वीरसिंह की शरण में चले गये। कालान्तर में अपने पिता को मार कर आम्हणदास ने सिंहासन पर अधिकार कर लिया। इस सूचना के प्राप्त होते ही वीरसिंह क्रुद्ध हो गये और पितृ हन्ता को दण्डित करने के लिए राजधानी से निकले। किन्तु आम्हणदास भयभीत होकर पलायन कर गये। दूसरी वार वीरसिंह जव रतनपुर (जिला विलासपुर) के कलचुरि शासक पर आक्रमण कर रहे थे तव वापसी में गढ़ा के शासक ने उनसे लोहा किया। वीरभानूदय काव्य में उल्लेख मिलता है –

जिता गढ़ा रत्न पुरेण साकं जिता डहारः सहजोर देशः।
जिताश्च सर्वे परिहार राजाः श्री वान्धवख्यं जगृहे च दुर्गम्।।

''गढ़ा, रत्नपुर, डहार और सहजोर देश को जीत लिया और समस्त परिहार राजाओं को भी जीत लिया - श्री वान्धव दुर्ग को आधीन कर लिया।'' यहां पर परिहार जाति के समस्त राजाओं का उल्लेख, 'गढ़ा' (जवलपुर) डहार-सहजोर देश तथा वान्धवदुर्ग के साथ हुआ है, जिससे स्पष्ट है कि दमोह-जवलपुर के परिहार राजाओं के छोटे-छोटे राज्य होंगे और वे गोंड राजा के सहयोगी न भी रहे हों फिर भी वीरसिंह द्वारा उचेहरा पर आक्रमण तथा नरों गढ़ी वघेलों के अधिकार में चले जाने को परिहार भूले न होंगे।

सुलतान गयास खिलजी के उत्तराधिकारी नसीरशाह (1500-1511 ई०) तथा उसके पुत्र

महमूद द्वितीय (1511- ई०) के शासन में माण्डवगढ़ की सल्तनत का पतन हो गया। राजधानी में राजपूतों का प्रभाव इतना बढ़ा कि सुल्तान महमूद द्वितीय को गुजरात के सुलतान से सहायता लेनी पड़ी। किन्तु अपनी अयोग्यता के कारण महमूद चित्तौड़ के राणा संग्राम सिंह द्वारा बन्दी बना लिया गया और उत्तरी मालवा में चन्देरी तथा रायसेन के दो राजपूत राज्य स्थापित हो गये। चन्देरी के पूर्व और कालपी देश भी बहलोल लोदी ने दिल्ली सल्तनत में मिला लिया था। इसलिए दमोह के परिहारों की दृष्टि में वीरसिंह बघेला (1501-31 ई०) ही एक मात्र ऐसा शक्तिशाली शासक था जिसकी अधीनता स्वीकार कर वे अपना अस्तित्व बनाये रख सकते थे। आम्हणदास पितृहन्ता होते हुए भी होनहार था। शीघ्र ही उसने सिंगोरगढ़, दमोह, मड़ियादो तथा हटा अर्थात् सम्पूर्ण 'दमोवा देश' पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया और उसके बाद उसके उत्तराधिकारी दलपतशाह (1540 ई०) ने सिंगारगढ़ को अपना निवास स्थान नियत किया। अब इस क्षेत्र के परिहार पूर्ण रूप से गढ़ा के राजगोंड़ों के प्रभाव में थे।

उचेहरा के परिहार-उत्तरकाल

पन्द्रहवीं शताब्दी ईसवी में उत्तर भारत के लोदी-शर्की संघर्ष का उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। गहोरा की बघेली सत्ता के उत्कर्षकाल में वीरराजदेव परिहार द्वारा स्थापित उचेहरा के प्रथम राज्य में से कैमूर से उत्तर का भाग परिहारों के हाथों से निकल गया। अब नरो गढ़ी के छूट जाने के बाद और परिहारों के उचेहरा चले जाने पर और जाने के बाद तैलप के वंशज उचेहरा के पास खोह में अपनी तेलियागढ़ नामक गढ़ी में रह रहे थे।[305] वीरराजदेव ने पहले-पहल उचेहरा तथा नरो की गढ़ी इन्हीं तेलियों से जीती थी। तत्पश्चात् विक्रमादित्य के शासन काल में नरो की गढ़ी राजा भैदचन्द्र बघेला के पौत्र वीरसिंह ने जीत ली।

आठवी शताब्दी ईसवीं से उत्तर भारत में राजपूत जातियों का वर्चस्व स्थापित हुआ। हिन्दू राजनीति के अनुसार राज्य करने का अधिकार क्षत्रियों का था। परन्तु आपसी फूट और तुर्कों के आक्रमणों के कारण राजपूतों के शक्तिहीन हो जाने पर अन्य स्थानीय जातियों ने परिस्थितियों का लाभ उठाकर अपने-अपने स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिए। राजस्थान में भीलों तथा मीनो ने तथा गंगा-यमुना घाटी में भरों द्वारा स्थापित राज्य इसी प्रकार के थे। चंदेलों से कालिजर छूटने के बाद भर जाति के लोग ही वहां उनके माण्डलिक बन गये। गुजरात से आने वाले बघेल उनके यहां रहे। इसी प्रकार बुन्देलों से पहले गढ़ कुण्डार के शासक खंगार थे। बघेलो ने गहोरा लोधी या लोधा जाति से और बान्धवगढ़ कमर जाति को अधीन बनाकर प्राप्त किया था।

विक्रमादित्य से राज्य छूटने तथा भोजराज के राजा बनने का वृत्तान्त अज्ञात है। राजपुरोहित वंशावली में प्राप्त विवरण इस प्रकार है –

"बरमै मा रहे राजा भोजराज, करन जू, प्रतापरुद्र, नरिन्द्र, भारतसाहि, पृथ्वीराज" इत्यादि, राजा बलभद्रसिंह (1818-1831 ई०) तक। इस उल्लेख से ज्ञात होता है कि यह लेख उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल का है। इससे पुरानी कोई वंशावली उचेहरा में प्राप्त नहीं हुई। एक और पद्यबद्ध वंशावली कविराज प्रभाकर की है जो राजा यादवेन्द्र सिंह (1874-1922 ई०) के समय 1890 ई० में प्रकाशित हुई थी।

इस वंशावली में भी प्रायः वे ही नाम हैं जो सोलहवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी में विन्ध्यप्रदेश राज्य के विलीनीकरण तक (1948 ई०) राज्य करते रहे। कविराज वंशावली की कुछ पंक्तियां इस प्रकार है –

---

305 तेलियागढ़ के खण्डहर अद्यावधि विद्यमान है।

ये नृप के नहि सम्मत भाखे ।
नहिं पाये ताते नहिं राखे ।।
अव सम्मत जिनके पुस्तक सौ ।
पाये ते अव कहों ठिक तव सौ ।। पृष्ठ 23

X X X X

अव इह जिह विधि
नागवद, नगर उचेहरा माह ।
भये जिते नृप सहसमत,
तिन कहों सउछाह ।। पृष्ठ 24

दोहा

तपत नृपति के नंद हुव अवनी को भरतार ।
ताही लै यह राज कौ सम्मत कहौं उचार ।।
भयो नृपति ससि व्योम श्रुति सीसहि मै जुगराज । संवत् 1401
धारासिंह तिंहको तनै भयौ औनि सिरताज ।। पृ० 25

X X X X

सुरपुर गो जय अवनिपति धारासिंह मुरेस ।
किसुनदास राजा भयो तिहि को सम्मत वेस ।।
चउदह शत तेइस मै वैठ्यो जुकि गद्दीह ।
चउदा सै सत्तावनै लिय सुरपुर हद्दीह ।।
भयो विक्रमादित्य नरेसा ।
पच्चासी लग्ते सुरवेसा ।।

इसके पश्चात् राजकवि ने भारथसिंह (पन्द्रा सौ चार), गुरुपाल (पद्रा सौ वाइस), सूरजमल्ल (पन्द्रा मौ अड़तालीस) – ये तीन नाम लिखने पर भोजमणि राजा (पन्द्रा सौ अस्सी) का उल्लेख किया गया है और आगे के नाम-राजाओं तथा उवारीदारों के वे ही हैं जो अन्य वंशावलियों में मिलते हैं। केवल तीन नाम विक्रमादित्य तथा भोजराज के वीच के ऐसे हैं जो गजपुरोहित वंशावली में नहीं है और उरदना की एक वंशावली में विक्रमादित्य का उत्तराधिकारी 'वैचन्द साहि' को अंकित किया है।

गजकवि की इस वंशावली में राजा जुगराज का संवत् 1401 वतलाया गया है और यही संवत उचेहरा राज्य की स्थापना का संवत् माना जाता है। 1401 संवत् में राजकवि का जुगराज वीरराज का पुत्र है। गजकवि ने वीरगज का उल्लेख नहीं किया। कनिंघम ने भी 1401 संवत् का वर्णन किया है और यही संवत् नौगांव एजेन्सी को दी गई वंशावली का आधार है जो मुंशी श्यामलाल देहलवी ने अपने उर्दू भाषा में लिखित ग्रंथ तारीख-ए-बुन्देलखण्ड में उद्धृत किया है। वास्तव में 1401 का यह संवत् उचेहरा राज्य की स्थापना का नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह संवत् अनुमान पर आधारित है। एक वार कल्पना पर आधारित इस तिथि को स्वीकार कर लेने पर किसी ने भी इसकी सत्यता की छानबीन नहीं की। यही कारण है कि कनिंघम और

मुंशी श्यामलाल ने इसी संवत् को स्वीकार कर लिया है। किन्तु गंज मे प्राप्त वीरराजकालीन सती लेख में 1397 वि०सं० में उसे शासन करते हुए बताया गया है। इतना ही नहीं राजकवि की वंशावली में वीरराज का नाम पूर्णरूपेण छोड़ दिया गया है। इस प्रकार वि०सं० 1401 में उचेहरा राज्य की स्थापना पूर्णतया भ्रामक है। प्राचीन राजाओं की तिथियों को ज्ञातकर लिखना उनके पहुंच के बाहर था। अतः एकमात्र 1401 संवत् की ज्ञात तिथि को उन्होंने जुगराज से जोड़कर अपने कार्य की इतिश्री मान ली। इसीलिए परवर्ती पीढ़ियों की तिथियां अपने आप त्रुटिपूर्ण होती चली गई हैं।

कनिंघम को उचेहरा की वंशावली उपलब्ध नहीं थी। एजेन्सी वाली वंशावली उर्दू तारीख में ज्यों की त्यों उतार ली गई है और उसी को मुन्शी देवीप्रसाद ने अपने ग्रंथ 'परिहार वंश प्रकाश में उद्धृत किया है। कल्यानसिंह बडवा द्वारा सम्पादित वंशावली भी उपलब्ध है। किन्तु पूर्व उचेहराकाल की नामवलियां प्रत्येक वंशावलियों में भिन्न-भिन्न है। उचेहरा के राजा साहब के यहां से वंशावली पर प्राप्त एक टिप्पणी का भी यही हाल है।

वर्तमान उचेहरा के परिहारों में प्रचलित एक किम्वदन्ती के अनुसार उनके पूर्वज पवई होते हुए मऊ आये थे। इस समय इस शाखा के लोग कोटरा-वरमै क्षेत्र के शासक थे और उन्होंने गहोरा के बघेलों तथा गढ़ा के गोड़ों से अविजित उचेहरा के पुराने राज्य को अपने अधिकार में लेने का प्रयत्न किया था। इसमें वे सफल हुए। इस वंश में दो भाई थे। एक भोजराज जो राजपूतनी से उत्पन्न थे और दूसरे जीतसिंह जो अविवाहित स्त्री से थे। जीतसिंह आयु में बड़े थे। वे अधिक शक्तिशाली थे और परिहार राज्य के स्वामी बनना चाहते थे। पूर्व के परिहारों के समान इन परिहारों का मूल भी कोटर या कोटरा ही था[306] और विक्रमादित्य से नरो छूटने के समय से कोटरा राज्य के स्वामी थे। सौतेले भाइयों की गृहकलह ने उन्हें निर्बल बना रखा था। अग्रज जीतसिंह पिता के समय से ही राजकाज करते आ रहे थे। वंशावली-लेखक उचेहरा क्षेत्र को 'वरमै' कहते हैं। पाठा के ऊपर बरमै नाम का गांव भी है। कोटरा-वरमै क्षेत्र को मिलाकर एक ही राज्य कहलाता था। बरमै के उत्तर-दक्षिण का भाग बघेलो ने ले लिया था। बड़े भाई जीतसिंह के आतंक के कारण भोजराज कोटरा छोड़कर वरमै आ गये। "कोलाढ़-नागौध में राज किया और गढ़ी बनवाई। बटैया (श्यामनगर) पतवारे के भाई साथ आये। जीतसिंह से भय महसूस करते थे। जब तक कमलापति को खत्म नहीं किया जाता, वरमै के टूटे-फूटे राज्य की पुनर्स्थापना नहीं हो सकती थी। भाई बन्धुओं ने शिकार के बहाने जीतसिंह को बालाए पाठा 'पटिहट' की गढ़ी मे बुलाकर षडयन्त्र रचने की तैयारी की ताकि 'लखौरी' में सेनाओं को एकत्र कर उसे कोटरे पर अमल-दखल कर लिया जाय। इस योजना में जो परिहार अग्रगण्य थे उनके वंशज इस समय 'कचलोहा' में रहते हैं। कचलोहा से पहले ये लोग 'खेरवा टोला' तथा पतवार ग्राम के पवाईदार थे। इनके वंशज 'टीकर' व 'रेरुआ' ग्राम में भी रहते हैं। 'वरगाहो' भी इनके सहयोगी मे थे। भोजराज को बुलाकर 'बटैया' की गढ़ी में ठहराया गया। अंत मे पंचायत द्वारा झगडा तय हो गया। कोटरा कमलापति के लिए छोड़ दिया गया और भोजराज वरमै, कोलाढ़ और नागौद के राजा हुए। कहने का तात्पर्य यह कि जब जीतसिंह से कोटरा न लिया जा सका तब समझौता करके राज्य का बंटवारा कर लिया गया। कोटरा का यह राज्य कई पीढ़ियो तक चलता रहा। डेढ़ सौ वर्षों के उपरान्त रीवा नरेश अमरसिंह के पुत्र फतहसिंह को उचेहरा के राजा पृथ्वीराज ने अपना दामाद बनाकर बारह गांव सहित सोहावल दे दिया। उस समय सोहावल में परिव्राजक वंशी रामाधार राजा था। यह परिहारों से सबल था। फतेहसिंह ने परिव्राजकों से सोहावल ले लिया। परिव्राजक पंचमठा में रहने लगे। इसी समय कोटरा के शासक से चौथ मांगी गई। चौथ न देने पर कोटरा-नरेश कमलापति के पुत्र जीत सिंह को बेदखल कर दिया गया और कोटरा सोहावल राज्य का परगना बन गया। पन्ना नरेश छत्रसाल के शासनकाल में बुन्देले इस क्षेत्र में शक्तिमान

---

306. इसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है।

हुए। उन्होंने एक ओर मैहर-विजयराघवगढ़ तथा दूसरी ओर ककरेड़ी-विरसिंगपुर के क्षेत्र रीवा राज्य से जीत लिए। वीच में सोहावल राज्य का परगना कोटरा भी उनके अधिकार में चला गया। रियासतों के विलीनीकरण (1948 ई०) के समय तक कोटरा अजयगढ़ राज्य में शामिल रहा। अव यह पन्ना जिले की पवई तहसील का भाग है।

भोजराज को अपनी राजधानी के लिए अव भी एक उपयुक्त स्थान की आवश्यकता थी। विक्रमादित्य की राजधानी नरो थी। उचेहरा की गढ़ी पर परिव्राजकों का अधिकार हो गया था। उचेहरा से पांच किलोमीटर की दूरी पर स्थित खोह की गढ़ी तेलियों के अधीन थी। उपर्युक्त दोनों जातियों ने कभी इस भू-भाग पर शासन किया था। गुप्तकाल में इस क्षेत्र के दो राज्यों-परिव्राजक और उच्चकल्प में से एक परिव्राजक (सन्यासी) महाराजों का राज्य था, जिनके अभिलेख खोह, सोहावल और भूमरा से प्राप्त हुए है। तत्कालीन मूर्तियों और मंदिरों के अवशेष अद्यावधि इस क्षेत्र में विद्यमान है। तेली दुर्जनपुर (अव सज्जनपुर) के भूस्वामी थे। कोटरा के वीरराजदेव परिहार ने इन्हीं से चौदहवीं शताब्दी में नरो की गढ़ी जीती थी। अव अनुकूल अवसर पाकर उन्होंने भी अपनी खोई प्रतिष्ठा प्राप्त करने की कोशिश की होगी। उन्होंने तेलियागढ़ नाम से विख्यात खोह की गढ़ी पर अधिकार कर लिया। उनके कामदार अर्थात् व्यवस्थापक (मंत्री) दुवे ब्राह्मण थे। किसी उत्सव पर जव तेली लोग शराव के नशे में मस्त थे, तव परिहारों ने दुवे ब्राह्मणों को अपनी ओर मिलाकर गढ़ी पर आक्रमण कर उसे हस्तगत कर लिया। तेली गढ़ी से निष्कासित कर दिये गये। तेली का नाम 'धार' वताया गया है। यह स्पष्ट नहीं है कि धार या धारा सिंह नाम का तेली इसी समय था अथवा वीरराज परिहार के समय नरो का स्वामी था। पतवार के (परिहार) भाइयों ने खोहगढ़ लेने में सहायता की थी।

भोजराज के सम्वन्ध में वंशावलियों में दो संवत् मिलते है। संवत् 1535 (1478 ई०) तो अनेक वंशावलियों में दिया हुआ है। किन्तु राजपुरोहितवाली वंशावली में 1548 तिथि का उल्लेख किया गया है। यदि इस संवत् को परिहारों द्वारा उचेहरा को अधिकृत करने का वर्ष स्वीकार किया जाय, तो संन्यासी (परिव्राजक) इसी समय उचेहरा से सोहावल गये होंगे। गहोरा में इस समय भैदचन्द्र वघेला का शासन था। भोजराज ने वरुआ नाले के पश्चिम सन्यासियों के स्थान पर अपनी गढ़ी वनाई। भोजराज के समय की एक वावली और एक सरोवर अव भी विद्यमान है। सरोवर के किनारे सूफी फकीरशाह ताज महावली का तकिया है। वि०सं० 1539/1482 ई० को भोजराज ने यहां के मुजाविर को एक ताम्रपत्र प्रदान किया था। यदि इस ताम्रपत्र में अंकित तिथि सही है तो वि०सं० 1535/1478 ई० भोजराज ने इस वर्ष खोह को विजित किया होगा और वि०सं० 1548/1491 ई० तक उचेहरा में अपना शासन स्थापित किया होगा। इस प्रकार वि०सं० 1535 से वि०सं० 1548 तक का भोजराज का तेरह वर्ष का समय खोहगढ़ अथवा वटैया की गढ़ी में वीता होगा।

वीरराजदेव की मृत्यु के पश्चात् उसके उत्तराधिकारी के नाम उपलब्ध नहीं होते। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि इस क्षेत्र से परिहारी सत्ता का अन्त हो गया। मालवा के इतिहासकार नरहरि वघेला के समकालीन परिहार राजा (किशुनदास) को उचेहरा का शासक वताते हैं। परिहार वंश की ज्येष्ठ शाखा पवई तहसील (पन्ना) के कोटरा क्षेत्र में रहती थी। उदाहरणार्थ मऊ से स्थानान्तरित होकर ही गजसिंह परिहार तथा वाघदेव ने सिंगोरगढ़ का राज्य स्थापित किया था और कोटरा से ही आकर वीरराजदेव ने उचेहरा को केन्द्र वनाकर अपनी शक्ति का विकास किया।

अध्याय 5

नागौद राज्य का भूगोल

भूतपूर्व नागौद राज्य की राजधानी नागौद, सतना जिला मुख्यालय से 16 मील की दूरी पर अमरन नदी के किनारे पर स्थित है। इसका क्षेत्रफल 501 वर्गमील है। उत्तर-दक्षिण में यह राज्य 30 मील लम्बा और पूर्व तथा पश्चिम में 25 मील चौड़ा है।

प्राकृतिक विभाग

नागौद राज्य कुछ प्राकृतिक विशेषताओं से युक्त है। इन विशेषताओं ने इसके इतिहास निर्माण में महत्पूर्ण योग किया है। भौगोलिक दृष्टि से यह दो भागों में विभक्त है – (1) दक्षिण-पश्चिमी भाग और (2) उत्तर-पूर्वी भाग। राज्य का दक्षिणी-पश्चिमी भाग पहाड़ी और जंगली है। इस क्षेत्र में प्रायः खेती नहीं होती। किन्तु उत्तर-पूर्वी भाग खेती के योग्य है। नदियों का ढाल उत्तर-पूर्व की ओर है। राज्य का सम्पूर्ण भाग विन्ध्याचल पठार के अन्तर्गत आता है।

जलवायु

नागौद राज्य की जलवायु गर्मतर है। वर्षा का औसत 35" से 40" तक है। ठण्ड में यहां अधिक ठण्डी और गर्मी में अधिक गर्मी पड़ती है।

वनस्पति और वन्यपशु

नागौद राज्य का सम्पूर्ण भाग प्राचीन काल में विन्ध्याटवी कहलाता था। सबसे पहले सम्राट अशोक के अभिलेखों में आटविक राज्यों का वर्णन मिलता है। यहां से प्राप्त गुप्त संवत् 199 और 209 में अंकित ताम्रपत्रों में परिव्राजक महाराज हस्ती को डभाल के साथ 18 आटविक राज्यों का शासक बताया गया है। कालान्तर में हर्ष का राजकवि बाण हर्षचरित तथा कादम्बरी में विन्ध्याटवी का रोचक वर्णन करता है। यहां पर धवा, सेजा, कहुआ, बांस और सागौन की लकड़ी बहुत पैदा होती है। खखुदन, तुकमलंगा, शिलाजीत (रामपुर, मैहर तहसील) आदि अनेक औषधियां भी पायीं जाती हैं। लाख, महुआ, शहद, चिरौंजी, कत्था, हर्रा, सांभर, सींग आदि भी यहां पर पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। इससे राज्य को पर्याप्त आमदनी होती थी। जंगली जानवरों में बाघ, तेंदुआ, रीछ, सुअर, सुनहा आदि यहां पाये जाते हैं। सुनहा मारने वाले को राज्य की ओर से इनाम दिया जाता था। हिरन, सांभर, रीछ, बन्दर तथा चीतल भी यहां पाये जाते हैं। ये वन्यपशु कृषि के लिए हानिकारक हैं।

पहाड़

कुशला –

यह पहाड़ उचेहरा के दक्षिण में राज्य का सबसे ऊंचा पहाड़ है। समुद्रतल मे इसकी ऊँचाई 2078 फीट है। इस पहाड़ में तांवा, लोहा, रामरज आदि खनिज पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

ढरकना –

चुनहा के समीप 1860 फीट ऊंचा यह पहाड़ देखने योग्य है। इस पर ट्रंगनामेटिकल सर्वे का मुनारा बना है।

बटुरी –

यह पहाड़ सुरदहा के समीप है। इस पर सघन वन है।

लेड़हरा –

यह पहाड़ नागौद उचेहरा मार्ग पर स्थित पिथौराबाद स्थान के समीप है।

लाल पहाड़ –

यह पहाड़ भरहुत ग्राम के समीप है। इसकी तलहटी पर एक प्रसिद्ध स्तूप था जिसे भरहुत स्तूप कहा जाता है। अब यह स्तूप पूर्णरूपेण नष्ट हो गया है। पहाड़ की ऊंचाई 1869 फीट है। पहाड की चोटी पर एक शिलाखण्ड पर कलचुरि संवत् 909 का एक शिलालेख उत्कीर्ण है।

सिन्दूरिया –

यह पहाड़ सतना-पतौरा मार्ग पर पतौरा के समीप स्थित है। पहाड़ के चारों ओर धौरा, मौहार तथा पतौरा ग्राम स्थित है। इसी पहाड़ पर पतियानदाई का प्रसिद्ध मंदिर स्थित है।

मामाभैने –

अमदरी के समीप है।

शंकरगढ़ –

नागौद-उचेहरा मार्ग पर गोबरांव नामक ग्राम है। इसी ग्राम में लगा हुआ शंकरगढ़ का पहाड़ है। इसकी ऊंचाई 1796 फीट है। पहाड़ की चोटी पर एक किला बना हुआ है।

भुरुहरा –

यह पहाड़ भूमरा के पास है। यहां पर भारशिवों का बनवाया हुआ हरगौरी का एक मंदिर था। अब यहां की मूर्तियां भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता में है। यहां का मंदिर अत्यन्त प्राचीन है।

कार्दमन –

कर्दमेश्वरनाथ का मंदिर इसी पहाड़ पर स्थित है।

झुरही मनमनियां -

यह पहाड़ परसमनियां के समीप स्थित है।

सम्हराटोंगा -

यह स्थान श्यामनगर के पास स्थित है।

भड़ेड़ -

यह पहाड़ पनिहाई से अमकुई तक श्रेणीबद्ध रूप में फैला हुआ है।

नागदमन -

इस पहाड़ पर एक प्राकृतिक जल स्रोत है, जो सदैव जल से पूर्ण रहता है। यहां के पत्थरों में नागों की मूर्तियां बनी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि गुप्त वंश और नागवंश के मध्य यहां पर एक भीषण युद्ध हुआ था। यह पहाड़ परसमनियां के दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित है। इसी के समीप स्थित आलोकी पहाड़ी है, जिसमें पर्याप्त मात्रा में इमारती लकड़ी उपलब्ध हैं।

छताई-दाई -

यह पहाड़ पटिहट के समीप छत्राकार रूप में विद्यमान है। यहां पर एक प्राचीन मंदिर है, जिसमें भगवान् विष्णु की प्रतिमा विराजमान है।

राजा-बाबा -

यह पहाड़ परसमनियां के पास है। इसमें गेरु, रामरज और लोहा मिलता है। पहाड़ पर बांसों की कई जातियां मिलती हैं। यहां की सागौन की लकड़ी प्रसिद्ध है।

सन्यासी बाबा -

यह पहाड़ परसमनियां पठार के नाम से प्रसिद्ध है। यहां पर भाकुलदेव का एक मंदिर भाकुल सागर के पास स्थित है। इसे ही भूमरा का शिवमंदिर भी कहते हैं। मंदिर के गर्भगृह में एक शिवलिंग प्रतिष्ठित था, जो अब कारीमाटी ग्राम में स्थापित कर दिया गया है।

धरतिहा -

यह पहाड़ मौजा खाम्हा में स्थित है।

नदियां

टौंस -

इसका प्राचीन नाम तमसा है। वाल्मीकि रामायण से पता चलता है कि वनवास के प्रथम दिन राम तमसा नदी के तट पर पहुंचे थे। यह तमसा अवध क्षेत्र में स्थित थी। आगे चलने पर चित्रकूट जाने के लिए भी राम ने एक तमसा नदी को पार किया था। महाभारत और पुराणों में भी इस नदी का नाम मिलता है। यह नागौद राज्य की टौंस है। यह नदी मैहर तहसील की कैमूर पर्वतमाला पर स्थित तमसा कुण्ड से निकलती है और इलाहाबाद में गंगानदी में मिल जाती है। गंगा तथा तमसा नदियों के संगम पर ही वाल्मीकि का आश्रम था। सतना, कगरि, बरुवा और पनना, इसकी सहायक नदियां हैं। इस नदी के किनारे इचौल, पथरहटा, बरही, पोंडी, कैथा,

वड़खेरा, माधवगढ़, चाकघाट आदि स्थान स्थित हैं।

सतना –

सतना नदी का उद्गम अजयगढ़ के पहाड़ से है। सतना नगर का नामकरण इसी नदी के आधार पर हुआ है। यह नदी नागौद राज्य की उत्तरी सीमा वना कर टौंस में मिल जाती है। अमरन और वटैया इसकी सहायक नदियां हैं। वावूपुर वरकछी, कतकोन, उमरहट, महकोना, छींदा, हरदुवा, जिगनहट, तिघरा, वड़खेरा आदि ग्राम इसके किनारे स्थित हैं।

अमरन –

यह नदी विचवा-कुरेही के वीच दुदियासेहा नामक स्थान से निकलती है और कतकोनकलां के पास सतना नदी में मिल जाती है। कमरो और टेड़ा इसकी सहायक नदियां हैं। इसके किनारे झिंगोदर,कोटा, कोडर, वमुरहिया, दुवहियां, शहपुर, नागौद, विकरा, कचनार, गिंजार, वसुधा, कतकोन खुर्द नामक ग्राम स्थित हैं।

वरुवा –

यह नदी झुरही-मनमनियां पहाड़ से निकलती है। करही के समीप यह नदी टौंस में मिल जाती है। इसकी सहायक नदी का नाम वसहिया है। धनिया, मझगवां, खोह, उचेहरा, रगला, नरहठी, करही इसके तट पर स्थित हैं।

कमरो –

यह नदी कुरदरा के पहाड़ से निकलती है रहिकवारा और शहपुर के समीप अमरन में मिल जाती है। और उरटान इसके तट पर स्थित है।

करारी –

यह नदी महराजपुर के पहाड़ से निकलकर वड़खेरा के पास टौंस नदी में मिल जाती है। वसहा और सूखा इसकी सहायक नदियां हैं। वंदरहा, विहटा, गोवरांव, भरहटा, मतरी, दिनपुरा और भटनवारा ग्राम इसके तट पर स्थित हैं।

पतना –

यह नदी रामपुर के पहाड़ से निकलती है और इचौल के पास टौंस नदी में मिल जाती है। कुरकरा और रमपुरा ग्राम इसके तट पर स्थित है।

वटैया –

यह नदी महराजपुर के पहाड़ से निकलकर घोरहटी के पास सतना नदी में मिल जाती है। नन्दहा इसकी सहायक नदी है। इसके तट पर वटैया (श्यामनगर), तुर्कहा, खैरी, भिटारी और जाखी ग्राम स्थित है।

नन्दहा –

यह नदी महराजपुर के पहाड़ से निकलकर वटैया नदी में मिल जाती है। इसके तट पर नन्दहा और लखमद ग्राम स्थित हैं।

महानदी –

यह नदी शहपुरा के पास के निकलकर सोन नदी में मिल जाती है। जजराड़ इसकी सहायक नदी है। इसके किनारे पर धनवाही, पिपरा, हरदुआ और कोयलरी ग्राम स्थित हैं।

जजराड़ –

यह नदी जवलपुर जिला में निकलकर हरदुआ के पास महानदी में मिल जाती है। आमातारा, धर्मपुरा और हरदुआ इसके तट पर स्थित है।

स्वरगुवा –

यह नदी रामपुर के पास से निकल कर टौंस नदी में मिल जाती है। इचौल और कोठी इसके तट पर स्थित है।

टेढ़ा –

यह नदी ढरकना पहाड़ से निकलकर चंदकुआं के पास अमरन नदी में मिल जाती है। इसके तट पर राजापुर ग्राम स्थित है।

मगरैला –

यह नदी वटैया ग्राम के पास से निकलकर विकरा के पास अमरन नदी में मिल जाती है। कचलोहा ग्राम इसके तट पर स्थित है।

तहसीलें

नागौद राज्य में तीन तहसीलें थीं – (1) नागौद, (2) उचेहरा और (3) धनवाही। नागौद और उचेहरा तहसीलों में तहसीलदार तथा धनवाही तहसील में नायव तहसीलदार रहते थे। वर्त्तमान में यहां केवल एक तहसील है जिसका नाम नागौद है। इसमें नागौद और उचेहरा की पुरानी तहसीलें सम्मिलित कर दी गयी हैं। धनवाही का क्षेत्र अव मैहर तहसील में सम्मिलित कर दिया गया है।

थाना और चौकियां

पुलिस व्यवस्था का मुख्यालय नागौद में था। यहीं पर उसका सवसे वड़ा अधिकारी रहता था। इसके अन्तर्गत 7 थाना और 11 चौकियां थी। थानों के नाम इस प्रकार थे – (1) नागौद, (2) उचेहरा, (3) धनवाही, (4) सितपुरा, (5) अमकुई, (6) नन्दहा और (7) परसमनियां। चौकियों के नाम निम्नांकित थे –(1) वावूपुर, (2) तिघरा, (3) भटनवारा, (4) पटिहट, (5) गुढ़वा, (6) आमातारा, (7) मढ़ा, (8) हर्दुवा, (9) वरेठिया, (10) कतकोन और (11) रहिकवारा।

जंगल चौकियां –

वन विभाग का मुख्यालय उचेहरा में था। यहां फारेस्ट अफसर रहते थे। उसके अधीन दो गिरदवर और चौवीस चौकियां थीं। चौकियों के नाम इस प्रकार थे – नागौद, उचेहरा, स्टेशन उचेहरा, रहिकवारा, सुरदहा, गुढ़ा, भिंगोदर, अमकुई, कुरेही, टटियाझर, महराजपुर, परसमनियां, अमदरी, पाठा, रारघाट, पनिहाई, झुरखुल, वंदरहा, डुंडहा, श्यामनगर, मौहार, सितपुरा, पटिहट, भरहुन और खोखर्रा।

मालगुजारी

राज्य का एक तिहाई भाग पवाई और जागीरों में वंटा हुआ था। राज्य में कुल 401 मौजे थे। आवाद मौजों की संख्या 351 थी। इनमें से 158 मौजे उवारी, पवाई और माफी में थे। इसका क्षेत्रफल 175 वर्गमील था और मालगुजारी रु० 73, 000 = 00 थी। राज्य की खालसा मालगुजारी, जिसमें सभी कर शामिल थे रु० 241, 000 = 00 थी। राज्य की सम्पूर्ण आय लगभग रु० 400, 000 = 00 थी।

गढ़ियां

नागौद राज्य में 18 गढ़ियां थी। इनमें से अधिकांश गढ़ियां अव भी विद्यमान है। किन्तु उनकी अवस्था जर्जर है। इनके नाम इस प्रकार है – नागौद, शंकरगढ़, उचेहरा, सुरदहा, पतौरा, भटनवारा, पिपरोखर, उमरहट, कोड़र, जिगनहट, लौहरौरा, रगला, सेमरी, पिथौरावाद, रहिकवारा, रारघाट, श्यामनगर और महराजपुर।

पुस्तकालय

नागौद राज्य में दो पुस्तकालय थे – पहला नागौद में और दूसरा उचेहरा में। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

(1) नागौद –

इस पुस्तकालय का नाम श्री वरमेन्द्र पुस्तकालय है। इसमें पुस्तकालय के अतिरिक्त वाचनालय भी है। यहां पर विभिन्न विषयों की हिन्दी, संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी की 6500 पुस्तकें हैं। नागरिक घर ले जाकर भी इन पुस्तकों का अध्ययन कर सकते हैं। पुस्तकालय के सदस्यों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता।

(2) उचेहरा –

यहां के पुस्तकालय का नाम महाराजा श्री विजयदेव पुस्तकालय है। पुस्तकालय रामदेवालय में स्थित है। यहां प्राचीन मूर्तियां भी संग्रहीत हैं।

जेल तथा प्रेस

जेल और प्रेस नागौद में स्थित था। जेल आज भी नागौद में है। कैदियों से दरियां और कालीन वनावयीं जाती हैं। नागौद राज्य के छापाखाना का नाम वरमेन्द्र प्रेस था।

चिकित्सालय

राज्य में एलोपैथिक, आयुर्वैदिक और होम्योपैथिक तीन प्रकार की चिकित्सा की व्यवस्था रही है। इसका वर्णन निम्नांकित है –

एलोपैथिक

नागौद –

नागौद में एक अच्छा अस्पताल है जिसमें पुरुषों और महिलाओं दोनों की चिकित्सा की

व्यवस्था है। यहां पर असहाय और निर्धन मरीजों को निःशुल्क भोजन मिलता है।

उचेहरा –

यहां भी एक अस्पताल है। यहां महिलाओं और पुरुषों की चिकित्सा की अलग-अलग व्यवस्था नहीं है। महिला चिकित्सक की भी व्यवस्था है।

धनवाही –

अस्पताल में डाक्टर की व्यवस्था नहीं है। उसके स्थान पर एक वरिष्ठ कम्पाउण्डर काम करता है।

आयुर्वेदिक

नागौद –

अंग्रेजी अस्पताल के अतिरिक्त यहां पर देशी दवाओं का भी एक औषधालय है। यहां पर आयुर्वेदाचार्य व वैद्य विशारद चिकित्सा करते हैं।

होम्योपैथिक

नागौद –

यहां के नगर सेठ द्वारा होम्योपैथिक चिकित्सा के लिए एक अस्पताल चलाया जाता है। औषधि की व्यवस्था निःशुल्क है।

धर्मशाला

नागौद –

यहां की धर्मशाला का निर्माण सेठ भोलादीन चौधरी ने कराया था। धर्मशाला बहुत बड़ी है। इसके बाहरी भाग में दुकानें हैं और धर्मशाला के अन्दर मंदिर व वाटिका भी है।

उचेहरा –

यहां की धर्मशाला का निर्माण श्री रामनारायण चिकवा ने कराया था। यह मैहर रोड पर स्थित है।

भटनवारा –

भटनवारा की धर्मशाला का निर्माण सेठ रामदयाल अग्रवाल ने कराया था। धर्मशाला सतना-अमरपाटन मार्ग पर मोटर स्टैण्ड के समीप ही स्थित है। धर्मशाला में एक मंदिर और एक वाटिका भी है।

कैथा –

यहां की धर्मशाला सतना-अमरपाटन मार्ग पर टौंस नदी के किनारे स्थित है। ग्राम की बस्ती दूर होने के कारण यात्रियों को इस धर्मशाला से बड़ा आराम मिलता था।

रामपुर -

यहां की धर्मशाला श्री गुरु महाराज द्वारा वनवायी गयी थी। भण्डारा और वसन्त पंचमी के अवसर पर यहां अच्छा जमघट होता है।

कारीगरी

ऊनी कम्वल -

नागौद राज्य में ऊनी कम्वल वनाने का लघु उद्योग वहुत लोकप्रिय था। इसका निर्माण धनवाही, विहटा, नन्दहा, सितपुरा, शहपुर, रहिकवारा, अमकुई, कोड़र और मढ़ी में होता था।

गजी -

गजी का निमाण विहटा, नन्दहा, गढ़ी, उमरहट, कोटा, चुनहा, नवस्ता आदि ग्रामों में होता था।

खिलौने -

उचेहरा में लकड़ी के विविध प्रकार के खिलौने वहुत अच्छे वनते थे। यहां लाख का सामान भी अच्छा वनता था। खिलौने और लाख का सामान अव भी यहां वनता है।

उपर्युक्त वस्तुओं के अतिरिक्त उचेहरा में फूल (कांसा) के वर्तन, धनवाही और वंदरहा में देशी जूता तथा नागौद और उचेहरा में विविध प्रकार का फर्नीचर वनाया जाता था।

व्यापार

राज्य में सोना, चांदी, तांवा, पीतल, लोहा, नमक कपड़ा, गुढ़, शक्कर व मिट्टी का तेल वाहर से आता था। किराना का सामान भी वाहर से मंगाया जाता था। राज्य से गेहूँ, चना, अलसी, घी, खली, महुवा, खोवा, हर्रा, शहद, ऊन, चमड़ा, फूल के वर्तन, चूना, खैर, गेरू, रामरज, पत्थर, इमारती लकड़ी, सागौन, वांस और लकड़ी का कोयला वाहर भेजा जाता था।

आवागमन -

मध्य रेलवे की एक शाखा हावड़ा-वम्वई राज्य में होकर निकलती है। उचेहरा और लगरगवां राज्य में स्थित दो रेलवे स्टेशन हैं। रेल लाइन के अतिरिक्त राज्य में वहुत सी सड़कें हैं। प्रमुख सड़कें नागौद से सतना, पन्ना, उचेहरा, सिंहपुर, जसो और सुरदहा जाती है। इसीप्रकार उचेहरा से सतना, मैहर, नागौद और परसमनियां को भी अलग-अलग मार्ग जाते हैं। वर्तमान समय में नागौद से रीवा, जवलपुर, वांदा, खजुराहो, टीकमगढ़, ग्वालियर और भोपाल के लिए सीधी वस सेवा उपलव्ध है।

प्राचीन स्थल

भरहुत -

यह स्थान सतना-अमरपाटन मार्ग पर जिला मुख्यालय सतना से 14 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। मध्य रेलवे के लगरगवां स्टेशन से भी यहां पहुंचा जा सकता है। सतना-अमरपाटन मार्ग के भटनवारा और कैथा ग्राम से भी इसके लिए सुविधाजनक मार्ग है। प्राचीनकाल में भरहुत

विदिशा, माहिष्मती और उज्जैन होता हुआ एक महापथ राजगृह (विहार) से गोदावरी तट पर स्थित प्रतिष्ठान अथवा पैठन (आन्ध्र प्रदेश) तक जाता था। पहली शती ईसवीं के मिस्री भूगोलवेत्ता ने भरहुत का उल्लेख बरदाओतिस के रूप में किया है। स्थानीय लोगों का मत है कि भरहुत की स्थापना भर लोगों ने की थी। भरहुत के अन्य नाम वरदावती और भैरोंपुर भी थे।

भरहुत की विश्व व्यापी प्रसिद्धि यहां के स्तूप के कारण है। इसका निर्माण द्वितीय शती ईसा पूर्व में हुआ था। इस स्तूप की चौड़ाई 20.72 मीटर और इसका प्रदक्षिणापथ 3.5 मीटर चौड़ा था। भरहुत स्तूप के गर्भ में भगवान बुद्ध अथवा उनके किसी शिष्य के अवशेष रखे गये थे। इस महान स्तूप के अवशेषों का पता सबसे पहले 1873 ई० में कनिंघम ने लगाया था। उस समय स्तूप के दो द्वारतोरण और आन्तरिक वेदिका अपने स्थान पर विद्यमान थी। 1874 ई० में उसने अपनी द्वितीय यात्रा के समय अधिकांश वेदिका का जीर्णोद्वार कराया। यहां के अधिकांश अवशेष इस समय कलकत्ता, इलाहाबाद और वाराणसी के संग्रहालयों में सुरक्षित है।

स्तूप के पूर्वी द्वार तोरण के एक अभिलेख से विदित होता है कि शुंग शासन काल में राजा धनभूति ने इस स्तूप का अलंकरण कराया था। धनभूति अगरजु का पुत्र और राजा विश्वदेव का पौत्र था। राजा धनभूति के पुत्र विद्धपाल ने भी आन्तरिक वेदिका की एक सूची का निर्माण कराया था। इसी प्रकार एक अन्य सूची का निर्माण संभवतः धनभूति की रानी नागरक्षिता ने कराया था।

महान् स्तूप के समीप कनिंघम को एक मध्ययुगीन बौद्ध मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए थे। इसमें बुद्ध की एक प्रतिमा विराजमान थी। इससे पता चलता है कि मध्यकाल तक यहां बौद्धधर्म प्रचलित था।

भरहुत कला में लोकजीवन का जैसा चित्रण उपलब्ध है, वैसा अन्यत्र नहीं मिलता। यहां पर यक्ष, यक्षी, नाग और अप्सराओं का बहुलता से अंकन मिलता है। जातक कथाओं का भी यहां पर सुन्दर अंकन मिलता है। इन कथाओं पर अंकित नामों से उनके अभिज्ञान में सरलता हुई है।

भरहुत से कुछ दूरी पर अकहा नाम का ग्राम है। यहां पर एक बौद्ध अभिलेख तथा पुरावशेष प्राप्त होते हैं।

जसो –

जसो नागौद-सलेहा मार्ग पर नागौद से 13 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहां पर कुंवरामठ नाम का एक मंदिर है, जिसमें शिवलिंग प्रतिष्ठित है। शिवलिंग का निर्माण साधारण पत्थर से होने पर भी यह सुन्दर प्रतीत होता है। यह देवालय अत्यन्त प्राचीन है। मंदिर के ललाट बिम्ब पर एक छोटा अभिलेख है जिसमें 'श्री नोहलम्य खण्डः' अंकित है। प्रवेश द्वार की बायीं ओर की दीवार पर भी एक अभिलेख है, जो विकृत हो जाने के कारण पढ़ने में नहीं आता। कुंवरामठ के सामने ही पार्वती का मंदिर है। अभी हाल में ही यहां पर कुछ मध्ययुगीन प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं। ग्राम के बीच में जालपादेवी का मंदिर है। इसमें भी कुछ पुरावशेष संग्रहीत है। ग्राम के मध्य में विशालकाय वीरभद्र की एक प्रतिमा विशेष उल्लेखनीय है। यहां के कुछ अवशेष रामवन संग्रहालय पहुंच गये हैं।

खोह –

प्राचीन खोह, नगर अब पूर्णरूपेण विलुप्त हो चुका है। उसके स्थान पर बरुवा नाले के किनारे एक छोटा-सा ग्राम विद्यमान है। यह स्थान उचेहरा से 3 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में

स्थित है। इस ग्राम से परिव्राजक और उच्चकल्प शासकों के अब तक 8 ताम्रपत्र प्राप्त हो चुके हैं। परिव्राजक वंश के महाराज हस्तिन तथा संक्षोभ के ताम्रपत्रों पर 156, 163 और 209 (475, 482 और 528 ई०) की तिथियां अंकित हैं। ये सभी शासक गुप्तों के सामन्त थे।

अन्य ताम्रपत्र उच्चकल्प राजवंश से सम्बन्धित हैं। ये ताम्रपत्र 193, 197 और 214 (214, 516 और 533) तिथियों में अंकित हैं। इनमें राजा जयनाथ और सर्वनाथ के नाम मिलते हैं।

कनिंघम ने यहां पर एक टीले का उत्खनन कराया था। उत्खनन के परिणामस्वरूप यहां पर एक ईंट निर्मित मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए थे। मंदिर पूर्वाभिमुखी था और विष्णु को समर्पित था। इसमें नृसिंह और वराह की विशालकाय प्रतिमाएं थी। वराह की प्रतिमा इस समय उचेहरा नगरपालिका के प्रांगण में सुशोभित है।

नागौद -

नागौद भूतपूर्व नागौद राज्य का मुख्यालय था और अब इसी नाम की तहसील का मुख्यालय है। यह सतना जिला मुख्यालय से 25 किलोमीटर पश्चिम में सतना-पन्ना मार्ग पर स्थित है। यह नगर नागौद-कालिंजर, नागौद-मैहर-धनवाही, नागौद-पवई-मोहदरा, नागौद-रहिकवारा-सुरदहा आदि मार्गों से जुड़ा है।

18वीं शती ईसवीं तक यह राज्य अपनी पुरानी राजधानी उचेहरा के नाम से जाना जाता था। कुछ विद्वानों का कथन है कि गुप्तों के सत्ता में आने पर यहां के स्थानीय शासक भारशिव नागों का वध कर दिया गया। अतः नाग + वध के आधार पर इसका नामकरण नागवध से विकृत होकर नागौद हो गया।

यहां पर कमसरियट नामक एक स्थान है। मध्य भारत में अंग्रेजी प्रभाव बढ़ जाने पर यहां एक हजार मद्रासी जवानों की सैनिक छावनी स्थापित की गयी थी। यह सेना यहां लगभग 25 वर्षों तक रही। 1857 ई० में सैनिक विद्रोह के समय महाराजा साहब नागौद ने अंग्रेजों की बड़ी सहायता की। अतः विद्रोह समाप्त हो जाने पर नागौद राज्य को धनवाही का इलाका पारितोषिक के रूप में प्रदान किया गया। तत्पश्चात् यहां की छावनी नौगांव स्थानान्तरित कर दी गयी।

यहां पर अंग्रेजों का कब्रस्तान अब भी अच्छी दशा में है। यहां एक सड़क बनी हुई है। कब्रें दो भागों में विभक्त हैं और दोनों भाग चहारदीवारी से सुरक्षित हैं। प्रत्येक कब्र में मृत व्यक्ति का नाम, मृत्यु का कारण और मृत्यु की तिथि लिखी है।

पतौरा -

उचेहरा से 16 किलोमीटर उत्तर, पिथौराबाद से 6 किलोमीटर और सतना से 14 किलोमीटर की दूरी पर सतना-पोंड़ी मार्ग पर पतौरा का ऐतिहासिक ग्राम सिन्दूरिया पहाड़ी की तलहटी में स्थित है। यहां हटवा नामक स्थान को देखने से प्रतीत होता है कि यहां पर कभी एक सुव्यवस्थित बाजार लगता रहा होगा।

पहाड़ी तल पर 5 × 4 फीट का एक छोटा सा मंदिर है। कनिंघम का अनुमान है कि यह गुप्तकालीन मंदिर है और इसका अभिज्ञान उच्चकाल शासकों के ताम्रपत्रों में उल्लिखित पिष्टपुरिका देवी के मंदिर से किया जा सकता है। महाराज संक्षोभ के खोह ताम्रपत्र में वर्णित पिष्टपुरिका देवी विष्णु प्रिया लक्ष्मी का एक स्थानीय रूप है। दुर्भाग्यवश पिष्टपुरिदेवी की मूर्ति अब मंदिर में नहीं है। कालान्तर में यहां बाइसवें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ की शासनयक्षी अम्बिका की मूर्ति प्रतिष्ठित कर दी गयी। अम्बिका के चतुर्दिक 23 अन्य शासनदेवियों का सुरुचिपूर्ण अंकन है तथा सभी

देवियों के नाम भी प्रारम्भिक नागरी लिपि में लिख दिये गये हैं। अम्बिका की यह परवर्ती मूर्ति भी मंदिर में नहीं है। नागौद राज्य के दीवान भार्गवेन्द्र सिंह की सहमति से यह मूर्ति श्री ब्रजमोहन व्यास के द्वारा इलाहाबाद संग्रहालय ले जायी गयी थी और अब भी वहीं है। इस मूर्ति का प्राप्ति स्थान पतौरा के स्थान पर नागौद लिखा हुआ है।

पतौरा पुराने नागौद राज्य के प्रथम श्रेणी के उबारीदारों का मुख्यालय था। यह इलाका राजा शिवराजसिंह (1780-1818 ई०) ने अपने अनुज लाल महिपाल सिंह को 1788 ई० में प्रदान किया था।

गोबरांव –

यह ग्राम उचेहरा-नागौद मार्ग पर उचेहरा से 6 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। यहां प्राचीन सामग्री से नये मंदिर का निर्माण कर लिया गया है। मंदिर भगवान शिव का है। ग्राम के उत्तर में एक सरोवर है और बकावली नामक एक बावली है। बावली के किनारे पर एक अभिलिखित प्रस्तर खण्ड है। यह एक सती प्रस्तर है। सती से सम्बन्धित अनेक प्रकार की अनुश्रुतियां इस क्षेत्र में प्रचलित हैं। कथन है कि दाने ग्राम की एक ब्राह्मण कन्या बकावली ग्राम के समीप से प्रवाहित टौंस नदी से नित्यप्रति पानी लेने जाती थी। यहां भरहुत ग्राम से भेड़े चराने आने वाले एक गड़रिया से उसका प्रेम हो गया। एक दिन कन्या के सिर पर जलपात्र रखते हुए पात्र में छिपे विषधर ने गड़रिया को डस लिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। गड़रिया की मृत्यु के बाद ब्राह्मण कन्या ने अपने प्रेम को प्रकट किया और उसी के साथ सती हो गयी। तभी से उसके सम्बन्ध में निम्नांकित कहावत प्रसिद्ध हो गयी –

पानी भरन बकावली
बसों दाने रे गांव ।
भरहुत क्यार गड़रिया
तेहु से जुड़ों सनेव ।।

शंकरगढ़ –

गोबरांव ग्राम से लगी हुई पहाड़ी पर एक मध्यकालीन दुर्ग है। दुर्ग के चारों ओर प्रस्तर की एक प्राचीर बनी है। दुर्ग तक पहुंचने के लिए खड़ी चढ़ाई का एक मार्ग है। किला अब भी सुन्दर और सम्पूर्ण है। प्राचीर के भीतर किला और किले से मिला हुआ दक्षिण की ओर एक सरोवर है। पूर्वोत्तर की ओर एक छोटा-सा शिव मंदिर भी है।

पहाड़ी चोटी के समीप एक गुफा में सिद्ध आश्रम है। पहाड़ी के दक्षिणी ढलान पर सिद्धनाथ का मंदिर है, जिसका वर्णन गोबरांव के अन्तर्गत किया जा चुका है।

उचेहरा –

उचेहरा नगर सतना-मैहर मार्ग पर सतना से 22 किलोमीटर की दूरी पर बरूवा नदी के किनारे स्थित है। यह रेलवे स्टेशन भी है। विद्वानों का कथन है कि उचेहरा का प्राचीन नाम उच्चकल्प था। राजा भोजराज से राजा फकीरशाह के शासनकाल तक उचेहरा नागौद राज्य की राजधानी रहा। राजा चैनसिंह ने 1720 ई० में नागौद नगर बसाया। तभी से उचेहरा के स्थान पर नागौद राजधानी बन गयी।

भूमरा -

यह स्थान उचेहरा रेलवे स्टेशन से 10 किलोमीटर की दूरी पर है। यहां एक शिव मंदिर है, जो मूलतः वर्गाकार 35 फुट का था। उसके सामने 29 फुट 9 इंच लम्वा और 13 फुट चौड़ा एक मण्डप था। मण्डप के सामने वीच में 11 फुट 3 इंच लम्बी और 2 फुट 5 इंच चौड़ी सीढ़िया थीं। सीढ़ियों के दोनों ओर 8 फुट 2 इंच लम्बी और 5 फुट 8 इंच चौड़ी एक-एक कोठरी थी। मण्डप के सामने मूल वास्तु के भीतर बीच में 15 फुट 6 इंच का वर्गाकार लाल वलुवे प्रस्तर का सपाट छतवाला गर्भगृह था। गर्भगृह के चारों ओर आच्छादित प्रदक्षिणापथ रहा होगा। अव यह प्रदक्षिणापथ (अथवा परिक्रमा) नष्ट हो गया है। किन्तु इसका अनुमान नचना-कुठरा के पार्वती मंदिर को देखने से लगता है। गर्भगृह की द्वार शाखाओं पर अलंकरण की तीन पट्टियां हैं। आन्तरिक और वाह्य पट्टी की ज्यामितिक और पुष्प अलंकरण ऊपर सिरदल पर भी फैला हुआ है। सिरदल के वीच में शिव की भव्य मूर्ति है। द्वार शाखाओं के वीच मकरवाहिनी गंगा और कच्छपवाहिनी यमुना नदियों का मानवी रूप में अंकन है।[306]

महाराज हस्ती और सर्वनाथ के भूमरा प्रस्तर स्तम्भलेख में परिव्राजक और उच्चकल्प महाराजों के राज्यों की सीमाएं निर्धारित करने के लिए आम्वलोदा ग्राम में एक सीमा स्तम्भ स्थापित किया गया था। डॉ० फ्लीट[307] ने इस स्थान की पहचान प्रस्तुत स्तम्भलेख के प्राप्ति स्थान भूमरा से की है। किन्तु डॉ० कन्हैयालाल अग्रवाल[308] ने इसका अभिज्ञान आमडोल नामक स्थान से किया है। यह स्थान परसमनिया पहाड़ पर भूमरा के समीप ही विद्यमान है।

धनवाही -

नागौद राज्य की तहसील धनवाही एक प्राचीन स्थल है। महाराज जयनाथ के खोह ताम्रपत्र (वर्ष 177) में इसका उल्लेख धान्यवाहिक के रूप में किया गया है। त्रैलोक्यमल्ल कलचुरि के धुरेटी ताम्रपत्र (वर्ष 963) में इसे धनवाहिपत्तला कहा गया है।[309]

भटनवारा -

यह ग्राम सतना अमर-पाटन मार्ग पर सतना से 10 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां से शुंगकालीन अनेक दुर्लभ शिलापट्ट प्राप्त हुए हैं। यहां के स्थानीय नवीन मंदिर में देवी की एक सुन्दर प्रतिमा विराजमान है, जिसे स्थानीय जन कालिका की मूर्ति कहते हैं। शिलाफलक में आभूषणों से अलंकृत एक रमणी नरवाहन पर आरुढ़ है। इसे त्रिभंग मुद्रा में दिखाया गया है। यह दोनों पैर के वीच के भाग में वनी मानवाकृति के करतलों पर स्थित है। दायें हाथ में कमल है और वायां हाथ कमर पर रखा है। नरवाहन, अलंकार सज्जा, हस्तस्थ कमल आदि इसके आभिजात्य का प्रदर्शन करते हैं। दीघनिकाय की अट्ठकथा में वुद्ध की भक्त भुजंती नामक कुवेर पत्नी का वर्णन मिलता है। भरहुत के कलाकार ने उसी कथानक के आधार पर इस प्रतिमा का निर्माण किया होगा।[310]

कर्दमेश्वरनाथ -

यह स्थान नागौद से 11 मील दक्षिण की ओर स्थित है। इसे कर्दम मुनि का आश्रम

---

306. वनर्जी, द एज ऑफ इम्पीरियल गुप्ताज: पृ० 137-38; द टेम्पल ऑफ शिव एट भूमरा.
307. कार्पस, खण्ड 3, पृ० 110.
308. विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, पृ० 94.
309. विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, पृ० 96.
310. अग्रवाल, विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, पृ० 150.

वताते हैं। यहां पर शिव और पार्वती के अलग-अलग मंदिर बने हुए हैं। यहां पर गोमुख से पानी सोते के रूप में गिर कर कुण्ड में एकत्र होता है और वहां से जलधारा के रूप में प्रवाहित होता है।

हत्यावावा -

यह स्थान नागौद-उचेहरा मार्ग पर स्थित है। स्थल पर एक मूर्ति है जो लगभग एक गज ऊंची है। इसके दोनों हाथ कमर से चिपके हुए हैं। इसे भैरवनाथ की मूर्ति कहते हैं। इसके समीप ही सूखा नाला है। सूखा या तपेदिक से पीडित वच्चों को रविवार तथा बुधवार को प्रातःकाल इस नाले के पार कराने से उनका रोग दूर हो जाता है। सूखा नाला से कुछ दूरी पर हत्या वावा का स्थान है। यहां पर मंदिर, वावली, चौपडा आदि हैं। यह एक सिद्ध स्थान माना जाता है।

नौगजा वावा -

नौगजा वावा मुसलमान फकीर थे। इनकी समाधि उचेहरा में वनी है। समाधि 9 गज की है। इतनी वड़ी समाधि अन्य किसी फकीर की नहीं मिलती।

नागौद के परिहार

भोजराज जू देव सं० 1549-1560 (1492-1503 ई०)

1478 ई० में भोजराज ने उचेहरा नगर आकर वहां अपनी राजधानी स्थापित की। इसके पहले यहां की पुरानी बस्ती वर्तमान उचेहरा से 3 किलोमीटर पश्चिम में खोह नामक स्थान पर थी। यहां पर परिव्राजक और उच्चकल्प राजवंशों का शासन था। उनके अनेक ताम्रपत्र इस क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं। इन दोनों राजवंशों की सीमा का सूचक एक स्तम्भलेख भी यहां परसमनिया पठार के भूमरा नामक ग्राम में विद्यमान है। इसे महाराज हस्तिन तथा महाराज सर्वनाथ का भूमरा प्रस्तर स्तम्भलेख[312] कहते हैं। अभिलेख में कथन है कि यह स्तम्भलेख आम्बलोद ग्राम में स्थित था। डॉ० फ्लीट[313] इसकी पहचान भूमरा से करते हैं। उच्चकल्पों की राजधानी उच्चकल्प थी, जिसे आजकल उचेहरा कहते हैं। जयनाथ उच्चकल्प वंश का पांचवा शासक था। जयनाथ के बाद उसके पुत्र सर्वनाथ ने इस क्षेत्र पर 533 ई० तक शासन किया।[314] 533 ई० के बाद का उच्चकल्पों का कोई भी अभिलेख यहां से प्राप्त नहीं हुआ।

महाराज भोजराज के साथ पतवारे, कचलोहा, वटैया (श्याम नगर) के भाई तथा सात अन्य जातियों के लोग उचेहरा आये थे। इनमें कायस्थ, दर्जी, स्वर्णकार आदि सभी वर्गों के लोग सम्मिलित थे। पैतृक कोटरा का राज्य दासीपुत्र को मिल जाने के कारण उन्हें उक्त क्षेत्र से हटना पड़ा। तत्पश्चात् कुछ दिन तक वे कोलाड़ क्षेत्र में रहे। तत्पश्चात् नागौद की गढ़ी में रहे। इसका पूरा विवरण पिछले अध्याय में दिया जा चुका है।

महाराज भोजराज के शासनकाल में श्री शाहताज महावली साई बाबा के उचेहरा स्थित तकिया के लिए मिती सावन सुदी 12, संवत् 1539 (1482 ई०) को एक ताम्रपत्र दिया गया था।[315] ताम्रपत्र के अनुसार साई बाबा को नागौद राज्य की ओर एक रुपया प्रति गांव निर्धारित किया गया था। साई बाबा को माही मरातिम डंका निसान भी बहाल किया गया था। इससे प्रकट होता है कि साई बाबा तथा कालान्तर में उनके उत्तराधिकारी मछली चिन्ह से अंकित हरे रंग के कपड़े का झण्डा लेकर अपने चेलों के साथ गाजे-बाजे के साथ गांवों से रुपया एकत्र करने निकलते थे।

ऐसी अनुश्रुति है कि भोजराज के सात पुत्र थे। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र करणदेव (करणशाह-कल्याणशाह) राजा हुए। शेष पुत्रों में से दल्लूशाह को गोवरांव, मधुकरशाह को भरहुत और महासिंह को सितपुरा-मौहारी ग्राम मिले। बाकी पुत्र अवयस्क अवस्था में ही दिवंगत हो गये। अतः उनका विवरण प्राप्त नहीं होता।

---

312 भारतीय अभिलेख संग्रह, खण्ड 3, पृ० 135-37.
313 वही पृ० 135.
314 महाराज सर्वनाथ का खोह ताम्रपत्र, वर्ष 214, कार्पस खण्ड 3, पृ० 135-39.
315 देखिए, तकिया उचेहरा के अन्तर्गत।


नागौद राज्य
पन्ना राज्य
सोहावल राज्य
नागौद
उमरहट
कोसाड़
सिंहपुरा
कंचलेहा
जिगनहट
श्यामनगर
लगरगवाँ
भटनवारा
सुरदहा
भुमका
उनेहड़ा
करही
परसमनिया
मैहर
कुडवा
अमिलिया
काहलारी
धरमपुरा
चुरी
पन्ना

करणदेव

भोजराज की मृत्यु के वाद करणदेव राजा हुए। उनका विवाह वांसी के सिरनेत राजा गोपालदेव की पुत्री से हुआ था। इस विवाह से प्रतापरुद्रदेव का जन्म हुआ था। उनका दूसरा विवाह माड़ा के गहरवार राजा चन्द्रपालदेव की कन्या के साथ हुआ। इस विवाह से पांच पुत्र हुए – (1) भगतराय, (2) गुलाल सिंह, (3) मल्लू सिंह, (4) गनपतराय और (5) मेहरवानसिंह। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र प्रतापरुद्रदेव राजा हुए। शेष भाइयों में से भगतराय को वटैया (श्यामनगर), गुलालसिंह को मौहारी, मल्लूसिंह को भरहुत,[316] गनपतराय को जाखी और मेहरवानसिंह को भाद गांव प्राप्त हुआ।

राजा करणसिंह की पुत्री कृष्णकुंवरि का विवाह राजा फतेहसिंह से हुआ था।[317] राजा फतेहसिंह रीवा नरेश अमरसिंह के द्वितीय पुत्र थे। आपके काका इन्द्रसिंह पथरहट (माधवगढ़) के इलाकेदार थे। उन्होंने फतेहसिंह को दुर्जनपुर ताल्लुका देकर देवरा में गढ़ी वनवा दी। अतः वे यही निवास करने लगे। विवाह के अवसर पर उन्होंने अपने मित्र जगतराय (जगतसिंह) को कसौटा राज्य के अमलिया ग्राम मे वुलवाया और राज्य विस्तार के लिए विचार विमर्श किया। इसी समय विवाह के उपलक्ष में उचेहरा (नागौद) नरेश ने फतेहसिंह को वारह ग्राम दहेज में प्रदान किये। किन्तु इन ग्रामों पर उचेहरा नरेश करणदेव का अधिकार नाम मात्र का था। वस्तुतः इन ग्रामों के स्वामी सोहावल के सन्यासी थे। उचेहरा राज्य की सहायता से फतेहसिंह ने इन ग्रामों पर अधिकार कर लिया और सन्यासियों को सोहावल की गढ़ी से निकाल दिया। ये सन्यासी गुप्तकालीन परिव्राजकों के वंशज प्रतीत होते हैं। गढ़ी से निष्कासित होने पर सन्यासी पचमठा में रहने लगे।[318]

नरेन्द्रसिंह (निर्णयसिंह) वि०सं० 1617-1669 (1560-1612 ई०)

सं० 1617 (1560 ई०) में नरेन्द्रसिंह का सिंहासनारोहण हुआ। आपका विवाह शिवपुर के गौर क्षत्रिय राजा हिम्मत सिंह की पुत्री के साथ सम्पन्न हुआ। आप सम्राट अकवर के समकालीन थे। उनके छह पुत्र हुए – भारतशाह, अनीराय, भावसिंह, स्वरूपसिंह, मानसिंह और कनक सिंह। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र राजा हुए। शेष पुत्रों में से अनीराय को जिगनहट, भावसिंह को करही, स्वरूपसिंह को रगला, मानसिंह को उरदना (वि०सं० 1676) और कनकसिंह को भटनवारा ग्राम प्राप्त हुआ। वाद में कनकसिंह लावल्द फौत हुए।

भारतशाह वि०सं० 1669-1705 (1612-1648 ई०)

नरेन्द्रसिंह की मृत्यु के वाद भारतशाह राजा हुए। उन्होंने उचेहरा और रहिकवारा की गढ़िया वनवायीं। उनकी रानी लाड़ली ने रहिकवारा में एक तालाव का निर्माण कराया था। इसे रानी तालाव कहा जाता है। पति की मृत्यु के वाद रानी सती हो गयी। उनका मंदिर उचेहरा में विद्यमान है। भारतशाह के दो पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज राजा हुए और दूसरे पुत्र मर्दनशाह को भटनवारा इलाका रु० 2600.00 का मिला। इसमें वारह गांव थे। मर्दनशाह को यह इलाका कनकसिंह से जप्त कर दिया गया था।

---

316 भरहुत ग्राम राजा भोजराज के पुत्र मधुकरशाह को मिला था। प्रतीत होता है कि वे निस्सन्तान थे। अतः यह इलाका मल्लूसिंह को दे दिया गया।

317 चालुक्य वंश रत्नमाला, 453.

318 नागौद राज्य का संक्षिप्त इतिहास, नागौद राज्य से प्राप्त।

पृथ्वीराज 1649-1685 ई०

राजा भारतशाह के वाद पृथ्वीराज शासक हुए। नागौद से प्राप्त इतिहास में वताया गया है कि उनका विवाह रीवा नरेश अमरसिंह की पुत्री से हुआ था। किन्तु रीवा नरेश अमरसिंह के सवसे छोटे कुंवर फतेहसिंह का विवाह नागौद राज्य में हुआ था। अतः वघेल वंश में पृथ्वीराज का विवाह किसी भी प्रकार संभव नहीं प्रतीत होता। आपके तीन विवाह हुए। इनसे अठारह पुत्र हुए। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र फकीरशाह राजा हुए। शेप पुत्रों में कीरतशाह को पिपरोखर (वि०सं० 1743) हृदयशाह को चन्दकुआ, अतवलशाह को पथरहटा, संग्रामसिंह को जाखी, अर्जुनसिंह को वरकछी, सभासिंह को पौंडी, फतेहसिंह को कुनिया, दंगलसिंह को धनेह और पहाड़सिंह को नरहठी इलाका प्राप्त हुआ। इस प्रकार नौ पुत्रों को हिस्सा मिला। शेप आठ पुत्र नावालिग फौत हुए। इस समय का वंटवारा अठहरा के नाम विख्यात है।

फकीरशाह 1686-1720 ई०

पृथ्वीराज की मृत्यु के वाद फकीरशाह राजा हुए। आपके दो विवाह हुए। पहला वरदाडीह के वघेल ठाकुर के यहां। इस विवाह के उपलक्ष में भुलनी और वड़खेरा के दो ग्राम साले को प्रदान किये गये। दूसरा विवाह गुढ़ ग्राम में हुआ। आपने वि०सं० 1777 (1720 ई०) में नागौद किले का निर्माण प्रारम्भ किया। किन्तु मृत्यु हो जाने के कारण उनके जीवनकाल में यह कार्य पूरा न हो सका। उनके शासनकाल में सात भाइयों के गोवरांव, पिपरी, नीमी, वावूपुर, वटैया, करही, भरहुत, उरदना, जाखी, भाद और हरदुआ के इलाके जव्त हुए। इसी समय से नीमी का नाम पिथौरावाद रखा गया।

फकीरशाह के चार पुत्र हुए – (1) चेतसिंह, (2) चैनसिंह, (3) नरहरशाह और (4) वख्तावरसिंह उर्फ छोटेलालसिंह। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र चेतसिंह की मृत्यु अवयस्क अवस्था में हो जाने से चैनसिंह राजा हुए। नरहरशाह को जिगनहट रु० 4250.00 कमाल का हिस्सा मिला। वख्तावरसिंह उर्फ छोटेलालसिंह को कुन्दहरी 3 गांव जमा कमाल रु० 1350.00 का इलाका मिला।

चैनसिंह 1720-1748 ई०

ज्येष्ठ भ्राता चेतसिंह की असामयिक मृत्यु के कारण चैनसिंह राजा हुए। अनुश्रुति है कि उन्होंने अमरन नदी के किनारे किसी नागा सन्यासी को युद्ध में पराजित कर मार डाला। नदी के किनारे नागा सन्यासी की समाधि अभी तक विद्यमान है। राजा चैनसिंह के ही शासनकाल में राजधानी उचेहरा से नागौद स्थानान्तरित हुई। उन्होंने इस नगर को वसाकर नागा वध घटना की स्मृति में इस नवीन नगर का नामकरण नागावध किया जो विगड़कर नागौद हो गया। उन्होंने नागौद कोट के अन्दर पहले से वने सन्यासियों के भवनों की मरम्मत करायी और महल का निर्माण कराया।

राजा चैनसिंह एक वार भगवान् राम की जन्मभूमि अयोध्या नगरी गये। वहीं उनकी भेंट पण्डित मदनराम से हुई। पण्डित जी सरवरिया व्राह्मण थे। उनका गोत्र भारद्वाज, वेद यजुर्वेद, शाखा माध्यायनी और सूत्र कात्यायन था। वे वडगैया दुवे थे और मधुवास ग्राम के निवासी थे। चैत मास की रामनवमी के दिन वे सरयू स्नान का पुण्यलाभ लेने के लिए अयोध्या पधारे। यहीं नागौद नरेश महाराज चैनसिंह पण्डित जी को सर्वज्ञ जानकर अपने डेरा पर ले आये। महाराजा साहव पण्डित जी से इतने प्रभावित हुए कि नागौद लौटते समय उन्हें अपने साथ ले आये। यहां उन्होंने पंडित जी से भागवतपुराण सुना और उन्हें वैशाख वदी तिथि पंचमी संवत् 179। को भरहटा

ग्राम देकर उसकी सनद लिख दी। यह ग्राम सतना से दक्षिण की ओर तेरह किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। पंडित मदनराम के वंशज आज भी इस गांव में रहते हैं। उनकी वंशावली इस प्रकार है –

पं० मदनराम – राजा चैनसिंह

पं० सदाशिवराम

पं० दीवानराम

पं० रघुनाथराम – राजा अहलादसिंह

पं० रनजीतराम – पं० शिवराजसिंह

पं० रामभद्रराम – पं० वलभद्रसिंह

पं० ईश्वरीराम – पं० राघवेन्द्रसिंह

पं० हरिहरराम – पं० यादवेन्द्रसिंह

पं० महेशराम – पं० महेन्द्रसिंह

राजा चैनसिंह के तीन विवाह हुए। पहली रानी का नाम फूलकुंवरि, दूसरी का जीतकुंवरि और तीसरी रानी का नाम रामाधारशरण था। छोटी रानी को निर्माण कार्य में वड़ी रुचि थी। उन्होंने नागौद नगर की सीमा पर एक तालाव वनवाया जिसे आजकल रानीताल कहते हैं। उन्होंने ही विहटा में गोपाल जी का एक मंदिर वनवाया। उचेहरा का रामदिवाला (रामदेवालय) उन्हीं का वनवाया हुआ वताया जाता है। वड़ी रानी फूलकुंवरि से एक पुत्र अहलाद सिंह तथा एक पुत्री हुई। पुत्र अहलाद सिंह को राजगद्दी मिली और पुत्री का विवाह सोहावल नरेश पृथ्वीपतिसिंह से हुआ। इस विवाह से लाल वजरंग वहादुर सिंह हुए जो लावल्द फौत हुए।

अहलादसिंह (1748-1780 ई०)

अहलादसिंह 1748 ई० में राजा हुए। आपके पांच विवाह हुए। रानी आधारकुंवरि से शिवराजसिंह हुए। सोलंकी रानी फुलासकुंवरि से छोटे कुंवर महिपालसिंह का जन्म हुआ। फुलासकुंवरि को सुरकिन रानी अथवा ददौवा साहव भी कहा जाता था। अन्य रानियों के नाम सभाकुंवरि, इलामकुंवरि और रतनकुंवरि थे। तीसरे पुत्र का नाम दिलराजसिंह था। राजा शिवराजसिंह जेठे होने के कारण राज्य के अधिकारी हुए। वि०सं० 1843 को दिलराजसिंह को उमरहट के सोलह ग्राम रु० 4175.00 के मिले। वि०सं० 1845 को महिपालसिंह को पतौरा इलाका के तेरह ग्राम रु० 3671.00 के मिले। राजा अहलादसिंह ने राजमंदिर उचेहरा राजपरिवार के दग्धस्थल पर एक वावली का निर्माण कराया, जो आज भी विद्यमान है। रानी आधारकुंवरि ने उचेहरा में रामदिवाला का अधूरा निर्माण पूरा कराया। यह मुरलीमनोहर का मंदिर है। मंदिर के राग भोग के लिए गांव भी दान किया गया था। रानी आधारकुंवरि ने शिवराजसिंह के मुण्डन और कर्णवेध संस्कार में मौजा खोह में रु० 15.00 जमा कमाल तथा रु० 15.00 जमा माफी भैरन गुनार को प्रदान की थी। अहलादसिंह ने रेउसा, कोल्हुआ और अतरौरा के तीन ग्राम चन्दकुआ वालों से जब्त किये।

नागौद किले का वाहरी कोट अहलादसिंह ने वनवाना प्रारम्भ किया। किन्तु मृत्यु हो जाने के पर शेष कार्य उनके उत्तराधिकारी राजा शिवराजसिंह ने पूरा कराया।

शिवराजसिंह (1780-1818 ई०)

राजा अहलादसिंह की असामयिक मृत्यु के बाद शिवराजसिंह तीन वर्ष की अवस्था में राज्याधिकारी हुए। पहले उन्होंने मातुश्री आधारकुंवरि की संरक्षता में शासन किया। शिवराजसिंह के दो विवाह हुए, (1) रतनकुंवरि, आपको विहटा ग्राम पान खर्च के लिए मिला था और (2) रघुवशकुंवरि। राजा शिवराजसिंह के शासनकाल में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अंग्रेजी सत्ता का प्रवेश हुआ। सनद क्रमांक 48, दिनांक 28 जनवरी, 1807 ई० के आधार पर उचेहरा (नागौद), कोठी, सोहावल आदि राज्य पन्ना महाराजा किशोरसिंह को दे दिया गया। कालान्तर में नागौद राजा ने आपत्ति की। तहकीकात करने पर ज्ञात हुआ कि महाराजा छत्रसाल बुन्देला के पहले से ही राजा शिवराजसिंह के पूर्वज इस क्षेत्र पर शासन कर रहे थे। बुन्देला राजाओं और बांदा के नबाव अलीवहादुर के शासनकाल में भी वे कभी वेदखल नहीं किये गये। अतः दिनांक 20 मार्च 1809 ई० को नागौद राजा को दूसरी सनद दी गयी, जिसके द्वारा 401 ग्राम उनके अधिकार क्षेत्र में आये और 3 ग्राम वाद में वसे। इसप्रकार 404 ग्रामों पर उनका अधिकार हुआ। इनमें से 182 खालसा तथा 222 उवारीदारों और भाइयों के पास थे। उवारीदारों की आमदनी राज्य से कहीं अधिक थी।

राजा शिवराजसिंह के तीन पुत्र - वलभद्रसिंह जगतधारीसिंह और नारायणवख्श थे। एक राजकुमारी थी जिसका नाम सुभद्राकुवरि था। रीवा महाराजा विश्वनाथसिंह (1833-1854 ई०) का प्रथम विवाह इन्हीं सुभद्राकुंवरि से हुआ था। इस विवाह से रघुराजसिंह और जानकीकुवरि का जन्म हुआ। पिता की मृत्यु के वाद रघुराजसिंह रीवा के राजा हुए और उन्होने 1854-1880 ई० तक शासन किया। जानकीकुंवरि का विवाह जयपुर (धूंधाड़) के महाराजा रामसिंह से हुआ।[319]

वलभद्रसिंह राजा हुए। जगतधारीसिंह को रु० 7175.00 की आय के 21 गांव वाला करही इलाका मिला। नारायण वख्श सिंह को रु० 6101.00 की आय के 19 गांव वाला सितपुरा इलाका मिला।

राजा शिवराजसिंह ने आधा रगला, धनेह, पौंड़ी, हरदुवा, जाखी, महदेई, वंधाव, हिनौता, आधा पथरहटा, नरहटी, आधा चकहट, आधा मझोखर, आधा पनगरा आदि गांव जप्त किये।

तकिया उचेहरा

राजा भोजसिंह जू देव ने उचेहरा स्थित तकिया के महन्त शाहताज महावली साईवावा को सावन सुदी 12, वि०सं० 1539 को प्रति गांव एक रुपया लेने का अधिकार प्रदान किया था। उचेहरा तकिया से प्राप्त सनद इस प्रकार है –

ताम्रपत्र

।। १ ।। सही राजा भोजसिंघ जू देव के निशान त्रिशूल

ताम्रपत्र लिखदीन श्री महराजकुमार श्री राजा भोजसिंह जू देव के सरकार ते हुकुम भा राज के सव भाई वेटा जागीरदार ओ उवारीदार ओ पवईआ पैपरवार ओ गउटिया ल्मवरदारन का असकी श्री शाहताज महावली साई वावा का रुपिया गाव लगायदीन पुन्यारथ पाये जाय और आर्सिवाद दीन्ह रहै और तकिया कै सेवा वरावर कीन्है रहे जो राजा परिहार वंश इस गद्दी में होय वरावर लिपे वर हुकुम पालत जाय कोऊ आन तग ना करै आन तरा करै तो परमात्मा का द्रोही होय राज का द्रोही होय तेकर पाट भा मिती सावन सुदि 12 का सं० 1539 विक्रमी के साल और जौन चेला शाहतजा वावा वन्स में होय तो यहाँह उचहरा का अस्थान तकिया के सेवा वरावर

---

319 चालुक्य वश रत्नमाला, पृ० 363-64

करत जाय और दरवार में जो महन्त आये तो सरकार ते वैठक पावे और महिम मरातिम डंक निमान हमारे यहां से वहाल कर दीन है।

कालान्तर में नागौद नरेश शिवराजसिंह ने उक्त तकिया के महन्त दरगाही शाह वावा को दूसरी सनद प्रदान की। यह सनद मिती अगहन वदी 2 वि०सं० 1862 के साल लाला दलगंजन वक्सी द्वारा जारी की गयी थी। सनद में कहा गया है कि श्री महन्त दरगाही शाह वावा की महन्ती सदा सलामत रहे। महन्त अपना एक जेठा चेला वनाकर तकिया में रखे। चेला चाहे विवाह कर ले अथवा ब्रह्मचारी रहे। वही गुरु का उत्तराधिकारी होगा और महन्ती उसी को मिलेगी। इसी प्रकार परम्परा चलती रहे। इसके साथ ही महन्त थानी ग्रामों से दो रुपया प्रति ग्राम, अन्य से एक रुपया ग्राम और कायम से आठ आना प्रति ग्राम वसूल करता रहे। उपर्युक्त पाट में तकिया के महन्त को महिम मरातिम डंक निसान वहाल करने का उल्लेख किया गया है। ये महन्त अपने चेलों के साथ मछली निशानयुक्त हरे रंग के झण्डे को लेकर ढोल-नगाड़ा वजाते हुए वड़ी शान-शौकत से निकलते थे। इस तथ्य का उल्लेख उपर्युक्त सनद में हुआ है। दूसरी सनद इस प्रकार है।

मोहर राजा शिवराजसिंह जू देव, नागौद

सन्द लिख दीन श्री महराजकुमार श्री राजा सिउराजसिंह जू देव के सरकार ने तकिया उचहरा से श्री श्री महंत दरगाही साहवावा को असर्क तकिया के महन्ती सदामत वनी रहै औ महन्त जेठा चेला वनाकर अपने तकिया में राखैं सो चाहै वह ग्रिसती से रहैं चाहैं निहंमग औ ओही प्रकार सदामत जो चेला रहै महंत कहावे औसाविक दसतूर रूपिया गाउ देत जाइ थानी गाउ म दो रुपिया और गावन मा ओक रूपिया कायम आठ आना ओह म कोउ उज्र न करै मिती अगहन वदी 2 सं० 1962 के साल

दः लाला दलगंजन वकसी केर।

यह तकिया (दरगाह) उचेहरा नगर के दक्षिण उचेहरा-परसमनियां मार्ग पर एक प्राचीन भटे हुए तालाव की दक्षिणी मेड़ पर स्थित है। इस समय यह अत्यन्त जर्जर अवस्था में है। इस तकिया का सम्बन्ध मुकुन्दपुर और सोहावल से भी था। मूलरूप से यह तकिया हजरत सैयद वदाउद्दीन अतुवुल मदार जिन्दाशाह मदार मुकाम मकनपुर जिला कानपुर से सम्बन्धित है। आपका निधन 838 हिजरी में हुआ। आपकी मृत्यु के वाद मदारिया सम्प्रदाय का सिलसिला चला और इस क्षेत्र के सोहावल, उचेहरा, मुकुन्दपुर, सिमरिया आदि स्थानों में उनके तकिया स्थापित हुए। उचेहरा के परिहार राजा भोजराजदेव, शिवराजसिंह और महाराज महेन्द्रसिंह ने समय-समय पर इस तकिया को सनदें प्रदान की। इनमें से दो सनदों का वर्णन पहले किया जा चुका है। तकिया के महन्तों की वंशावली इस प्रकार है –

मदार के शिष्य (मदायजम)

1 शाह ताजुद्दीन मुहिव्वली दरगाह, उचेहरा

2 शाह मान दरियाई शाह

3 सादक अली शाह

4. आसक अली शाह

5 गंज अली शाह

6 यतीमशाह उर्फ साधूअली शाह

7 दीवान दरगाहीशाह, महाराज शिवराजसिंह ने वि०सं० 1862 को सनद दी।

8. जर्राशाह

9. अकीनशाह

10. मुकीमशाह

11. अब्दुलकादर शाह

12. हाजिरशाह

13. हैदरअली शाह (गृहस्थ फकीर, 1939 ई० से गद्दी के अधिकारी है। महाराज महेन्द्रसिंह ने इन्हें भी एक सनद प्रदान की है।

वलभद्रसिंह (1818 ई० - 1831 ई०)

वलभद्रसिंह 1818 ई० में वरमेन्द्र गद्दी के अधिकारी हुए। आपके छह विवाह हुए थे। पहली रानी कोठी नरेश की कन्या प्रभुराजकुंवरि, दूसरी गहरवारिन रानी जीतनाथकुंवरि, तीसरी चन्देलिन रानी रघुनाथकुंवरि, चौथी वड़ी वघेलिन रानी तषतकुंवरि, पांचवी जयपालकुंवरि और छठवीं सेमरिया के ठाकुर जगमोहनसिंह की कन्या थी। रानी तषतकुंवरि ने उचेहरा रेलवे फाटक के समीप एक वापिका का निर्माण कराया था।

राजा वलभद्रसिंह के शासनकाल में धनेह, अतरहार, कारीझिर, मढ़ऊ, इटवा वराज, करहिया, तिलगवां वाकोनियां, आधा गुनहर, मुगहर, अतरवेदिया, फुरताल और आधा खड़ौरा आदि 29 मौजे जप्त किये गये।

छवलालराम ज्योतिषी का ताम्रपत्र

महाराज वलभद्रसिंह ने वैशाख वदि 12 सं० 1888 को पं० श्री छवलालराम ज्योतिषी को उरदनी ग्राम का मनैहन टोला पादार्घ स्वरूप प्रदान किया था और अपने उत्तराधिकारी पुत्र-पौत्रादिकों को आगाह किया था कि इस दान में किसी प्रकार की वाधा न पहुंचाये। यह दान महाराज कुमार, श्री लाल वोड़ीलालदेव की उपस्थिति में मुकाम जवलपुर से जारी किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि जव राजा वलभद्रसिंह अपने भाई जगतधारीसिंह की हत्या के अपराध में गिरफ्तार कर जवलपुर ले जाये गये तभी यह दान दिया गया होगा। यह तथ्य इससे भी प्रमाणित होता है कि उनके उत्तराधिकारी राघवेन्द्रसिंह का राज्यारोहण वर्ष और ताम्रपत्र के प्रवर्त्तित किये जाने का वर्ष एक ही है। उरदना से प्राप्त ताम्रपत्र की प्रतिलिपि निम्नांकित है –

सही सीताराम मोहर

श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री राजा वहादुर वलभद्र सिंह जू देव पं० श्री जोतषी छवलालराम का मनैहन वाला टोला उरदनी गांउ पादार्घदीन आइयन सजल सतृण सकास्ट चतुः सीमावच्छिन्न सो पुस्त दर पुस्त पाये षाये रहैं आर्सिवाद दये रहैं इन सौ इनके पुत्र पौत्रादिक सोहम सो हमारे पुत्र पौत्रादिक कोउ मुजाहिम न होइ कवहु तेकर कागद भा महाराजकोमार श्री वोडीलालदेव के आगे।

प्रथम वैसाष वदि 12, सं० 1888 के मु० जवलपुर।

सिक्के का चलन

राजा बलभद्रसिंह के शासनकाल में तांबे का एक विशेष प्रकार का सिक्का ढ़ाला गया था। इस सिक्के पर जरव रीवा तथा जरव सिक्का रीवा लिखा है।

राज्यच्युत

राजा वलभद्रसिंह ने अपने भाई जगतधारीसिंह को 1831 ई० में षडयन्त्रपूर्वक मरवा डाला। घटना इस प्रकार वताई जाती है कि जगतधारीसिंह जव माधवगढ़ के रावेन्द्रसाहव के यहां विवाह में सम्मिलित होकर करही लौट रहे थे तव मौजा भरहुत में करारी नदी के समीप लाल पहाड़ की ओर से उचेहरा के घोषियों ने आकस्मिक वार कर उन्हें मार डाला। इसप्रकार जगतधारीसिंह की ठकुराइन ने जवलपुर और नागपुर के पोलिटिकल एजेण्ट के यहां अपने पति के मारे जाने का मुकदमा लड़ा। महाराज वलभद्रसिंह अभियोगी सिद्ध होने के कारण गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें पहले जवलपुर और वाद में इलाहावाद के किले में रखा गया।

सनदें

सं० 1864 में राजा वलभद्रसिंह ने गजाधर मलैहा को पदारख के रूप में गोवरांव ग्राम में भूमि प्रदान की। राजा वलभद्रसिंह की रानी प्रभुराजकुंवरि ने आश्विन सुदी 13 सं० 1864 को पण्डा तरिपावराम को गोवरांव ग्राम में राजा के नाम से भूमिदान किया। संवत् 1866 की वैशाख वदी 1 को महाराजा साहव ने जमीन वहैमा पुरानिक मंसाराम को प्रदान की। इसी समय भोला कामरथी को कामर पूजा में जमीन हड़हा दी गयी। वि०सं० 1869 को राजा वलभद्रसिंह ने ढुना-मूना को डुड़हा ग्राम का आधा भाग माफी में दिया। मुना के मरने के वाद आधा मौजा जप्त हो गया और आधा ढुना के नाम वहाल हुआ। माघ वदी 6 संवत् 1876 को खोखरी ग्राम महाराज वलरामदास व परमहंस जू को प्रदान किया गया। अगहन सुदी 8 संवत् 1876 को तिघरा ग्राम चार जनों की चाकरी में वोडीलाल कामदार को राज्य की ओर से दिया गया। आषाढ़ वदी 8 संवत् 1879 को राजा वलभद्रसिंह के पुत्र परीक्षितसिंह ने मतरी ग्राम शिवराम पाण्डे को दिया। आश्विन सुदी 13 संवत् 1883 को रगला मौजा लाल अमीनसिंह को वतौर हिस्सा में दिया गया। संवत् 1885 को राजा साहव ने किशुना को खर्च के वास्ते तिलौरा ग्राम दिया। इसी वर्ष वड़ी वहुरिया साहव को गोवरांव मौजा पान खर्च के लिए दिया गया। मझली वहुरिया साहव को पतवार मौजा पान मशाला के खर्च के लिए दिया गया। इसी वर्ष शिवदयाल पुरानिक को वड़ी मुगहनी की माफी दी गयी। पौष वदी 2 संवत् 1886 को पं० दीनानाथ को अतरवेदिया ग्राम की माफी दी गयी। चैत्र सुदी 5 संवत् 1887 को कुंदहरी मौजा रामकिशुन वैद्य को सेवा के वदले में दिया गया।

जप्ती

राजा वलभद्रसिंह के शासनकाल में धनेह, अतरहार, कारीझिर मढ़ऊ, इटवा वराज, करहिया, तिलगवां, वाकोनिया, आधा गुनहर, मुगहर, अतरवेदिया, फुरताल और आधा खड़ौरा आदि 29 मौजे जप्त किये गये।

राजा वलभद्रसिंह के तीन पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र राघवेन्द्रसिंह राजा हुए। मझले पुत्र रनवहादुरसिंह लावल्द फौत हुए और छोटे पुत्र छत्रपालसिंह को रु० 4800.00 की आयवाला जिगनहट इलाका प्राप्त हुआ। राजा वलभद्रसिंह की वड़ी महारानी साहवा तपतकुंवरि ने मिती भाद्र वदी 10, संवत् 1901 को श्री वैदेहीदास अखाड़ा को मौजा अकहा में भूमिदान किया। इन्हीं महारानी साहवा ने पौष वदी 2 संवत् 1903 (4 सितम्वर 1846 ई०) को मौजा पिपरी में रु० 40.00 की जमीन दी। चन्देलिन रानी रघुनाथकुंवरि ने वहुरिया गोसाई रजनकुंवरि के आगे महाराज विदेहीदास को फागुन सुदी 1 सवंत् 1891 को वंदरहा ग्राम दान में दिया।

महाराज वलभद्रसिंह ने 14 दिसम्वर 1829 ई० से नागौद राज्य में सतीप्रथा पर प्रतिवन्ध

लगा दिया।

राघवेन्द्रसिंह (1831-1874 ई०)

राजा बलभद्रसिंह एक राज्य से निर्वासित होने के बाद उनके अवयस्क पुत्र राघवेन्द्रसिंह राजा हुए। किन्तु उनके नाबालिग होने के कारण 1831 से 1838 ई० तक रियासत कोर्ट ऑफ वार्ड रही। इस समय राघवेन्द्रसिंह की आयु दस वर्ष थी। अवयस्क अवस्था में उन्हें जबलपुर में रखा गया, जहां मौलवी हैदरअली ने आपको तालीम दी। फारसी, संस्कृत, वैद्यक आदि अध्ययन समाप्त करने पर उनकी शिक्षा समाप्त हुई।

विवाह

राजा राघवेन्द्रसिंह का प्रथम विवाह राजा साहब भदरी (प्रतापगढ़) की बिसेनिन्नि रानी सुखराजकुंवरि से हुआ। सन्तान न होने से दूसरा विवाह रैगांव जागीर के अन्तर्गत करसरा ग्राम के बघेल क्षत्रिय मेदिनीसिंह की पुत्री हरिनाथकुंवरि से हुआ। इन्ही रानी के गर्भ से पौष वदी 7 दिन रविवार संवत् 1912 को युवराज यादवेन्द्र का जन्म हुआ।

राज्यारोहण

राघवेन्द्रसिंह 1931 ई० में नाबालिग थे। वे 1938 ई० में बालिग हुए। तब उन्हें बुन्देलखण्ड स्थित गवर्नर-जनरल के पोलिटिकल एजेण्ट सर चार्ल्स फ्रेजर के समक्ष प्रस्तुत किया गया। पोलिटिकिल एजेण्ट ने राघवेन्द्रसिंह को उनके पितामह के साथ तय हुई शर्तों पर रु० 8000.00 नजराना लेकर नागौद का राज्य सौंप दिया। फिजूलखर्ची और बेबन्दोबस्ती के कारण रियासत पर बहुत-सा कर्ज हो गया। इसी समय 1838 से 1843 ई० के बीच राज्य में बन्धु बान्धवों ने अव्यवस्था फैलाना प्रारम्भ कर दिया। उबारीदारों ने कर देना बन्द कर दिया तथा आपस में झगड़ा फसाद करने लगे। राजा राघवेन्द्रसिंह ने बन्धु-बान्धवों के उपद्रवों को रोकने का हर संभव प्रयत्न किया और 1843 ई० में सुरदहा, जिगनहट, बाबूपुर, चन्दकुआ आदि ठिकानों की गढ़िया गिरवा दी तथा ये क्षेत्र अपने अधिकार में कर लिए। किन्तु स्थिति फिर भी न संभली। मजबूर होकर राजा ने 23 नवम्बर 1843 ई० को कम्पनी सरकार को पत्र लिखकर सरकारी बन्दोबस्त करने का निवेदन किया। कम्पनी सरकार ने राजा का निवेदन स्वीकार कर उसे 1 जनवरी 1844 ई० से रु० 1000.00 की आजीविका देकर शासन अपने हाथ में ले लिया। राज्य का कर्जा कम होने पर भत्ता रु० 1300.00 प्रतिमाह कर दिया गया।

1857 ई० का विद्रोह

नागौद में काफी समय तक 50 वीं बंगाल नेटिव इन्फेण्ट्री रही थी। इसमें कुछ सैनिक राष्ट्रभक्त थे। उन्होंने ने भी सारे देश के समान स्वतंत्रता संग्राम में खुलकर भाग लिया। इस समय पोलिटिकल एजेण्ट मेजर एलिस था। विद्रोह की सूचना पाने पर उसने अन्य सैनिक छावनियों को इसकी सूचना दी और अपनी सुरक्षा के लिए पन्ना होता हुआ अजयगढ़ भाग गया। कैप्टन स्काट की डायरी से बांदा, नागौद तथा नौगांव में प्रारम्भ हुए स्वतन्त्रता संग्राम पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। 30 जून 1857 ई० को नौगांव छावनी के अंग्रेज सैनिकों की एक टुकड़ी कैप्टन स्काट के निर्देशन में गवेरा-मुगली के जमींदार व नागरिकों को घेरकर बांदा के नवाब के महल के अहाते में लाये। नवाब साहब और उनकी माता ने उनको स्वतंत्र कर बड़ी आवभगत के साथ रखा और तत्पश्चात् अपने सिपाहियों के साथ नागौद विदा कर दिया, जहां वे 12 जुलाई 1857 ई० को

सुरक्षित पहुँच गये।[320]

कैप्टन स्काट 14 जुलाई, 1857 ई० को लिखता है कि पिछले दिन 60 कैदी जेल से निकलकर भाग गये। जेलर की सहायता से भागे ये कैदी पचासवीं नैटिव इन्फेण्ट्री में पहुंचे। इस इन्फैण्ट्री में काम करने के लिए कैप्टन फुक्स और रिमेण्टन को रोक लिया गया था। सेना की यह टुकड़ी अभी तक विद्रोही नहीं हुई थी। जिस समय कैदी वटालियन में घुसे कैप्टन फुक्स अपनी दो नली वन्दूक लिए वहां मौजूद था। वागियों का मुखिया एक व्राह्मण था जो फुक्स की गोली से मारा गया तथा 14 अन्य विद्रोही सिपाही भी मार डाले गये। और भी वागी मार जाते किन्तु एक सिविल अधिकारी के वीच-वचाव करने से 45 वागी मारे जाने से वच गये।

वांदा में जव सरदार मोहम्मद खां को रु० 1000.00 माहवारी वेतन पर राज्य का व्यवस्थापक वनाया गया तव 7 अगस्त 1857 ई० को नागौद के पोलिटिकल एजेण्ट ने नवाव को एक पत्र लिखकर कहा कि सरदार मोहम्मद खां का सम्वन्ध विद्रोहियों से हो गया है। अतः उसे गिरफ्तार कर लिया जावे। इसकी सूचना किसी प्रकार सरदार मुहम्मद खां को मिल गयी। अतः वह भूमिगत हो गया और फिर उसका कोई पता न चला।[321]

नागौद छावनी में विद्रोह हो जाने पर समाचार मिला कि विहार से कुंवर सिंह, वांदा के नवाव एवं रणमतसिंह अपनी सेना लेकर नागौद की ओर वढ़ रहे हैं। अतः जसो के दीवान ईश्वरीसिंह ने लाल होरिलसिंह के माध्यम से रणमत सिंह को अपने यहां आमंत्रित किया। नागौद छावनी के वागी सैनिक भी इसी अवसर की तलाश में थे। अतः वे भी रणमत सिंह के साथ हो गये। जसो, कोनी, अमकुई, कोटा, वमुरहिया आदि गांवों के परिहार भी इस सेना में सम्मिलित हो गये। इसप्रकार एक विशाल सेना संगठित हो गयी। इस सेना ने नागौद पर आक्रमण कर भीषण तवाही मचाई। वागियों ने अजयगढ़ के राजा रणजोरसिंह को भी अंग्रेजों का साथ न देने का आग्रह किया। किन्तु पन्ना और अजयगढ़ के शासक सदैव अंग्रेजों की सहायता करते रहे। इधर नागौद से भागे हुए पोलिटिकल एजेण्ट के अजयगढ़ पहुंचते ही केशरीसिंह के नेतृत्व में एक विशाल सेना वागियों को दवाने के लिए भेजी गयी। भेलसांव के मैदान में दोनों सेनाओं का मुकावला हुआ। भेलसांव अजयगढ़ राज्य के अन्तर्गत था। वर्तमान में यह स्थान पन्ना जिले की देवेन्द्रनगर तहसील के अन्तर्गत है। सतना-पन्ना मार्ग के वड़वारा ग्राम से यह आठ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। अजयगढ़ की ओर से तोपों का प्रयोग किया गया। रणमतसिंह के भतीजे अजीतसिंह तोपों को नकारा वनाते समय वीरगति को प्राप्त हुए। रणमतसिंह और केसरीसिंह के मध्य घमासान युद्ध हुआ, जिसमें केसरीसिंह मारे गये। नागौद छावनी के अधिकांश वागी सैनिक और अधिकारी इस युद्ध में खेत रहे। केसरीसिंह की मृत्यु के वाद अंग्रेजी सेना रणमतसिंह को पराजित करने के लिए भेजी गयी। किन्तु तव तक वे नौगांव की ओर वढ़ गये। कालिंजर की ओर से आने वाली इस सेना ने भीषण अत्याचार किये और उनके अमानवीय कृत्यों से पूरे विन्ध्यक्षेत्र में दहशत छा गयी। गुजारा भत्ता पाने वाले राजा नागौद ने अंग्रेजों की भरपूर मदद की।[322]

राजा राघवेन्द्रसिंह द्वारा की गयी सहायता से कम्पनी सरकार ने प्रसन्न होकर उन्हें प्रशासनिक अधिकार प्रदान कर दिये और मैहर-विजयराघवगढ़ की जप्त जागीर से रु० 4000.00 मूल्य के धनवाही परगना के ग्यारह ग्राम[323] पुनः वहाल कर दिये। इन ग्रामों के नाम इसप्रकार हैं – (1) धनवाही, (2) आमातारा, (3) मझगवां, (4) पिपरा-पिपरी, (5) चोरी (रुद्रपुर) (6) धरी (विष्णुपुर), (7) इमिलिया, (8) कुड़वा, (9) हरदुवा, (10) धरमपुरा और (11) कोइलारी। विद्रोह

320. इलियास मगरवी, तारीखे वुन्देलखण्ड, पृ० 181.
321. इलियास मगरवी, तारीखे वुन्देलखण्ड, पृ० 181.
322. डायरी ऑफ कैप्टन स्काट.
323. सनद क्रमांक 83, 1859 ई० टीट्रीज, इंगेजमेण्ट्स एण्ड सनद्स खण्ड 5, पृ० 267-68.

शान्त हो जाने के पश्चात् महारानी विक्टोरिया (1837-1901 ई०) ने शासन के नियमों में सुधार कर सभी देशी रियासतों को दत्तक पुत्र गोद लेने का अधिकार प्रदान कर दिया। अतः नागौद को भी यह अधिकार प्राप्त हुआ।

रेल लाइन

राजा राघवेन्द्रसिंह के शासनकाल में 1863 ई० में इलाहाबाद-जबलपुर रेल लाइन बिछना प्रारम्भ हुई। 1863 ई० में नागौद राज्य के लगरगवां और उचेहरा से यह रेल लाइन निकली। 1868 ई० में बाकायदा इस रेल लाइन पर गाड़ियां दौड़ने लगीं। रेल लाइन हो जाने से आवागमन में सुविधा हुई। इससे इस क्षेत्र का सम्पर्क देश के अन्य भागों से तो हुआ किन्तु सबसे अधिक लाभ अंग्रेजों को हुआ। अब वे अपना सैनिक साज-सामान गड़बड़ी वाले इलाकों में शीघ्रतापूर्वक भेज सकते थे।

विजयराघवगढ़ और मैहर विजय

वि०सं० 1914 (1857 ई०) के स्वतंत्रता संग्राम की लहर से रीवा राज्य भी अछूता न रह सका। अनेक इलाकेदार विद्रोही हो गये। इनमें मैहर के राजा रघुवीरसिंह और विजयराघवगढ़ ने इलाकेदार सरयूप्रसाद भी सम्मिलित थे। अतः अंग्रेज सरकार ने रीवा नरेश महाराजा रघुराजसिंह और नागौद के राजा राघवेन्द्र सिंह से विद्रोह शान्त करने का आग्रह किया। 29 दिसम्बर, 1857 ई० को रीवा की फौज ने मैहर के परकोटे पर से चढ़कर शहर में प्रवेश किया और 4 जनवरी, 1958 ई० को मैहर जीत लिया। तत्पश्चात् 19 जनवरी, 1858 को झुकेही और 21 जनवरी, 1958 को कन्हवार पर विजयश्री प्राप्त की गयी।

विजयराघवगढ़ का शासक मैहर घराने के प्रयागदास का पुत्र सरयूप्रसाद था। इस समय उसकी आयु सत्रह वर्ष की थी। 1 फरवरी 1858 ई० को वह युद्ध में पराजित होकर विजयराघवगढ़ छोड़कर निकल गया। 7 वर्षों तक साधु के वेश में इधर-उधर घूमने के पश्चात् 1865 ई० में उसने आत्महत्या कर ली। विजयराघवगढ़ का इलाका अंग्रेजों ने जप्त कर लिया। इसी जप्त इलाके से नागौद राजा को धनवाही के ग्यारह ग्राम दिये गये थे। मैहर का राजा नाबालिग था और विद्रोह में सम्मिलित न था। अतः उसका राज्य उसे वापस कर दिया गया।[324]

पिता की वापसी

राजगद्दी से उतार दिये जाने पर राजा बलभद्रसिंह इलाहाबाद में निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहे थे। राजा राघवेन्द्रसिंह ने अपनी बहिन चन्द्रभानकुंवरि का विवाह हाड़ापति बूँदी नरेश महाराजा रामसिंह से तय किया और पिताश्री बलभद्रसिंह को कन्यादान के लिए बुलाया। तब से वे नागौद में ही रहे।

महाराज राघवेन्द्रसिंह की उचेहरा स्थित विदेहीदास अखाड़ा में विशेष रुचि थी। अखाड़े की वास्तविक स्थिति जानने के लिए वे पत्र लिखवाते थे। 10 अगस्त 1868 ई० को अखाड़े का कुशलक्षेम जानने के लिए उन्होंने पत्र व्यवहार किया था। उनके शासनकाल में अखाड़े को सबसे ज्यादा सनदें प्रदान की गयीं। रानी सुखराजकुंवरि ने विजहरा की जमीन मिती फाल्गुन वदी 30 संवत् 1891 तदनुसार 27 अगस्त 1834 ई० को दी थी। श्री महाराजकुमारी देदेवी ने महन्त विदेहीदास से गुरुमंत्र लिया और महन्त जी को पाल्हनपुर ग्राम भादौ-वदी 6 संवत् 1908 (1851 ई०) को दिया। महाराजकुमारी दैदेवी ने एक दूसरी सनद् भी राजा राघवेन्द्र सिंह की उपस्थिति में अखाड़े को दी थी। किन्तु लेखक इसमें तिथि लिखना भूल गया है। बड़ी महारानी बिसेनिन

324. परिहारों का पीढ़ीनामा उरदना से प्राप्त।

(राघवेन्द्रसिंह) ने श्री महन्त सेवादास जी को दो हल की जमीन अमिलिया बांध में मिती अगहन सुदी 8. संवत् 1921 (1864 ई०) को दी थी। इस सनद से यह भी ज्ञात होता है कि इस समय (1864 ई०) तक महन्त विदेहीदास का स्वर्गवास हो गया था और महन्त पद पर श्री सेवादास आसीन थे। राजमाता करसरावाली वघेलिन ने आषाढ सुदी 14. संवत् 1936 को उचेहरा अखाड़े के महन्त सेवादास को पिपरी मौजा लहुरवा भैर रु० 50.00 प्रदान किया। राजा राघवेन्द्रसिंह विद्वान नरेश थे। वे फारसी उर्दू और संस्कृत के अतिरिक्त आयुर्वेद के अच्छे ज्ञाता थे। उन्हें कालिका का इष्ट था। वृद्धावस्था में दिमागी खरावी के कारण 22 फरवरी 1874 ई० को उनका स्वर्गवास हुआ।

यादवेन्द्रसिंह (1874-1922 ई०)

श्री यादवेन्द्रसिंह का जन्म 30 दिसम्बर, 1855 ई० को हुआ था। उन्नीस वर्ष की अवस्था में 12 जून, 1874 ई० को उनका राज्याभिषेक हुआ। आपका पहला विवाह गहरवार राजा विजैपुर में हुआ। इस विवाह से एक पुत्र हुआ। किन्तु दुर्भाग्यवश माता और पुत्र दोनों का स्वर्गवास हो गया। अतः दूसरा विवाह भी विजैपुर में हुआ। इस रानी का नाम भागवतीदेवी था। तीसरा विवाह वावू वेनीप्रसाद, झिन्ना की वहिन पद्मकुंवरि से सम्पन्न हुआ। किन्तु इनसे भी कोई सन्तान नहीं हुई। अतः कतकोन खुर्द के ठाकुर जयमंगलसिंह के पुत्र वल्देवसिंह को गोद लेकर वालक का नाम भार्गवेन्द्रसिंह रखा गया। चौथा विवाह भाजीखेरा ग्राम के बघेल ललई सिंह की वहिन वत्सराजकुंवरि से 1908 ई० में हुआ। इसी रानी से वड़े कुंवर नरहरेन्द्रसिंह का जन्म अगहन वदी 30 रविवार संवत् 1968 (1911 ई०) को हुआ। द्वितीय कुंवर महेन्द्रसिंह का जन्म 8 फरवरी 1916 ई० को हुआ। इन्हीं रानी साहवा के गर्भ से तीन कन्याओं का जन्म हुआ, जिनमें से एक की मृत्यु शैशवावस्था में ही हो गयी।

कोर्टस ऑफ वार्ड्स

श्री यादवेन्द्रसिंह को फरवरी 1882 ई० में पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल वार से राज्य के पूर्ण अधिकार प्राप्त हुए। किन्तु राजा साहव पूजा-पाठ में अधिक समय विताते थे। अतः शासन व्यवस्था लड़खड़ाने लगी। राज्य की आय से व्यय अधिक वढ़ गया। कोई दूसरा उपाय न देखकर अंग्रेज सरकार ने राज्य का प्रवन्ध अपने हाथ में ले लिया और प्रशासन के लिए दीवान नियुक्त कर दिया। 6 जून, 1920 ई० को राजा यादवेन्द्रसिंह को पुनः राज्याधिकार प्राप्त हुआ। नागौद रियासत दीर्घकाल तक कोर्ट ऑफ वार्ड्स रही। इस समयावधि में कम्पनी सरकार की ओर से वघेलखण्ड एजेन्सी के पोलिटिकल एजेण्ट इसके प्रशासक रहे। राज्य का कार्यभार संभालने के लिए कम्पनी शासन से निम्नांकित दीवान नियुक्त हुए –

नाम	पदवी	अवधि
1. श्री गुलाम कादिर	दीवान	1895-1896 ई०
2. वावू राधेलाल जी	,,	1896-1906 ई०
3. मुंशी हनुमान प्रसाद जी	,,	1906-1920 ई०
4. पं० इकवाल कृष्ण जी	,,	1920-1921 ई०
5. वावू हरिशंकर जी	,,	1921-1924 ई०

उवारीदार

नागौद राज्य में उवारीदारों (जागीरदारों) की पर्याप्त संख्या थी। किन्तु इनमें मुख्य उवारीदार निम्न थे – इनका वर्णन इस प्रकार है –

(1) सुरदहा (2) भटनवारा (3) उमरहट (4) पतौरा (5) पिपरोखर (6) जिगनहट। इनका विस्तृत विवरण आगे सजरा में देखिए।

सर्वे बन्दोवस्त

राजा यादवेन्द्रसिंह के शासनकाल में मालगुजारी ठेकेदार वसूल करते थे। यह व्यवस्था उपयुक्त न थी। अतः 1889 ई० में सर्वे सेटिलमेण्ट आफिस की स्थापना हुई और स्थायी बन्दोवस्त अधिकारी की नियुक्ति हुई।

अकाल

वि०सं० 1953 (1897 ई०) में रियासत में एक भीषण अकाल पड़ा। आज भी स्थानीय जन इसका स्मरण तिरपन के अकाल के नाम से करते हैं। संवत् 1953 के बाद संवत् 1956 (1899 ई०) में पुनः दूसरा अकाल पड़ा। वास्तव में चार साल पहले से ही अकाल के लक्षण प्रकट होने लगे थे। कभी अतिवृष्टि, कभी अनावृष्टि और कभी खड़ी फसल का नष्ट हो जाना अकाल का मुख्य कारण था। इस समय बाबू राधेलाल दीवान थे। उन्होंने रु० 48, 000.00 और रु० 10, 000.00 का कर्ज स्थानीय सेठों से लिया। इसमें से रु० 10, 000.00 उवारी के ग्रामों को राहत पहुँचाने के लिए दिया गया।

बाजार भाव

इस समय एक रुपये में गेहूँ 25 सेर से 36 सेर, चावल 18 सेर से 24 सेर, अलसी 20 सेर, चना 32 से 40 सेर, कोदई 30 से 32 सेर, कोदों 48 सेर, नमक 22 सेर, घी चार आना से छह आना प्रति सेर, लौंग एक आना छंटाक, गुड़ तीन पैसा सेर, चांदी छह आना तोला, सोना पन्द्रह रुपये तोला, लट्ठा दो आना गज, रुई तीन-चार आना सेर, नारियल तीन पैसे में, सुपारी तीन-चार पैसा पाव, दूध दो या तीन पैसा सेर मिलता था।

दैवी प्रकोप

1918 ई० (वि०सं० 1975) के कार्तिक माह में भारत में इन्फ्लुएंजा का प्रकोप हुआ। इससे बड़ी मात्रा में जन हानि हुई। इसके अगले ही वर्ष 8 अगस्त 1919 (श्रावण सुदी, संवत् 1976) को अतिवृष्टि और बाढ़ से राज्य की भीषण जन-धन हानि हुई।

शिवरात्रि उत्सव

महाराज यादवेन्द्रसिंह शिव के परम भक्त थे। शिवरात्रि के अवसर पर राज्य की ओर से पूरे फाल्गुन माह बड़ा उत्सव मनाया जाता था। यह उत्सव उचेहरा के श्री मुरलीधर मंदिर में किया जाता था। इस अवसर पर माड़ापति को विशेषरूप से आमंत्रित किया गया था। उनके सतना स्टेशन आगमन पर बाबू वैकुण्ठनाथ ने अगवानी की और तत्पश्चात् उचेहरा में उनके विश्राम की व्यवस्था की।

महोत्सव महाराष्ट्र निवासी सोमनाथ के निर्देशन में सम्पन्न हुआ था। पूजा चतुर्दशी के दिन प्रारम्भ हुई। सबसे पहले जलयात्रा प्रारम्भ हुई। गाजे-बाजे के साथ राजा ने नदी तट पर

स्थित पशुपतिनाथ के मंदिर में पहुंचकर उनके दर्शन किये। यह मंदिर उचेहरा में वरुआ नाले के किनारे पर स्थित है। यहां पर चौक पूर कर कन्यायों द्वारा लाये गये सरित जल के कलशों की स्थापना की गयी। सन्ध्या समय होने पर राजा ने आरती की। इसके वाद चार दिनों तक चलने वाली शिवपूजा प्रारम्भ हुई। चारों याम की पूजा समाप्त होने पर राजा ने परीवा को अग्निहोत्र किया। कैलाशेश्वर के पूजन के लिए वावन-वावन सेर दूध, दही, मधु, मृदु और शक्कर का पंचामृत वनाया गया और भगवान के षटरस भोजन की व्यवस्था की गयी।

साकेतवास

महाराज यादवेन्द्रसिंह 1922 ई० के दिल्ली दरवार में सम्मिलित हुए। इसी वर्ष मथुरा-वृन्दावन की तीर्थयात्रा करते हुए वे वनारस पहुंचे। कार्तिक सुदी 14 दिन शनिवार, सं० 1929 तदनुसार 4 नवम्वर, 1922 ई० को अस्सी घाट स्थित नागौद राज्य की कोठी में उनका स्वर्गवास हुआ। यहीं मणिकर्णिका घाट पर उनकी अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न हुई।

नरहरेन्द्रसिंह (1922-1926 ई०)

महाराज यादवेन्द्रसिंह की मृत्यु के पश्चात् अल्पवयस्क पुत्र नरहरेन्द्रसिंह सिंहासन पर वैठे। अल्पवयस्क होने के कारण अंग्रेज सरकार की ओर से शासन प्रवन्ध के लिए वावू हरिशंकर को दीवान नियुक्त किया गया।

युवराज नरहरेन्द्रसिंह इस समय डेली कालेज, इन्दौर में विद्याध्ययन कर रहे थे। इसी समय उन्हें कण्ठमाल रोग हो गया। संरक्षक रणफतेहसिंह की देखरेख में इन्दौर चिकित्सालय में उनकी शल्यक्रिया की गई, जिसके फलस्वरूप ग्वालियर हाउस में 27 फरवरी, 1926 ई० की रात्रि में उनका देहावसान हो गया। उचेहरा के श्मशानघाट में उनकी अन्त्येष्टि सम्पन्न हुई।

महेन्द्रसिंह (1926-15 अगस्त, 1947 ई०)

अग्रज नरहरेन्द्रसिंह की मृत्यु के वाद अवस्यक महेन्द्रसिंह राज्याधिकारी हुए। नावालिग होने के कारण राज्य का शासन प्रवन्ध कम्पनी सरकार के हाथ में रहा। 1928 से 1932 ई० तक पं० रामनारायण लाल 'भल्ला' ने दीवान पद पर कार्य किया। युवराज की संरक्षकता का दायित्व उरदनी के रणफतेहसिंह पर था। इलाकेदार उमरहट श्री भागवतप्रतापसिंह कौन्सिल के सदस्य थे। 1932 ई० में प्रेसीडेण्ट पद पर लालसाहव भार्गवेन्द्रसिंह, नागौद की नियुक्ति हुई। वे 8 फरवरी, 1936 ई० तक इस पद पर रहे। तत्पश्चात् 1938 से 1942 ई० तक के राज्य के दीवान रहे।

राज्याधिकार

महाराज महेन्द्रसिंह की शिक्षा-दीक्षा इन्दौर और वंगलौर में सम्पन्न हुई। वयस्क होने पर 9 फरवरी 1938 ई० को आपका राज्याभिषेक हुआ। 1939 ई० में आपको सेशन के अधिकार प्राप्त हुए। आप भारतीय नरेश मण्डल के सदस्य रहे।

उपाधियां

सिंहासनारोहण के पश्चात् आपने रगला के देवानारायण और गुढ़वा के गंगा सिंह ए०डी०सी० ताजीमी सरदार नियुक्त हुए। चन्दकुइया के रामस्वरूप राजवैद्य और उमरहट के इलाकेदार साहव को आनरेरी मजिस्ट्रेट का पद प्रदान किया गया। लाल अवधेशप्रतापसिंह को 'राजरत्न' तथा चन्द्रमौलिप्रतापसिंह को 'राज्यभूषण' की उपाधियां प्रदान कर गौरवान्वित किया गया। दोनों महानुभावों को आनरेरी मजिस्ट्रेट के अधिकार प्रदान किये गये।

भारतीय गणतंत्र में राज्य का विलय

15 अगस्त, 1947 ई० को भारत स्वतंत्र हुआ। 15 अगस्त, 1947 ई० से मार्च 1948 ई० तक राज्य का शासन प्रबन्ध मुख्यमंत्री श्री शंकरसिंह ने किया। 26 जनवरी 1948 ई० को पूर्ण उत्तरदायी लागू हुआ और 1 अप्रैल 1948 ई० को विन्ध्यप्रदेश का निर्माण हुआ, जिसमें इस क्षेत्र की सभी रियासतें अन्तर्भुक्त कर दी गई।

रियासत विलयन के पश्चात् आपको रु० 55,000.00 वार्षिक प्रिवी पर्स मिलता था। 1 दिसम्बर, 1971 ई० से सभी भूतपूर्व राजाओं के प्रिवी पर्स और विशेषाधिकार समाप्त कर दिये गये।

मृत्यु

इलाहाबाद स्थित अपने नागेन्द्र भवन की छत से गिरने के कारण महाराज महेन्द्रसिंह की रीढ़ की हड्डी टूट गई, जिससे 23 अक्टूबर, 1981 ई० को 65 वर्ष की आयु में उनका देहावसान हो गया।

महाराज महेन्द्रसिंह के दो विवाह हुए। धर्मपुर (गुजरात) वाली बड़ी महारानी साहिबा से तीन पुत्र (1) रुद्रेन्दुप्रतापसिंह (2) शैलेन्द्रप्रतापसिंह और (3) धर्मेन्द्रसिंह तथा बांधीवाली छोटी महारानी साहिबा से पांच पुत्र (1) नागेन्द्रसिंह (2) रामदेवसिंह (3) रन्तिदेवसिंह (4) कान्तिदेवसिंह और (5) छत्रपालसिंह हुए।

रुद्रेन्दुप्रतापसिंह

आपका जन्म 7 मार्च 1936 होली के दिन हुआ। पिता महाराज महेन्द्रसिंह की मृत्यु के पश्चात् परम्परानुसार ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण आप उत्तराधिकारी हुए।



अध्याय 7

पतौरा का इतिहास

नागौद के राजा अहलादसिंह के चार पुत्र थे – (1) शिवराजसिंह (2) दिलराजसिंह (3) महिपालसिंह और (4) महीपतसिंह। इन पुत्रों में शिवराजसिंह ज्येष्ठ पुत्र थे। अतः राजा अहलादसिंह के बाद के नागौद की राजगद्दी के अधिकारी हुए। शेष तीन पुत्रों को राज्य से हिस्सा मिला। इनमें से दिलराजसिंह को उमरहट का इलाका प्राप्त हुआ जिसकी वार्षिक आय रु० 4250.00 थी। महिपालसिंह को पतौरा इलाका मिला जिसकी सालाना आय रु- 3440.00 थी। चतुर्थ पुत्र महीपतसिंह को मौजा चौथार मिला। इसकी सालाना आय रु० 60.00 थी।

महिपालसिंह की माता का नाम ददौवा साहब था। उन्हें सुर्किन रानी साहबा भी कहा जाता था। वे बड़ी रानी थी। किन्तु छोटी रानी के पहले पुत्र होने के कारण उनके पुत्र महिपालसिंह को राजगद्दी नहीं मिली। ददौवा साहब उर्फ सुकिन रानी को निजी खर्च के लिए दो गांव (1) मतरी और (2) आधा गांव लगरगवां तथा मौजा मुगहर और वीरपुर दिया गया था। रानी बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की थी। उन्होंने अनेक तालावों और बावलियों का निर्माण कराया। नागौद-उचेहरा मार्ग पर स्थित वावली का निर्माण आपके द्वारा कराया गया था। इसके अतिरिक्त नागौद का रानी तालाव, उमरी (पतौरा) का तालाव और पतौरा खास का तालाब जिसके तीन और पक्की सीढ़ियां है, का निर्माण भी आपने कराया था। कहा जाता है कि जहां पर उनके पीनस के कहार बदले जाते थे वहीं पर बावली खुदवाई जाती थी। पिथौराबाद का तालाव भी आपके द्वारा बनवाया हुआ प्रतीत होता है। इस तालाव को आजकल विदुआ सागर कहा जाता है, जो ददुआ (साहबा) का अपभ्रंश प्रतीत होता है।

नागौद के राजा शिवराजसिंह ने आषाढ़ वदी 7 बृहस्पतिवार, सवंत 1845 (1788 ई०) को पतौरा इलाका की सनद प्रदान की थी। इस इलाके के कुल आमदनी रु० 3440.00 थी, जिसका विवरण इस प्रकार है –

रु० 700.00 पतौरा औजौन भुइ मौहार की लगी है।

500.00 वीरपुर धौरा

700.00 उजनेही

500.00 उमरी, महेवा, महेई, दुवे की भूमि इसमें सम्मिलित नहीं है।

550.00 अतरहार (नन्दहा) जगत बाहेर

350.00 गुढुआ

3300.00

इसके अतिरिक्त रु० 140.00 की आमदनी पाठे के ग्रामों से भी होती थी। इसका विवरण इस प्रकार है –

50.00 झखौर

40.00 कुम्ही

40.00 भरउली

10.00 पपरागार

140.00

इस प्रकार कुल आमदनी रु० 3300 + 140 = 3440.00 थी।

उपर्युक्त रु० 3440.00 की उवारी रु० 301.00 निर्धारित की गई थी। इस बावत राजा शिवराजसिंह ने मिती अगहन वदी 8 संवत् 1854 (1797 ई०) को एक सनद प्रदान की थी। कालान्तर में सुर्किन रानी को व्यक्तिगत खर्चे के लिए प्राप्त पूर्वोक्त दो ग्राम भी पतौरा इलाका में सम्मिलित कर दिये गये।

हिस्सा बांट में पतौरा इलाका मिलने के समय महिपालसिंह अल्प वयस्क थे। अतः वे मां साहव के साथ पतौरा आये थे और उन्हीं के संरक्षण में पतौरा गढ़ी का निर्माण हुआ था। गढ़ी के चारों ओर एक खाई थी और खाई के वाद परकोटा वनवाया गया था। गढ़ी में सोलह वुर्जे थी। 1844 ई० में इसकी एक मंजिली तीन वुर्जे शेष थी। कालान्तर में एक वुर्ज शेष रही और दो के अवशेष विद्यमान हैं। परकोटा के अन्दर एक वावड़ी तथा दो कुआं है। एक कुआं भीतर है और दूसरा वाहर है। ये कुएं और वावड़ी अव भी विद्यमान है। गढ़ी का कोट तोपों से ढहा दिया गया तथा उत्तर की ओर की खाई भाट दी गई है।

महिपालसिंह के चार पुत्र हुए (1) रणमतसिंह जिन्हें पतौरा मिला। (2) अमरजीत सिंह को रु० 550.00 का मौजा अतरहार (नन्दहा) तथा रु० 100.00 का कोलगमा मिला। इस प्रकार उन्हें रु० 650.00 वार्षिक आय का हिस्सा मिला। इसकी उवारी रु० 60.00 सालाना थी। (3) तीसरे पुत्र हरिहरवख्श सिंह को रु० 500.00 वार्षिक आय वाले उमरी, महेवा और महेई का इलाका मिला। इसकी उवारी रु० 50.00 सालाना निश्चित की गई थी। (4) चौथे पुत्र जवरसिंह को रु० 350.00 आय वाला गुढुआ मौजा मिला। इसकी उवारी रु० 40.00 सालाना थी। उपर्युक्त तीनों भाइयों को पतौरा के इलाकेदार रणमतसिंह ने जेठ वदी 30 वुधवार, संवत 1878 को सनदें प्रदान की थी। किन्तु सभी भाइयों ने अपने-अपने इलाके का अधिकार संवत् 1885 में प्राप्त किया। द्वितीय पुत्र अमरजीतसिंह के निस्सन्तान होने के कारण उनकी मृत्यु के पश्चात् इलाका पुनः पतौरा में सम्मिलित कर लिया गया।

रणमतसिंह के समय में नागौद नरेश वलभद्रसिंह ने पहली सनद के मुताविक दिये गये मौजा मगहर के वदले में मौजा मतरी तथा मौजा लगरगमा का आधा भाग आपकी दादी दरौवा साहवा उर्फ सुर्किन रानी के निजी खर्च के लिए दिया गया था। सुर्किन रानी की मृत्यु के पश्चात् माघ वदी 2 संवत् 1879 की दूसरी सनद के द्वारा उपर्युक्त इलाका पतौरा में सम्मिलित कर दिया गया। सुर्किन रानी के समय दो लखहा वाग लगवाये गये और एक लखहा वांध वनवाया गया। इसका प्रबन्ध भी उनकी देखरेख में होता था।

रणमतसिंह के तीन पुत्र हुए – (1) मोहनवख्शसिंह (2) गिरधरवख्श सिंह और (3) धनुषधारीवख्शसिंह। इनमें से मोहनवख्श सिंह पतौरा के इलाकेदार हुए। गिरधरवख्शसिंह को नन्दहा और धनुषधारीवख्शसिंह को मौजा उजनेही मिला। मोहनवख्शसिंह के पुत्र का नाम हनुमानवख्शसिंह

था जिनका ढ़ाई वर्ष की आयु में संवत 1898 (1841 ई०) में देहावसान हो गया। इसी वर्ष 15 चैत्र संवत 1898 में मोहनवख्शसिंह भी स्वर्गवासी हुए। पिता-पुत्र की छतरियां मोहन वाग में अगल-बगल वनी है। छतरी के पास ही उनके दीवान रघुवरसिंह का चवूतरा वना है।

मोहनवख्शसिंह की मृत्यु के वाद उनकी ठकुराइन रघुराजकुंवरि और छोटे भाई गिरधरवख्शसिंह दो साल तक गढ़ी में एक साथ रहे। तत्पश्चात् ठकुराइन चित्रकूट में रहने लगी। नागौद राजा राघवेन्द्र सिंह पतौरा वालों से प्रसन्न न थे। इसके दो कारण थे –(1) राजा वलभद्रसिंह ने रिछपाल और दक्षपाल घोषियों द्वारा भाई जगतधारीसिंह करही वालों को मरवा दिया था। मृत्यु के वाद उनके छोटे भाई नारायणवख्शसिंह सितपुरा के इलाकेदार हुए। वे पतौरा के गिरधरवख्शसिंह के अभिन्न मित्र थे। जगतधारीसिंह के पुत्र फतेहसिंह और नारायणवख्शसिंह ने मुकदमें की पैरवी की। इसमें गिरधरवख्शसिंह ने उनकी मदद की। राजा वलभद्रसिंह को इस मुकदमें में सजा हो गई। इस समय राघवेन्द्रसिंह अवयस्क थे। अतः शासनप्रवन्ध अंग्रेजों की देखरेख में होता था। वयस्क होने पर राघवेन्द्रसिंह को शासन के अधिकार प्राप्त हुए। अतः उन्होंने मुकदमें से सम्बन्धित सभी भाइयों के खिलाफ कोई न कोई आरोप लगाकर दमन करना प्रारम्भ कर दिया। इनमें से एक पतौरा के गिरधरवख्शसिंह भी थे। (2) दूसरा कारण यह था कि मनकहरी के ठाकुर रणमतसिंह की वहिन का विवाह उमरी के हरिहरवख्शसिंह से हुआ था। इसलिए रणमतसिंह का पतौरा और उमरी आना-जाना होता था। स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के कारण रणमतसिंह को वागी घोषित कर दिया गया था। क्योंकि राजा राघवेन्द्रसिंह अंग्रेजी सरकार के समर्थक थे, अतः वरावर सरकार को सूचित करते थे कि रणमत सिंह का पतौरा में आना-जाना है।

उपर्युक्त दोनों कारणों से जव गिरधरवख्शसिंह ने पोलिटिकल एजेण्ट को 29 अप्रैल 1844 ई० को यह आवेदन किया कि वड़े भाई के मरने पर इलाका उन्हें दिया जाय। तव उनके आवेदन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया और 7 मई 1844 ई० को यह इलाका ठकुराइन रघुराजकुंवरि के नाम वहाल कर दिया गया। 20 मई 1844 ई० को सागर-गढ़ा-मण्डला के पोलिटिकल एजेण्ट को गिरधरवख्शसिंह के नाम यह आदेश जारी हुआ कि वे पतौरा इलाका रघुराजकुंवरि को सौंप दें। इसी समय नागौद राजा राघवेन्द्रसिंह ने गढ़ी खाली कराने के लिए पोलिटिकल एजेण्ट से उसे तोपदम कराने का आदेश प्राप्त कर लिया। अतः गढ़ी को तोपदम करा दिया गया। इसी समय तोप का एक गोला ठाढ़ी स्थित मंदिर में लगा जिससे वह आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त हो गया। इसी समय तोपची के मर जाने से गोलावारी वन्द कर दी गई।

कालान्तर में गिरधरवख्शसिंह ने इलाका वहाली की एक अर्जी झांसी में दी। इस समय तक पहले पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल स्लीमैन का तवादला हो गया था और उनके स्थान पर लेफ्टीनेट लारकीन डिप्टी कमिश्नर द्वितीय श्रेणी नियुक्त हुए। इसी समय फिजूलखर्ची के कारण नागौद रियासत कोर्ट ऑफ वार्ड्स हो गई और लारकीन ही रियासत का काम करने लगे। इसी समय गिरधररवख्श को ज्ञात हुआ कि उनकी भावज रघुराजकुंवरि चित्रकूट में वहुत वीमार है। गिरधरवख्शसिंह उनसे मिलने गये। रघुराजकुंवरि ने अपना अन्तिम समय जानकर आषाढ़ सुदी 7 सं० 1904 को एक पत्र लिखवाया कि अस्वस्थता के कारण हमारे जीवित रहने की आशा नहीं है। अतः हमने रियासत पतौरा लाल गिधरवख्शसिंह को सौंप दी है और अपने होशो-हवास में दरख्वास्त करते हैं कि उनके नाम पुस्त-दर-पुस्त वहाल रहे। जव तक हम जिन्दा हैं तव तक वदस्तूर पतौरा हमारे कब्जे में रहेगा और मरने के वाद वे मालिक हैं। इस पत्र के साथ ठकुराइन ने पतौरा की सनद भी अपने देवर गिरधरवख्शसिंह को सौंप दी। ठकुराइन की मृत्यु सं० 1904 (30 जुलाई, 1847 ई०) में चित्रकूट में हुई। हेनरी सलेमान साहव वहादुर एजेण्ट नवाव गवर्नर जनरल वहादुर के आदेश से पतौरा इलाका गिरधवख्शसिंह के नाम 10 अगस्त 1847 ई० में वहाल हुआ।

गिरधरवख्शसिंह का विवाह मौजा वरहना (कोठी राज्य) के वघेलों के यहां हुआ था। उनके तीन पुत्र (1) किशोर सिंह (2) जगन्नाथसिंह (3) बैजनाथसिंह और एक लड़की थी। राजा साहव राघवेन्द्र सिंह ने जव अपनी वहिन का विवाह वूंदी नरेश से किया तब सभी वन्धु बान्धवों को निमंत्रण दिया। महाराज बूंदी ने एक साथ दो विवाह करने का विचार प्रकट किया। अतः राजा साहब नागौद ने पतौरा वालों से अपनी लड़की का विवाह करने को कहा। लेकिन गिरधरबख्शसिंह ने कहा कि यदि महाराज बूंदी को विवाह करना है तब पतौरा चलकर करें। यहां से शादी न हो सकेगी। इस पर नागौद राजा साहब ने कहा कि ठीक है अपनी पुत्री पर छत्र तथा चमर चलवा लेना। इसी बात को लेकर गिरधरवख्शसिंह ने अपनी पुत्री धर्मराजकुंवरि का विवाह रीवा महराज रघुराजसिंह से किया। इस विवाह में सन्नेही (अमरपाटन) के मड़रिहा पाण्डे चिन्तामणि ने अहम् भूमिका अदा की। चिन्तामणि पाण्डे पतौरा के निवासी थे। उनके पिता ने रीवा महाराजा रघुराजसिंह की चिकित्सा की थी जिससे प्रसन्न होकर उन्हें रीवा की ओर से रु० 10, 000.00 का इलाका मिला था। रीवा महाराजा से विवाह तय हो जाने पर गढ़ी की वारादरी वनवाई गयी, जो सात दिन में बनकर तैयार हुई।

गिरधरवख्शसिंह ने सिन्दूरिया पहाड़ की तलहटी में एक तालाव का निर्माण कराया तथा आम और केवड़ा का एक वाग लगवाया। इसी केवड़ा के वगीचे के कारण आस-पास के स्थान को केमलागार कहा जाता है। इस छतरी को नन्हें खां कारीगर मुकाम कोठी ने बनाया था। छतरी में रंगसाजी भी की गई थी, जो अद्यावधि विद्यमान है। इसी छतरी में मेहराव की पटाव में भरहुत का एक स्तम्भ लगा है, जिस पर अण्डभूत जातक का अंकन है। छतरी के पास एक मंदिर और एक कुआं भी वनवाया गया था। मंदिर में भगवान की मूर्तियों की प्राण-प्रतिष्ठा कराकर उनके राग-भोग के लिए जमीन लगा दी गई। गिरधरवख्शसिंह की मृत्यु 19 फरवरी 1876 ई० में हुई।

गिरधरवख्शसिंह के तीन पुत्र थे – (1) किशोरसिंह (2) जगन्नाथसिंह और (3) वैजनाथसिंह। किशोरसिंह को पतौरा मिला। जगन्नाथ सिंह को कोलगवां मौजा रु० 100 तथा उजनेही मौजा की तीन सौ रुपयों की सालाना पाटी कुल चार सौ रुपयों का हिस्सा मिला। वैजनाथसिंह की मृत्यु विवाह होने से पहले ही हो गई। चौथी सन्तान पुत्री थी जिसका विवाह रीवा महाराजा रघुराजसिंह से हुआ।

किशोरसिंह के कई विवाह हुए (1) कछिया टोला (कृपालपुर) के वघेल इलाकेदार साहव के यहां, (2-3) मौजा करही के वघेलों के यहां। ये इलाके सोहावल राज्य के अन्तर्गत थे, (4) गड़रन के सुरकी (सोलंकी) ठाकुरों के यहां। उनके चार पुत्र थे। रामराघौसिंह को पतौरा का इलाका मिला। शेष तीन भाइयों - रामसुदर्शनसिंह, रामदामोदरसिंह और सरजूसिंह को नन्दहा (अतरहार) तथा कोलगवां मौजा और लगरगवां की आधी पट्टी हिस्से में दी गई।

रामराघौसिंह का जन्म संवत् 1914 (1857 ई०) को हुआ था। आपका विवाह पथरेही के वाघेल इलाकेदार के यहां हुआ था। उनके दो पुत्र हुए – (1) अवधेन्द्रप्रतापसिंह और (2) कौशलेन्द्रप्रतापसिंह। अवधेन्द्रप्रतापसिंह को पतौरा और कौशलेन्द्रप्रतापसिंह को धौरा तथा लगरगवां की शेष आधी पट्टी मिली। आपके दो पुत्रियां भी थीं जिनका विवाह दुर्जनपुर (सज्जनपुर) के बाघेल इलाकेदार के साथ हुआ। पहले वड़ी लड़की का विवाह हुआ। किन्तु उसकी असामयिक मृत्यु हो जाने पर छोटी पुत्री का विवाह भी उनके साथ कर दिया गया।

रामराघौसिंह ने पतौरा गढ़ी में एक विशाल मंदिर का निर्माण कराया। पहले यह मंदिर नीचे था। नये मंदिर में अनेक देवी-देवताओं की प्रतिमाएं स्थापित कर प्राण-प्रतिष्ठा कराई। उन्होंने गढ़ी की मरम्मत भी कराई। वे वड़े धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे और प्रायः तीर्थों का भ्रमण करते रहते थे। आपकी मृत्यु फाल्गुन सुदी 9 संवत 1977 (18 मार्च 1921 ई०) को चित्रकूट में हुई।

अवधेन्द्रप्रतापसिंह –

रामाराघौसिंह के बड़े पुत्र अवधेन्द्रप्रतापसिंह का जन्म 1881 ई० में हुआ था। उन्हें पतौरा इलाका मिला। उनका पहला विवाह सरगुजा के राजा साहव के यहां हुआ जिससे एक पुत्र कामदराजसिंह का जन्म हुआ। पहली पत्नी के देहावसान के वाद उनका दूसरा विवाह वेला के वाघेल इलाकेदार विश्वेसरसिंह की वहिन के साथ हुआ था। इस विवाह से भी एक पुत्र हुआ जिसका देहावसान वचपन में ही हो गया। उनकी मृत्यु फागुन सुदी 3 दिन रविवार सं० 1983 (1926 ई०) को चित्रकूट से वापस आने पर हुई।

कामदराजसिंह (24 अप्रैल 1900 - 1 जनवरी 1980 ई०)

कामदराजसिंह का जन्म अवधेन्द्रप्रतापसिंह की सरगुजा की पहली ठकुराइन साहवा से वि०सं० 1957 के चैतमास के शुक्ल पक्ष की कामद एकादशी दिन मंगलवार तदनुसार 24 अप्रैल, 1900 ई० को हुआ था। पतौरा के उवारीदार सदैव चित्रकूट तीर्थ आते-जाते रहते थे। इसीलिए कामतानाथ प्रभु के आशीर्वाद स्वरूप कामदराजसिंह का नामकरण किया गया था। वचपन में ही माता का स्वर्गवास होने के कारण वेलावाली ठकुराइन की देखरेख में आपका पालन-पोषण हुआ। आपकी शिक्षा वेंकट हाईस्कूल सतना में हुई। उस समय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी लाल लल्लासिंह, खमरेही यहां शिक्षक थे। श्री कामदराजसिंह पर अपने शिक्षक का अत्यधिक प्रभाव था। यही कारण है कि वे जीवन भर स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की मदद करने रहे। आपका विवाह वाघेलवंशी, क्षत्रिय इलाकेदार चचाई श्री रामप्रतापसिंह की पुत्री राधिकाप्रसादकुंवरि के साथ हुआ।

22-23 वर्ष की आयु में पिता की मृत्यु-के पश्चात् इलाके की देखभाल का कार्य आपने कुशलतापूर्वक संभाला। आप अपनी वंश परम्परानुसार किसानों के शुभचिंतक थे। आप स्वयं भी एक अच्छे काश्तकार थे। आपने वांधों में पुल वनवाये। उनका जीर्णोद्धार कराया और गढ़ी की इमारतों में वृद्धि की। वचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण आप धार्मिक अनुष्ठान में ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा से सन्तुष्ट करते रहते थे।

6 मई, 1935 ई० को हिज मैजेस्टी दि किंग एम्परर की ओर से वायसराय द्वारा आपको एक पदक प्रदान किया गया। आपके समय में पतौरा में औषधालय नहीं था। किन्तु आप स्वयं एक निपुण वैद्य थे जो रोगियों की स्वनिर्मित दवाइयां प्रदान करते थे। आप आस्थावान व्यक्ति थे। अतः अधिकांश समय भगवान की पूजा, अर्चना और इतिहास-पुराण सुनने में व्यतीत करते थे। आपका देहावसान भगवद् भजन करते हुए 1 जनवरी 1980 ई० को हुआ। आपकी अन्त्येष्टि प्रयाग में हुई। आपके दो पुत्र हुये – (1) रामलषनसिंह और (2) गोपालशरण सिंह।

अध्याय 8

नागौद राज्य का स्वतन्त्रता आन्दोलन में योगदान

1857 ई० के स्वतंत्रता संग्राम का सफलतापूर्वक दमन करने के पश्चात् ब्रिटिश साम्राज्ञी विक्टोरिया ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन समाप्त कर भारत का शासन प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। इसके साथ ही महारानी विक्टोरिया ने यह घोषणा की "कि हम उन सब संधियों तथा इकरारों को स्वीकार करते हैं जो ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा अथवा उसकी ओर से किये गये हैं तथा हम उन पर पूर्णरूप से पावन्द रहेंगे। हम यह भी चाहते हैं कि वे भी उनका पालन करें। हम अपने वर्त्तमान क्षेत्र में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं चाहते। हम देशी राजाओं के अधिकारियों, गौरव तथा प्रतिष्ठा को अपने समान समझेंगे।" महारानी विक्टोरिया की 1.11.1858 की उपर्युक्त घोषणा के *परिणामस्वरूप देशी राजा-महाराजाओं को अभयदान मिल गया और वे ब्रिटिश शासन को अपना* मित्र और शुभेच्छु मानने लगे। 1862 ई० में कानपुर दरवार में सभी निस्सन्तान राजाओं को गोद लेने का अधिकार दे दिया गया। इसी क्रम में नागौद के राजा राघवेन्द्रसिंह को भी एक सनद द्वारा गोद लेने का अधिकार दिया गया।[324]

1862 ई० में अधीनस्थ संघ की नई नीति की घोषणा के कारण स्थानीय शासक अंग्रेजी सरकार के अभिन्न सहयोगी वन गये। इस व्यवस्था के अन्तर्गत स्थानीय राजाओं को भारतीय प्रशासन में शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने का दायित्व सौंपा गया था। रियासतों के शासको को संघ के प्रमुख वायसराय की इच्छानुसार कार्य करना पड़ता था। 1867 ई० में नागौद नरेश राघवेन्द्रसिंह को नौ तोपों की सलामी स्वीकृति की गई।

वायसराय लार्ड लिटन ने देशी राजाओं पर ब्रिटिश सत्ता का वर्चस्व प्रदर्शित करने के लिए 1 जनवरी, 1877 ई० को एक अखिल भारतीय दरवार का आयोजन किया। इस राजदरवार में समस्त राजा-महाराजाओं का सम्मिलित होना अनिवार्य था। इस दरवार में महारानी विक्टोरिया को भारत साम्राज्ञी की उपाधि से विभूषित किया गया, जिसे सभी राजा-महाराजाओं ने स्वीकार कर लिया। इस अवसर पर देशी राजाओं को विभिन्न उपाधियों से अलंकृत किया गया।

1878 ई० में ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों से अस्त्र-शस्त्र छीनकर उन्हें पंगु वना दिया गया। इस घोर निराशाजनक परिस्थितियों में ह्यूम ने 1885 ई० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की। प्रारम्भिक वर्षों में कांग्रेस अपनी अहस्तक्षेप नीति के कारण देशी रियासतों के प्रति उदासीन रही। 1920 ई० में कांग्रेस का नेतृत्व गांधी जी ने सम्हाला जिसके कारण कांग्रेस की विचारधारा और नीतियों में वृहत परिवर्त्तन हुआ। अतः नागपुर वैठक में यह निश्चित किया गया कि देशी रियासतों में भी कांग्रेस को संगठित किया जाय। तदनुसार अजमेर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की स्थापना की गई जिसमें रियासतों के प्रतिनिधि सम्मिलित होने लगे।[325]

1928 ई० में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में प्रस्ताव पारित किया गया कि "यह कांग्रेस भारतीय रियासतों के राजाओं से ज़ोर देकर कहती है कि वे अपनी रियासतों में उत्तरदायी

324. एचिसन, ट्रीटीज, इंगेजमेण्ट्स एण्ड सनद्स, खण्ड 5, सनद बुन्देलखण्ड क्रमांक 13.
325. बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी का संक्षिप्त इतिहास, पृ० 1.

शासन स्थापित करें और शीघ्र ही घोषणा करें अथवा ऐसे नियम बनायें जिसमें नागरिकों के प्रारम्भिक तथा मुख्य अधिकार सुरक्षित रहें। कांग्रेस रियासती जनता को विश्वास दिलाती है कि उत्तरदायी शासन स्थापित कराने के उनके उचित और शान्तिपूर्ण प्रयासों में वह उनकी सहायता करेगी।''[326] उपर्युक्त प्रस्ताव के परिणामस्वरूप देशी रियासतों में कांग्रेस संगठन स्थापित करने लगे। हैदराबाद, भोपाल, मैसूर, ग्वालियर, इन्दौर, त्रावनकोर, रीवा तथा नागौद रियासतों में कांग्रेस की शाखाएं स्थापित हुई।[327]

1931 ई० के करांची अधिवेशन में रीवा के कप्तान अवधेशप्रतापसिंह और राजभानसिंह तिवारी ने भाग लिया।[328] वहाँ से लौटने पर इन लोगों ने बघेलखण्ड में कांग्रेस के गठन पर विचार कर 30 मई 1931 को बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी की स्थापना की। इसी दिन इसे अजमेर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की भी स्वीकृति मिल गई।[329] इसके कार्यक्षेत्र में बघेलखण्ड तथा आस-पास की 34 रियासतें सम्मिलित थीं। नागौद रियासत भी उनमें से एक थी।

कार्य संचालन की सुविधा के लिए बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी की कई शाखाएं स्थापित की गयीं।[330] नागौद राज्य में भी कांग्रेस कमेटी प्रारम्भ की गई। कमेटी के कार्यालय के लिए पं० नर्मदाप्रसाद ने अपना मकान दान कर दिया। इसका विवरण आगे दिया जा रहा है।

पड़ोसी रियासतों की तरह नागौद में भी जन जागरण तथा आन्दोलन का प्रारम्भ 1930 में ही हुआ। यहां के सभी प्रमुख आन्दोलन कांग्रेस के माध्यम से हुए। यहां के प्रमुख कांग्रेसी नेताओं में सर्वश्री राजबहादुरसिंह, लल्लासिंह, शिवशंकरसिंह, रघुवरशरण पटेल, ददनसिंह, हीरामनसिंह, रामनाथ पाठक, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। यहां के जन जागरण में उपर्युक्त नेताओं की विशेष भूमिका रही। ये समस्त नेतागण राज्य के विरुद्ध आन्दोलन करते तथा शासन का कोप भाजन बनते। गरीब और अपढ़ जनता पर पशुवत व्यवहार किया जाता था। उनकी बार-बार कुर्की की जाती: सजा और जुर्माना किया जाता तथा अनेक प्रकार से प्रताड़ित किया जाता था।

प्रथम सत्याग्रह (1931 ई०)

नागौद राज्य में सर्वप्रथम सत्याग्रह करने का निर्णय 1931 ई० में लिया गया। अतः जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी द्वारा शासकीय सेवा से त्यागपत्र दे दिया गया। उन्होंने सबसे पहले अपने गृहग्राम सितपुरा से आन्दोलन प्रारम्भ किया। उन्हें बन्दी बना लिया गया। उनकी गिरफ्तारी के बाद राजबहादुरसिंह के नेतृत्व में दूसरा जत्था सत्याग्रह के लिए तैयार हुआ। परन्तु उसे मुरदहा तालाब पर ही रोक दिया गया तथा सभी नेताओं को बन्दी बनाकर उन पर मुकदमें चलाये गये।[331]

कांग्रेस की स्थापना -

प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी और उन पर कायम मुकदमों के बावजूद सत्याग्रह आन्दोलन की गति में किसी प्रकार की कमी नहीं आई और ऐसी विषम परिस्थिति में भी यहां कांग्रेस की स्थापना हो गई।[332] कमेटी के अध्यक्ष लाल ददनसिंह तथा मंत्री श्री राजबहादुर सिंह हुए। क्षेत्र के प्रायः सभी प्रमुख कांग्रेसी नेताओं को इसका सदस्य बनाया गया। अतः बढ़ती हुई कांग्रेसी

326 सीतारमैय्या, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का इतिहास, पृ० 329.
327. बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी का संक्षिप्त परिचय, पृ० 4-5.
328 म०प्र० और गान्धी जी, म० प्र० सूचना तथा संचालनालय (1989), पृ० 101.
329 विन्ध्याचल, छत्तरपुर (स्वतन्त्रता संग्राम अंक), 1954, पृ० 1-2.
330. बघेलखण्ड जिला कांग्रेस कमेटी का संक्षिप्त परिचय, पृ० 15.
331 श्यामलाल साहू, विन्ध्यप्रदेश के राज्यों का स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, पृ० 327.
332. बाघेलखण्ड कांग्रेस कमेटी का संक्षिप्त इतिहास, पृ० 4.

गतिविधियों का दमन करने के लिए ब्रिटिश पोलिटिकल एजेण्ट के निर्देश पर यहां एक अध्यादेश लागू किया गया, जिसके परिणामस्वरूप नागौद में कांग्रेसी कार्यकलापों और सत्याग्रहियों के विरुद्ध दमनात्मक कार्यवाहियां प्रारम्भ कर दी गयीं। सत्याग्रहियों की पिटाई के लिए जुम्मन खां नामक जूता का प्रयोग किया जाता था। नागौद क्षेत्र में आज भी जुम्मन शब्द का प्रयोग कहावत के रूप में प्रचलित है।

आन्दोलन में गिरफ्तार सत्याग्रहियों को जेल में अनेक प्रकार की यातनाएं दी गयीं। प्रमुख नेताओं को कठोर कारावास दिया गया। कांग्रेस अध्यक्ष लाल ददनसिंह को तीन वर्ष, मंत्री लाल राजवहादुर को डेढ़ वर्ष तथा नर्मदाप्रसाद और रघुवरशरण को कड़ी सजाएं दी गयीं। सर्वश्री रघुवरशरण, जगन्नाथ चतुर्वेदी, राजवहादुर सिंह और भोलादीन पटेल को इन्दौर जेल में रखा गया। अनेक सत्याग्रहियों की जायदादें जब्त कर ली गयीं और उनके रिश्तेदारों को तंग किया गया।

नागौद में राज्य प्रजा परिषद का निर्माण 8. 10. 1938 को किया गया। इसमें राजा की ओर से निम्नांकित घोषणा की गई –

"राज्याधिकार प्राप्त करने के वहुत पूर्व से ही हमारी यह प्रवल धारणा रही है कि हम राज्य शासन विधान में ऐसे सुधार करें जिससे हमारी प्रिय प्रजा का भी हमें संगठित रूप से यथा विधि सहयोग तथा सत्य परामर्श का लाभ प्राप्त हो। उस हार्दिक धारणा की पूर्ति के लिए आज इस शुभ दशहरा के अवसर पर हमें यह घोषणा करते हुए वड़ा हर्ष होता है कि हम इस नागौद वरमै राज्य में एक 'राज्य प्रजा परिषद' की संरचना करते हैं जिसका संगठन और नियम अलग राजाज्ञा द्वारा प्रकाशित किये जायेंगे।" किन्तु उपर्युक्त घोषणा कागज पर ही रह गयी और कभी क्रियान्वित न की जा सकी।

1942 ई० का भारत छोड़ो आन्दोलन

दि० 8. 8. 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने एक स्वर से 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव पारित कर दिया जिसके परिणामस्वरूप अंग्रेजों और कांग्रेस के मध्य तीव्र संघर्ष छिड़ गया। रातों रात देश के प्रमुख नेता गिरफ्तार कर लिए गये। देश में जगह-जगह अश्रुगैस, लाठी चार्ज और गोलियां चलाई गयीं। इसी समय गोपालशरणसिंह, पतौरा और गजेन्द्रसिंह, नागौद प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहे थे। विद्यार्थी आन्दोलन में इन लोगों ने सक्रिय भाग लिया। 12 अगस्त 1942 को इसी विद्यार्थी आन्दोलन में भाग लेते हुए रीवा के लाल पद्मधरसिंह शहीद हुए। तत्पश्चात् आन्दोलन को समाप्त करने की दृष्टि से प्रयाग विश्वविद्यालय बन्द कर दिया गया और छात्रावास खाली करा लिये गये।

विश्वविद्यालय बन्द कर दिये जाने के वाद गोपालशरण सिंह अपने घर पतौरा वापस आ गये। वे आन्दोलनों में सक्रिय रूप से जुड़े रहे। 1946 ई० प्रयाग विश्वविद्यालय से एल०एल०वी० की उपाधि प्राप्त करने के वाद जव वे वापस लौटे तव उनकी भेंट लाल ददनसिंह, लल्लासिंह और जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी से हुई। इन चारों व्यक्तियों की भेंट का विवरण "नागौद-परिचय"[333] में इस प्रकार दिया गया है –

सुन पाया गोपालशरण भी,
अव ला डिगरी सन्मानी है
X X X X
जव गये पतौरा तीनों जन थे,
मै कलि का विश्वामित्र[334] वना,

333. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी रचित
334. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

ठाकुर[335] आशिष देकर मांगा

लघु सुत दे दो हेतु घना।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने अपने हरिपुरा (1940 ई०) प्रस्ताव में देशी रियासतों की भिन्न-भिन्न राजनीतिक परिस्थिति को देखते हुए यह निर्णय लिया कि केन्द्र में आल इण्डिया स्टेट पीपुल्स कान्फ्रेन्स के माध्यम से कार्य किया जाय तथा राज्यों में प्रजा मण्डलों के द्वारा कार्य किया जाय। अध्यक्ष पं० जवाहरलाल नेहरू के आदेशानुसार आल इण्डिया स्टेट पीपुल्स के सचिव श्री जयनारायण व्यास ने एक पत्र द्वारा श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय को प्रजा मण्डल बनाने की अनुमति प्रदान की, तदनुसार मध्य भारत प्रादेशिक देशी राज्य लोकपरिषद के अन्तर्गत इस क्षेत्र की रियासतों का कार्य सौंपा गया। इसके अध्यक्ष श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय और महासचिव श्री कृष्णकान्त व्यास, श्री सीताराम जाजू तथा श्री सैयद हामिद अली थे।

दिल्ली के निर्देशानुसार मध्य भारत देशी राज्य लोक परिषद के अध्यक्ष श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय ने अपने पत्र दिनांक 1.6.46 द्वारा श्री गोपालशरण सिंह को नागौद राज्य में प्रजामण्डल की स्थापना का अधिकार दे दिया। प्रजामण्डल के गठन के साथ ही शासन का दमनचक्र प्रारम्भ हो गया। प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ताओं के साथ मार-पीट की गयी तथा उन्हें वंदी वनाकर जेल में अमानुषिक यातनाएं दी गयीं। 15 जून 1946 ई० को उचेहरा में गठित प्रजामण्डल की स्थायी कार्यसमिति के सदस्य इस प्रकार थे –

(1) सभापति – श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

(2) उपसभापति – श्री ददनसिंह

(3) मंत्री – श्री गोपालशरणसिंह

(4) कोषाध्यक्ष – श्री विहारीलाल

26 जून, 1946 को श्री विजयवर्गीय नागौद आये। 13 जुलाई को सर्वश्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, ददनसिंह, गोपालशरणसिंह, लल्लासिंह और हीरामन सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में उनके साथ अमानुषिक व्यवहार किया गया, जिससे वंदियों को अनशन करना पड़ा।

यह अनशन आठ दिनों तक चला। इन्हीं दिनों वरकोनिया ग्राम निवासी पं० रामसजीवन गौतम ग्राम पिथौरावाद पधारे। उन्होंने अनेक ग्राम निवासियों को प्रजामण्डल का सदस्य बनाया। पंडित जी रामप्रताप चौवे के यहां ठहरे थे। पंडित जी के प्रभाव से वह भी प्रजामण्डल का सदस्य वन गया। किन्तु रात को उसकी हत्या कर दी गई। पुलिस को सूचना देने पर राजसजीवन गौतम तथा रामप्रताप चौवे के परिवारजनों को हत्या के आरोप में वन्दी वना लिया गया। श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक नागौद परिचय में इस घटना का इस प्रकार उल्लेख किया है –

सभी गुप्त हत्या की करनी, लाश प्रकट वतलाती थी ।

इस प्रकार गति होगी क्रूरों मानों यह चिल्लाती थी ।।

अधिक दमन क्या होता है, इतिहासों में भी गायी,

नागौद प्रजामण्डल की सोचो, क्यों ऐसी शक्ति आयी ।

रामसजीवन गौतम भी रहा ग्राम अधिनायक

है लड़का निर्भीक काय में, सव ही का परिचायक ।

हत्यारा सन्देह में इसको, जल्दी पुलिस वुलाई ।

---

335 श्री कामदराजसिंह, पिता श्री गोपालशरणसिंह

नागौद प्रजामण्डल की सोचो क्यों ऐसी शक्ति आई ।

12.12.1946 को सितपुरा में प्रजामण्डल की ओर से एक सभा आयोजन हुआ, जिसमें स्थानीय सदस्यों के अतिरिक्त टीकमगढ़ से प्रेमनारायण खरे तथा सरीला (हमीरपुर) से बिहारीलाल ने भी भाग लिया। दमनकारियों ने इन लोगों को मार-पीट कर सोहावल सीमा पर फेंक दिया गया।

वंदियों के साथ मार-पीट तथा वंदियों द्वारा अनशन किये जाने की घटना की जांच के लिए ग्वालियर प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री सदाशिव गोखले को नागौद भेजा गया। उन्होंने 20 जुलाई को नागौद में सभा की तथा वंदियों से भी मिले। इससे जनजागरण और प्रवल हो गया। इसी वीच मध्यभारत देशी राज्य लोक परिषद के महासचिव श्री सीताराम जाजू तथा श्री सैयद हामिद अली दि० 2.1.47 को यहां आये। उन्होंने अपनी रिपोर्ट 16.1.47 को केन्द्रीय कार्यालय में भेजी।

दि० 8.1.47 को नागौद में सेठ गोविन्ददास जवलपुर से पधारे। उनके सम्मान में यहां एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें शासन की दमनकारी नीतियों का विरोध किया गया। इसके वाद 9.1.47 को वे गोपालशरण सिंह के साथ मैहर गये और वहां भी एक सभा का आयोजन किया गया। दूसरे दिन मैहर में प्रजामण्डल का गठन किया गया।

25 मार्च, 1947 को प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता उचेहरा में एक जुलूस निकाल रहे थे। इसमें सुखमनीदास, भइया लाल ताम्रकार, रामपालसिंह, मथुरा वरई, हीरा खटिक, वाल्मीक प्रसाद ताम्रकार, पं० मंगलप्रसाद शुक्ल तथा पं० अम्विकाप्रसाद शुक्ल झण्डा लेकर चल रहे थे। राज्य की पुलिस ने इस जुलूस पर लाठी चार्ज किया जिसमें अनेक व्यक्ति घायल हो गये। पं० हरचरणप्रसाद तथा पं० चन्द्रिका प्रसाद पाठक के मिष्ठान्न भंडार लूट लिये गये। नगरवासी घर छोड़कर जंगल भाग गये। जो वचे उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। अमानुषिक अत्याचार, झूठे मुकदमों और जवरन जुर्माना वसूली से लोग परेशान हो गये। 22.5.47 को एक झूठे मुकदमें में गोपालशरण सिंह को पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। उन्होंने जेल में 14 दिन का अनशन किया। सुखमनीदास का अनशन जवरन तुड़वाया गया। विना किसी साक्ष्य के जेल वंदियों की पेशियां वढ़ती रहीं। इससे जनता का क्रोध उवल पड़ा और उसने योजनावद्ध तरीके से कचहरी को घेर लिया। यह घेराव कई घण्टों तक चला, जिससे मजिस्ट्रेट और जज वगैरह परेशान हो गये। मजवूरी में सारे वंदियों को रिहा कर दिया गया। नागौद में इस प्रकार के अनेक आन्दोलन हुए जिनमें स्थानीय लोग उत्साहपूर्वक भाग लेते रहे तथा अनेक प्रकार की यातनाये सहते रहे। और जेल जाते रहे इनमें निम्नांकित व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय हैं –

सर्वश्री	लल्लासिंह	खमरेही
''	जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी	सितपुरा
''	ददनसिंह	अमकुई
''	पं० वैजनाथ	नागौद
''	गोपालशरणसिंह	पतौरा
''	पं० रामसंजीवन गौतम	वरकुनिया
''	वेटाई सिंह	अमकुई
''	धर्मजीतसिंह	ललचहा

"	रामसेवक पटेल	नौनिया-सुंदरा
"	पं० अयोध्या प्रसाद	लौहरौरा
"	वीरभानसिंह	उमरी
"	रणजीत सिंह	अमकुई
"	मोतीलाल चौवे	नागौद
"	सुखमनीदास	उचेहरा
"	ठाकुरदीन अग्रवाल	नागौद
"	हीरामनसिंह	अमकुई
"	शहीद रामप्रताप चौवे	पिथौरावाद
"	चन्द्रिका प्रसाद पाठक	उचेहरा
"	उर्मिला सिंह	भटनवारा
"	जनार्दनसिंह	अमकुई
"	उमाप्रतापसिंह	अमलिया
"	हरचरण पाठक	उचेहरा
"	लटोरलाल ढारिया	नागौद
"	पं० हनुमान प्रसाद	पतौरा
"	पं० श्यामसुन्दर	हिलौंधा
"	रामराजसिंह	अकौना
"	केशवप्रसाद गहोई	उचेहरा
"	विहारीलाल गहोई	उचेहरा
"	हीरालाल अग्रवाल	उचेहरा
"	पं० भगवान दास	अकहा
"	पं० रामानुज	अखरहा
"	गायत्री पाण्डेय	सितपुरा
"	संतप्रतापसिंह	इटमा
"	वीरेन्द्रसिंह	अमकुई
"	मोतीलाल	हड़हा
"	हनुमानप्रसाद सोनी	नागौद
"	रामदुलारे सिंह	भुलनी

,,	मूलचन्द्र पुखार	नागौद
,,	कमलाप्रसाद वागरी	हिलौंधा
,,	गजेन्द्रसिंह	नागौद
,,	हीरासिंह	सितपुरा
,,	रामपालसिंह	उचेहरा
,,	सीतारामसिंह	अमकुई
,,	मोतीमनसिंह	अमकुई
,,	जनार्दनसिंह	वरा
,,	रामऔतार मिश्रा	सितपुरा
,,	राममिलन अग्रवाल	नागौद
,,	भइयालाल पटेल	विहटा
,,	कृष्ण नाई	विहटा
,,	मथुरा पटेल	विहटा
,,	शिवनाथ	उचेहरा
,,	भइला लाल ताम्रकार	उचेहरा
,,	गैवी लोहार	विहटा
श्रीमती	आनन्दादेवी	अमकुई
,,	स्वराजदेवी	अमकुई
सर्वश्री	गोपाल ताम्रकार	उचेहरा
,,	गजाधर पटेल	विहटा
,,	रामसेवक पटेल	पतौरा
,,	हनुमानसिंह	पतौरा
,,	युवराजसिंह	खमरेही
,,	शिवशंकरप्रसादसिंह	तिलगवां
,,	राजकिशोर अग्रवाल	नागौद
,,	कौशलेन्द्र सिंह	सेमरी
,,	रावेन्द्रप्रताप सिंह	सेमरी
,,	चन्द्रपालसिंह	उमरी
,,	गिरिजासिंह	वाबूपुर

,,	राम भजन गुप्ता	सेमरी
,,	वंशी लाल नामदेव	रहिकवारा
,,	चन्दीदीन	झिंगोदर
,,	केशवप्रतापसिंह	कोटा
,,	लाल सजनसिंह	गुढुवा
,,	पं० वालगोविन्द	खुखरी
,,	तिलकधारीसिंह	कोटा
,,	इन्द्रवहादुरसिंह	कोटा
,,	गुरुप्रसाद पाण्डे	लौहरौरा
,,	सुशीलादेवी तिनगुडा,	जसो
,,	गुरु सरजूदास	उचेहरा
,,	भइयासिंह	लौहरौरा
,,	शिवदर्शनसिंह	खमरेही
,,	रामराजसिंह	कोटा
,,	राममूर्ति	झिंगोदर
,,	ललोहरसिंह	सेमरी
,,	तेजवलीसिंह	सेमरी
,,	हेतराम गुप्ता	धनवाही
,,	पं० रामलाल पडरहा	अमरेही
,,	पं० रामप्यारे	सुरदहा
,,	खिदुवा काछी	चुनहा
,,	गुरुसरन काछी	पिपरी
,,	स्वरूपचन्द्र जैन	गंगवरिया
,,	गोरलाल वागरी	वसुधा
,,	सुखई चौधरी	मझगमा
,,	छोटलाल पटेल	इचौल
,,	भुरई चमार	दिधौरा
,,	रामगोपालसिंह	हिलौंधा
,,	माधवसिंह	खमरेही

''	अनुजप्रतापसिंह	रहिकवारा
''	मिथिलाशरण उपाध्याय	रहिकवारा
''	रामशरण वानी	अमकुई
''	रामकुमार उरमलियां	जिगनहट
''	रतैया चमार	सुरदहा
''	भइयालाल चमार	नागौद
''	स्वरूपदास	उचेहरा
''	रतैयां	मझगवां
''	हरछठिया	झिंगोदर
''	कुनउवा चौधरी	मौहारी
''	लोला चौधरी	मोतीनगर
''	विसुंधा चौधरी	मझगवां
''	वौरा कोल	अमकुई
''	रहमत खां	उचेहरा
''	मजीद खां	उचेहरा
''	हमीद खां	उचेहरा
''	शहाबुद्दीन	उचेहरा
''	अकवर खां	उचेहरा
''	नन्दीलाल	उचेहरा
''	भगवानदीन ठीमर	उचेहरा
''	लालजी अग्रवाल	रहिकवारा[337]

भीषण दमन के पश्चात् 1 जनवरी, 1948 को नागौद में उत्तरदायी शासन की स्थापना हुई। प्रजामण्डल का पूर्ण मंत्रिमण्डल वना। श्री शंकरसिंह मुख्यमंत्री और श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी तथा श्री लल्लासिंह मंत्री वनाये गये।

भारत में औंध (सौराष्ट्र) के वाद नागौद दूसरा राज्य था, जहाँ पूर्व उत्तरदायी शासन की स्थापना हुई थी। इस सफलता के लिए तत्कालीन अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद के अध्यक्ष श्री पट्टाभिसीतारामैय्या ने श्री गोपालशरण सिंह को वधाई पत्र भेजा था।

राज्यों का विलीनीकरण तथा विन्ध्यप्रदेश का निर्माण –

15 अगस्त, 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ। तत्पश्चात् भारत सरकार द्वारा देशी राज्यों

337. *यह सूची विभिन्न ग्रंथों और व्यक्तिगत जानकारी पर वनाई गई है। इस सूची के अतिरिक्त नामों की सूचना मिलने पर उन्हें ग्रंथ के अगले संस्करण में सम्मिलित किया जायेगा।*

के एकीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। बुन्देलखण्ड की 34 रियासतों को मिलाकर विन्ध्यप्रदेश का निर्माण किया गया और रीवा की पृथक सत्ता रही। आरम्भ में दोनों क्षेत्रों में अलग-अलग मंत्रिमण्डल की व्यवस्था थी। विन्ध्यप्रदेश (बुन्देलखण्ड) मंत्रिपरिषद के सदस्यों का चयन बुन्देलखण्ड लोक परिषद ने नागौद सर्किट हाउस में दि० 28. 3. 48 को किया। इस मंत्रिमण्डल में निम्नांकित सदस्य थे –

1. सर्वश्री	कामताप्रसाद सक्सेना	प्रधानमंत्री
2. ,,	गोपालशरणसिंह	मंत्री
3. ,,	लालाराम बाजपेयी	मंत्री
4. ,,	रामसहाय तिवारी	मंत्री

श्री कामताप्रसाद सक्सेना ने 4 अप्रैल 1948 ई० को प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। श्री सी०वी०राव, आई० सी० एस० को मुख्य सचिव बनाया गया। राजधानी नौगांव (जि० छतरपुर) में स्थापित की गई।

विन्ध्यप्रदेश का संयुक्त मंत्रिमण्डल

विन्ध्यप्रदेश और रीवा राज्य मंत्रिमण्डलों के गठन के पश्चात् 10 जुलाई, 1948 को रीवा और विन्ध्यप्रदेश का संयुक्त मंत्रिमण्डल बना। इस संयुक्त क्षेत्र विन्ध्यप्रदेश की राजधानी रीवा में स्थापित की गई। मनोनीत मुख्यमंत्री कप्तान अवधेश प्रतापसिंह के नेतृत्त्व में निम्नांकित मंत्रिमण्डल का गठन किया गया –

सर्वश्री	कप्तान अवधेशप्रतापसिंह	मुख्यमंत्री
,,	कामताप्रसाद सक्सेना	उपमुख्यमंत्री
,,	शिवबहादुरसिंह	मंत्री
,,	नर्मदाप्रसादसिंह हारौल	मंत्री
,,	सत्यदेव	मंत्री
,,	गोपालशरणसिंह	मंत्री
,,	चतुर्भुज पाठक	मंत्री

श्री सी०बी० राव को मुख्य सचिव नियुक्त किया गया। संयुक्त विन्ध्यप्रदेश बनने के पश्चात् रीवा रियासत के बहुत से कानून जैसे परमिट, जंगल टैक्स आदि जो जनहित में नहीं थे, बिना सोचे-विचारे यथावत् लागू कर दिये गये, जब कि बुन्देलखण्ड की कुछ रियासतों में जनहित में इनसे अधिक कल्याणकारी नियम थे। तत्कालीन संयुक्त विन्ध्यप्रदेश में प्रमुख विरोधी दल सोसलिस्ट पार्टी था जिसके संचालक डॉ० राममनोहर लोहिया थे। डॉ० लोहिया का जन्म 1910 में हुआ था। आपका बाल्यकाल 1911 से 1919 ई० तक उचेहरा स्टेशन के समीप स्थित तपसी परिवार के यहां व्यतीत हुआ था। इस नाते से श्री गोपालशरण सिंह के यहां उनका अनौपचारिक आना-जाना होता रहता था। मंत्रिमंडल के कतिपय सन्देहास्पद सदस्यों को यह पसन्द न था। विन्ध्यप्रदेश के पी०सी०सी० चुनाव के समय यह तय हुआ था कि अध्यक्ष रीवा से और चुनाव कमेटी का संयोजक बुन्देलखण्ड से हो। किन्तु इसका पालन नहीं किया गया। उपर्युक्त तथा अन्य कारणों से मंत्रिमण्डल में रह कर जनता की सेवा करना असंभव समझकर श्री गोपालशरणसिंह ने 12. 11. 48 को मंत्रिपद

से त्याग पत्र दे दिया।

सेवामुक्त कर्मचारियों की नियुक्ति तथा भ्रष्टाचार आदि के कारणों से दि० 14. 4. 49 को उपर्युक्त मंत्रिमंडल भंग कर दिया गया और श्री वनर्जी को भारत सरकार की ओर से विन्ध्यप्रदेश का प्रशासक नियुक्त किया गया। 1 जनवरी, 1950 को श्री श्रीनाथ मेहता चीफ कमिश्नर नियुक्त हुए। श्री मेहता के समय से ही यहां विलीनीकरण विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। विलीनीकरण के विरोध में इस क्षेत्र से अनेक सत्याग्रही जेल गये। अन्ततः इसे पार्ट सी राज्य वना दिया गया।

1952 का निर्वाचन

विन्ध्यप्रदेश की यह प्रथम निर्वाचित सरकार थी। इसका समापन 31 अक्टूवर, 1956 ई० को हुआ तथा 1 नवम्वर 1956 को इस प्रदेश का नये मध्य प्रदेश में विलय कर दिया गया।

1951-52 में पहली वार वयस्क मताधिकार के आधार पर देश में आम चुनाव हुए। विन्ध्यप्रदेश में लोकसभा के 6 और विधानसभा के 60 स्थान थे। विधानसभा के लिए नागौद क्षेत्र से श्री चन्दीदीन और श्री गोपालशरण सिंह निर्वाचित हुए। लोकसभा चुनाव के लिए नागौद क्षेत्र सतना के अन्तर्गत था। यहां से भी शिवदत्त उपाध्याय निर्वाचित हुए। ये सभी विधानसभा और लोकसभा सदस्य कांग्रेस के टिकट पर चुनाव जीते थे।

दिनांक 17. 3. 1952 को कांग्रेसी मंत्रिमण्डल के निर्माण के साथ विन्ध्यप्रदेश के चीफ कमिश्नर का शासन समाप्त हो गया। पं० शम्भूनाथ शुक्ल के नेतृत्त्व में गठित मंत्रिमण्डल के सदस्य इस प्रकार थे –

1. पं० शम्भूनाथ शुक्ल	मुख्यमंत्री
2. श्री लालाराम वाजपेयी	गृहमंत्री
3. श्री गोपालशरण सिंह	न्याय एवं योजना मंत्री
4. श्री दानवहादुर सिंह	उद्योगमंत्री
5. श्री महेन्द्र कुमार मानव	शिक्षामंत्री

श्री शिवानन्द विधानसभा अध्यक्ष चुने गये। श्री के०सन्तानम् उपराज्यपाल नियुक्त हुए। इस मंत्रिमंडल के समय राज्य में अनेक लोककल्याणकारी कार्य हुए। सिंचाई विभाग की स्थापना हुई तथा अनेक सिंचाई परियोजनाएं प्रारम्भ की गयी। इसीसमय अनेक कृषि फार्म खोले गये और ग्रामसेवकों की नियुक्तियां की गयीं। किसानों को ट्रेक्टर उपलव्ध कराये गये। महिलाओं के कल्याण के लिए सोशल वेलफेयर वोर्ड और महिला समितियों का निर्माण किया गया। शहडोल (चचाई) का अमरकण्टक थर्मल पावर स्टेशन, अमलई का कागज कारखाना और सतना की सीमेण्ट फैक्ट्री आदि स्थापित हुई। पन्ना के पास मड़ला के समीप केन नदी पर सड़क पुल, नौगांव का पालीटेक्नीक स्कूल और क्षय चिकित्सालय इसी समय निर्मित हुए। मार्गों पर भी पर्याप्त ध्यान दिया गया। इनमें वरौंधा-चित्रकूट (पीलीकोठी) मार्ग, शहडोल-अमरकण्टक मार्ग और सिंगरौली मार्ग उल्लेखनीय हैं। उपर्युक्त सभी कार्य विन्ध्यप्रदेश शासनकाल में किये गये। 1 नवम्वर, 1956 को इस प्रदेश को नवनिर्मित मध्यप्रदेश में विलय कर दिया गया।

अन्य परिहार राजवंश

जिगनी, धनौरा, मल्हटा, राठ के प्रतीहार वंश

सं० 1257 में ग्वालियर के राजा कर्णदेव के संतानहीन होने पर टाटीवनाधिपति राजा जुझारसिंह के वंशज राजा माधौसिंह के वड़े पुत्र शारंगदेव को संवत 1277 ई० में गोद लेकर अपना उत्तराधिकारी वनाया। यह दिल्ली के सुल्तान शमसुद्दीन अल्तमश से युद्ध करते मारे गये जिसने सं० 1289 में ग्वालियर पर आक्रमण किया। इनके दो पुत्र हुए। मदन सिंह और भैदशाहि जो अपने चाचा रामगढ़ के राघवदेव के पास चले आये। उनको वड़े प्रेम से अपने पास रखकर वड़े महाराज कुमार मदनसिंह को राव की उपाधि (पदवी) और बारह ग्राम जागीर के साथ जिगनी ग्राम वैठक में दिया। दूसरे राजकुमार भैदशाहि को राव की पदवी के साथ वारह ग्राम जागीर और घनौरा ग्राम वैठक में दिया।

राव भैदशाहि घनौरा के वंशज वर्तमान राव साहव घनौरा और (ग्राम सिखरी कहाटा, कमटा जिला जालौन में) दिउरी, उस, वरमायन, गोकुल, पहारा, पटियारी गोपालपुरा, परतापपुरा, वरगांयाजिला झांसीपरगना गरौठा में वड़े-वड़े भूम्याधिकारी आवाद है।

जिगनी के वड़े राव मदनसिंह के 7 पुत्र हुये। 1. राव जैतसिंह, 2. पहाड़सिंह, 3. वानसिंह, 4. रणसिंह, 5. वलसिंह, 6. सिंहणदेव, 7. औझडसिंह। वड़े जैतसिंह को जिगनी का तिलक मिला। पहाड़सिंह ग्राम मगरौठ, वानसिंह मझगवां, रणसिंह लिधौरा, वलसिंह चगवा, सिंहणदेव अटलिया और औझड़सिंह ग्राम गुढ़ा विकासी के अधिकारी हुये। जिगनी के राव जैतसिंह के 10 पुत्र उत्पन्न हुये –

1. राव जसकर्णसिंह जिगनी के राव हुये।
2. शत्राजीतसिंह जिगनी रहे।
3. प्रतापसिंह जिगनी रहे।
4. हाथीराज जिगनी रहे।
5. सुवदलशाह के वंशज मानपुर जिला इलाहावाद में यमुना के किनारे आवाद हैं।
6. चितरसिंह के वंशधर चित्ती ग्राम जिला कानपुर में आवाद है।
7. रामसिंह के वंशज मल्हठा जिला हमीरपुर के परगना राठ ने तालुकेदार रईस है।
8. मुकटशाह के वंशधर झगड़पुर जिला उन्नाव में डोडिया खेरे के पास है। इसी वंश में कुंअर प्रतापसिंह कप्तान साहव को महाराजा साहव रीवा नरेश वेंकटरमणसिंह ने जागीर में वड़ा नादन ग्राम प्रदान किया था।

9. भोपतशाह मल्हठा वैठे (जिला हमीरपुर परगना राठ में आवाद है)

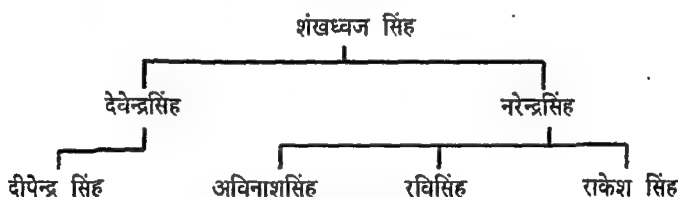
10. रतनसिंह मल्हठा वैठे।[337]

राव जैतसिंह के दूसरे पुत्र शत्राजीतसिंह के वंशधर राजारामसिंह को बुन्देला राजा ने 22 घोड़ों की जागीर में ग्राम घनेटी दिया। उन्हीं के वंश में चामुण्डराय दतिया स्टेट के ग्राम मोमई में विद्यमान है जो ग्राम सिउढ़ा, करीला में जागीरदार है। इन्हीं के वंशधर समथर स्टेट के ग्राम फतेहपुर में जागीरदार है और रनदूल्हा की पदवी पाये हुये हैं। वर्तमान रनदूल्हा प्रतापसिंह जी है।

राव जैतसिंह के चतुर्थ पुत्र हाथीराज के द्वितीय पुत्र समरथसिंह इटावा के चौहान क्षत्रियों के सम्बन्ध से चौरी कुसगवाँ ग्राम में जिगनी से आकर रहे। इनके पुत्र भावसिंह हुये। इनका विवाह जिला फर्रुखाबाद के आलमशाह गौर क्षत्रिय की पुत्री के साथ हुआ। यह आलमशाह राजा निरंजनमल कन्नौज के यहां नौकर थे। राजा ने इनको नगला दुसाथ जागीर में दिया। इनको म्यार लोग बहुत ही तंग करते थे। इसलिए उसने भावसिंह को अपनी सहायता के लिए बुलाया। म्यारों से भावसिंह का युद्ध हुआ जिसमें भावसिंह म्यारो के हाथ से मारे गये। इनके 6 पुत्र थे, जिन्होंने म्यारों को मारकर वहुत से ग्राम अपने अधिकार में किये। इन 6 पुत्रों में से रंगीसिंह और महिमाशाह म्यारू की लड़ाई में मारे गये। रहरसिंह का वंश ग्राम विहार व जुनपुर में है। कपूरचन्द्र का वंश ग्राम वनकटी में, हीरासिंह का वंश ग्राम चौखडीया में और सुन्दरसिंह का वंश ग्राम कटैन्ना और नगला लाल्खा जिला फर्रुखावाद में भुम्याधिकारी वर्तमान है। ग्राम विहार में चौधरी को पदवी है।

रावतपुरा (जि० हमीरपुर) के परिहार

ग्राम रावतपुरा राठ से करीव 15 कि०मी० पर स्थित है। यहां कमान शंखध्वजसिंह परिहार जमींदार हैं। ये मल्हठा परिहार वंश की शाखा से सम्बन्धित हैं।



वंशावली अलीपुरा राज्य[338]

राजा जुझारसिंह के द्वितीय पुत्र धांगचन्द्र को जागीर स्वरूप वड़ागांव वैठक में मिला, जिससे उनके वंशधरों की अलल वड़गइयाँ प्रसिद्ध हुई। धांगचन्द्र के वंशधर महीसिंह हुये, उनकी वहिन सुजान कुँवरि रामपुर के राठौर (राष्ट्रवर) राजा को विवाही थी। महिपतिसिंह के वाद इनके वंशधर रामसिंह हुये। इनके पुत्र जगमोहनसिंह और जगमोहनसिंह के पुत्र जगतसिंह हुए। इनके पांच पुत्र महिमाशाह, भारतशाह, इट्ठलय, चक्करशाह, राजाराम हुये। (1) महिमाशाह के वंश में अलीपुरा के राजा पीछे से हुये हैं। (2) भारतशाह गौदह (धौलपुर वर्तमान) के राना के यहां नौकर थे, जिसमें इन्होंने बड़ी वहादुरी के काम किये। फलस्वरूप राना ने उनको वरेछा ग्राम जो अव दतिया स्टेट की तहसील सिंऊढ़ा में है, जागीर में दिया। उनके वंशधर वरेछा ग्राम में आवाद

337. ग्वालियर का इतिहास सूर्यकुमार वर्मा भदौरिया कृत इसके वंशधर जिला हमीरपुर पनगरा, राठ में तालुकेदार रईस है।

338. अलीपुरा राज्य से प्राप्त जानकारी के आधार पर।

हैं। (3) इट्ठलराय भी गोहद के राना के यहाँ मुलाजिम थे। राना ने इनको भी वहादुरी करने पर जागीरें दी। उनके वंशधर नदी का ग्राम दतिया स्टेट में, चितगवां, आमीर, समथर स्टेट में, चँदावली, वधावली, भीष्मपुरा, विजौरा ग्वालियर स्टेट में इस समय आवाद हैं।

महिमाशाह, चक्करशाह और राजाराम इन तीनों के वंश में तीन ही पट्टियां अर्थात थोक, जागीरदार पट्टी वड़े गांव में और इन्हीं के वंशधर दरियापुरा, तहसील मऊ जिला झाँसी में आवाद हैं।

महिमाशाह का विवाह धगवाँ ग्राम के नायक वैश्य क्षत्रियों के यहाँ हुआ। इनके 4 पुत्र हुये – 1. मुलायमसिंह, 2. हीरासिंह 3. युगलसिंह 4. हलधरसिंह। तीन छोटे पुत्रों के वंशज जिला हमीरपुर के हिगुटा इत्यादि ग्रामों में आवाद हैं।

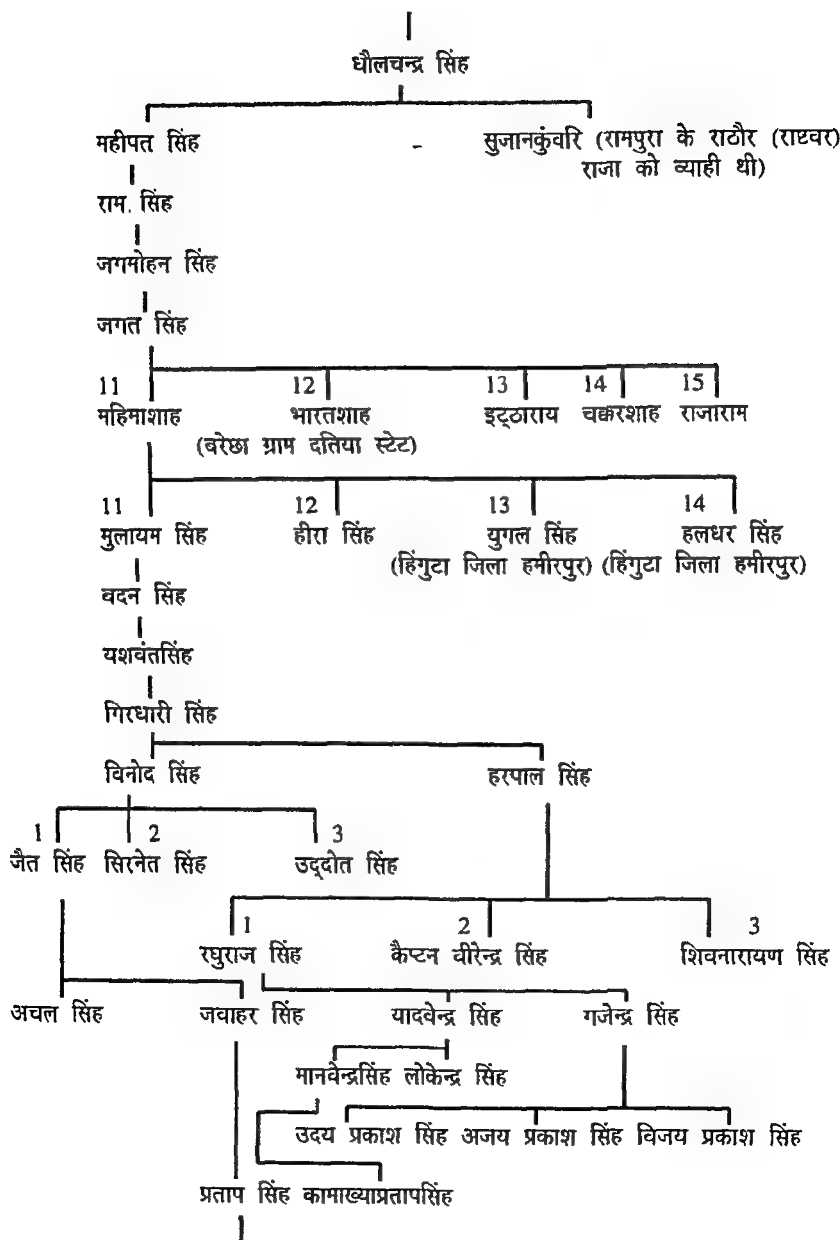
मुलायमसिंह के पुत्र वदन सिंह, वदनसिंह के यशवन्तसिंह, यशवन्तसिंह के गिरधारी सिंह, गिरधारी सिंह के विनोद सिंह, विनोद सिंह के 3 पुत्र जैतसिंह, सिरनेत सिंह और उदोत सिंह हुये।

जैतसिंह के दो पुत्र अचलसिंह और जवाहरसिंह हुये। अचलसिंह, पन्ना के बुन्देला राजा हृदयशाह के पौत्र, राजा हिन्दूपतिसिंह के दीवान थे। अचल सिंह के अच्छे कार्यों से प्रसन्न होकर, राजा हिन्दूपतिसिंह ने एक वड़ी जागीर दी। इनके पीछे इनके पुत्र प्रतापसिंह उस जागीर के अधिकारी हुये। प्रतापसिंह के दो पुत्र, राव पंचम सिंह और किशोर सिंह हुये। किशोर सिंह को थोड़ी-सी जागीर पृथक दी गई थी। राव पंचम सिंह अलीपुरा के रईस हुये जिसका 18 अक्टूबर 1839 ई० को स्वर्गवास हो गया। इनके पश्चात इनके पुत्र राव दौलत सिंह गद्दी पर बैठे। ये 1 वर्ष 2 महीने 4 दिन राज्य करके युवावस्था में ही स्वर्गवासी हुये।

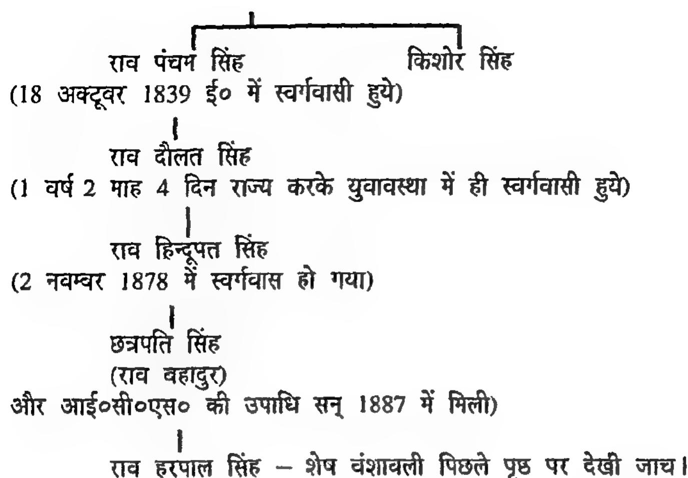
इनके पुत्र राव हिंदूपति सिंह हुये। इन्होंने अपनी छोटी-सी जागीर का अच्छा प्रवन्ध किया। प्रजावर्ग को सुख दिया और कोष (खजाना) भी जोड़ा। कुं० छत्रपति सिंह को इंगलिश की शिक्षा दिलाई। राव पंचम सिंह के भ्राता कुं० किशोर सिंह को छोटी सी जागीर मिली थी जिसके लिये उनके पुत्र-पौत्र झगड़ा किया करते थे। इन्होंने एजेंसी द्वारा अन्वेषण करवाकर उनको 4210/- रुपया की आय का श्रीनगर नाम का एक ग्राम उनकी जागीर में लगा दिया। सन् 1857 ई० के गदर के समय में सरकार की वहुत ही सेवायें की जिसके उपलक्षय में सरकार ने इनको भी गोद लेने का अधिकार दे दिया और गद्दीनशीनी का नजराना भी माफ कर दिया।

परन्तु यह शर्त रक्खी की गोद लेने पर आय का चौथाई भाग सरकार को दिया जावे। इसके अतिरिक्त पोशाक (खिलअत) और एक शतन्धी (तोप) पुरस्कार में मिली। 2. नवम्वर सन् 1871 ई० को राव हिंदूपति सिंह का कमर में फोड़ा निकलने से स्वर्गवास हो गया। इनके पुत्र छत्रपति 3 नवम्वर सन् 1871 ई० को गद्दी पर वैठे। आपका जन्म सन् 1853 ई० में हुआ। आपको प्रजावर्ग के लिये आम फायदें के कार्यों का बहुत ही ध्यान था। आपने गद्दी पर वैठते ही नया प्रवन्ध किया और पिछले कार्यकर्ताओं को हटा दिया। सन् 1877 ई० में दिल्ली के केशरी दर्वार में आपको "राव वहादुर" की पदवी मिली। सन् 1887 ई० में महारानी विक्टोरिया की जुवली के समय सरकार से आई० सी० एस० (सी०एस०आई०) की उपाधि मिली। आपके समय राज्य में शिक्षा की उन्नति हुई, स्कूल और पक्की इमारतें आदि वनी। आप के वड़े पुत्र राव हरपाल सिंह हैं, जिनका जन्म 12 अगस्त सन् 1882 ई० में हुआ। आप सन् 1902 ई० में श्री मान् सप्तम एडवर्ड के राजतिलक के समय दिल्ली वुलाये गये। आपने इस राजतिलक की खुशी में पिछलें वर्षो की वाकी का 45 हजार रुपया अपनी प्रजा वर्ग को माफ कर दिया।

अलीपुरा का क्षेत्रफल 96 वर्ग मील मुरव्वा जनसंख्या 15000 है। राज्य में 2 तोपें है, तथा 5 गोलंदाज, 10 सवार, 165 पैदल और 55 पुलिस के सिपाही नौकर हैं। यह हाल उर्दू तवारीख वुन्देलखण्ड और सहीफेजरीन तवारीख में भी लिखा हुआ है।



बंशावली अलीपुरा राज्य
राजा जुझार सिंह
धौलचन्द्र सिंह
महीपत सिंह
सुजानकुंवरि (रामपुरा के राठौर (राष्टवर) राजा को व्याही थी)
राम. सिंह
जगमोहन सिंह
जगत सिंह
11 महिमाशाह
12 भारतशाह (बरेछा ग्राम दतिया स्टेट)
13 इट्ठाराय
14 चक्करशाह
15 राजाराम
11 मुलायम सिंह
12 हीरा सिंह
13 युगल सिंह (हिंगुटा जिला हमीरपुर)
14 हलधर सिंह (हिंगुटा जिला हमीरपुर)
वदन सिंह
यशवंतसिंह
गिरधारी सिंह
विनोद सिंह
हरपाल सिंह
1 जैत सिंह
2 सिरनेत सिंह
3 उद्दोत सिंह
1 रघुराज सिंह
2 कैप्टन वीरेन्द्र सिंह
3 शिवनारायण सिंह
अचल सिंह
जवाहर सिंह
यादवेन्द्र सिंह
गजेन्द्र सिंह
मानवेन्द्रसिंह
लोकेन्द्र सिंह
उदय प्रकाश सिंह
अजय प्रकाश सिंह
विजय प्रकाश सिंह
प्रताप सिंह
कामाख्याप्रतापसिंह



मलहजनी परिहार राजवंश

राजा राघवदेव सं० 1286 वि० में रामगढ़ की राजगद्दी पर वैठे। इनके पुत्र राजा जीतसिंह सं० 1323 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनके पुत्र राजा शिवचन्द्रसिंह सं० 1355 वि० में राजगद्दी पर विराजे। इनके पुत्र राजा गोविन्दचन्द्र सं० 1422 में राजगद्दी पर वैठे। इन्होंने रामगढ़ से दक्षिण भोजपुर तक अपना अधिकार स्थापित किया। इनके पुत्र राजा भारतीचन्द्र 1452 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इन्होंने सागर जाति को परास्त करके रहा ग्राम पर अपना अधिकार जमाया। इनके पुत्र राजा पृथवीचन्द्र सं० 1496 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनके पुत्र राजा हरिश्चन्द्रदेव सं० 1542 वि० में राजगद्दी पर विराजे। इनके पुत्र ताराचन्द्रदेव 1573 वि० सं० में राजगद्दी पर वैठे। इन्होंने धुरसराय तक अपना राज्य वढ़ाया। इनके पुत्र राजा रूपचन्द्र सं० 1599 में राजगद्दी पर विराजे। इनके पुत्र राजा कनकसिंह 1621 वि० सं० में गद्दी पर विराजे।

राजा कनकसिंह की दो रानियाँ थी। वड़ी रानी खजुरगांव के राजा वैस क्षत्रिय की पुत्री और द्वितीय रानी रामपुरा के राष्ट्रवर क्षत्रिय राव कीरतसिंह की पुत्री थी। यह रानी राजा कनकसिंह के स्वर्गवास होने पर रामगढ़ में धौसा नदी के तट पर सती हुई। यह सती स्थान रानीघाट मझगवां ग्राम के निकट वहुत प्रसिद्ध है। परन्तु अव रामगढ़ में खण्डहर पड़े हैं।

राजा कनकसिंह के पुत्र राजा वसन्तरायसिंह सं० 1643 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनके पुत्र राजा रावसिंह सं० 1665 वि० में राजगद्दी पर विराजे। इनके पुत्र राजा विक्रमादित्य सिंह संवत् 1691 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनका विवाह नारकैजरी के गौर (गौड़) क्षत्रिय राजा किशुनसिंह की पुत्री के साथ हुआ था। इनके पुत्र राजा जिन्दमणिसिंह संवत् 1711 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनकी रानी वघेल सौलंकी क्षत्रिय वान्धवगढ़ के राजा की पुत्री थी। इनके पुत्र राजा भोजसिंह सं० 1732 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनका विवाह कपा ग्राम के राव पारीक्षतसिंह चौहान क्षत्रिय की पुत्री के साथ हुआ था। इनके पुत्र राजा हंसराजसिंह सं० 1744 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इन्होंने रहाक नगर को अपनी राजधानी वनाया। इनका

विवाह वीघोना के सूर्यवंशी (वन्धल गोत्र) क्षत्रिय कुंवर गुमानसिंह की पुत्री के साथ हुआ था। इनके पुत्र राजा खाडेरावसिंह सं० 1769 वि० में राजगद्दी पर बैठे। इनका विवाह वटेर के भदौरिया राजवंशज कुंवर कान्हासिंह विजयगढ़ की पुत्री के साथ हुआ था। इनके पश्चात् इनके पुत्र राजा प्रतापसिंह सं० 1785 वि० में राजगद्दी पर बैठे। इनका विवाह राजा वजरंगगढ़ मालवा के चौहान के खीचीवंश में राजा मूर्तिसिंह की पुत्री के साथ हुआ था। इनके दो पुत्र हुये। राजा महासिंह सं० 1801 में रहकर रहाक नगर की राजगद्दी पर वैठे। सभासिंह को दीवान की पदवी (उपाधि) के साथ 6 हजार का कैलोखर गांव जागीर में मिला। इनके वंशज दीवान रनधीरसिंह के पुत्र न होने से मझगवां के दीवान वलभद्रसिंह के द्वितीय पुत्र रधोतनारायण सिंह को गोद लेकर अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया जो वर्तमान में दीवान है। आपका विवाह करौली के जादौन राजवंशज राम पुर के राव की पुत्री के साथ हुआ है।[339]

राजा महासिंह का विवाह मछण्ड के कछवाहे राजवंश में मौहाने के कुवंर हीरासिंह की पुत्री के साथ हुआ था। आपके ऊपर पन्ना के राजा हृदयशाह के पौत्र राजा हिन्दूपति वुन्देला ने सं० 1811 वि० में आक्रमण किया। राजा अपने साथियों सहित वीरगति को प्राप्त हुये। रानी सती हो गई। आपके पुत्र राजा दीपसिंह अपने ननिहाल में थे और वहीं पर युवा हुये। राजा दीपसिंह सं० 1811 वि० में राजगद्दी पर वैठे और गांच सितपुरा जिला जालौन में आकर अपना निवास स्थान वनाया।

आपके पुत्र राजा महीपतिसिंह हुये जिन्होंने जिला इटावा में मलहजनों नामक ग्राम मोल लेकर अपना राज्य स्थान वनाया और सं० 1868 वि० में राजगद्दी पर वैठे। इनके तीन विवाह हुये। पहला प्रतापनेर राजवंश में सिखराली के चौहान क्षत्रिय राना जवाहरसिंह की पुत्री के साथ, द्वितीय लहायर के कछवाहे क्षत्रिय राजा रतनसिंह की पुत्री के साथ, तृतीय प्रतापनेर राजवंशज चौहान क्षत्रिय ग्राम तरौलिया के कुंवर की पुत्री के साथ जिसे एक राजकुमारी पैदा हुई जो नीमराना के शम्मरी चौहान राजा भीमसिंह जी को विवाही गई।

राजा महीपतिसिंह के पुत्र न होने मझगवां जिला हमीरपुर को वड़ी पट्टी कुंवर विजयसिंह को गोद लेकर अपना उत्तराधिकारी नियत किया जो सं० 1913 विक्रमी में राजगद्दी पर विराजे।

राजा विजयसिंह के भी तीन विवाह हुये। पहिला विवाह शंकरपुर के वैश्य क्षत्रिय राजा वेनीमाधवसिंह की पुत्री के साथ हुआ। दूसरा विवाह भदौरिया राजवंशज वड़पुरा के राव जवाहरसिंह की पुत्री के साथ हुआ। तीसरा विवाह भिनगा के विसैन (विसेन वंश के राजा किशुनदत्त) कृष्णदत्त सिंह की पुत्री के साथ हुआ जिनसे राजा प्रवलप्रतापसिंह का जन्म 20 अगस्त सन् 1867 ई० को हुआ और सं० 1924 वि० में राजगद्दी पर विराजे। पहिले आपने हाईस्कूल तक शिक्षा इटावा में फिर वनारस के वोर्ड इन्स्टीट्यूट कालेज में इन्ट्रेन्स तक शिक्षा पाई आपने आनरेरी मजिस्ट्रेट का पद पाकर वड़े गम्भीर विचार से न्याय किया। आपके दो विवाह हुये। प्रथम विवाह मुराजमऊ जिला राजवरेली के वैश्य क्षत्रिय राजा शिवपालसिंह तालुकेदार की पुत्री के साथ हुआ। इस विवाह में 3 ग्राम जिला रायवरेली में मिले थे। वह विद्यमान है। दूसरा विवाह खजुरहट जिला फैजावाद (अवध) के वत्सगोत्री (चौहान) राजवंश में वावू भीमदत्त सिंह की पुत्री के साथ हुआ। आपके दो राजकुमार और दो राजकुमारियाँ हुई। वड़ी राजकुमारी जयपुर के कुशवाह राजवंश में नीदड़ के रावसाहव को और द्वितीय राजकुमारी उमरी के शिशौदिया राजा साहव को विवाही गई है। आपका स्वर्गवास 29 मार्च सन् 1919 ई० को लखनऊ में व्रह्माण्ड फूटकर हुआ। आप श्री दुर्गादेवी और शिवजी की नित्य आराधना करते थे। आपके वाल्यकाल में स्टेट कोर्ट ऑफ वार्डिस के अधिकार

339. यह वर्णन मुंशी देवी प्रसाद के परिहारवंश प्रकाश से लिया गया है।

में रही जो सन् 1888 में आपके युवा होने पर मिला।

आपके पश्चात आपके वर्तमान जेठ पुत्र श्रीमान राजा नारायण प्रतापसिंह जू देव सं० 1975 वि० में राजगद्दी पर विराजमान हुये। आपका विवाह हथौरा जिला हरदोई के निकुम्भ क्षत्रिय श्री ठा० महाराज सिंह जी तालुकेदार की पुत्री के साथ हुआ। आप अपने स्वर्गवासी पिता जी की भांति सौम्य, शीलवान, नीति निपुण तथा मातृ भाषा हिन्दी के वड़े प्रेमी थे। श्री दुर्गादेवी व श्री शिवजी के परम भक्त थे। नित्य प्रति एक-एक घण्टे तक वड़े प्रेमपूर्वक पूजा करते थे

सन् 1926 ई० में आप लेजिस्टेटिव कौंसिल के सदस्य हुये। आपको जिला इटावा में सरकार से आनरेरी मुंसिफ स्पेशल मजिस्ट्रेट फर्स्टक्लास तथा एम०वी०ई० का पद प्राप्त हुआ। आप चेयरमैन डिस्ट्रिक्ट वोर्ड इटावा भी रहे।

आपके लघु भ्राता महाराजकुमार श्रीदेवीनारायणप्रतापसिंह जी थे जो वहुत ही सौम्य व शीलवान थे। आपका विवाह बघेलखण्ड में शंकरगढ़ के वघेले सौलंकी क्षत्रिय राजा को पुत्री के साथ हुआ। राजा का खिताव (पदवी) कदीमी (प्राचीन) है। राजा साहव के अधिकार में 8 ग्राम जिला इटावा में और 3 ग्राम जिला रायवरेली में है। मलहजनी जिला इटावा में है।

अन्य जानकारी

छः वंश तथा 36 कुल[340]

दस रवि से दस चन्द्र से, द्वादश ऋषिन प्रमान।
चार हुताशन यज्ञ से, यह छत्तिस कुल जान।।

परिहार वंश का गोत्राचार्य[341]

गोत्र - कौशिल्य, वेद यजुर्वेद, उपवेद धनुर्वेद, सूत्र-कात्यायन, शाखा माध्यायनी, शिखा-दायी, पद-दार्यी, यज्ञोपवीत के पांच प्रकार - नामगति, अवगति, नई गति, यमदग्नि, सुकृत; देवता-शिवः पक्षी - हंस, गरुड़, देवी अम्वरोहिका, तीर्थ-पुष्कर, नदी-सरस्वती, द्वादश नाम मत्र - व्रत गायत्री, रंग-लाल, दशहरा को तलवार पूजन, घोड़ी की सवारी वर्जित, वराह का शिकार वर्जित, लाल पगड़ी वांधना वर्जित। श्राद्ध या कनागतों में मठा फेरना मना। प्राचीन पुरोहित-पाराशर, वृक्ष-पीपल, रणजीत नगारा।

परिहारों का वंश भेद[342]

परिहारों के मुख्य 16 भेद हैं जिनके वंशज भारत के भिन्न-भिन्न भागों में आवाद हैं–

1. पहरा – पडहर से।
2. लुल्लरा – लुल्लर से।
3. सूरउत – सूर से (इनका दूसरा नाम मंडोवरा है।)
4. बुदखेल – बुद से (ये पूर्व देशों में अधिक पाये जाते हैं।)
5. ईदा – सोधक के पुत्र ईद से।
6. खुखरा – सुक्खर से।
7. चन्द्रावत – चन्द्र से तीन शाखाएं है –
   (i) किलाया – किन्ह से।
   (ii) चन्दराया – चन्द से।
   (iii) चोहन्न – चुहन्न से।

---

340. कल्याण सिंह वड़वा की पुस्तक परिहार वंश का इतिहास से उद्धृत।
341. कल्याण सिंह वड़वा की पुस्तक परिहार वंश का इतिहास से उद्धृत
342. नागौद राज्य का इतिहास, पृ० 67-68 से उद्धृत।

8. धोरणा – मालदेव के पौत्र धोरण से।
9. धन्धिला – धार के बेटे धन्धिल से।
10. सिन्धुका – रवीर के बेटे सिन्धु से।
11. डोराना – डूंगर से।
12. सवराना – सुवर से।
13. सुन्धिया – दीपसिंह से।
14. मीना – गूजरमल से।
15 केशवोत – केशवदास से।
16. सोनपालोत – सोनपाल से।

क्षत्रिय जातियों की सूची [343]

नं०	नाम	गोत्र	वंश	स्थान व जिला
1.	सूर्यवंशी	भारद्वाज	सूर्य	पूर्व में और जि० बुलन्दशहर, आगरा, मेरठ, अलीगढ़।
2.	गहलौत	वेजवापेण	सूर्य	मथुरा, कानपुर और पूर्वी जिलों में
3.	शिशोदिया	वेजवापेण (वैशम्पायन)	गहलौत	महराना, उदयपुर स्टेट
4.	कछवाहा	मानव	सूर्य	महाराजा जयपुर और ग्वालियर राज्य में
5.	राठौर	कश्यप	सूर्य	जोधपुर, बीकानेर, पूरब और पश्चिम मालवा
6.	सोमवंशी	अत्रय	चन्द्र	प्रतापगढ़ और जिला हरदोई में।
7.	यदुवंशी	अत्रय	चन्द्र	राजा करौली राजपूताने में।
8.	भाटी	अत्रय	जादौन	महाराजा जैसलमेर राजपूताना।
9.	जाडेचा	अत्रय	यदुवंशी	महाराजा कच्छ-भुज
10.	जादवा	अत्रय	जादौन की शाखा,	आवागढ़, कोटला, उमरगढ़, आगरा
11.	तोमर	व्यास	चन्द्र	पाटन के राव, तवरधार, जिला ग्वालियर
12.	कटियार	व्याघ्र	तोवेर	धग्नपुर का राज्य और हरदोई में।

343. कल्याणसिंह बड़वा की पुस्तक परिहार वंश का इतिहास से उद्धृत

13.	पालीवार	व्याघ्र	तोवेर	गोरखपुर में
14.	परिहार	कौशल्य	अग्नि	इतिहास में पढ़कर देखिये
15.	तखी	कोशल्य	परिहार	पंजाव, कागड़ा, जालंधर, जम्मू में
16.	पंवार	वशिष्ठ	अग्नि	मालवा, मेवाड, धौलपुर, पूर्व में बलिया
17.	सोलंखी	भारद्वाज	अग्नि	राजपूताना, मालवा, सौरो, जिला एटा
18.	चौहान	वत्स	अग्नि	राजपूताना, मैनपुरी, एटा।
19.	हाड़ा	वत्स	चौहान	कोटा, बूंदी, हाड़ौती देश
20.	खीची	वत्स	चौहान	खीचीवाड़ा, मालवा, ग्वालियर में
21.	भदौरिया	वत्स	चौहान	नौगवां, पारना-आगरा, इटावा, ग्वालियर
22.	देवड़ा	वत्स	चौहान	राजपूताना, सिरोही राज्य
23.	सम्भरी	वत्स	चौहान	भीमराणा, रानी का रायपुर, पंजाव
24.	वच्छगोत्री	वत्स	चौहान	प्रतापगढ़, सुल्तानपुर
25.	राजकुमार	वत्स	चौहान	दिअरा, कुड़वार, फतेहपुर
26.	पवैया	वत्स	चौहान	ग्वालियर, राज्य में।
27.	गौर	भारद्वाज	सूर्य	शिवगढ़, रायवरेली, कानपुर, लखनऊ
28.	वैस	भारद्वाज	चन्द्र	उन्नाव, रायवरेली, मैनपुरी पूर्व में
29.	गहरवार	कश्यप	सूर्य	माड़ा, हरदोई, उन्नाव, वांदा
30.	सेंगर	गौतम	वल क्षत्रिय पूर्व में राजा अवध के जिलों में है	
31.	कनपुरिया	भारद्वाज	वल क्षत्रिय	गोरखपुर, गोण्डा, प्रतापगढ़।
32.	विसैन	वत्स	वलक्षत्रिय	गोरखपुर, गोण्डा, प्रतापगढ़ में है।
33.	निकुम्भ	वशिष्ठ	सूर्य	गोरखपुर, जौनपुर, आजमगढ़, हरदोई
34.	सिरनेत	भारद्वाज	सूर्य	गाजीपुर, वस्ती, गोरखपुर
35.	कटहरिया	वशिष्ठ या भारद्वाज	सूर्य	वरेली, वदायूँ, मुरादावाद, शाहजहाँपुर
36.	वाच्छिल	क्षत्रय (वाच्छिल)	चन्द्रवंशी	मथुरा, वुलंदशहर, शाहजहाँपुर
37.	वडगूजर	वशिष्ठ	सूर्य की शाखा	अनूपपुर, एटा, अलीगढ़, मैनपुरी, मुरादावाद, हिसार, गुडगाँव, जयपुर
38.	झाला	मरीच (कश्यप)	चन्द्रशाखा	ध्रांगधा, मेवाड़, झालावाड़, कोटा
39.	गौतम	गौतम	वल क्षत्री	राजा अरगल, फतेहपुर
40.	रैकवार	भारद्वाज	सूर्य	वाहराइच, सीतापुर, वारावंकी

41.	करचुल (हैहय)	कृष्णात्रेय	चन्द्र	वलिया, फैजाबाद (अवध)
42.	चन्देल	चांद्रायन शाखा	चन्द्रवंशी	गिद्धौर, कानपुर, फर्रुखावाद, सीधी, मिर्जापुर, गुजरात।
43.	जनवार	कौशल्य	सोलंकी	वलरामपुर, अवध के जिलों में।
44.	वहरेलीया	भारद्वाज	वंश को गोद	रायबरेली, वारावंकी
45.	दीक्षत	कश्यप	सूर्य वंश की शाखा सिसौदिया	उन्नाव, वस्ती, प्रतापगढ़, जौनपुर, रायवरेली, वांदा।
46.	सिलार	शौनिक	चन्द्र की शाखा	सूरत, राजपूताना
47.	सिकरवार	भारद्वाज	वडगूजर	ग्वालियर, आगरा, (यू०पी०) में।
48.	सुरवार	गर्ग	सूर्य की शाखा	उत्तराखण्ड और पूर्व देश में
49.	सुवइयां	वशिष्ठ	यदुवंश की	शाखा, काठियावाड में।
50.	मोरी	दल गौतम	सूर्य शाखा	मथुरा, आगरा, धौलपुर
51.	टांक (तक्षक)	शौनक	नागवंश	मैनपुरी और पंजाव
52.	गुप्त वंश	मौर्य	चन्द्रवंश शाखा	अव इस वंश का पता नहीं
53.	कौशिक	कौशिक	चन्द्र	वलिया, आजमगढ़, गोरखपुर
54.	भृगुवंशी	भार्गव	चन्द्र	वनारस, बलिया, आजमगढ़, गोरखपुर
55.	गर्गवंशी	गर्ग	वल क्षत्रिय	राजपूताना में है।
56.	पडियारि या देवल	साकृत शाम	बल क्षत्रिय	राजपूताना में है।
57.	ननवग	कौशल्य	चन्द्र	जौनपुर जिला
58.	जैसवार	कश्यप	यदु की शाखा	मिर्जापुर, एटा, मैनपुरी
59.	वनाफर	पाराशर (कश्यप)	चन्द्र की शाखा	बुन्देलखण्ड, वांदा, वनारस।
60.	चोलवंश	भारद्वाज	सूर्य	दक्षिण मद्रास में
61.	निवंशी	कश्यप	सूर्य	उत्तर प्रदेश
62.	वैनवंशी	वैन्य	सोमवंशी	मिर्जापुर
63.	दाहिमा	गार्गेय	ब्रह्म क्षत्रिय	काठियावाड़, राजपूताना
64.	पुण्डीर	कपिल	ब्रह्म क्षत्रिय	पंजाव, गुजरात, रीवा, यू०पी०
65.	तुलवा	आत्रेय	चन्द्र	राजा विजयनगर
66.	कटोच	कश्यप	भुम्मिवंश	राजा नादौन, कोट का कांगड़ा
67.	चावड़ा	वशिष्ठ	पवार की शाखा	मालवा, मेवाड़, गुजरात

68.	अहवन	वशिष्ठ	चावड़ा	खीरी, सीतापुर, हरदोई, वारावंकी
69.	डोड (डोडीया)	वशिष्ठ	पंवार शाखा	वुलंदशहर, मुरादावाद, वांदा, मेवाड़, मालवा, पंजाव।
70.	गोहिला	वैजवापेण	गहलौत शाखा	काठियावाड़
71.	बुन्देला	कश्यप	गहरवार शाखा	बुन्देलखण्ड के रजवाड़े
72.	काठी	कश्यप	गहरवार शाखा	काठियावाड़, झांसी, वांदा
73.	जोहिया	पाराशर	चन्द्र	पंजाव देश में है
74.	गंगावंशी	कावायन	चन्द्र	गंगावाडी के लिंगपट्टम में
75.	मौखरी	अत्रय	चन्द्र	प्राचीन राजवंश था
76.	लिच्छिवी	कश्यप	सूर्य	प्राचीन राजवंश था
77.	वाकाटक	विष्णुवर्धन	सूर्य	अव पता नहीं चलता
78.	पालवंश	कश्यप	सूर्य	इस वंश का लोप हो गया।
79.	सेनवंश	अत्रय	व्रह्म क्षत्रिय	पता नहीं चलता
80.	कदम्व	माण्डव	व्रह्म क्षत्रिय	दक्षिण महाराष्ट्र में है।
81.	पल्लव	भारद्वाज	व्रह्म क्षत्रिय	दक्षिण में महाराष्ट्र में है।
82.	वाणवंश	कश्यप	असुरवंश	अव वृतान्त नहीं मिलता
83.	काकतीय	भारद्वाज	चन्द्र प्राचीन	पता नहीं मिलता
84.	शुंग वंश	भारद्वाज	चन्द्र प्राचीन	वृतान्त नहीं मिलता
85.	दहिया	कश्यप	राठौर शाखा	मारवाड़ में जोधपुर
86.	जेठवा	कश्यप	हनुमान वंशी	राजधूमली काठियावाड़
87.	मोहिल	वत्स	चौहान शाखा	महाराष्ट्र में है, नीचे गिने जाते हैं।
88.	वल्ला	भारद्वाज	सूर्य	काठियावाड़ में मिलते है
89.	डावी	वशिष्ठ	यदुवंश शाखा	राजस्थान में है
90.	खरवड	वशिष्ठ	यदुवंश शाखा	मेवाड़ उदयपुर स्टेट में
91.	सुकेत	भारद्वाज	गौड़ों की शाखा	पंजाव में पहाड़ी राजा है

92.	पाड्य	अत्रय	चन्द्र शाखा	अव इस वंश का पता नहीं
93.	पठानिया	पाराशर	वनाफर शाखा	पठानकोट राजा पंजाव
94.	वमटेला	शांडिल्य	विसेन शाखा	हरदोई, फर्रुखावाद
95.	वारह गैयां	वत्स	चौहान	गाजीपुर
96.	भैसालिया	वत्स	चौहान	भैसालग्राम, सुल्तानपुर
97.	चन्दौसिया	भारद्वाज	वैस	सुल्तानपुर
98.	चौखटखम्भ	कश्यप	व्रह्म क्षत्रिय	जौनपुर
99.	धाकरे	भारद्वाज या भृगु	व्रह्म क्षत्रिय	आगरा, मथुरा, मैनपुरी, इटावा, हरदोई, बुलंदशहर
100.	धनवस्त	यमदग्नि	व्रह्म क्षत्रिय	जौनपुर, आजमगढ़, वनारस
101.	ढकाहा	कश्यप	पवार की शाखा	भोजपुर, शहावाद
102.	दोवर (दोनवर)	वत्स या कश्यप	व्रह्म क्षत्रिय	गाजीपुर, वलिया, आजमगढ़, गोरखपुर
103.	हरिधार	भार्गव	चन्द्र	आजमगढ़
104.	जायस	कश्यप	राठौर की शाखा	रायवरेली, मथुरा
105.	जरौलिया	व्याघ्र पद	चन्द्र	बुलन्दशहर
106.	जसावत	मानव्यऑ	कछवाहे की शाखा	मथुरा, आगरा
107.	जोतियाना	मानव्य (कश्यप)	कछवाहे की शाखा	मुजफ्फरनगर, मेरठ
108.	वाडवाहा	कश्यप	कछवाहे की शाखा	लुधियाना, होशियापुर, जालंधर
109.	कछोनिया	शाडिल्य	व्रह्म क्षत्रिय	अवध के जिलों में
110.	काकन	भृगु	व्रह्म क्षत्रिय	गाजीपुर, आजमगढ़
111.	कासिव	कश्यप	कछवाहे की शाखा	शाहजहाँपुर
112.	किनवार	कश्यप	दीक्षित शाखा	युक्त प्रान्त, विहार, वलिया

113. वरहिया	गौतम	सेंगर की शाखा	पूर्व वंगाल, विहार में
114. लौतमिया	भारद्वाज	वड्गूजर शाखा	बलिया, गाजीपुर, शाहवाद
115. मौनस	मानव्य	कछवाहा शाखा	मिर्जापुर, प्रयाग, जौनपुर
116. नंदवक	मानव्य	कछवाहा शाखा	जौनपुर, मिर्जापुर, आजमगढ़
117. वलवार	व्याघ्र	सोमवती शाखा	आजमगढ़, फैजावाद, गोरखपुर
118. रायजादे	पाराशर	चन्द्र की शाखा	पूर्व अवध में है
119. सिहेलठ	कश्यप	दीक्षित शाखा	आगरा, मथुरा, आजमगढ़
120. तरकड़	कश्यप	दीक्षित शाखा	आगरा, मथुरा
121. तिसहीया	कोश्यल	परिहार	इलाहावाद, परगना हड़िया
122. तिलौत्ता	कश्यप	तवर की शाखा	आरा, शाहावाद, भोजपुर
123. उदमतिया	वत्स	व्रह्म क्षत्रिय	आजमगढ़, गोरखपुर
124. माले	वशिष्ठ	पंवार शाखा	अलीगढ़
125. भाले सुल्तान	भारद्वाज	वैस की शाखा	रायवरेली, लखनऊ, उन्नाव
126. जैवार	व्याघ्र	तोवर को शाखा	दतिया, झांसी
127. सरगैयां	व्याघ्र	सोनवंशी	हमीरपुर
128. किसनातिल	अत्रय	तोवर शाखा	दतिया
129. टडइयां	भारद्वाज	सोलंखी शाखा	झांसी, ललितपुर
130. खागर	अत्रय	यदुवंश शाखा	जालौन, हमीरपुर, झांसी
131. पिपरीया	भारद्वाज	गौड़ों की शाखा	वुन्देलखण्ड

132.	नाहर	भारद्वाज	वघेल शाखा	वुन्देलखण्ड
133.	सिकरवार	अत्रय	चन्द्र शाखा	वुन्देलखण्ड, ग्वालियर
134.	खीचर	वत्स	चौहान शाखा	फतेहपुर में असोथर राज्य
135.	खाती	कश्यप	दीक्षित शाखा	वुन्देलखण्ड
136.	आहडिया	वैजवापेड	गहलौत	मेवाड़, डोगरपुर, वांसवाडा राज्य
137.	उदावत	वैजवापेण	गहलौत	आजमगढ़
138.	उज्जैने	वशिष्ठ	पवार	डुंमरावराज, जिला आरा
139.	अमठिया	भारद्वाज	गौड़ (गौर)	अमेठी, लखनऊ, सीतापुर
140.	दुर्गवंशी	कश्यप	दीक्षित	राजा (जौनपुर) राजावाजार
141.	विलखरिया	कश्यप	दीक्षित	प्रतापगढ़, उमरी राजा
142.	डोगरा	कश्यप	सूर्य	काश्मीर, वलिया
143.	निरवाण	वत्स	तोवर	राजपूताना प्रान्त
144.	जादू	व्याघ्र	तोवर	राजपूताना, हिसार, पंजाब
145.	नरौनी	मानव्य	कछवाहा	वलिया, आरा
146.	मनवल	भारद्वाज	कनपुरिया	जौनपुर
147.	गिचवरिया	वशिष्ठ	पंवार	विहार, मुगेर, भागलपुर
148.	रक्षोल (राजपूत)	कश्यप	सूर्य	रींवाराज में वघेलखण्ड
149.	कटारिया	भारद्वाज	सोलंखी	झांसी, मालवा
150.	रजवार	वत्स	चौहान	पूर्व में वुन्देलखण्ड
151	द्वार	व्याघ्र	तोंवर	जालौन, झांसी, हमीरपुर
.	इन्दौरिया	व्याघ्र	तोवर	आगरा, मथुरा, वुलन्दशहर
153.	छोकर	अत्रय	यदुवंश	अलीगढ़, मथुरा, वुलन्दशहर
154.	जागंडा	वत्स	चौहान	वुलन्दशहर, पूर्व में झांसी
155.	वीरवार	व्याघ्र	तोंवर	वलिया, गाजीपुर, वनारस

पुष्कर सरोवर

पश्चिमी रेलवे के अहमदावाद-दिल्ली रेलपथ पर अजमेर स्टेशन है। यहां से पुष्कर लगभग 11 कि०मी० की दूरी पर है। अजमेर से पुष्कर जाने के लिए तांगे तथा मोटर-वसें मिलती हैं। पुष्कर तक पक्की सड़क है।

पुष्कर प्रयाग के समान तीर्थराज माना जाता है। इसीलिए इसे पुष्करराज भी कहा जाता है। इसकी गणना पंचतीर्थों - पुष्कर, कुरुक्षेत्र, गया, गंगा और प्रभास तथा पंचसरोवरों-मानसरोवर, पुष्कर, बिन्दु सरोवर, नारायण और पम्पा सरोवरों में कीं जाती है।

पद्मपुराण में पुष्कर का माहात्म्य इस प्रकार वर्णित है –'

दुष्करं पुष्करं गन्तुं दुष्करं पुष्करे तपः ।
दुष्करं पुष्करे दानं वस्तु चैव सुदुष्करम् ।।
त्रीणि श्रृंगणि शुभ्राणि त्रीनि प्रस्रवणानि च ।
पुष्कराणयादि सिद्धानि च विद्मस्तत्र कारणम् ।।

अर्थात् पुष्कर में जाना अत्यन्त कठिन है। पुष्कर में तपस्या करना और अधिक कठिन है। पुष्कर में दान करना भी कठिन है और वहां निवास करना उससे भी अधिक कठिन है। पापों के नाशक, देदीप्यमान तीन पुष्कर क्षेत्र है, इनमें सरस्वती बहती है। ये आदिकाल से सिद्धतीर्थ हैं। इनके तीर्थ होने का कोई लौकिक कारण हम नहीं जानते हैं।

यथा सुराणां सर्वेषामादिस्तु पुरूषोत्तमः ।
तथैव पुष्करं राजंस्तीर्थानामादिरुच्यते ।।
यस्तु वर्षशतं पूर्वमग्रिहोत्रमुपाचरेत ।
कार्त्तिकीं वा वसेदेकां पुष्करे सममेव तत् ।।

अर्थात् जिस प्रकार देवताओं में मधुसूदन सर्वश्रेष्ठ है, वैसे ही तीर्थों में पुष्कर आदितीर्थ है। कोई सौ वर्षों तक लगातार अग्रिहोत्र की उपासना करे या कार्त्तिकी पूर्णिमा की एक रात पुष्कर में निवास करे, दोनों का फल समान है।

पुष्कर तीर्थ के सम्बन्ध में एक जनश्रुति प्रचलित है। इस जनश्रुति के अनुसार ब्रह्मा ने देवताओं के आग्रह पर एक यज्ञ किया था। उन दिनों असुरों का बहुत जोर था। वे देवताओं के यज्ञों में अनेक प्रकार के विघ्न उत्पन्न करते थे। इसलिए असुरों को रोकने के लिए चारों ओर से कोट बनाकर रक्षक नियुक्त किये गये थे। उस कोट का प्रमाण देने के लिए यहां के लोग सरोवर के आस-पास की पर्वत श्रृंखलाओं का उल्लेख करते हैं। सरोवर के दक्षिण की ओर के पर्वत का नाम रत्नगिरि है। उसकी चोटी पर देवी सावित्री का एक मंदिर बना हुआ है। उत्तर की ओर के पर्वत का नाम नीलगिरि है। पश्चिम की ओर सोनाचूड़ा नामक पर्वत है। यज्ञस्थल पर असुरों का प्रवेश रोकने के लिए शंकर के वाहन नन्दी को घाटी के मार्ग पर रखा गया। वहां पर उसकी मूर्ति बनी है। उत्तरी भाग में असुरों को रोकने के लिए कृष्ण को रखा गया था।

यज्ञ का पुरोहित पद ब्रह्मा ने ग्रहण किया था। यज्ञ की आहुति के समय ब्रह्मा की पत्नी सावित्री यज्ञस्थल पर उपस्थित न थी। अतः पत्नी के स्थान पर ब्रह्मा ने एक गूजरी को स्वीकार कर यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। कुछ देर के बाद वहां ब्रह्मा की पत्नी सावित्री उपस्थित हुई और अपने स्थान पर एक गूजरी को बैठे देखकर कुपित होकर रत्नगिरि पर जाकर अदृश्य हो गयीं। इसी स्थान में एक झरना उत्पन्न हो गया जो सावित्री झरना के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इसी झरने के पास देवी सावित्री का मंदिर है।

इस प्रकार की अनेक अनुश्रुतियां इस क्षेत्र में प्रचलित हैं, जिनमें निम्नांकित जनश्रुति उल्लेखनीय है – मण्डोवर का राजा शिकार खेलते हुए यहां आया। वह एक असाध्य रोग से पीड़ित था। यहां आकर उसने सावित्री जलप्रपात में स्नान किया जिससे उसका रोग अच्छा

हो गया। जब वह राजा लौटकर जाने लगा तब स्थान की पहचान के लिए उसने अपनी पगड़ी एक वृक्ष की शाखा से बांध दी। इसके कुछ दिन बाद अपने राज्य के बहुत से आदमियों को लेकर वह राजा यहां आया और उसने यहां एक विशाल सरोवर बनवाया। यह सरोवर पुष्कर के नाम से विख्यात हुआ। यहां के ब्राह्मणों का कथन है कि हमारे पूर्वजों ने परिहार राजाओं से जीविका निर्वाह के लिए पर्याप्त भूमि प्राप्त की थी, जिसके प्रमाणस्वरूप उनके पास ताम्रपत्र भी थे। इसी प्रकार का एक ताम्रपत्र यहां से प्राप्त हुआ था।

पुष्कर सरोवर के निर्माण के सम्बन्ध में एक अन्य दन्तकथा भी प्रचलित है। कथन है कि नाहर राजा (परिहार) एक दिन अकेले घोड़े पर सवार होकर शिकार को गये और एक सुअर का पीछा करते हुए पुष्कर जा पहुँचे। अकाल पड़ने के कारण पुष्कर जलहीन था और उसमें ऐरा उग रहा था। सुअर इसी ऐरा घास में छिप गया। दूर से आने के कारण नाहर राजा को प्यास लगी। पानी की तलाश करने पर उसने पुष्कर के एक गड्डे में जल पाया। उस जल को पीने से उसका कोढ़ दूर हो गया। अत्यधिक थकान के कारण वह सो गया। तभी उसने एक स्वप्न देखा जिसमें सुअर रूपी पुष्कर ने राजा से कहा कि "तुम मेरा जीर्णोद्धार कराओ। इसीलिए मैं तुम्हें यहां लाया हूँ।" जागने पर राजा मंडोवर गया और अपने दीवान से सलाह मशविरा कर पुष्कर तीर्थ का पुनरुद्धार करा दिया। तभी से परिहारों ने सुअर के मांस का सेवन वन्द कर दिया।

महाराज वीरराजदेवकालीन अप्रकाशित अभिलेख

वि०सं० 1401 का खलेसर सती लेख

1. स्वस्ति श्री नलोगढ़ दुर्गेतु महाराजाधि
2. राज श्रीकोतपालदेव विजय राजे
3. तस्य श्री गाजणदेव वंशज श्री गहलनदेव
4. नामा तस्य भ्राताराज श्री विशालदेव
5. तस्य पुत्र महाराज श्री विर
6. राजदेव विजयराजे तस्मिन
7. मनि थापन राज (।) श्री गाजणदेवस्य
8. राणी नपतादेवी थापितं
9. संवत् 1401 समये वैपाख सुदि 11
10. गुरौ सूत्रधारी धनौ लिपितं
11. ।। पदम ।।



वि०सं० 1418 का बाँसा सती अभिलेख

संवत् 1418 वरषे। फाल्गुन सुदि 14 भौमे श्री सुरत्राण पि रोज साहि राज्ये। डाहल धिप श्री वीरराज शुभमा ने तस्मिनकाले वांसा ग्रामात

वि०सं० 1398 का भड़ारी ग्राम सतीलेख

1. ऊं सिद्धि संवत 1398 तारा समये उचहड़का स्थाने
2. राजा विरराज विजय रजे भड़रिग्रामे रडैत रजै



3. तस्य सुत --- सती लपमा भईम निमि (निर्मित) तडाग ट्यकित
4. पदगु सूत्रहार घनै ढादितं (स्थापितं) । भद (भाद्र) वदी 13 सुक्रे।

वि०सं० 1425 को डोड़ी पिपरा सतीलेख

1. स्वस्ति श्री महाराजा वीरराजदेव राज्ये
2. ------ लखुधा ------- ग्रामाधिपि ---
3. पिपलौ ---- उचहड़ा नगर
4. जय पतौ संग्रामे ---
5. संवत् 1425 वैषाख वदी 13
6. सनौ सूत्रधारि हरदेव लितं (लिखतं)

अंग्रेजों द्वारा राजा नागौद को प्रदत्त सनदें

एचिसन कृत ट्रीटीज इंगेजमेण्ट्स एण्ड सनदस, खण्ड 5 से उद्धृत (पेज नं० 236–265)

उचेहरा और नागौद के लाल शिवराजसिंह द्वारा सन् 1809 ई० में लिखित प्रतिज्ञा पत्र का प्रस्तुतीकरण।

''मै लाल शिवराज सिंह शपथपूर्वक घोषणा करता हूँ कि ब्रिटिश शासन का आज्ञाकारी और मित्रता के सम्वन्ध अचल रूप में वनाये रखूँगा तथा ब्रिटिश (अंग्रेजी) शासन द्वारा नियुक्त अधिकारियों के आदेशों का पालन करुँगा। वुन्देलखण्ड प्रान्त के ब्रिटिश राज्य में जुड़ने के साथ यह इकरारनामा (प्रतिज्ञा पत्र) प्रस्तुत है। अपनी आज्ञाकारिता तथा वफादारी को ब्रिटिश शासन के साथ सुदृढ़ करने हेतु लिखित प्रतिज्ञा करता हूँ। मैं आपका इकरारनामा तैयार कर मिस्टर रिचर्डसन को जिनके द्वारा मुझे सनद प्राप्त हुई है प्रस्तुत कर रहा हूँ जिसके द्वारा मेरी समस्त पैतृक सम्पत्ति इस राज्य में सुरक्षित है। मैं घोपणा करता हूँ कि मैं सावधानीपूर्वक धाराओं के सभी नियमों का पालन करुँगा तथा इकरारनामा का उल्लंघन कभी नहीं करुँगा।

धारा 1

मैं वचनवद्ध हूँ कि मैं वुन्देलखण्ड राज्य के अन्दर या वाहर किसी भी लूटमार करने वाले को अथवा उसके परिवार के लोगों को अपने राज्य के अन्दर प्रवेश व रहने की इजाजत नहीं दूँगा। और नहीं उनके साथ कोई वातचीत करुँगा और न उनसे कोई पत्र-व्यवहार करुँगा। मैं आगे प्रतिज्ञा करता हूँ कि ब्रिटिश राज्य के अधीन किसी राज्य के झगड़े में नहीं पड़ूँगा तथा किसी भी महल, गाँव या किसी राजा या राजप्रमुख की स्वतंत्रता के विपय में कुछ नहीं करुँगा। इतना ही नहीं इस प्रकार के झगड़ों की सूचना ब्रिटिश शासन के अधिकारियों को तुरन्त दूँगा ताकि वे लोग इसका फैसला करें और उस फैसले को मैं पूर्णतः मानूँगा। मैं किसी प्रकार की वदले की भावना नहीं रखूँगा। विना ब्रिटिश शासन के अनुमति के कोई कार्य नहीं करुँगा तथा ब्रिटिश राज्य का वफादार व आज्ञाकारी वना रहूँगा।

धारा 2

मैं वचनवद्ध हूँ कि अपने राज्य की सीमा से लगे घाटों की सुरक्षा इस प्रकार करुँगा

कि कोई भी आक्रमणकारी व लुटेरा ब्रिटिश राज्य में घुसकर मेरे राज्य की सीमा के अन्तर्गत आतंक व अव्यवस्था पैदा न कर सकें। मैं तुरन्त इसकी खबर समय रहते ब्रिटिश राज्य के अधिकारी को दूँगा और उन्हें रोकने के लिये व्यवहारिक प्रक्रिया अपनाऊँगा।

धारा 3

जब कोई ब्रिटिश सैनिक टोली मेरी सीमा में स्थित किसी घाट से होकर गुजरना चाहेगी तो मैं किसी प्रकार की बाधा नहीं डालूँगा वरन् किसी योग्य व्यक्ति को सैनिक टोली को सुविधाजनक मार्ग से ले जाने के लिये नियुक्त करुँगा तथा आवश्यक सामग्री की पूर्ति भी करुँगा जब तक वह सैनिक टोली राज्य की सीमा में रहेगी।

धारा 4

यदि ब्रिटिश राज्य का अधीनस्थ कोई व्यक्ति अपराध करके भागता है और मेरे राज्य के अन्तर्गत किसी गाँव में शरण लेता है तो मैं शपथपूर्वक कहता हूँ कि उसे ब्रिटिश राज के अधिकारी की माँग पर शीघ्र ही सौंप दूँगा यदि मेरे राज्य का कोई जमींदार या प्रजा अपराध करके ब्रिटिश राज्य में शरण लेता है तो उसकी शिकायत बुन्देलखण्ड के अधिकारियों को करुँगा और जो भी आदेश उन व्यक्तियों के खिलाफ होंगे उन्हें पूर्णतः पालन करुँगा तथा उसके विरोध में मैं कोई कदम नहीं उठाऊँगा।

धारा 5

मैं वचनबद्ध हूँ कि ऐसे चोरों और डाकुओं को जो मेरे राज्य के ग्रामों में व्यापारियों और यात्रियों को लूटते हैं, उन्हें ब्रिटिश राज्य के अधिकारियों को सौंप दूँगा। साथ ही साथ चोरी के माल की जिम्मेदारी उस ग्राम के जमींदार की होगी और उन चोरों और डाकुओं को पकड़कर ब्रिटिश राज्य के अधिकारियों को सौंप दूँगा। ऐसे कत्ली तथा अपराधी व ब्रिटिश कानून को न मानने वाले व्यक्ति यदि मेरे राज्य के किसी ग्राम में शरण लेते हैं तो उन्हें पकड़कर ब्रिटिश राज्य के अधिकारी को सौंप दूँगा और उन्हें अपने राज्य से बच कर जाने नहीं दूँगा।

धारा 6

अपना वक्तव्य और अधीनस्थ ग्रामों की सूची प्रस्तुत करने के पश्चात् मुझे इसके उपलक्ष में सनद प्राप्त हुआ है। अतः मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जिन ग्रामों के नाम मेरे द्वारा गिनाये गये हैं उनमें यदि कोई ग्राम या कोई जायजाद किसी दूसरे व्यक्ति की पायी जावेगी और यह सही प्रमाणित हो जावेगा अथवा यह स्पष्ट हो जावेगा कि नवाब अली बहादुर के शासन काल में मेरे अधीनस्थ नहीं थे, ऐसी अवस्था में ब्रिटिश शासन का जो भी निर्देश होगा उसे अनुग्रहपूर्वक बिना संशय के पालन करुँगा।

धारा 7

गोपालसिंह बुन्देला जाति के और पुरहार उपजाति के बहादुरसिंह ने ब्रिटिश राज्य के खिलाफ विद्रोह किया लूट-पाट एवं अत्याचार उन ग्रामों में किया जिन्हें ब्रिटिश राज्य ने राजा बख्तसिंह एवं किशोरसिंह को बख्शा था। अतः मैं शपथपूर्वक प्रतिज्ञा करता हूँ मैं इन बागियों को अपने राज्य के किसी भी हिस्से में शरण नहीं दूँगा, इन्हें अपने राज्य से होकर

गुजरने नहीं दूँगा। यदि ये लोग चोरी-छिपे या खुले आम मेरी रियासत में आते हैं तो मैं इन्हें पकड़वा लूँगा या कुचल दूँगा, यदि ऐसा संभव नहीं हो सका तो इस लापरवाही के लिये कोई भी दण्ड जो ब्रिटिश शासन उचित समझे मुझे दे सकती है।

धारा 8

ब्रिटिश राज्य द्वारा दिये गये सनद में जिन ग्रामों को प्रदान किया गया तथा स्वीकृत दी गई है वे सब मेरी पैतृक सम्पत्ति हैं, जो मुझे अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई है। ब्रिटिश शासन से प्राप्त सनद के अन्तर्गत जिन ग्रामों के नाम है, उनके अलावा किसी भी ग्राम के लिये अनुरोध नहीं करुँगा और न ही ब्रिटिश राज्य से अपनी रियासत के लिये कोई सहायता मागूँगा।

धारा 9

मैं अपने विश्वसनीय व्यक्तियों से किसी को वकील के रूप में नियुक्त करुँगा जो गर्वनर जनरल के बुन्देलखण्ड स्थित प्रतिनिधि के समक्ष मेरे कार्यों के निर्वहन के लिए सदैव उपस्थित रहेगा। यदि ब्रिटिश प्रतिनिधि किसी कारण अथवा गलती के कारण अप्रसन्न होते हैं, तब मैं उस व्यक्ति को वापस बुला लूँगा और उसके स्थान पर दूसरा व्यक्ति भेजूँगा।

यह वचनपत्र जिसमें 9 (नौ) धारायें हैं अपने हस्ताक्षर एवं मुहर के साथ मैंने ब्रिटिश शासन को दिया है। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि इसका कड़ाई के साथ पालन करुँगा और कभी भी अपने दिये वचनों से पीछे नहीं हटूँगा।

11 मार्च सन् 1809 ई० को यह वचनवद्धता दी गई जो 10वीं चैत 1216 फसली संवत् के समान है।

लाल शिवराजसिंह को दिये गये सनद का अनुवाद

बुन्देलखण्ड प्रान्त के रीवा परगना के अन्तर्गत उचेहरा और नागौद के सभी चौधरी, कानूनगो, जमींदार और मुकद्दमों को मालूम हो कि लाल शिवराजसिंह बुन्देलखण्ड प्रान्त के खानदानी राजा हैं। इस प्रान्त के निर्माण के समय से लेकर ईस्ट-इंडिया-कम्पनी के आने तक गम्भीरता पूर्वक अनुभव किया गया है कि ये ब्रिटिश राज्य के सच्चे मित्र हैं और उन्होंने वफादार और समर्पित वने रहना स्वीकार किया है एवं सभी प्रकार के उपद्रव व हिंसा और अनुपयुक्त आचरण से हमेशा दूर रहना भी स्वीकार किया है। अभी हाल ही में अपना इकरारनामा भी दीवान दीरू सिंह के हाथों प्रस्तुत किया है तथा जो सम्पत्ति और जो ग्राम उनके कब्जे में हैं, उसके लिये सनद देने की प्रार्थना किया है और ब्रिटिश राज्य के प्रति स्वाभिभक्त एवं ईमानदार वने रहने की प्रतिज्ञा की है। अतः पूर्ण संतुष्टि के वाद उनके खानदानी राजा होने की वजह से ब्रिटिशराज लाल शिवराजसिंह को उनके अधीन ग्रामों को प्रदान करता है। ये ग्राम स्थायीरूप से लाल शिवराजसिंह एवं उत्तराधिकारियों के कब्जे में रहेंगे। जब तक वे और उनके उत्तराधिकारीगण इकरारनामा की शर्तों का कड़ाई के साथ पालन करते रहेंगे और ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादार तथा आज्ञाकारी वने रहेंगे ये ग्राम जिसकी संख्या सनद में दर्ज है, उन्हें तथा उनके उत्तराधिकारियों को विना किसी सेवा के प्रदत्त होंगे। लाल शिवराजसिंह के अधीन सभी ग्रामों के चौधरी कानूनगो, जमींदार और मुकद्दम अपने-अपने ग्रामों में काम करते रहेंगे। लाल शिवराज सिंह का यह कर्त्तव्य होगा कि अपने न्याय प्रिय शासन से अपने राज-घराने के लोगों को और जमींदारों को सदैव प्रसन्न और संतुष्ट रखे। अपना सम्पूर्ण ध्यान देश की समृद्धि एवं प्रगति की ओर लगायें और अन्तोगत्वा ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादार एवं आज्ञाकारी वने रहें, जैसा कि इकरारनामा में उल्लेख किया है।

आदरणीय गर्वनर जनरल की स्वीकृति मिलने के पश्चात् एक दूसरा सनद प्रदान किया जावेगा तथा वर्तमान में गर्वनर-जनरल के एजेन्ट के द्वारा दिया गया सनद वापस कर लिया जावेगा।

दिनांक 20 मार्च, 1809 ई० 19वीं चैत 1216 फसली संवत् के अनुरूप।

सनद क्रमांक XI

नागौद और उचेहरा के राजा राघवेन्द्रसिंह के 1838 में दिये गये सनद का अनुवाद

बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत नागौद और उचेहरा परगना वर्की के चौधरी, जमींदार, मुकद्दम को मालूम हो कि बुन्देलखण्ड के सभी ग्राम व्रिटिश शासन के अधीन हो गये हैं। लाल शिवराजसिंह जो उक्त राज्य के न्यायोचित राजा हैं और जिन्होंने व्रिटिश राज्य के खिलाफ कभी-भी विद्रोह नहीं किया हैं और न किसी धोखा तथा गड़वडी पैदा किया है, वल्कि व्रिटिश राज के सदा सच्चे राजभक्त रहे हैं। हमेशा अधिकारियों के आदेशों का पालन करते रहे हैं। उनको एक सनद दिनांक 20 मार्च 1809 ई० तदनुरूप 19 वीं चैत 1216 फसली संवत व्रिटिश शासन द्वारा प्रदान किया गया जिसमें 404 (चार सौ चार) ग्राम विना राजस्व के हैं जो उनकी वफादारी और आज्ञाकारिता के कारण उनके कब्जे में पहले से ही है। लाल शिवराजसिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र राजा वलभद्रसिंह के कब्जे में उक्त ग्राम थे किन्तु उचेहरा राज्य के एक पत्र से ज्ञात होने पर कि राजा वलभद्रसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राघवेन्द्रसिंह मौलवी हैदर अली के द्वारा शिक्षित होने और वयस्क होने पर गर्वनर जनरल के एजेन्ट मिस्टर चारलेसीफ्लेसर के समक्ष पेश हुये और एक इकरारनामा[345] जिसमें सात धारायें भी तैयार की गई और शासन के प्रति वफादार और राजभक्त वने रहने की प्रतिज्ञा लिखित रूप से दिया और प्रार्थना किया कि पहले वाले सनद में लिखे गये पूर्वजों के विना राजस्व के ग्रामों को उसी प्रकार सुरक्षित रक्खे गये। पूर्व में सनद् में जो 1809 ई० में प्रदान किया गया था उनमें लिखित सभी ग्राम उन्हें उनके न्यायोचित हक पर विचार करते हुये दिया जाता है। वे और उनकी आगामी संतान उन ग्रामों पर काविज होंगे जव तक वे उन शर्तों और इकरारनामा का ईमानदारी से पालन करेंगे और व्रिटिश राज्य के वफादार और राजभक्त वने रहेंगे। चौधरी एवं अन्य लोग उक्त राजा को हमेशा की तरह लगान अदा करेंगे। राजा का यह कर्तव्य होगा कि प्रजा एवं जमींदारी को प्रसन्न रखें और न्यायोचित शासन से उन्हें संतुष्ट रखे, तथा अपनी रियासत में कृषि की भी उन्नति करे और इकरारनामा के अनुसार शासन के आदेशों का पालन करें।

दिनांक 26 दिसम्वर, 1878 तदनुरूप 11 अगहन 1290 फसली संवत्।

सनद् XII

राजा नागौद को एक जागीर प्रदान करने सम्वन्धी सनद का अनुवाद

दिनांक 22 अक्टूवर 1859 ई०

रीवा स्थित पोटिलिकल एजेन्ट की रिपोर्ट से ऐसा ज्ञात होता है कि देश में अव्यवस्था फैलने के समय अपने सैनिकों की सेवायें व्रिटिश राज्य को सौंपकर वहुत वड़ा काम किया जिसके एवज् में उपद्रवियों को कुचल देने के पश्चात् एक जागीर देने के लिए वादा किया गया था।

345. इस इकरारनामा की कोई प्रति अभिलेख में नहीं है।

उसी के अनुरूप नीचे लिखे ग्राम विजयराघोगढ़ रियासत के जागीर के रूप में दिये जा रहे हैं जिनकी शुद्ध आमदनी 4000 रु० (चार हजार) प्रतिवर्ष है। यह स्पष्ट कर दिया जा रहा है कि यह जागीर आपके बाकी राज्य की तरह ब्रिटिश अधिकारियों के प्रबन्ध में रहेगी।

ग्रामों के नाम	आमदनी
1. आमातारा	780 = 00 रु०
2. धुर्री[346]	280 = 00 रु०
3. अमिलिया	350 = 00 रु०
4. कुड़वा	685 = 00 रु०
5. कोरिया मँझगवा	560 = 00 रु०
6. धरमपुरा	105 = 00 रु०
7. पिपरा	605 = 00 रु०
8. चोरी[347]	172 = 00 रु०
9. कोइलारी	230 = 00 रु०
10. हरदुवा	240 = 00 रु०
11. धनवाही	950 = 00 रु०
	5002[348]=00 रु०

पत्र XIII

राजा नागौद द्वारा द्वितीय पोलिटिकल असिस्टेन्ट नागौद को लिखे गये पत्र का अनुवाद। (दिनांक 16 अगस्त 1863)

मुझे आपका खत दिनांक 31 जुलाई 1873 ई० का प्राप्त हुआ जिसमें रेलवे के लिये जमीन देने के वास्ते मेरी राय निम्न शर्तों के आधार पर मांगी गई है।

1. सरकार द्वारा रेलवे के काम और भवन हेतु आप से भूमि चाही जा रही है जो हमेशा के लिये रेलवे अधिकारियों की अधीनस्थ होगी। उस क्षेत्र में सभी वाशिन्दा (रहने वाले) चाहे वे रियासत की प्रजा हों, चाहे वे ब्रिटिश शासन की प्रजा हों, वे सब रेलवे के अधिकार क्षेत्र में होंगे।

2. यह है कि यदि किसी प्रकार का झगड़ा अधिकारियों, कर्मचारियों, रेलवे कर्मचारियों और रियासत की प्रजा जो रेलवे क्षेत्र के बाहर रहते हैं, होता हैं तो उसका फैसला पोलिटिकल असिस्टेन्ट के द्वारा किया जावेगा।

चूंकि यह मामला रियासत की, हमारे इलाके की, समृद्धि से संबंधित है और जनता के लाभ के लिये हैं, इसलिये उक्त शर्तों के आधार पर जितनी भूमि की आवश्यकता पड़ेगी, रेलवे के लिये और सड़क के लिये देने के लिये मैं राजी हूँ।

346. धुर्री का आधुनिक नाम विष्णुपुर है।
347. चोरी का आधुनिक नाम रुद्रपुर है।
348. 5002 रुपया जोड़ गलत है। 4957 रुपया होना चाहिए।

पतौरा के लाल कामदराज सिंह को वायसराय द्वारा प्रदत्त पंशस्तिपत्र

VICEREGAL LODGE, SIMLA

By Command

of

HIS MAJESTY THE KING-EMPEROR

the accompanying Medal is forwarded

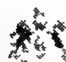
to

Lal Kamadraj Singh Ju Dec
Member, State Council,
Nagod, C.I.

to be worn in
commemoration of

Their Majesties' Silver Jubilee

6th May, 1935



HIS MAJESTY THE KING-EMPEROR

to be worn in commemoration of

Their Majesties' Silver Jubilee

क़वायद बाबत कोर्ट फ़ीस व रसूल तलवाना रियासत नागौद

(1 - 11 - 1933)

फ़ौजदारी

1.	इस्तग़ासा	1)
2.	नकल फैसला (मुतफ़र्कात)	11)
	(संगीन खफ़ीफ)	1)
3.	निगरानी	1)
4.	अपील	11)

5.	दरख़्वास्त वास्ते मिलने नक़ल फ़ैसला या अपील अज़ क़ैदो या हवालाती	+

दीवानी

1.	अर्ज़ी नालिश	6।) सैकड़ा
2.	याददाश्त अपील दीवानी	6।) सैकड़ा
3.	दरख़्वास्त नज़रसानी	3।।)
4.	नकल फ़ैसला	1) से 25) तक ।)
		26) से 50) तक ।।)
		51) से ऊपर 1)
5.	नक़ल डिगरी	50) से कम पर ।।)
		50) से ऊपर 1)
6.	नक़ल हुकुम जो ब मंजिलें डिगरी न हो	।।)
7.	गैर मनकूला जायदाद की दखलयावी	तादाद लगान का दस गुना
8.	दावा इस्तक़रार हक़	10)
9.	दावा तंसीख दस्तावेज़	10)
10.	दरख़्वास्त अपील इजराय डिगरी	।।)
11.	दावा तंसीख नीलाम	10)
12.	नालशात दखलयाबी बाग़ीचा या मकान वगैरह	कीमत बाज़ार मुतसव्वर होकर मालियत पर
13.	दावा करापाने रुखसत औरत	5)

माल

1.	नालशात सीग़ा सरसरी माल मवाज़आत खालसा बतरफ़ नम्बरदार	–)
2.	नालशात सीग़ा सरसरी माल मवाज़आत उवारी	फ़ी रुपया)।।।

3.	नालशात सीग़ा इजराय डिगरी सरसरी मवाज़ खालसा बतरफ़ नम्बरदार	–)
4.	नालशात सीग़ा इजराय डिगरी सरसरी मवाज़आत उबारी	।।)
5.	तक़र्रुर लगान	फ़ी वीघा ग़ैर पैमूद आराज़ी पर 7।।) फ़ी वीघा पैमूद आराज़ी पर 3।।)
6.	रसूम बटवारा जायदाद ग़ैर मनकूला	फ़ी वीघा ग़ैर पैमूद आराज़ी पर 7।।) फ़ी वीघा पैमूद आराज़ी पर 3।।।)
7.	अपील सीग़ा सरसरी माल मवाज़आत खालसा	–)
8.	अपील सीग़ा सरसरी माल मवाज़आत उबारी	अदालत इब्तदाई के रसूम का निस्फ़

मुतफ़र्कात

1.	आरायज़ मामूली	/)
2.	आरायज़ दीवानी फ़ौजदारी	।)
3.	दरख्वास्त वास्ते मुलाजमत	+
4.	दरख्वास्त मुफ़लसी	।)
5.	दरख्वास्त अपील सीग़ा मुफ़लसी	।)
6.	मुख्तारनामा आम	4)
7.	मुख्तारनामा खास	1)
8.	वकालतनामा	अदालत आलया 1) अदालत हाय रियासत ।।)
9.	अपील मुतफ़र्कात	।।)
10.	दरख्वास्त तलवी मिसिल	1/)
11.	उजरत नक़ल	हिन्दी या उरदू अव्वल 200 लफ्ज़ों पर ///) इसके वाद हर 100 लफ्ज़ों पर /)

		अँग्रेजी अव्वल 200 लफ्ज़ों पर 1//)
		इसके बाद हर 100 लफ्ज़ों पर //)
12.	तलवी गवाहान	खास जैसे नागौद, उचेहरा, धनवाही=)
		देहात का 1//)
		परगना से दूसरे परगना का ।।।)
		इलाका गैर 1)
13.	दावा जिसमें 2 या 2 से ज़्यादा अमूर शामिल हों	हर एक मामले से अलहदा 2 कोर्ट फ़ीस दाखिल होगी कई अमूर के । दावे की समाअत नहीं होती
14.	मुआयना मिसिल	पहले घंटा पर 1) इसके वाद फ़ी घंटा ।1)
15.	तलाश कराई तारीख हुकुम वगैरह	फ़ी सन् 1)
16.	तलाश कराई नाम फ़रीक मुकदमा	फ़ी सन् ।1)
17.	नक़ल उस दस्तावेज की जो वजाय असल के हो	।1)
18.	नक़ल रूवकार हिसाव वयान वगैरह	।1)

नियम दरबार - राज्य नागौद

(1) पोशाक दर वारियान नीचे लिखे मुवाफिक होगी,

(अ) पगड़ी या साफा,

(व) अंगा या शेरवानी अचकन,

(स) चूड़ीदार पायजामा,

(2) वैठक निर्धारित स्थान पर : –

दर वारियान को चाहिये कि निर्धारित समय के कुछ पूर्व आकर पने स्थान पर वैठ जाय,

(2) बैठक निर्धारित स्थान पर : –

दर वारियान को चाहिये कि निर्धारित समय के कुछ पूर्व आकर अपने स्थान पर बैठ जाय,

(3) नजर नौछावर : –

(अ) अब्वल नज़र नौछावर पूरे ताजीमी सरदार की होगी

(ब) इनके बाद नज़र नौछावर आधी ताज़ीमी सरदार की होगी

(स) नज़र नौछावर वेला ताजीमी

(4) ऊपर की तरह नौछाबर के वाद इत्रपान होगा

(अ) अब्वल खड़ी ताज़ीमी सरदारान का

(ब) इनके बाद आधी ताज़ीगी सरदार का

(स) इत्रपान जिनकी ताज़ीम नहीं है

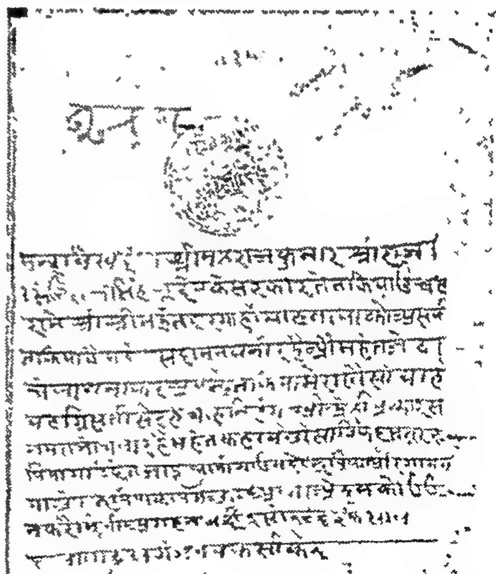
(5) ऐसा हरगिज न होना चाहिये कि ऊपर लिखे नियम के विरुद्ध किया जाय, याने पूरी ताज़ीम वालों के बीच में आधी ताज़ीम वाले या वेला ताज़ीमी वक्त नज़र नौछाबर या इत्रपान के न आदें।

संवत 1862 को शिवराज सिंह द्वारा तकिया उचेहरा को प्रदत्त सनद की नकल

दीवान, नागौद स्टेट,
सी०आई०

सन्त लिख दीन श्री महाराजकुमार श्री राजा सिउराजसिंह जू देव के सरकार ते तकिया उचहरा में श्री श्री महंत दरगाही साह बाबा को असर्क तकिया के महंती सदामत बनी रहै औ महंत जेठा चेला वनाकर अपने तकिया में राखै सो चाहे वह ग्रिसती से रहे चाहै निहंग औ ओही प्रकार सदामत जो चेला रहै महंत कहावै औ साविक दसतूर रूपिया गाउ देत जाइ थानी गाउ दो रुपिया और गावन में अेक रुपिया कायम आठ आना अेहम कोउ उज्र न करै मिती अगहन वदी 2 सं० 1862 के साल

द० लाला दलगंजन वकसी केर



श्री गोपाल सिंह को श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय द्वारा लिखा गया पत्र

मध्यभारत प्रादेशिक देशी राज्य लोकपरिषद्

CENTRAL INDIA REGIONAL STATES PEOPLES CONFERENCE

प्रेसिडेण्ट
गोपीकृष्ण विजयवर्गीय
जनरल सेकेटरीज

प्रकाशमहल,
यशवन्तरोड़
इन्दौर सिटी
स्थान दिल्ली से
11 - 6 - 46

भाई गोपालशरण सिंह जी,

आपका पत्र तारीखी 11-6-46 मिला। मध्यभारत प्रादेशिक देशी राज्य लोक परिषद अत्यत्र उत्सुक है कि प्राय मंडलों का संगठन शीघ्रातिशीघ्र हो जाय। आप नागीद में वहां के सच्चे और उत्साही कार्यकर्ताओं का सहयोग लेकर अ०या०दे० रा० लोकपरिषद की नीति के अनुसार प्रजामंडल या लोक परिषद स्थापित करने का प्रयत्न कर सकते हैं।

आपका
मध्य भारत, प्रदेशिक
दे०रा० लोकपरिषद

श्री गोपालशरणसिंह को श्री पट्टाभिसीतारमैया का बधाईपत्र

ALL INDIA STATE'S PEOPLE'S CONFERENCE

NEW DELHI 18th Sept. 1947.

Dear Gopal Saran Singh,

I congratulate the Praja Mandal and Prince upon the successful conclusion of a long draw fight for polular Government. To inaugurate its beginnings is difficult enough, but to work it up to a frution requires patience on the part of the Praja and sympathy on the part of the Prince and good will on both sides which I daresay, would be unstintingly evinced.

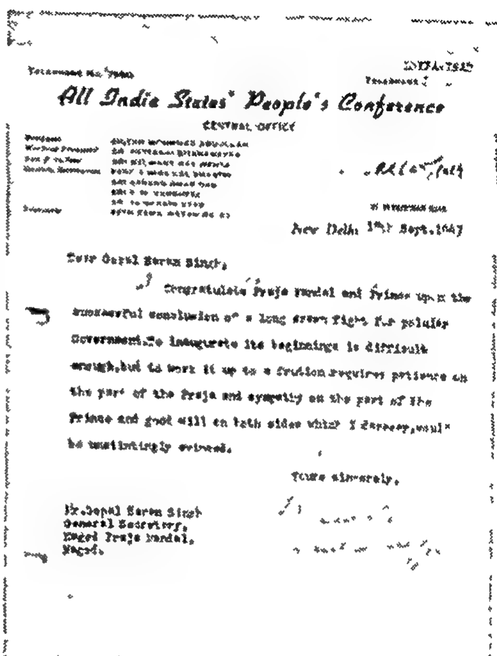
Yours Sincerely

Mr. Gopal Saran Singh

General Secretary,

Nagod Praja Mandal,

Nagod.



All India States' People's Conference

CENTRAL OFFICE

New Delhi 18th Sept. 1947

Dear Gopal Saran Singh,

I congratulate Praja Mandal and Prince upon the successful conclusion of a long drawn fight for polular Government. To inaugurate its beginnings is difficult enough, but to work it up to a frution requires patience on the part of the Praja and sympathy on the part of the Prince and good will on both sides which I daresay, would be unstintingly evinced.

Yours sincerely,

Mr. Gopal Saran Singh
General Secretary,
Nagod Praja Mandal,
Nagod.

कन्नौज के प्रतीहारों के अभिलेख

1. प्रतीहार शासक नागभट्ट द्वितीय का ताम्रपत्र
   प्राग्धार, खण्ड 1994.

1 A. बचकला (जोधपुर-राजस्थान) अभिलेख
   एपि० इण्डि०, खण्ड 9, पृ० 199 आगे.

2. महाराजा भोजदेव का वराह ताम्रपत्र वि० सं० 893
   वही, खण्ड 19, पृ० 17 आगे.

3. महाराजा भोजदेव प्रथम का दौलतपुर (जोधपुर) अभिलेख
वही, खण्ड 5, पृ० 211 आगे.

3A. मिहिरभोज का कालंजर अभिलेख अप्रकाशित

3B. मिहिरभोज का नया शिलालेख, प्राग्धारा (लखनऊ), खण्ड 1 पृ० 1-2

3C. शनिचरी से प्राप्त एक खण्डित प्रतीहार अभिलेख,
प्राग्धारा, खण्ड 2 पृ० 117 तथा आगे.

4. भोजदेवकालीन देवगढ़ जैन स्तम्भ लेख
वही, खण्ड 4, पृ० 310.

5. भोजदेवकालीन ग्वालियर अभिलेख
वही, खण्ड 1, प-० 156 आगे.

6. परमेश्वर भोजदेवकालीन ग्वालियर अभिलेख
वही, खण्ड 1, पृ० 159 आगे.

7. भोजदेव का आहार (बुलन्दशहर) अभिलेख
वही, खण्ड 19, पृ० 588 आगे.

8. भोजदेवकालीन पेहवा (करनाल) अभिलेख
वही, खण्ड 1, पृ० 186 आगे.

9. भोजदेवकालीन देहली खण्डित अभिलेख
भण्डारकर लिस्ट, क्रमांक 1662.

10. मिहिरभोज का सागरताल अभिलेख
एपि० इण्डि०, खण्ड 13, पृ० 107 आगे.

11. भोजकालीन बार्टन संग्रहालय (भावनगर) खण्डित अभिलेख,
वही, खण्ड 19, पृ० 174 आगे.

12. महेन्द्रायुध देव कालीन ऊना (जूनागढ़) ताम्रपत्र
वही, खण्ड 9 पृ० 4 आगे.

13. महाराजा महेन्द्रपालदेव की दिघवा - दुबौली ताम्रपत्र
इण्डि० एण्टि०, खण्ड 15, पृ० 112.

14. महेन्द्रपालकालीन ऊना (जूनागढ़) ताम्रपत्र
एपि० इण्डि०, खण्ड IX, पृ० 6 आगे.

15. महेन्द्रपाल का सीयडोणी (ललितपुर) अभिलेख
वही, खण्ड 1, पृ० 173 आगे.

16. वही, भण्डारकर सूची, क्रमांक 44.

17. महेन्द्रपाल का पेहवा (करनाल) अभिलेख
एपि० इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 244 आगे.

18. महेन्द्रपालदेव ब्रिटिश संग्रहालय अभिलेख
एम०ए०एस०वी०, खण्ड 5, पृ० 64.

19. महेन्द्रपाल का पहाड़पुर (बांगलादेश) स्तम्भलेख
    आ०स०इं०, एन्यु० रि० 1925-26, पृ० 141.
20. महेन्द्रपालदेवकालीन ब्रिटिश संग्रहालय अभिलेख
    एम०ए०एस०बी०, खण्ड5, पृ० 64.
21. महेन्द्रपालकालीन रामगया (गया) दशावतार अभिलेख
    कनिंघम, ए०एस०आर०, खण्ड 3, पृ० 123.
22. महेन्द्रपालकालीन गुनेरिया (गया) अभिलेख
    एम०ए०एस०बी०, खण्ड 5, पृ० 69.
23. महेन्द्रपालदेवकालीन बिहार (पटना) बौद्धमूर्ति अभिलेख
    आ०स०ई०एन्यु० रि०, 1923-24, पृ० 102.
24. महेन्द्रपालकालीन इत्खोरी प्रस्तर अभिलेख
    वही, 1920-21, पृ० 35.
25. हड्डाला ताम्रपत्र
    इण्डि०एण्टि०, खण्ड 12, पृ० 193 आगे.
26. महिपालदेव कालीन असनी (फतेहपुर) अभिलेख
    एपि०इण्डि०, खण्ड 1, पृ० 171 आगे.
27. महराज विनायकपालदेव का बंगाल एशियाटिक सोसायटी ताम्रपत्र
    इण्डि० एण्टि०, खण्ड 15, पृ० 140 आगे.
28. विनायकपालदेव द्वितीय कालीन ग्वालियर प्रस्तर अभिलेख
    ए०एस०आई०, एन्यु० रि०, 1924-25 पृ० 160 आगे.
29. महेन्द्रपालदेवकालीन परतावगढ़ अभिलेख,
    एपि०इण्डि०, खण्ड 14, पृ० 182 आगे.
30. देवपालकालीन सीयडोणी अभिलेख,
    वही, खण्ड 1, पृ० 177 आगे.
31. मथनदेवकालीन राजौरगढ़ अभिलेख
    वही, खण्ड 3, पृ० 266 आगे.
32. त्रिलोचनपालदेव का झूसी अभिलेख
    इण्डि० एण्टि०, खण्ड 18, पृ० 33-34.
33. यशःपालकालीन कड़ा अभिलेख
    आ०स०ई०, एन्यु रि०, 1923-4, पृ० 123.

अन्य प्रतीहार कुलों के अभिलेख

1. बाउक का जोधपुर अभिलेख
   एपि० इण्डि०, खण्ड 18, पृ० 87 तथा आगे.
2. कक्कुक का घटियाला अभिलेख
   वही, खण्ड 9, पृ० 210 तथा आगे.
3. महीपालकालीन बयाना (भरतपुर) अभिलेख
   भण्डारकर सूची, क्रमांक 71.

4. ओसिया (जोधपुर) जैन मंदिर अभिलेख
वही, क्रमांक 72.

ग्वालियर के प्रतीहारकालीन अभिलेख

1. वि०सं० 1249 का नरेसर मूर्तिलेख
एपि० इण्डि०, खण्ड 38, पृ० 132-33.
2. वि०सं० 1251 का ग्वालियर तालाव लेख
वही, खण्ड 38, पृ० 133-34.
3. वि०सं० 1282 का मलयक्षितीश (मलयवर्मा) अभिलेख
वही, खण्ड 38, पृ० 306-08.
4. वि०सं० 1282 का मलय क्षमापाल अभिलेख
वही, खण्ड 38, पृ० 308.
5. मलयवर्माकालीन तिथिविहीन लेख
वही, खण्ड 38, पृ० 309.
6. नरवर्माकालीन तिथिविहीन लेख
वही, खण्ड 38, पृ० 310.
7. वि०सं० 1277 का मलयवर्मा का कुरैठा ताम्रपत्र
वही, खण्ड 30, पृ० 144-150.
8. वि०सं० 1304 का नरवर्मा का कुरैठा ताम्रपत्र
वही, खण्ड 30, पृ० 150-52.

चन्देरी के प्रतीहारकालीन अभिलेख

1. वि०सं० 1055 का हरिराज का भारत कला भवन ताम्रपत्र
एपि० इण्डि०, खण्ड 31, पृ० 309-13.
2. हरिराजदेव का थूबौन प्रस्तर अभिलेख
वि०इं०ज०, खण्ड 19, पृ० 193-198.
3. रणपालदेवकालीन बूढ़ी चन्देरी अभिलेख
ज०ओ०इं० खण्ड 26, पृ० 87-90.
4. कदवाहा खण्डित प्रस्तर अभिलेख
एपि० इण्डि० खण्ड 37, पृ० 117 आगे.
5. पचराई शान्तिनाथ प्रतिमा अभिलेख,
ग्वालियर राज्य के अभिलेख, क्र० 45.
6. चन्देरी प्रस्तर अभिलेख,
वही, क्रं० 632 और 633.

सिंगोरगढ़ के प्रतीहारकालीन अभिलेख

1. वि०सं० 1355 सिमरा सतीलेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
2. वि०सं० 1357 का बरतरा लेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
3. वि०सं० 1364 का सिंगोरगढ़ सती अभिलेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
4. वि०सं० 1344 का ईश्वरमऊ (हिण्डोरिया) लेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
5. वि०सं० 1365 का बम्हनी सती अभिलेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
6. वि०सं० 1365 का बम्हनी सती अभिलेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
7. वि० सं० 1362 का सलैया सती अभिलेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)
8. वि०सं० 1359 का सून नदी लेख, ई०सी०पी० एण्ड बरार (हीरालाल)

महाराज वीरराजदेवकालीन अभिलेख

1. वि०सं० 1397 का खलेसर अभिलेख
2. वि०सं० 1397 का सलेहा-गंज सती लेख
3. वि०सं० 1398 का वीरराजकालीन भड़ारी सती लेख
4. वि० सं० 1398 का वीरराजकालीन सलेहा रानी तालाब सती लेख
5. वि० सं० 1400 का वीरराजकालीन उरदना लेख
6. वि०सं० 1401 का खलेसर सती लेख
7. वि०सं० 1404 का वीरराजदेवकालीन वह्मनगवां सती लेख
8. वि०सं० 1404 का वीरराजकालीन रामपुर पाठा अभिलेख
9. वि०सं० 1405 का वीरराजकालीन प्रयाग संग्रहालय लेख
10. वि०सं० 1407 का वीरराजकालीन गोवरी सती लेख
11. वि०सं० 1408 का वीरराजकालीन रायपुर (कोठी) लेख
12. वि०सं० 1412 का वीरराजदेवकालीन कारीतलाई सती लेख
13. वि०सं० 1418 का वीरराजदेवकालीन बांसा लेख
14. वि०सं० 1425 का डोडी-पिपरा सती लेख
15. वि०सं० 1431 का वीरराजदेव का सिगदई सती लेख

उपर्युक्त अभिलेखों में क्रमांक 7, 8, 9, 10, 11 और 12 प्रकाशित है। शेष अभिलेख अभी तक अप्रकाशित है और इनका उपयोग प्रस्तुत ग्रंथ में पहली बार किया गया है।

सन्दर्भ सूची

Abul Fazal — Ain-I- Akbari

Altekar, A.S. — Rastrakutas and their Times. Poona. 1934

Atkinson	North-Western Proivinces (Bundelkhand) Gazetteer. (iv. vii). vol I.
Aitchisin	Treaties. Engagements and sanads (Central India), Vol. III, V
Asiatic Annual XI	Capture of Ajaigarh
Balwantrao Bhaiya Saheb	*History of the forts of Gwalior, Bombay,* 1892.
Brocone, M.H.	Gwalior Today, 1940.
Bose. N.S.	History of Candellas, Calcutta. 1956.
Ball Charles	India Mutiny. 2 Vols.
Bird, R.M.	Note on the Sagar and Narmada Territories, Nagpur, 1834.
Banerji, R.D.	The Haihayas of Tripuri and Their Monuments.
Bhatia, Dr. Pratipal	The Paramaras, Delhi.
Cunningham, A.	Archaedogical Survey of India Reports; Vol II, IX, XXI
Cunningham, A.	Stupa of Bharhut. 1879.
Calcutta Review (XXXIV)	Bandhogarh.
Dugar, R.N.	*Prthviraj Charita.*
Dixit, R.K.	Kanauj. Lucknow
Dixit, R.K.	Candellas of Jajakabhukti and their times
Directorate of Publicity (Gwalior State)	Gwalior fort, its history and monuments.
Directorate of Publicity (Gwalior State)	Gwalior of Today. 1931.
Erskine, W.C.	Outbreak of disturbances and restoration of authority in Sagar and Nerbudda territories in 1857-58.
Elliot and Dowson	History of India Told by its own his- torians.
Forbes, Kinloch	Rasamala.
Fleet, J.F	Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III, 1888.
Garde, M.P.	Archaeology in Gwalior, 1934.
Garde, M.P.	Hand Book of Gwalior State, 1936.
Garde, M.P.	Directory of Forts in Gwalior State.
Garde. M.P.	Padmavati, 1952.
Govt of Madhya Bharat	Descriptive and classified list of archaeological monuments in Madhya Bharat.

Hiralal	Inscriplions of C.P. and Berar. Delhi.
Keith, G.B.	Report on Gwalior fort, 1882.
Kaye and Malleson	Indian Mutiny.
Luard.	Bundelkhand Gazetteer (New).
Mitra, S.K.	Early Rulers of Khajuraho, Delhi.
Mirashi, M.M.	*Corpus Inscriptionum Indicarum* (Inscriptions of the Kalachuri- Chedi Era) Vol. IV. 1956.
Malleson.	Native States of Central India.
Malcolm	Memoirs of Central India, 1833.
Malcolm	Administrative Reports of Centrial India 1865-1903.
Malcolm	Administrative Reports of Central India 1904
Mishra, V.B.	Gurjara-Pratiharas and their Times Delhi, 1966
Mackay, A.	Native chiefs and their states.
Muhammad Bihamad Khan	Tarikh -i- Muhammadi (Photocopy)
Munshi, K.M.	*Glory that was Gurjaradesh*
Niyogi, Roma	History of the Gahadawalas, Calcutta.
Jha, G.H.	History of Rajpatana, Vol. I.
Puri, B.N.	History of the Gurjara-Pratiharas, Bombay.
Patil, D.R.	Cultural Heritage of Madhya Bharat
Rai, S.N.	History of Native States of India, Calcutta, 1888.
Sharma, Dasharath	*Rajasthan through the Ages.*
Singh, R.B.	History of the Chahamanas.
Sleeman	Rambles and Recollections.
Scott, P.G.	Personal Narrative of Escape form *Nowgong, 1857.*
Singh, R.C.P.	Kingship in North India (600-1200 AD.)
Trivedi, H.V.	Bibliography of Madhya Bharat Archaeology, Gwalior 1953.
Tod	Annals and Antiquities of Rajasthan, 1920.
Udgaokar, Padma	Political Institutions and Administration of Northern India.
Trivedi R.D.	Temple of Pratihara Period in central India.

हिन्दी ग्रंथ

अवस्थी, अ०वि०ला० — प्राचीन भारत के राजपूत वंश, लखनऊ

अग्रवाल, कन्हैयालाल — विन्ध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, सतना, 1986.

आसोपा, रामकरण — मारवाड़ का मूल इतिहास.

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द — मारवाड़ का इतिहास.

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द — जोधपुर का इतिहास.

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द — ओझा निबन्ध संग्रह, खण्ड 1, 2, 3, 4 उदयपुर.

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द — सोलंकियों का प्राचीन इतिहास.

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द — राजपूताना का इतिहास.

गहलौत, जगदीशसिंह — मारवाड का इतिहास.

गहलौत, जगदीशसिंह — मण्डोवर का इतिहास.

गुप्त, भगवानदास — छत्रसाल, आगरा.

चतुर्वेदी, जगन्नाथ प्रसाद — नागौद परिचय

छत्रसाल — पत्र (बुन्देली).

प्रतिपालसिंह — बुन्देलखण्ड का इतिहास (अप्रकाशित).

बड़वा, कल्याणसिंह — परिहारों का इतिहास.

मिश्र, सूर्यमल — वंशभास्कर, प्रथम भाग (प्रतिहारोत्पन्ति).

मुंशी मुन्नालाल — तवारीख मैहर, अप्रकाशित.

मुंशी देवी प्रसाद — परिहार वंश का प्रकाश.

मिश्र, केशवचन्द्र — चन्देल और उनका राजत्वकाल.

तिवारी, गोरेलाल — बुन्देलखण्ड का इतिहास.

द्विवेदी, हरिहरनिवास — मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी).

द्विवेदी, हरिहरनिवास — मध्य भारत का इतिहास, 1959.

द्विवेदी, हरिहरनिवास — ग्वालियर राज्य के अभिलेख, वि०सं० 2004.

दीक्षित, एम०जी० — मध्यप्रदेश के पुरातत्व की रूपरेखा नागपुर.

रहमान अली — तवारीख बघेलखण्ड (पाण्डुलिपि).

राय, सी०वी० — नरसिंहनयन, नरसिंहपुर.

रासो सार — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी.

शुक्ल, प्रयागदत्त — मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोसले, बम्बई सं० 1996.

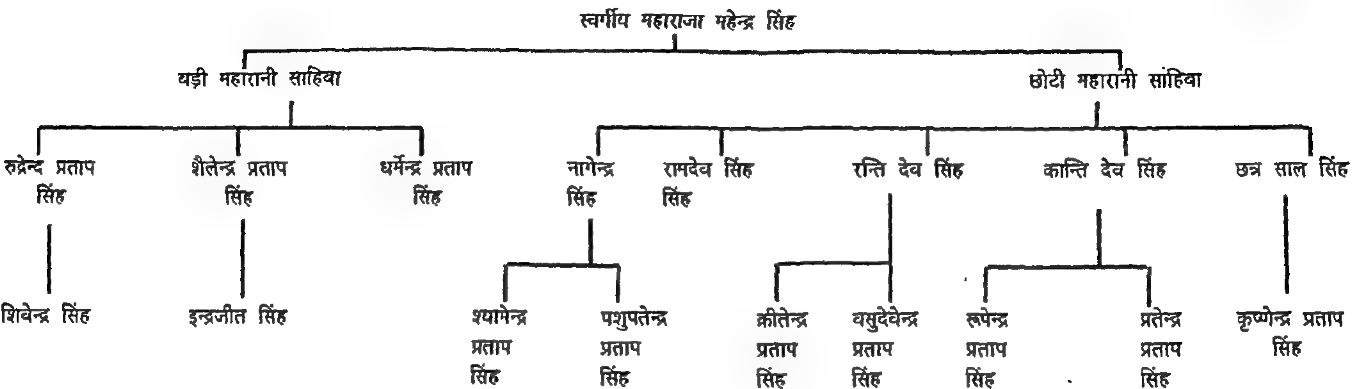
श्यामलाल (मुंशी) — तवारीख बुन्देलखण्ड, 1874.

शर्मा (डॉ०) भगवती लाल — ढोला मारु रा दूहा, अजमेर.

त्रिवेदी, सुधीर कुमार — मध्यभारत की प्रतीहारकालीन कला एवं स्थापत्य, जयपुर, 1994

श्री महाराजा सा० महेन्द्रसिंह से बड़ी महारानी साहिवा से उत्पन्न 3 पुत्र एवं छोटी महारानी साहिवा से 5 पुत्र हैं।

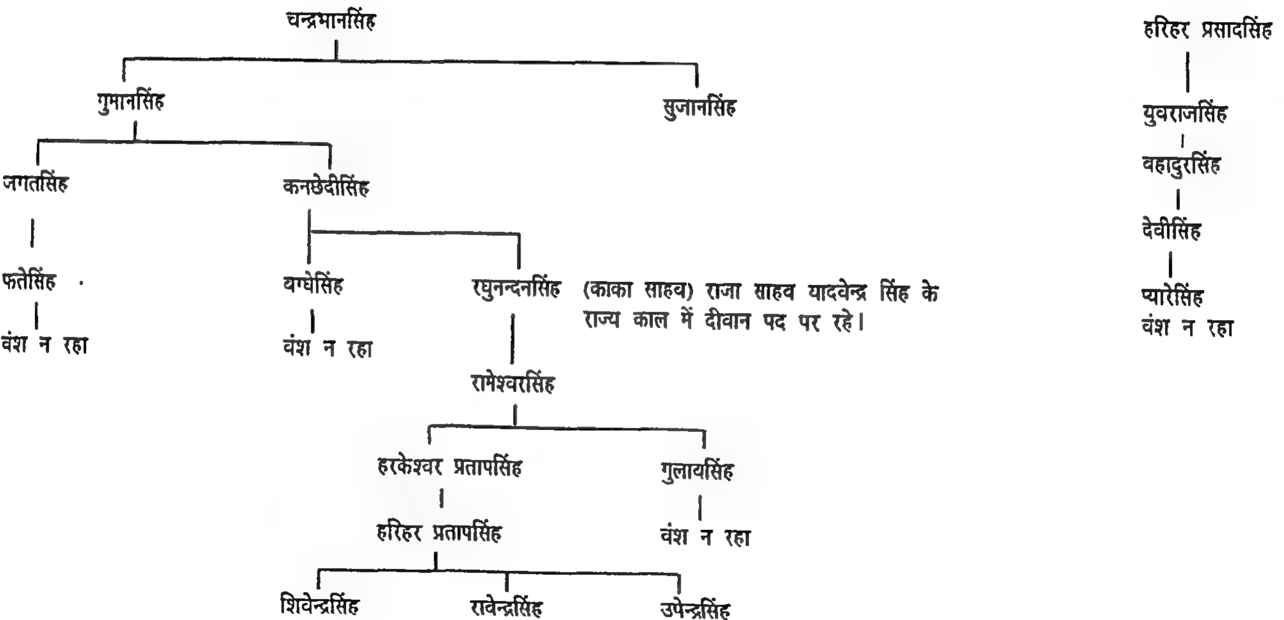
(सचरा नं० 1)



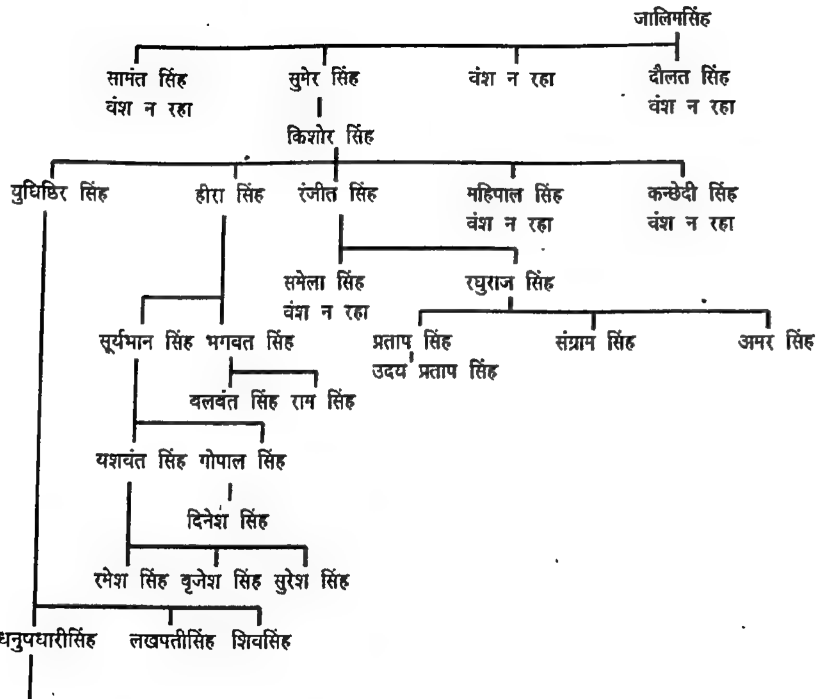
(सजरा नं० 2)

ग्राम कचलोहा (जेठी पट्टी)

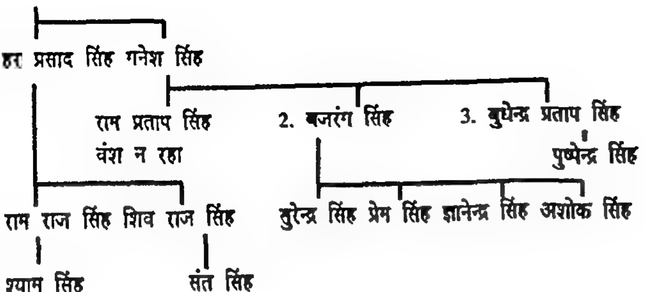
चन्द्रभान सिंह और युवराज सिंह दोनों सगे भाई थे। यह राजा साहव उचेहरा के साथ आये थे। इन लोगों को पतवार इत्यादि मौजे मिले थे राजा साहव नागौद की नाराजगी से मौजा छूटने पर रीवा राज्य के अन्तर्गत सुपिया मौजे में रहने लगे। इसके वाद राजा साहव ने बुलाकर ग्राम कचलोहा दिया। इनका कहना है कि सुपिया तथा टीकर रीवा राज्य तथा टीकर सोहावल राज्य के परिहार और खेरवा टोला के परिहार एक ही साथ के हैं।



(सजरा नं० 3)



नोट – दौलत सिंह तीर चलाने में निपुण थे। दउआ बुन्देलखण्ड का रहने वाला लुटेरा अचानक नागौद को लूटने आ गया था। उस युद्ध में वीरगति पायी। इनका चबूतरा विहारी जी के मंदिर के सामने नागौद में अब भी बना है। इस वीरता के उपलक्ष्य में राजा शिवराजसिंह जी से मुडवार में अतरौरा ग्राम दौलत सिंह पिता जालिमसिंह को दिया था। बाद में अतरौरा ग्राम ले लिया गया और कचलोहा ग्राम दिया गया। ये लोग गढी टोला नागौद में रहते थे।

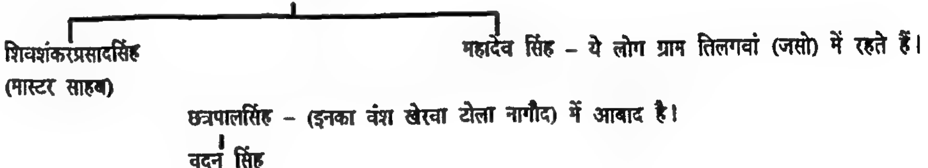


(सजरा नं० 4)

ग्राम खेरवा टोला (नागौद) के परिहार

श्री शिवशंकर प्रसादसिंह उर्फ मास्टर सा० जो तिलगवां मौजा में रहते हैं के द्वारा लिखाया गया है –

श्री महाराज महेन्द्रसिंह के छब्बीसवें पुश्त में ग्राम उरदना दिया गया था (1857 ई० के लगभग)। यह हिस्सा जब्त हुआ जैसाकि जनश्रुति हैं। इनके पूर्वज महाराज नागौद के यहाँ अंग्रेजों को तहखाने में छिपाए गये थे मार डाले गए थे। इस बजह से हिस्सा जब्त कर लिया गया। इसके बाद हमारे पूर्वज बाहर रीवा अपने रिश्तेदारों में चले गए। फिर महाराज श्री राघवेन्द्र सिंह या श्री महाराज यादवेन्द्र सिंह ने बुलाकर उँचुवा टोला (खेरूवा टोला) नागौद में बसाया और किला रक्षक के पद पर रखा गया और टैक्स माफ रहा। आगे से पूर्वजों का नाम नहीं मालूम हुआ।

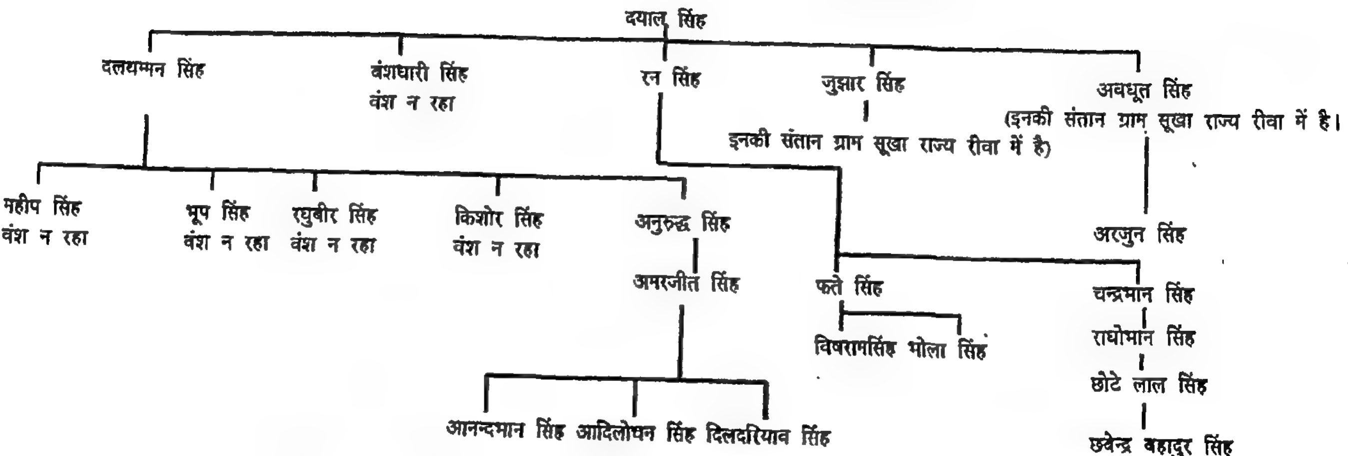


जगरूपसिंह
सुर्यमानसिंह } लावल्द फौत हो गए।

(सजरा नं० 5)

ग्राम पटना

राजा साहब कल्याणसिंह जू देव के सात लड़के थे। जेठे प्रतापरूद्रसिंह राजा हुए। चौथे महासिंह सितपुरा मौहारी लगाय हिस्सा पाया। यह पटना वाले महासिंह के वंशधर है। खास कलमों से पता चलता है कि मौहारी छुड़ाकर इनको पटना दिया गया। गढ़ी का अवशेष चिन्ह मौहारी में है।

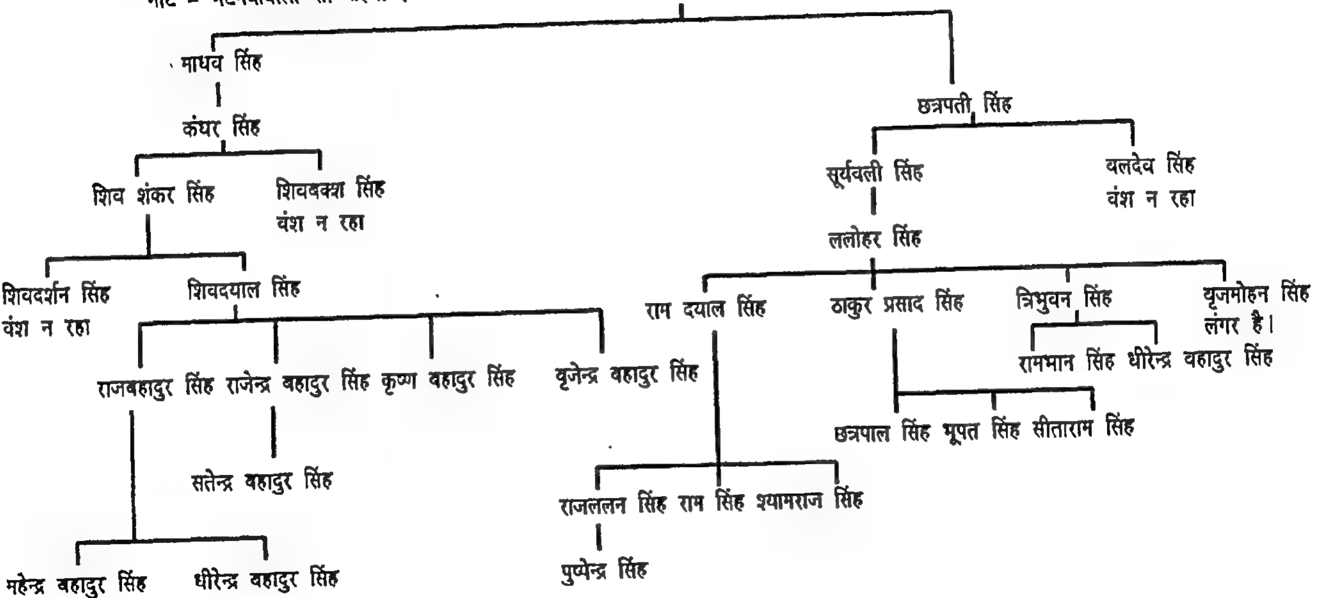


नोट – अनिरुद्ध सिंह पुत्र दलथम्मन सिंह ने विवाह चंदिया इलाका राज्य रीवा में कर लिया और वही सम्वत् 1900 में चले गये और सम्वत् 1920 में चांदपुर मौजा चंदिया से पाया। वहीं इनकी संतान रहती है। बाकी मौजा पटना के पट्टी में भी काबिज है।

(सजरा नं० 6)

ग्राम फरताल पिथौराबाद के भाई

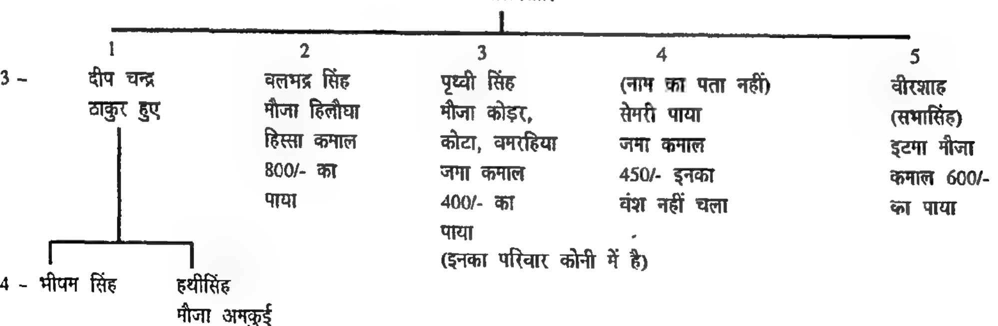
नोट – भटगवांवालों को कहना है कि पटना व फरताल के भाई हमारे यहाँ सोवल सूदक में शामिल होते थे और पुजाई करते थे।



(सजरा नं० 7)

इलाका सुरदहा

राजा प्रतापरुद्र के दूसरे लड़के गोविन्द राय को इलाका सुरदहा । मार्च सन् 1592 ई० को हिस्सा मिला जिसमें 40 मौजे थे जिसका कमाल 8700/- रुपये वावूपुर मौजा लगाकर 19 मौजे जो 464/- रुपये कमाल के थे गोविन्दराय सिंह ने हिस्सा के अलावा अमल किया। यानी 12764/- रुपये कमाल का इलाका था। गोविन्दराय राजा प्रतापरुद्र की दूसरी रानी के पुत्र थे। इलाके के अन्तर्गत निम्नलिखित मौजे, (जो मालूम हो सके) थे — 1 - सुरदहा, 2 - कोंडर, 3 - कोटा, 4 - अमकुई, 5 - हेलौघा, 6 - विटारी, 7 - वावूपुर, 8 - पाकर, 9 - सेमरी, 10 - इटमा, 11 - ललचहा, 12 - परसवार, 13 – वमरहिया, 14 - पटना, 15 - विरहुलो, 16 - गोंदर, 17 - चुनहा, 18 - उमरी, 19 - अतरौरा, 20 - सिजहटी, 21 - अखरहा, 22 - जुमिनयां, 23 - मझोखर, 24 - कोटराही, 25 - पुल्हरिया, 26 - कुरेंही, 27 - लैंक्षिर, 28 - विचवा, 29 - कुरदरा, 30 - सखौंहा, 31 - कोनी, 32 - अमिलिया, 33 - मझगवां, 34 - वरहा, 35 - पवइया, 36 - धमनहा, 37 - रमपुरा, 38 - मगड़ा, 39 - वमुरहा, 40 - जैतपुर, 41 - मेलौंहा।



हि० जमा कमाल 1000/- का पाया

	(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	
5 -	देवी सिंह	दरियाव सिंह मौजा वावूपुर हि० जमाकमाल 800/- का पाया	उमराव सिंह मौजा छोटी सेमरी हि० जमा कमाल 500/- का पाया	जुगराज सिंह मौजा अतरौरा हि० जमा कमाल 250/- का पाया	मल्लशाह मौजा आधा परसवार हि० जमा कमाल 250/- का पाया	छत्रपाल सिंह मौजा विरहुली पाया	
6 -	ठा० मेहरवान सिंह	2. गुमानसिंह मौजा कोड़र हि० जमाक माल 400/- पाया	3 – संग्राम सिंह मौजा उमरी हि० जमा कमाल 250/- पाया	4 – नाहर सिंह मौजा आधा पर सवार हि० जमा कमाल 250/-	5 – वैजनाथसिंह मौजा पवइया हि० जमा कमाल 250/- पाया	·6 – सुखलाल सिंह मौजा पाकर हि० जमा कमाल 225/- रुपये	7 – कमोद सिंह मौजा पाकर हि० जमा कमाल 175/- रुपये पाया
7 -	ठा० प्रताप सिंह	2. वख्तावर सिंह मौजा पाकर हि० जमा कमाल 250/- रुपया पाया	3. उदवत सिंह मौजा उमरी 170/- और धमनहा 20/- हि० जमा कमाल 225/- पाया	4. तखत सिंह 170/- मौजा पाकर हि० जमा कमाल 175/- पाया			
8 -	रनसिंह (रण वहादुर सिंह)	2. गोपाल सिंह मौजा वावूपुर हि० जमा कमाल 400/- पाया	3. पहिलवान सिंह मौजा ललचहा व सुखसेना हि० जमा कमाल 350/- पाया	4. वखत सिंह मौजा पाकर हि० जमा कमाल 225/-			

9 - रामनिवाज सिंह - (एक वर्ष तक ठकुराइस किया और निःसन्तान पर गए। और गोपाल सिंह ठाकुर सा० वावूपुर ने आकर गद्दी में कब्जा कर ठाकुर हो गए)

10 - ठा० गोपाल सिंह (पुत्र प्रताप सिंह)

11 -	सूरत सिंह	2. दुनिया सिंह मो० वावूपुर हि०जा०क० 240/-	3. विश्राम सिंह (अन्य पत्नी से) मौ० विरहुली

सूरत सिंह — 1. हरिचन्द्र सिंह — 2. जगमोहन सिंह मौजा हिलौंघा 194/- — 3. हरकिशुन सिंह (हरवक्श सिंह) मौजा हिलौंघा 156/- — 4. भितरहाई से

12 – हरिचन्द्र सिंह — 1. कदमेश्वर प्रसाद सिंह — 2. नरवदेश्वर प्रसाद सिंह, कोनो तथा पटना पाया

- ददन सिंह गोली मार कर मर गए
- रघुनाथ सिंह
  - विजयसिंह
  - संतोष सिंह

13 – कदमेश्वर प्रसाद सिंह — 1. विन्धेश्वरी प्रसाद सिंह — 2. माधव प्रसाद सिंह संतान नहीं थी — 3. अल्पहरेश्वरप्रसाद सिंह मौजा हिलौंघा

- पुष्पेन्द्र सिंह
- भूपेन्द्र सिंह

4. केशोप्रसादसिंह मौजा पाकर (वंश न रहा) — 5. रामभद्र सिंह मौजा सेमरवारा रजहा में रहते हैं पाकर पाया — 6. वीरभद्रसिंह मौ० पट्टी धनखेर — 7. रामरुद्रसिंह वंश न रहा

- वीरेन्द्र सिंह
  - अजय सिंह
  - विजय सिंह
  - अभय सिंह
- सुरेन्द्र सिंह
- नरेन्द्र सिंह
  - अरुण सिंह
  - राकेश सिंह

14 – विन्ध्येश्वरीप्रसादसिंह

अपने पिता कदमेश्वर प्रसाद सिंह के समय में ही स्वर्गवासी हो गए।

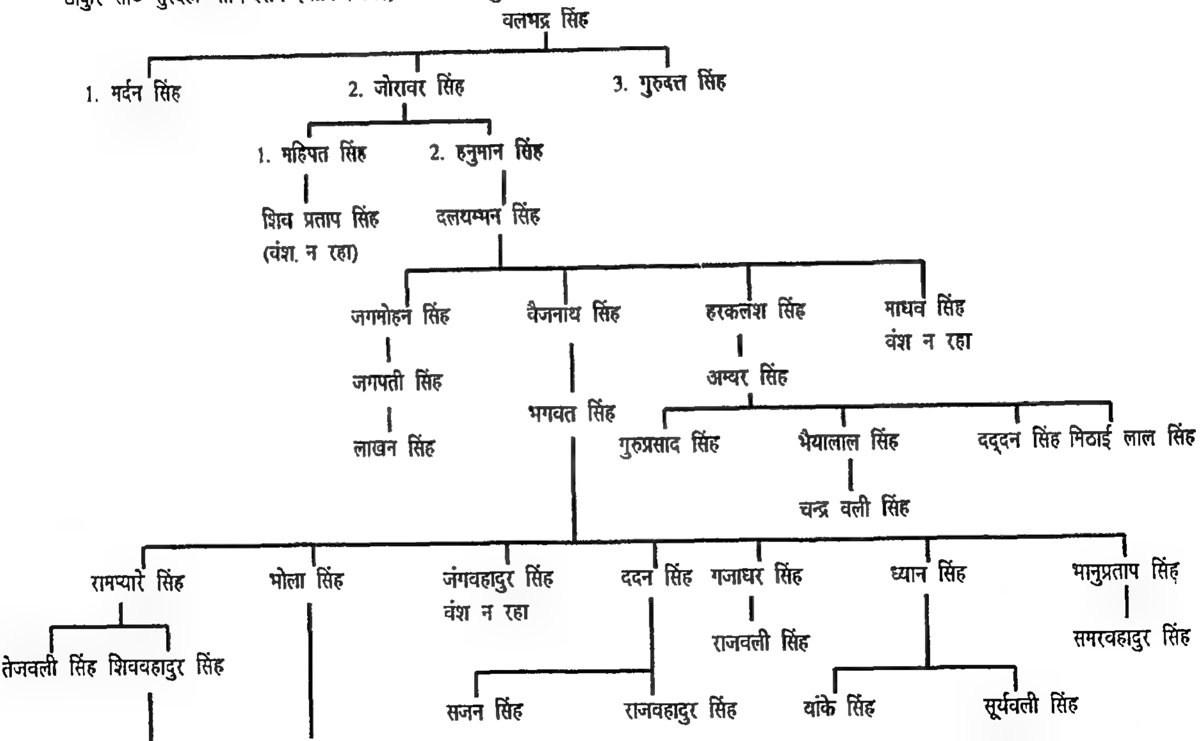
15 – चन्द्रमौल प्रताप सिंह — 1. गिरीश प्रताप सिंह

16 – गिरीश प्रताप सिंह — 1. मनीश प्रताप सिंह 2. अशोक प्रताप सिंह

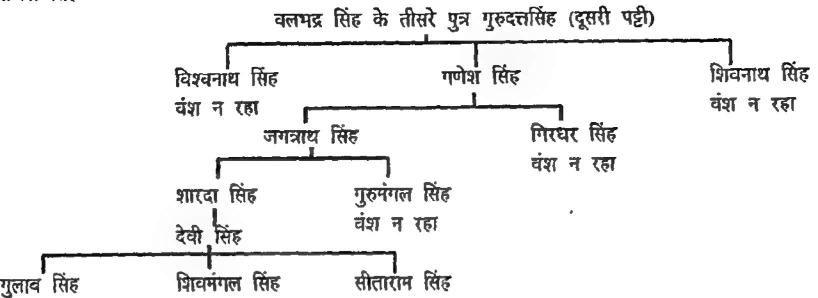
नोट – राजा सा० राघवेन्द्र सिंह जो नागौद व ठाकुर हरचन्द्र सिंह सुरदहा में आपस में लड़ाई हुई थी उसमें नीचे लिखे आदमी मारे गए जिनको राज्य की तरफ से नकद तथा जागीरें दी गई –

1. अमान सिंह उनके लड़के कमोद सिंह को नकद 35/- तथा उरदान में जमीन मिली।
2. मोंदू सिंह परिहार नकद 18/- रुपये व रहिकवारा में जमीन
3. रैका वारी नकद 12/- व जमीन कावर जुमारी
4. हरदत्तसिंह वाघेल दिदौंध उनके लड़के अनूप सिंह को 30/- नकद तथा सुकुलगवां में जमीन मिली।
5. माखन चौहान उनके लड़के माधौ सिंह 60/- नकद व सुकुलगवां में जमीन मिली।
6. रोखो सोनार के पिता को 18/- नकद व रहिकवारा में जमीन मिली।

(सजरा नं० 8)


मौजा हिलौंधा
ठाकुर सा० सुरदहा गोविन्दराय (गोविन्द सिंह) के द्वितीय पुत्र वलभद्र सिंह हिस्सा में मौजा हिलौंधा जमा कमाल 800/- का पाया।
वलभद्र सिंह
1. मर्दन सिंह
2. जोरावर सिंह
3. गुरुदत्त सिंह
1. महिपत सिंह
2. हनुमान सिंह
शिव प्रताप सिंह
(वंश. न रहा)
दलयम्मन सिंह
जगमोहन सिंह
वैजनाथ सिंह
हरकलश सिंह
माधव सिंह
वंश न रहा
जगपती सिंह
लाखन सिंह
भगवत सिंह
अम्बर सिंह
गुरुप्रसाद सिंह
भैयालाल सिंह
दद्दन सिंह
मिठाई लाल सिंह
चन्द्र वली सिंह
रामप्यारे सिंह
भोला सिंह
जंगवहादुर सिंह
वंश न रहा
ददन सिंह
गजाधर सिंह
ध्यान सिंह
भानुप्रताप सिंह
राजवली सिंह
समरवहादुर सिंह
तेजवली सिंह
शिववहादुर सिंह
सजन सिंह
राजवहादुर सिंह
वांके सिंह
सूर्यवली सिंह

(सजरा नं० 9)



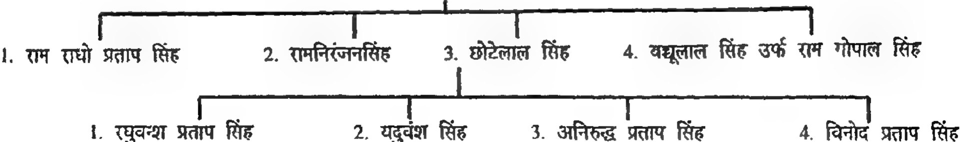
ग्राम हिलौंधा (इलाका सुरवहा) पट्टी नं० 1

श्री ठाकुर सा० सूरत सिंह के दूसरे पुत्र श्री जगमोहन सिंह को मौजा हिलौंधा जमा कमाल 194) रुपयों का मिला।

जगमोहन सिंह (पुत्र श्री सूरत सिंह इलाकेदार सुरदहा)

लक्ष्मण सिंह

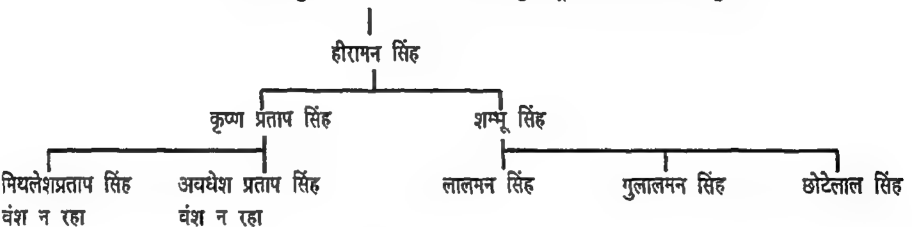
रामलखन प्रसाद सिंह



(सजरा नं० 10)

ग्राम हिर्लौंघा (इलाका सुरदहा) पट्टी नं० 2

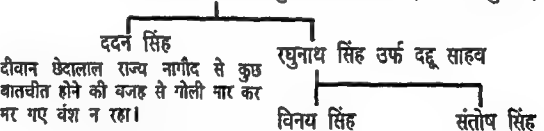
श्री ठाकुर सा० सूरत सिंह के तीसरे पुत्र हरविशुन सिंह उर्फ हरवक्श सिंह को मौजा हिलौंघा जमा कमाल 156/- रुपयों का पाया।



(सजरा नं० 11)

ग्राम - कोनी (इलाका सुरदहा) यह मौजा कोनी नागौद राज्य की है।

श्री ठाकुर हरचन्द्र सिंह के दूसरे पुत्र नरवदेश्वर सिंह मौजा कोनी तथा पटना पाया।



ग्राम हिर्लौंघा पट्टी नं० 3 (इलाका सुरदहा)

श्री कदमेश्वर प्रसाद जो ठाकुर सा० के तीसरे पुत्र अल्पहरेश्वरप्रतापसिंह उर्फ बाबू सा० को मौजा पट्टी हिर्लौंघा पाया।

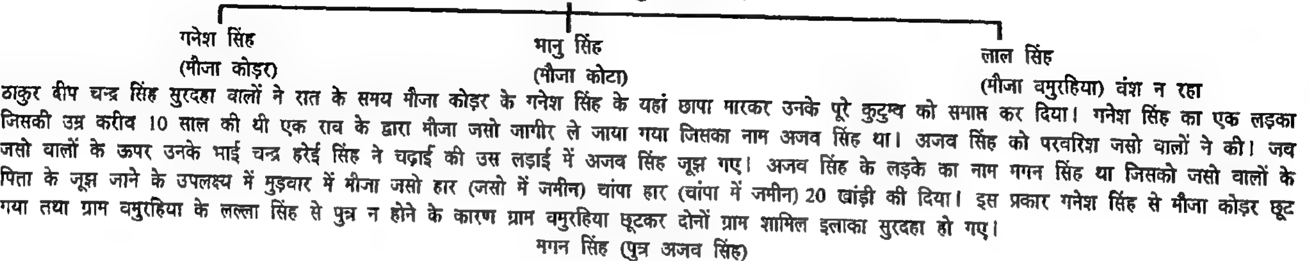
अल्प हरेश्वरप्रताप सिंह उर्फ बाबू सा० (पुत्र कदमेश्वर प्रसाद सिंह इलाकेदार सुरदहा)



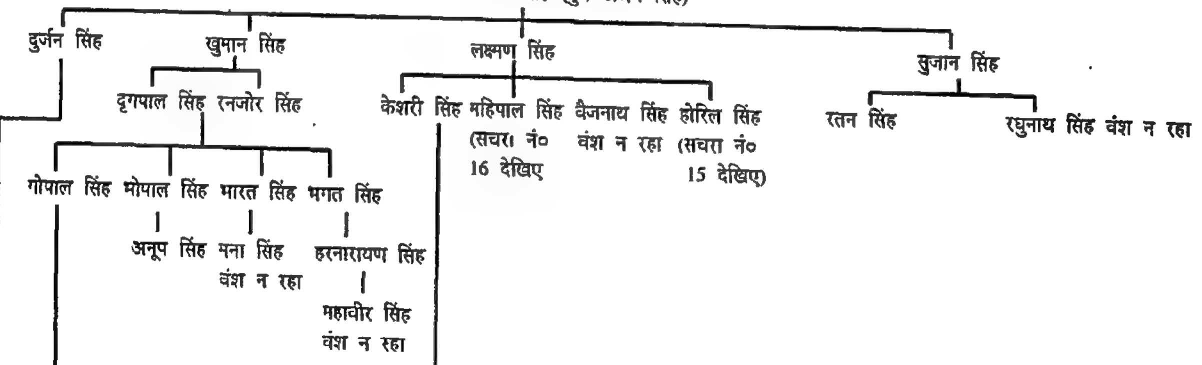
(सचरा नं० 12)

ग्राम कोड़र - (इलाका सुरदहा) मौजूदा वंशज कोनी में है

ठाकुर सा० आलमशाह के तीसरे पुत्र पृथ्वी सिंह हुए जो हिस्सा में मौजा कोड़र, कोटा और मौजा वमुरहिया जमा कमाल 400) रुपयों का पाया।



ठाकुर दीप चन्द्र सिंह सुरदहा वालों ने रात के समय मौजा कोड़र के गनेश सिंह के यहां छापा मारकर उनके पूरे कुटुम्ब को समाप्त कर दिया। गनेश सिंह का एक लड़का जिसकी उम्र करीब 10 साल की थी एक राव के द्वारा मौजा जसो जागीर ले जाया गया जिसका नाम अजव सिंह था। अजव सिंह को परवरिश जसो वालों ने की। जव जसो वालों के ऊपर उनके भाई चन्द्र हरेई सिंह ने चढ़ाई की उस लड़ाई में अजव सिंह जूझ गए। अजव सिंह के लड़के का नाम मगन सिंह था जिसको जसो वालों के पिता के जूझ जाने के उपलक्ष्य में मुड़वार में मौजा जसो हार (जसो में जमीन) चांपा हार (चांपा में जमीन) 20 खांड़ी की दिया। इस प्रकार गनेश सिंह से मौजा कोड़र छूट गया तथा ग्राम वमुरहिया के लल्ला सिंह से पुत्र न होने के कारण ग्राम वमुरहिया छूटकर दोनों ग्राम शामिल इलाका सुरदहा हो गए।



विश्वनाथ सिंह

ललई सिंह　धनुकधारी सिंह

कमोद सिंह　जयसिंह

किशोर सिंह　रघुवर सिंह
वंश न रहा　वंश न रहा

राम सिंह　वीरभान सिंह
वंश न रहा

राम मनोहर सिंह

अवध प्रताप सिंह

लालमन सिंह　दिनकर प्रसाद सिंह　राजीवलोचन सिंह

सामले सिंह　कंधर सिंह

तेजवली सिंह　अमर सिंह　वल्देव सिंह
वंश न रहा

कृष्णपाल सिंह　ज्ञान सिंह　जनार्दन सिंह　रामभान सिंह

राजेन्द्र वहादुर सिंह

राम रसेन्द्र सिंह　राम नरेन्द्र

मुनेन्द्र सिंह

चन्द्रभान सिंह　शिवप्रताप सिंह　त्रिभुवन सिंह　हेराई सिंह

अनुज प्रताप सिंह
वंश न रहा

वृजभान सिंह　कल्याण सिंह　देव सिंह　भोला सिंह　राम पाल सिंह

जयमंगल सिंह　वेटाई सिंह

वहादुर सिंह　रुद्र प्रताप सिंह　तेजप्रताप सिंह
वंश न रहा

दसशमंत सिंह

मृगेन्द्रसिंह

सभाराज सिंह (1) देशराज सिंह (2) राघवेन्द्र सिंह शिव मंगल सिंह तेजराज सिंह

प्रदीप सिंह

रामायण सिंह रामप्रताप सिंह जय प्रताप सिंह

वृजेन्द्र सिंह रामगोपाल सिंह

भूपेन्द्र सिंह शंकर सिंह मणि सिंह

जयदीप सिंह विष्णु सिंह उदयपाल सिंह

(1) सभाराज सिंह (2) देशराज सिंह

वृजेन्द्र सिंह वृजेश सिंह राजेश सिंह

मनोज सिंह कौशलेन्द्र प्रताप सिंह प्रवीन सिंह रावेन्द्र सिंह

(सचरा नं० 13)

कोटा नं० 1 (इलाका सुरदहा)

कोडर, कोटा, वमुरहिया यह तीनों ग्राम ठाकुर सा० सुरदहा के आलमशाह के तीसरे पुत्र पृथ्वी सिंह जी पाये थे। कोड़र छूट गया। जेठी साखा कोनी में है।

पृथ्वी सिंह

|

मानू सिंह

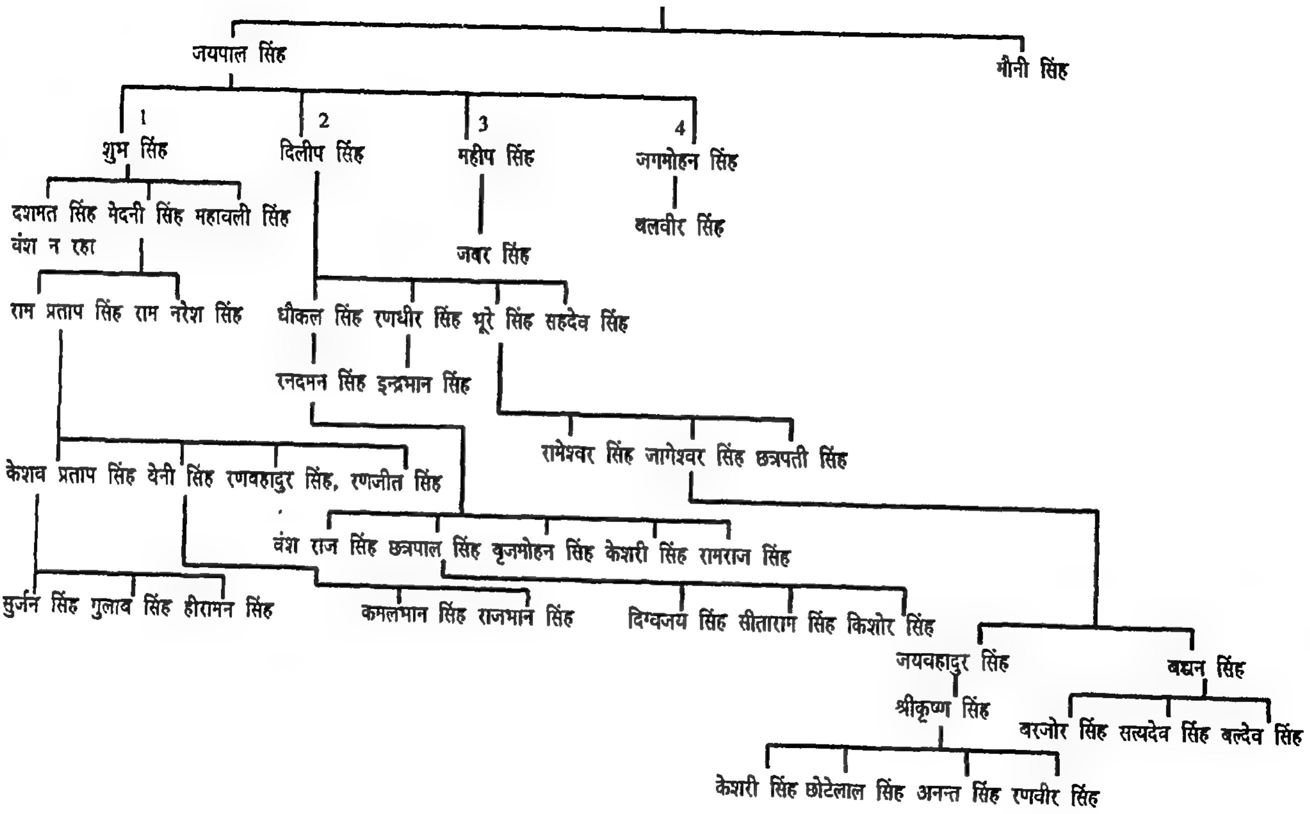
|

कल्याण सिंह

|

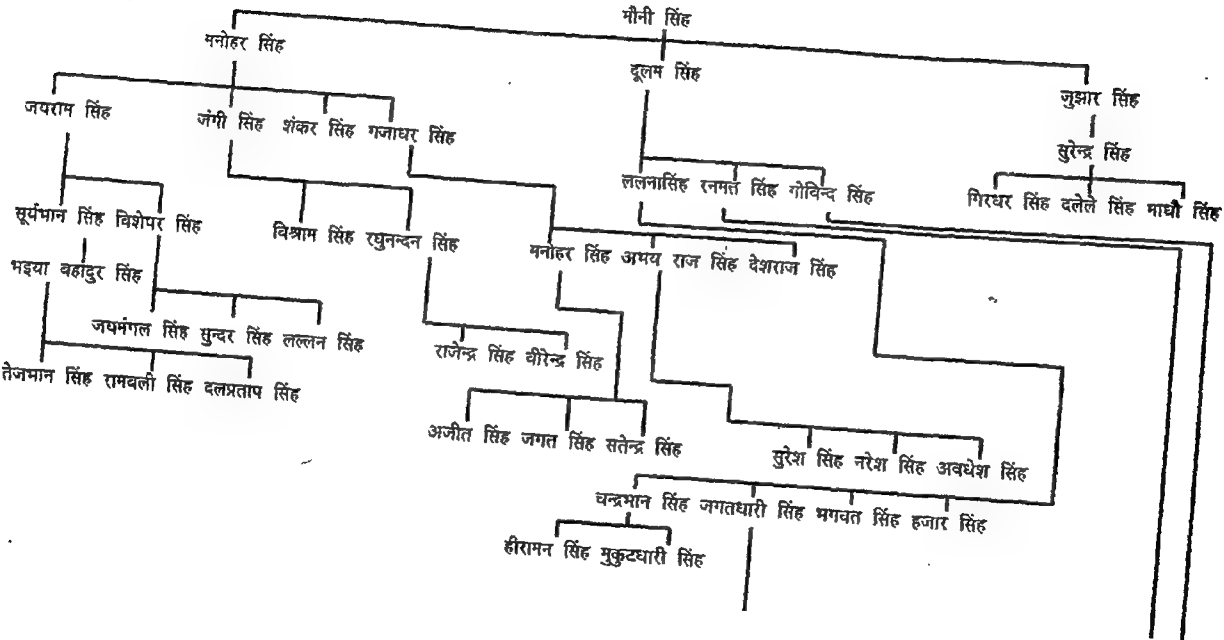
सुदान सिंह

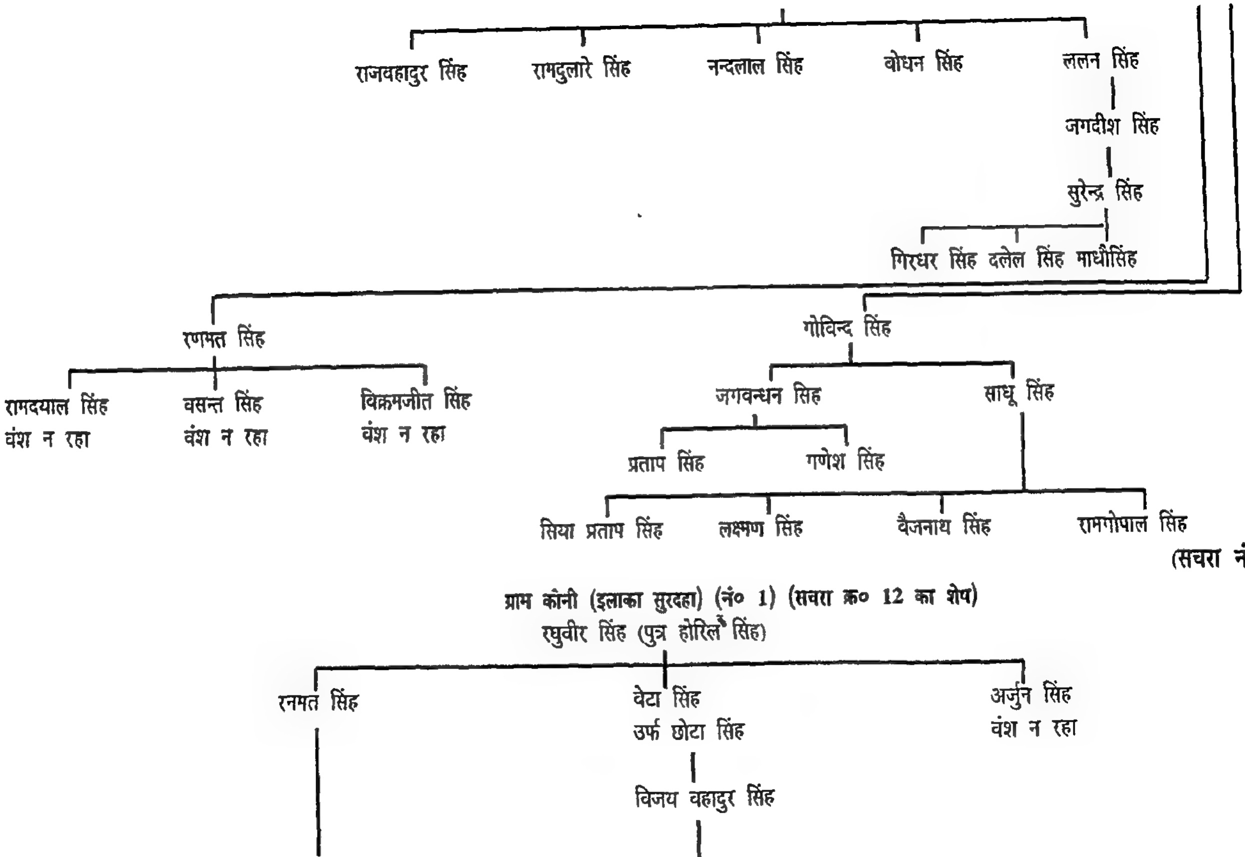
|

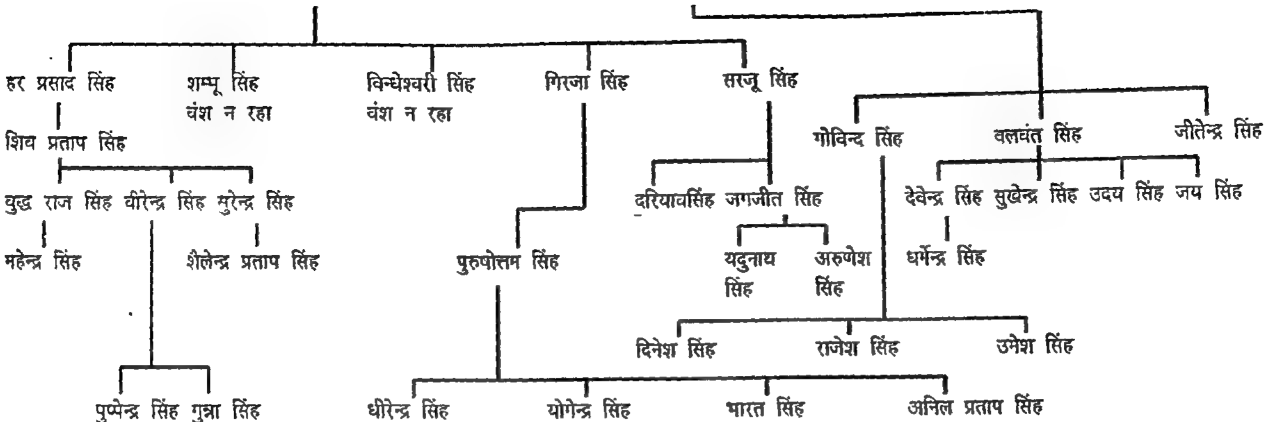


जयपाल सिंह
मौनी सिंह
1 शुभ सिंह
2 दिलीप सिंह
3 महीप सिंह
4 जगमोहन सिंह
दशमत सिंह मेदनी सिंह महावली सिंह
वंश न रहा
जवर सिंह
बलवीर सिंह
राम प्रताप सिंह राम नरेश सिंह
धौकल सिंह रणधीर सिंह भूरे सिंह सहदेव सिंह
रनदमन सिंह इन्द्रभान सिंह
रामेश्वर सिंह जागेश्वर सिंह छत्रपती सिंह
केशव प्रताप सिंह येनी सिंह रणवहादुर सिंह, रणजीत सिंह
वंश राज सिंह छत्रपाल सिंह वृजमोहन सिंह केशरी सिंह रामराज सिंह
सुर्जन सिंह गुलाव सिंह हीरामन सिंह
कमलभान सिंह राजभान सिंह
दिग्वजय सिंह सीताराम सिंह किशोर सिंह
जयवहादुर सिंह
बघन सिंह
श्रीकृष्ण सिंह
वरजोर सिंह सत्यदेव सिंह बल्देव सिंह
केशरी सिंह छोटेलाल सिंह अनन्त सिंह रणवीर सिंह

जयपाल सिंह के भाई मौनी सिंह, कोटा नं० 2 (इलाका सुरदहा)

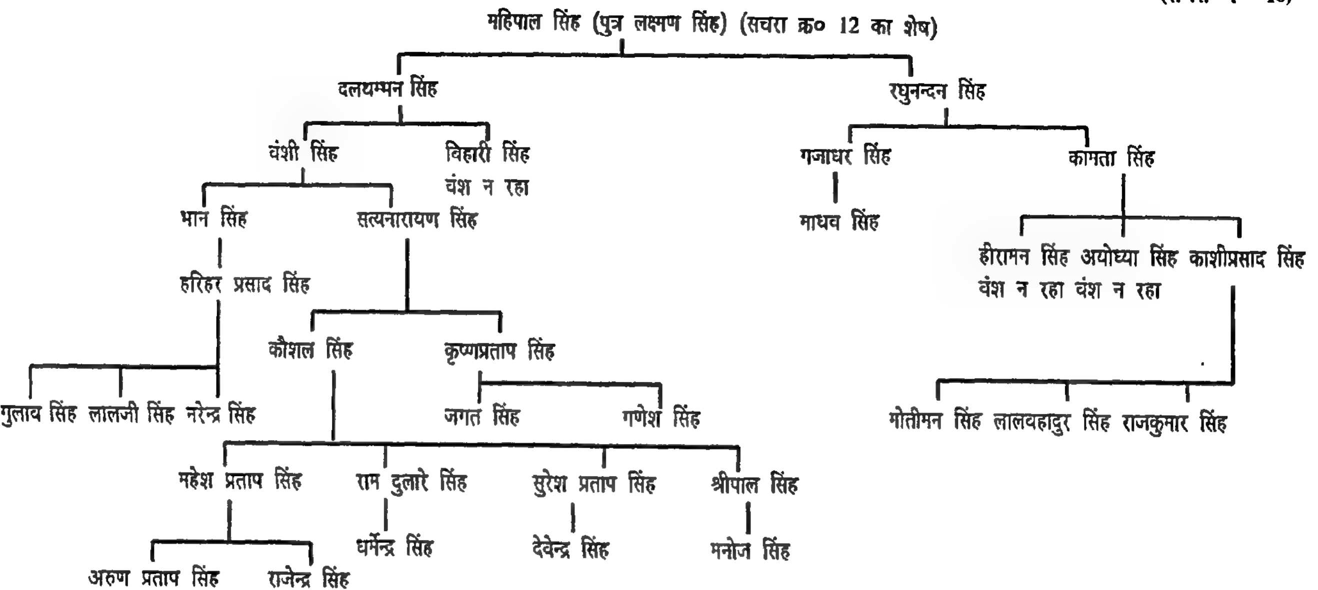



राजवहादुर सिंह
रामदुलारे सिंह
नन्दलाल सिंह
वोधन सिंह
ललन सिंह
जगदीश सिंह
सुरेन्द्र सिंह
गिरधर सिंह
दलेल सिंह
माधीसिंह
रणमत सिंह
रामदयाल सिंह
वंश न रहा
वसन्त सिंह
वंश न रहा
विक्रमजीत सिंह
वंश न रहा
गोविन्द सिंह
जगवन्धन सिंह
साधू सिंह
प्रताप सिंह
गणेश सिंह
सिया प्रताप सिंह
लक्ष्मण सिंह
वैजनाथ सिंह
रामगोपाल सिंह
(सचरा नं० 15)
ग्राम कोनी (इलाका सुरदहा) (नं० 1) (सचरा क्र० 12 का शेष)
रघुवीर सिंह (पुत्र होरिल सिंह)
रनमत सिंह
वेटा सिंह
उर्फ छोटा सिंह
विजय वहादुर सिंह
अर्जुन सिंह
वंश न रहा

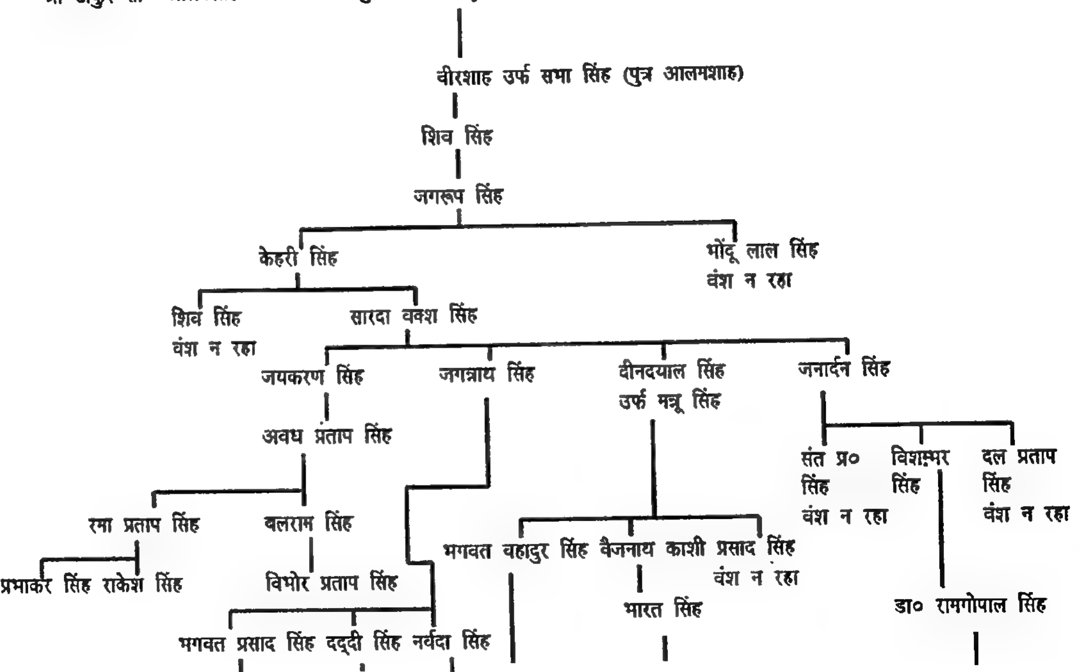


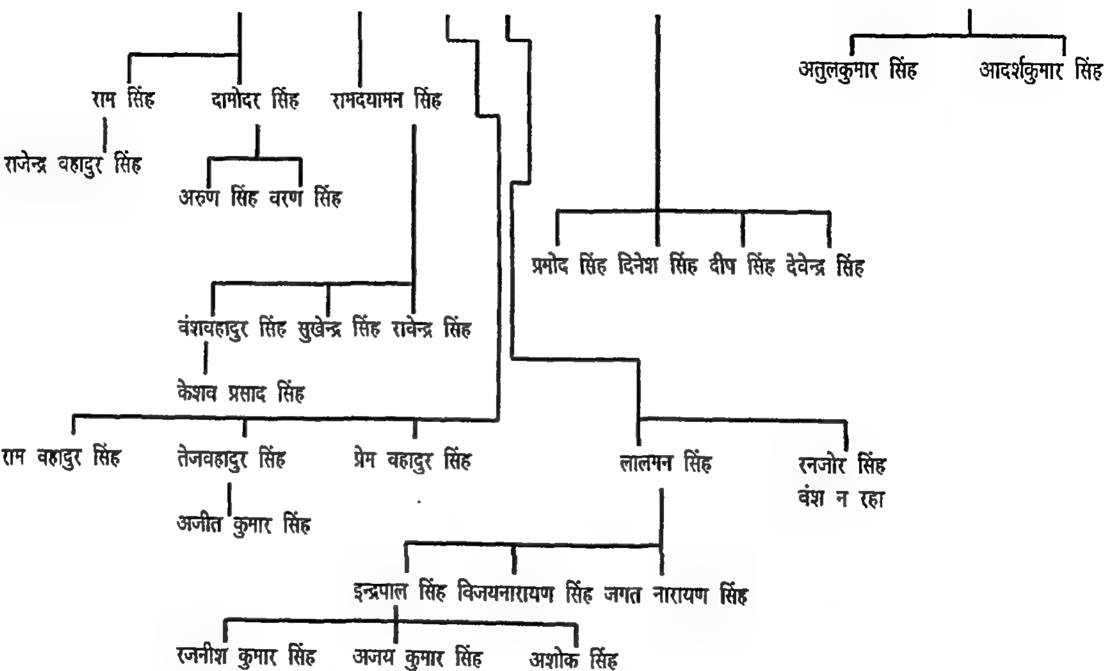
हर प्रसाद सिंह
शम्भू सिंह
वंश न रहा
विन्धेश्वरी सिंह
वंश न रहा
गिरजा सिंह
सरजू सिंह
गोविन्द सिंह
वलवंत सिंह
जीतेन्द्र सिंह
शिव प्रताप सिंह
वुद्ध राज सिंह
वीरेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
दरियावसिंह
जगजीत सिंह
देवेन्द्र सिंह
सुखेन्द्र सिंह
उदय सिंह
जय सिंह
महेन्द्र सिंह
शैलेन्द्र प्रताप सिंह
पुरुषोत्तम सिंह
यदुनाथ सिंह
अरुणेश सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
दिनेश सिंह
राजेश सिंह
उमेश सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
गुन्ना सिंह
धीरेन्द्र सिंह
योगेन्द्र सिंह
भारत सिंह
अनिल प्रताप सिंह

(सचरा नं० 16)


महिपाल सिंह (पुत्र लक्ष्मण सिंह) (सचरा क्र० 12 का शेष)
दलथम्मन सिंह
रघुनन्दन सिंह
वंशी सिंह
विहारी सिंह
वंश न रहा
गजाधर सिंह
कामता सिंह
भान सिंह
सत्यनारायण सिंह
माधव सिंह
हीरामन सिंह
अयोध्या सिंह
काशीप्रसाद सिंह
वंश न रहा
वंश न रहा
हरिहर प्रसाद सिंह
कौशल सिंह
कृष्णप्रताप सिंह
गुलाब सिंह
लालजी सिंह
नरेन्द्र सिंह
जगत सिंह
गणेश सिंह
मोतीमन सिंह
लालवहादुर सिंह
राजकुमार सिंह
महेश प्रताप सिंह
राम दुलारे सिंह
सुरेश प्रताप सिंह
श्रीपाल सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
देवेन्द्र सिंह
मनोज सिंह
अरुण प्रताप सिंह
राजेन्द्र सिंह

(सचरा नं० 17)


ग्राम - इटमा (इलाका सुरखा)
श्री ठाकुर सा० आलमशाह जो के पाँचवें पुत्र वीरशाह थे, जिनको इटमा जमा कमाल 600) रुपयों का मिला।
वीरशाह उर्फ सभा सिंह (पुत्र आलमशाह)
शिव सिंह
जगरूप सिंह
केहरी सिंह
भोंदू लाल सिंह
वंश न रहा
शिव सिंह
वंश न रहा
सारदा बक्श सिंह
जयकरण सिंह
जगन्नाथ सिंह
दीनदयाल सिंह
उर्फ मन्नू सिंह
जनार्दन सिंह
अवध प्रताप सिंह
संत प्र० सिंह
वंश न रहा
विशम्भर सिंह
दल प्रताप सिंह
वंश न रहा
रमा प्रताप सिंह
बलराम सिंह
भगवत बहादुर सिंह
बैजनाथ
काशी प्रसाद सिंह
वंश न रहा
प्रभाकर सिंह
राकेश सिंह
विभोर प्रताप सिंह
भारत सिंह
डा० रामगोपाल सिंह
भगवत प्रसाद सिंह
दद्दी सिंह
नर्वदा सिंह



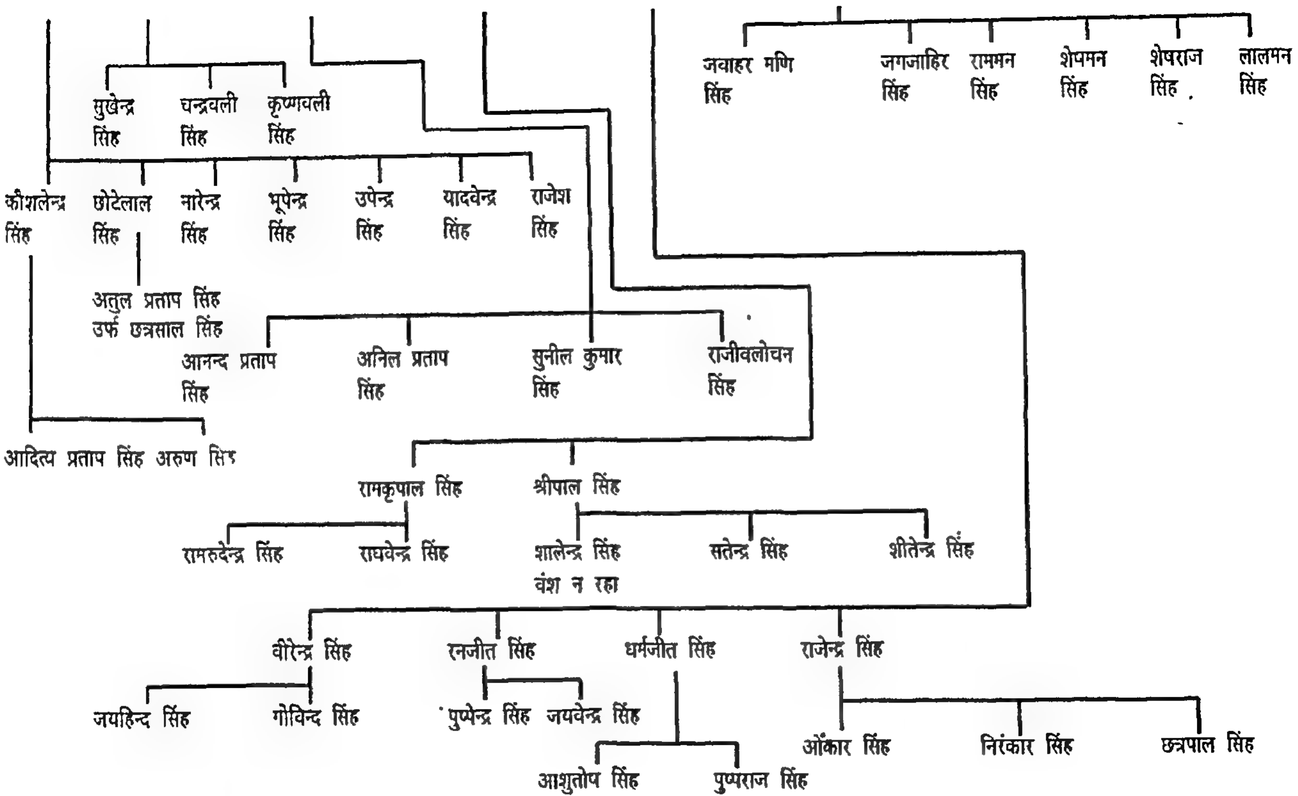
अतुलकुमार सिंह
आदर्शकुमार सिंह
राम सिंह
दामोदर सिंह
रामदयामन सिंह
राजेन्द्र वहादुर सिंह
अरुण सिंह
वरण सिंह
प्रमोद सिंह
दिनेश सिंह
दीप सिंह
देवेन्द्र सिंह
वंशवहादुर सिंह
सुखेन्द्र सिंह
रावेन्द्र सिंह
केशव प्रसाद सिंह
राम वहादुर सिंह
तेजवहादुर सिंह
प्रेम वहादुर सिंह
लालमन सिंह
रनजोर सिंह
वंश न रहा
अजीत कुमार सिंह
इन्द्रपाल सिंह
विजयनारायण सिंह
जगत नारायण सिंह
रजनीश कुमार सिंह
अजय कुमार सिंह
अशोक सिंह

(सचरा नं० 18)

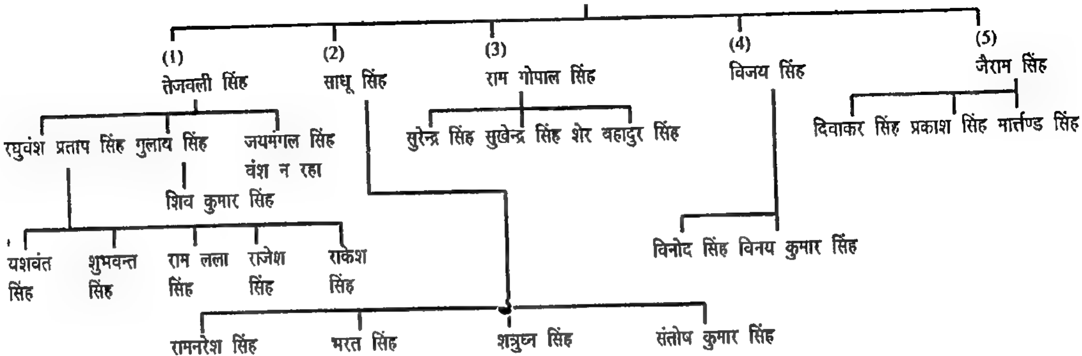
ग्राम - अमकुई (इलाका गुरदहा)

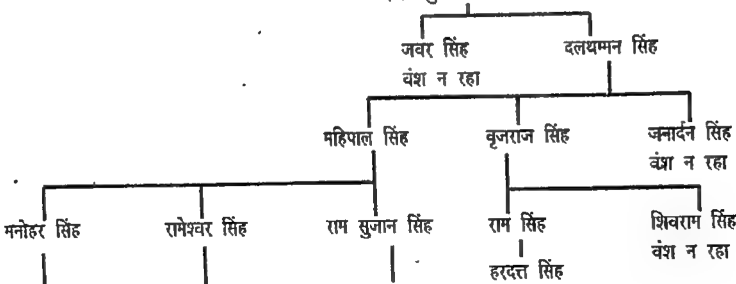
श्री ठाकुर सा० के दीप चन्द्र जी के दूसरे पुत्र हठी सिंह जो मौजा अमकुई जमा कमाल 1000) का पाया। यह प्रथम इलाकेदार ठाकुर गोविन्द राय सिंह के पन्ती हैं और भीषम सिंह के दूसरे भाई है। इन्हें सेंगढ़ अवस्थी और गोसाईयों से लोहा लेना पड़ा जो अमकुई में अधिकार जमाए थे।

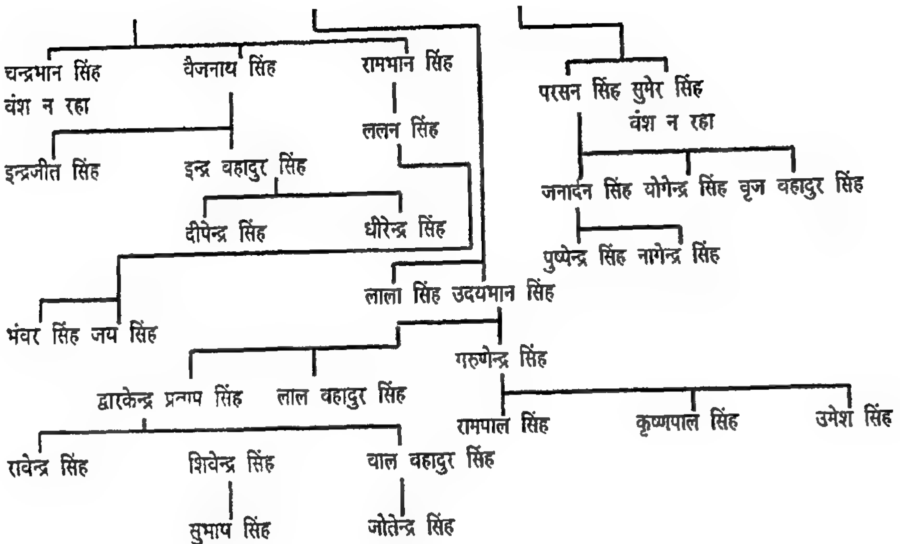
- हठी सिंह (पुत्र दीप चन्द्र)
  - जीतराय सिंह
    - विक्रमाजीत सिंह — वंश न रहा
    - जय सिंह — वंश न रहा
    - प्रिगज सिंह
      - औसान सिंह
        - रतन सिंह
          - कंधर सिंह — वंश न रहा
          - छत्रधारी सिंह (सं० 1914 में मौजा मिलसांय राज्य अजयगढ के झगड़े में खेत रहे)
            - जगत बहादुर सिंह
              - ललन सिंह
                - हीरामन सिंह
                - सीताराम सिंह
              - मना सिंह
                - मोतीमन सिंह
              - रामप्यारे सिंह
              - ददन सिंह
              - रामदुलारे सिंह
                - जगजीत सिंह
        - विश्वनाथ सिंह
          - जगपती सिंह — वंश न रहा
          - जगबंधन सिंह
            - राम प्रताप सिंह
              - तेजबली सिंह (1)
              - साधू सिंह (2)
              - रामगोपाल सिंह (3)
              - विजय सिंह (4)
              - जयराम सिंह (5)
        - महाराज सिंह — वंश न रहा
      - रघुवीर सिंह (भगरहा में खेत रहे) (6)
    - दलगंजन सिंह — वंश न रहा
    - मोती लाल सिंह — वंश न रहा
    - सीताराम सिंह — वंश न रहा
  - नेवाजीलाल सिंह


जवाहर मणि सिंह
जगजाहिर सिंह
राममन सिंह
शेषमन सिंह
शेषराज सिंह
लालमन सिंह
सुखेन्द्र सिंह
चन्द्रवली सिंह
कृष्णवली सिंह
कौशलेन्द्र सिंह
छोटेलाल सिंह
नारेन्द्र सिंह
भूपेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
यादवेन्द्र सिंह
राजेश सिंह
अतुल प्रताप सिंह
उर्फ छत्रसाल सिंह
आनन्द प्रताप सिंह
अनिल प्रताप सिंह
सुनील कुमार सिंह
राजीवलोचन सिंह
आदित्य प्रताप सिंह
अरुण सिंह
रामकृपाल सिंह
श्रीपाल सिंह
रामरुदेन्द्र सिंह
राघवेन्द्र सिंह
शालेन्द्र सिंह
वंश न रहा
सतेन्द्र सिंह
शीतेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
रनजीत सिंह
धर्मजीत सिंह
राजेन्द्र सिंह
जयहिन्द सिंह
गोविन्द सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
जयवेन्द्र सिंह
ओंकार सिंह
निरंकार सिंह
छत्रपाल सिंह
आशुतोष सिंह
पुष्पराज सिंह

श्री हठी सिंह पुत्र दीपचन्द्र मौजा अमकुई के शेष वंशज निम्न हैं –

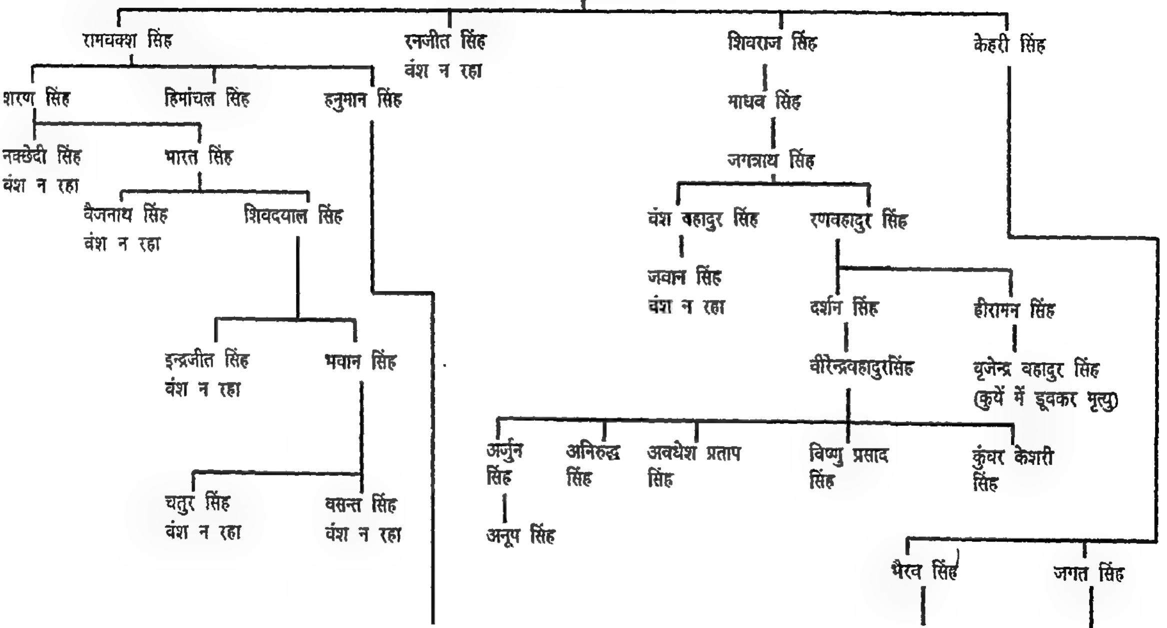






चन्द्रभान सिंह
वंश न रहा
वैजनाथ सिंह
रामभान सिंह
परसन सिंह
सुमेर सिंह
वंश न रहा
इन्द्रजीत सिंह
इन्द्र बहादुर सिंह
ललन सिंह
जनार्दन सिंह
योगेन्द्र सिंह
वृज बहादुर सिंह
दीपेन्द्र सिंह
धीरेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
नागेन्द्र सिंह
लाला सिंह
उदयभान सिंह
भंवर सिंह
जय सिंह
गरुणेन्द्र सिंह
द्वारकेन्द्र प्रताप सिंह
लाल बहादुर सिंह
रामपाल सिंह
कृष्णपाल सिंह
उमेश सिंह
रावेन्द्र सिंह
शिवेन्द्र सिंह
बाल बहादुर सिंह
सुभाष सिंह
जोतेन्द्र सिंह

ग्राम - अमकुई नं० 2 (इलाका सुरदहा)
श्री ठाकुर सा० दीपचन्द्र जी के दूसरे पुत्र हठी सिंह के दूसरे पुत्र नेवाजी लाल सिंह थे
नेवाजी लाल सिंह (पुत्र हठी सिंह)



धौकल सिंह वंश न रहा — लाला सिंह वंश न रहा — सामंत सिंह — जगमोहन सिंह वंश न रहा — पर्वत सिंह

धनुषधारी सिंह — रुस्तम सिंह उर्फ रघुनन्दन सिंह

लाखा सिंह वंश न रहा — करण सिंह

दानपाल सिंह — धर्मपाल सिंह

* अवध प्रताप सिंह

* इनका खानदान ग्राम चंदिया राज्य रीवा में है।

रामनाथ सिंह — बलभद्र सिंह

राम नरायण सिंह वंश न रहा — रघुनन्दन सिंह वंश न रहा — रामदयाल सिंह

राम प्रताप सिंह

बजरंग सिंह — शिव सिंह वंश न रहा — महाबली सिंह वंश न रहा — सूर्यबली सिंह — शम्भू सिंह

भोला सिंह

तेजभान सिंह

भगवत बहादुर सिंह — बल्देव सिंह वंश न रहा — दौलत सिंह

रामाधार सिंह

तिलकधारी सिंह — हरसेवक सिंह — जगतधारी सिंह

वृषकेश प्रताप सिंह — हरगोविन्द सिंह

लक्ष्मी विनोद सिंह — प्रमोद सिंह

जगदम्बा प्रसाद सिंह — जगत प्रसाद सिंह — कृष्ण कुमार सिंह — विजय कुमार सिंह

लखन सिंह — लालमन सिंह — अनन्त कुमार सिंह

कृष्ण प्रताप सिंह   गणेश प्रताप सिंह   रामजियावन सिंह वंश न रहा   रामसजीवन सिंह   शंखधर सिंह   राकेश सिंह अतुल सिंह पुष्पराज सिंह

प्रद्युम्न सिंह   इन्द्रमन सिंह   रार्वेन्द्र सिंह   जागेन्द्र सिंह   ज्ञानेन्द्र सिंह वंश न रहा

रण प्रताप सिंह   रामनरेश सिंह   मोहन सिंह

लक्ष्मण सिंह   नारेन्द्र सिंह   जयनारायण सिंह राम नारायण सिंह शिव नारायण सिंह

रामानुज प्रताप सिंह कमलेन्द्र प्रताप सिंह ओम प्रकाश सिंह   अरविन्द सिंह

(सचरा नं० 20)

ग्राम - वावूपुर (इलाका सुरदहा) नं० 1 पट्टी

श्री ठाकुर भीषम सिंह के दूसरे लड़के दरियाव सिंह को मौजा वावूपुर हि० जमा कमाल 300) का मिला।

दरियाव सिंह (पुत्र भीषम सिंह)

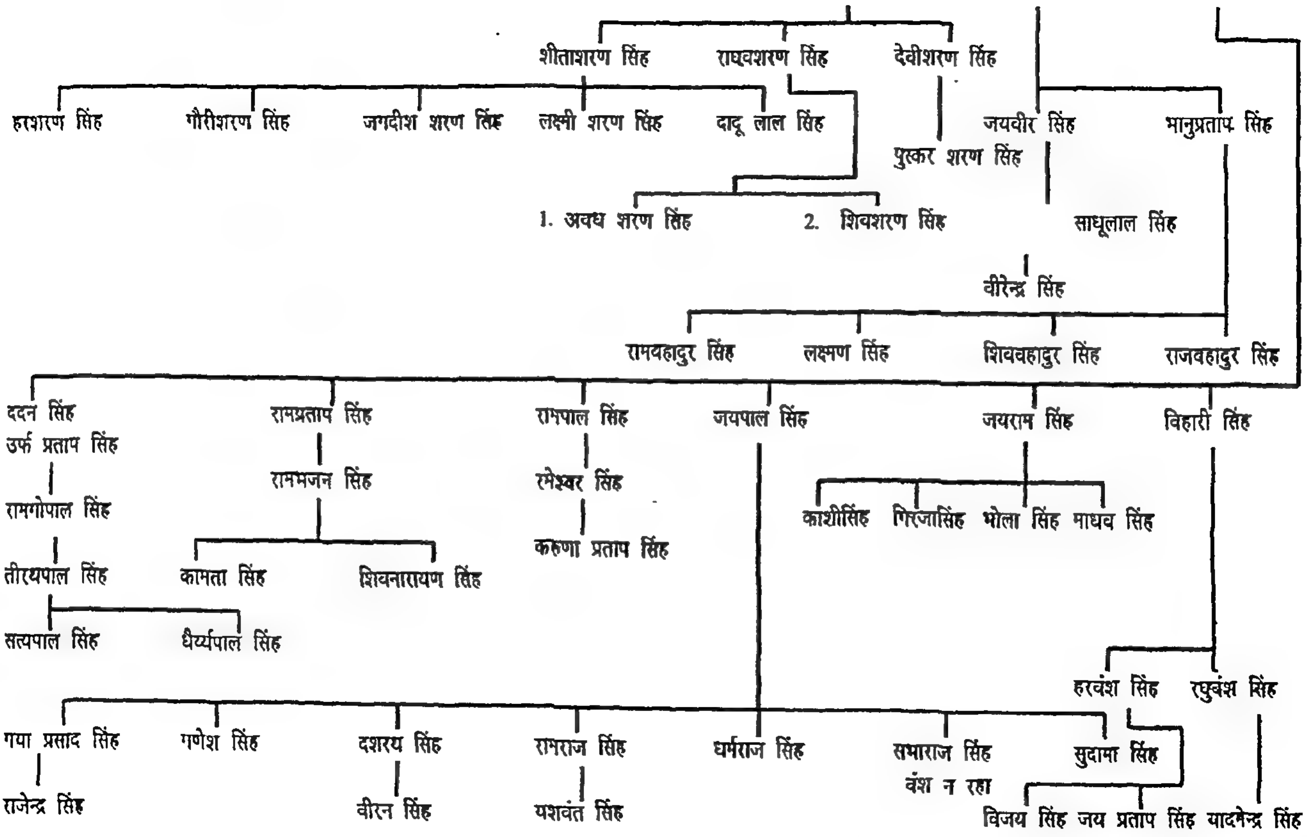
रछपाल सिंह (1) — कलिन्दर सिंह — भोपाल सिंह

कन्धर सिंह (2) — किशोर सिंह — शिवपाल सिंह

श्रीनेत सिंह (3)

इन्द्रजीत सिंह — मनबोध सिंह — चन्द्रभान सिंह — हिराई सिंह, शारदा सिंह

अधार सिंह — दलीप सिंह — जगपती सिंह

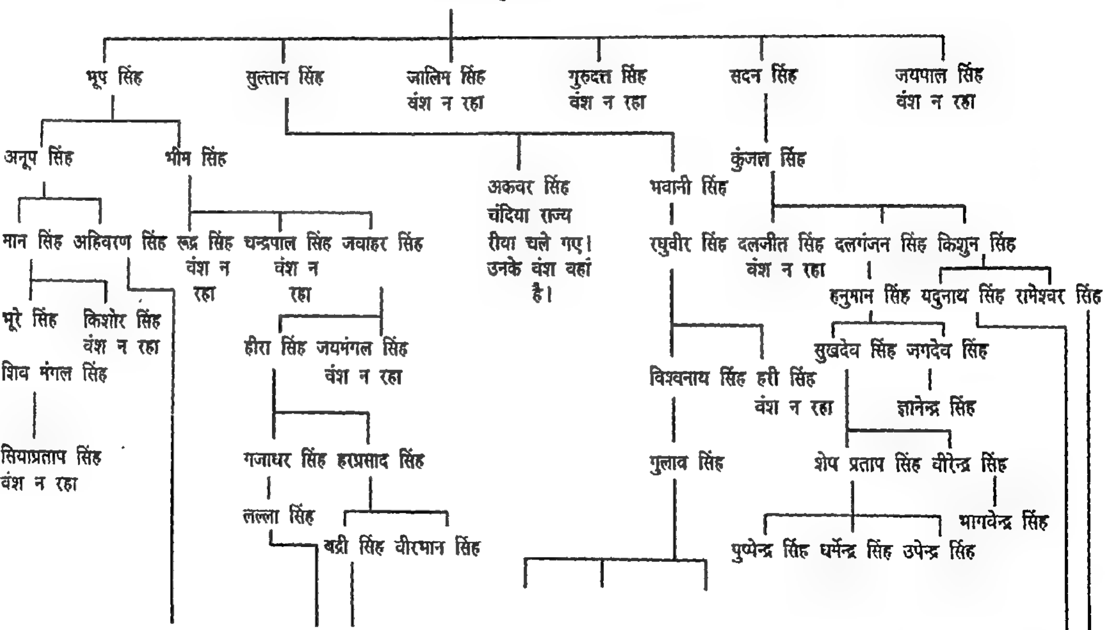

शीताशरण सिंह
राघवशरण सिंह
देवीशरण सिंह
हरशरण सिंह
गौरीशरण सिंह
जगदीश शरण सिंह
लक्ष्मी शरण सिंह
दादू लाल सिंह
पुस्कर शरण सिंह
जयवीर सिंह
भानुप्रताप सिंह
1. अवध शरण सिंह
2. शिवशरण सिंह
साधूलाल सिंह
वीरेन्द्र सिंह
रामबहादुर सिंह
लक्ष्मण सिंह
शिवबहादुर सिंह
राजबहादुर सिंह
ददन सिंह
उर्फ प्रताप सिंह
रामप्रताप सिंह
रामपाल सिंह
जयपाल सिंह
जयराम सिंह
विहारी सिंह
रामभजन सिंह
रमेश्वर सिंह
रामगोपाल सिंह
काशीसिंह
गिरजासिंह
भोला सिंह
माधव सिंह
करुणा प्रताप सिंह
तीरथपाल सिंह
कामता सिंह
शिवनारायण सिंह
सत्यपाल सिंह
धैर्य्यपाल सिंह
हरवंश सिंह
रघुवंश सिंह
गया प्रसाद सिंह
गणेश सिंह
दशरथ सिंह
रामराज सिंह
धर्मराज सिंह
सभाराज सिंह
वंश न रहा
सुदामा सिंह
राजेन्द्र सिंह
वीरन सिंह
यशवंत सिंह
विजय सिंह
जय प्रताप सिंह
यादमेन्द्र सिंह

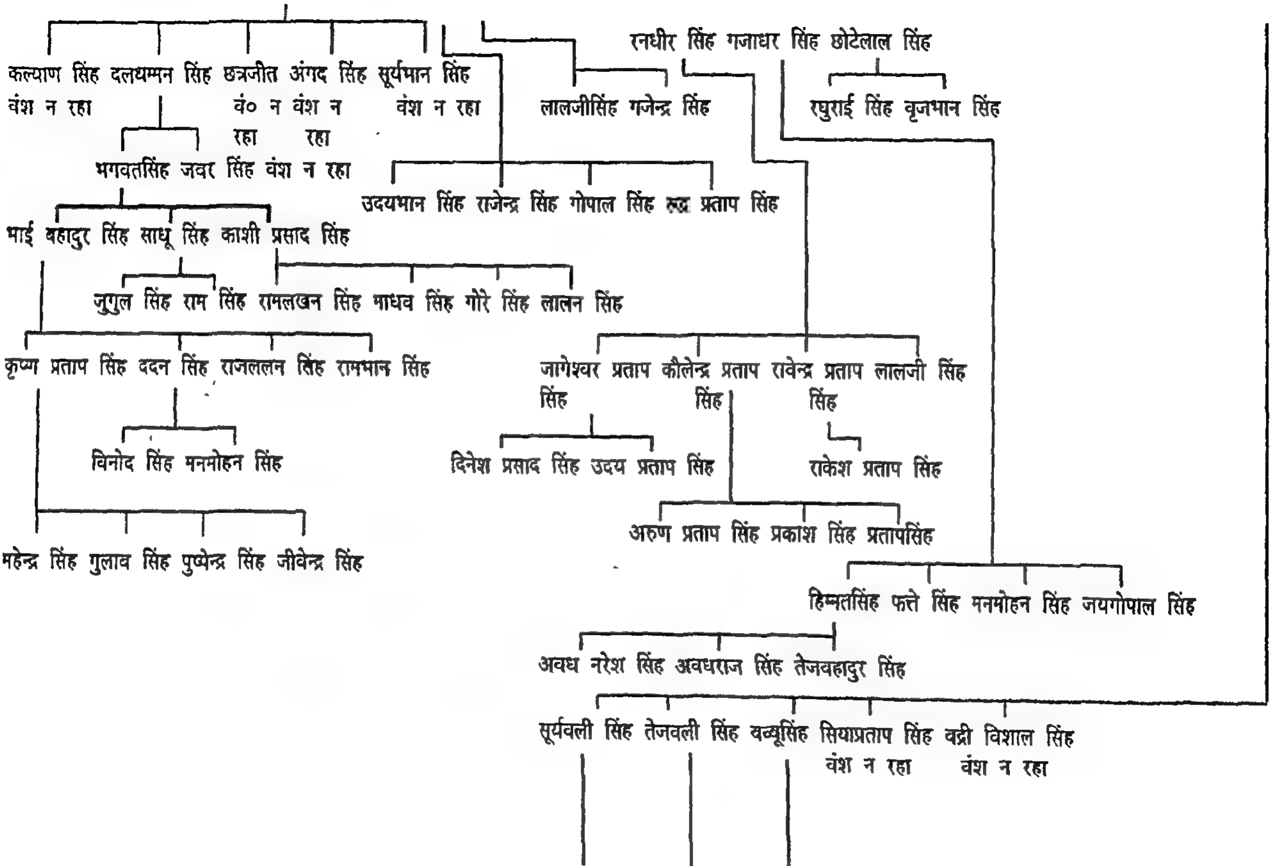
(सजरा नं० 21)

ग्राम - सेमरी (इलाका सुरवहा)

श्री ठा० सा० भीष्म सिंह के तीसरे पुत्र श्री उमरावसिंह मौजा छोटी सेमरी जमा कमाल 500/- रुपये का पाया।

उमरावसिंह (पुत्र भीष्म सिंह)




कल्याण सिंह दलथम्मन सिंह छत्रजीत अंगद सिंह सूर्यभान सिंह
वंश न रहा
वं० न रहा
वंश न रहा
वंश न रहा
रनधीर सिंह गजाधर सिंह छोटेलाल सिंह
लालजीसिंह गजेन्द्र सिंह
रघुराई सिंह वृजभान सिंह
भगवतसिंह जवर सिंह वंश न रहा
उदयभान सिंह राजेन्द्र सिंह गोपाल सिंह रुद्र प्रताप सिंह
भाई बहादुर सिंह साधू सिंह काशी प्रसाद सिंह
जुगुल सिंह राम सिंह रामलखन सिंह माधव सिंह गौरे सिंह लालन सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह ददन सिंह राजललन सिंह रामभान सिंह
जागेश्वर प्रताप सिंह कौलेन्द्र प्रताप सिंह रावेन्द्र प्रताप सिंह लालजी सिंह
विनोद सिंह मनमोहन सिंह
दिनेश प्रसाद सिंह उदय प्रताप सिंह
राकेश प्रताप सिंह
अरुण प्रताप सिंह प्रकाश सिंह प्रतापसिंह
महेन्द्र सिंह गुलाब सिंह पुष्पेन्द्र सिंह जीवेन्द्र सिंह
हिम्मतसिंह फत्ते सिंह मनमोहन सिंह जयगोपाल सिंह
अवध नरेश सिंह अवधराज सिंह तेजबहादुर सिंह
सूर्यवली सिंह तेजवली सिंह बब्बूसिंह सियाप्रताप सिंह बद्री विशाल सिंह
वंश न रहा
वंश न रहा

छोटे लालसिंह भैयासिंह

गोपालसिंह भातेन्द्रसिंह रामनिवाससिंह

कुंवरबहादुर सिंह

उदयमानसिंह दामोदरसिंह दयामनसिंह राजेशसिंह

विमल कुमारसिंह राज बहादुरसिंह

रनजोर सिंह वृजनन्दन सिंह कौशल सिंह राजभान सिंह

ज्ञानेन्द्रसिंह

भंवरसिंह

रामसुजान सिंह संतोषसिंह आनन्द बहादुरसिंह

लल्लालोचनसिंह इन्द्रभानसिंह

प्रमोदसिंह

चन्द्रभानसिंह वंश न रहा

कमलभानसिंह वीरभान सिंह

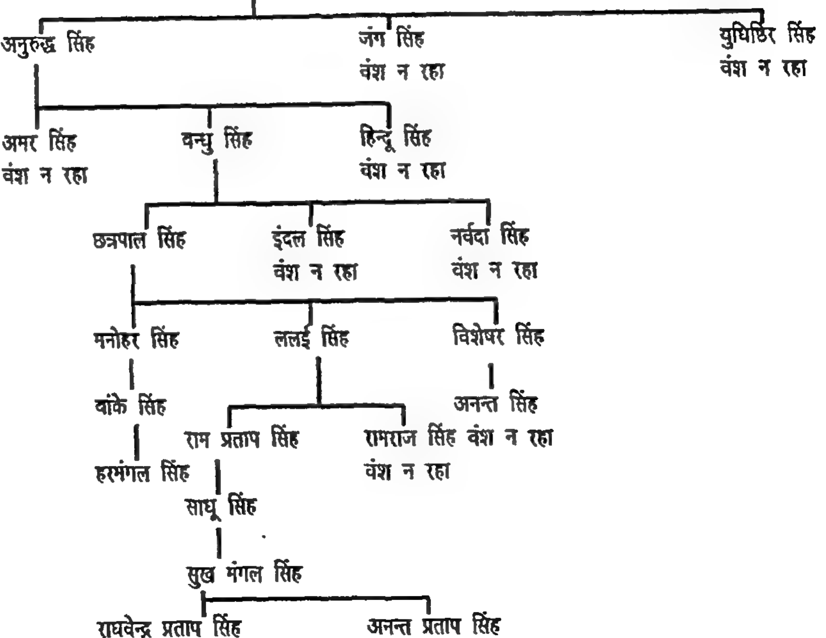
राजेन्द्रसिंह द्वारकेन्द्रसिंह

रावेन्द्रसिंह

(सचरा नं० 22)

ग्राम - अतरौरा (इलाका सुरदहा)

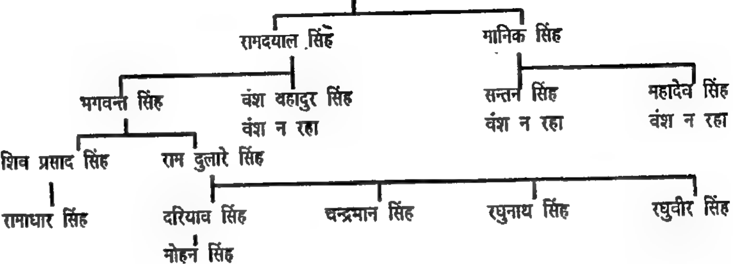
श्री ठाकुर सा० भीष्म सिंह के चौथे पुत्र श्री जुगराज सिंह को मौजा अतरौरा जमा कमाल 250) रु० का पाया

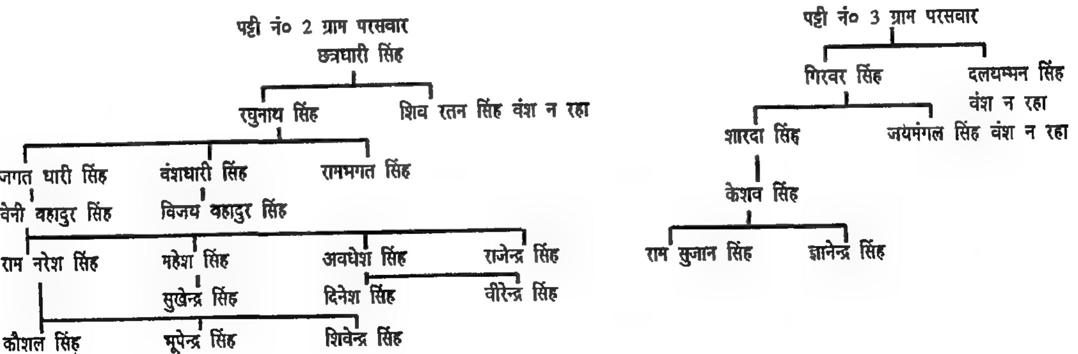


(सचरा नं० 23)

परसवार (इलाका सुरदहा) पट्टी नं० 1, 2, 3

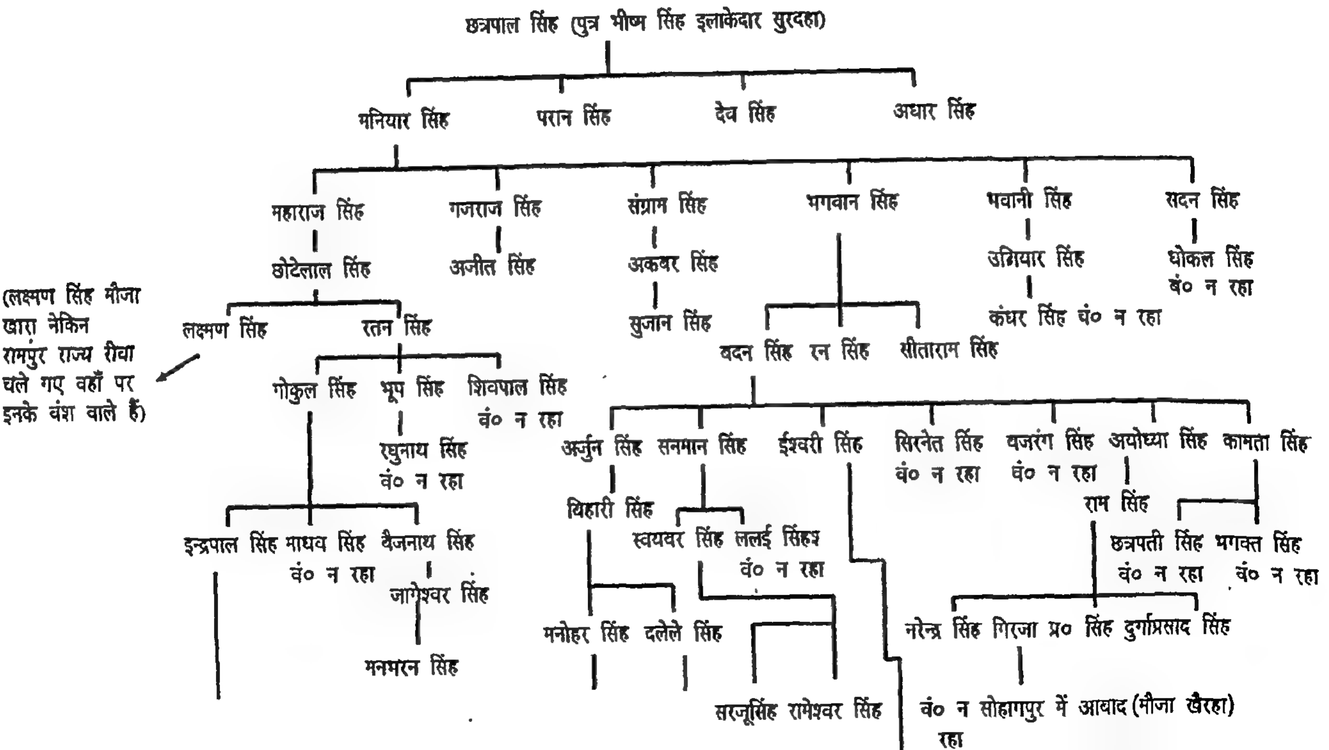
श्री ठाकुर सा० भीष्म सिंह ने पाँचवें पुत्र मल्लशाह मौजा आधा पर सवार जमा कमाल 250) रु० का पाया। इनके यहाँ का जो सचरा मिला है लिखा गया है। पूर्वजों का नाम मालूम नहीं हो सका।

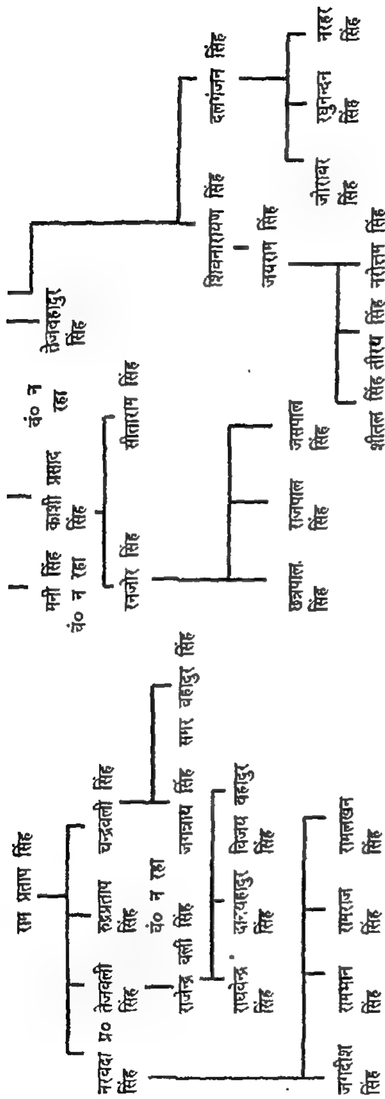




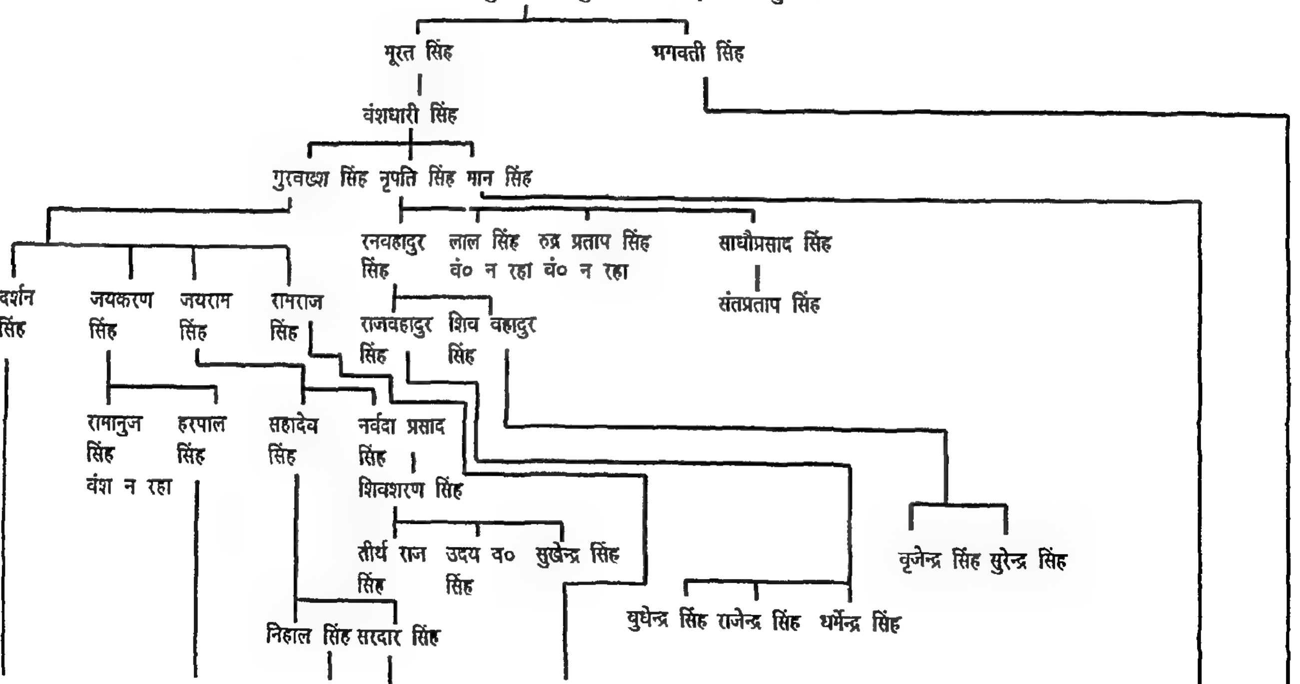
(सचरा नं० 34)

ग्राम - विरहुली (इलाका सुरदहा) पट्टी नं० 1।
श्री ठा० सा० भीष्म सिंह के छठवें पुत्र श्री छत्रपाल सिंह को मौजा विरहुली मिला।

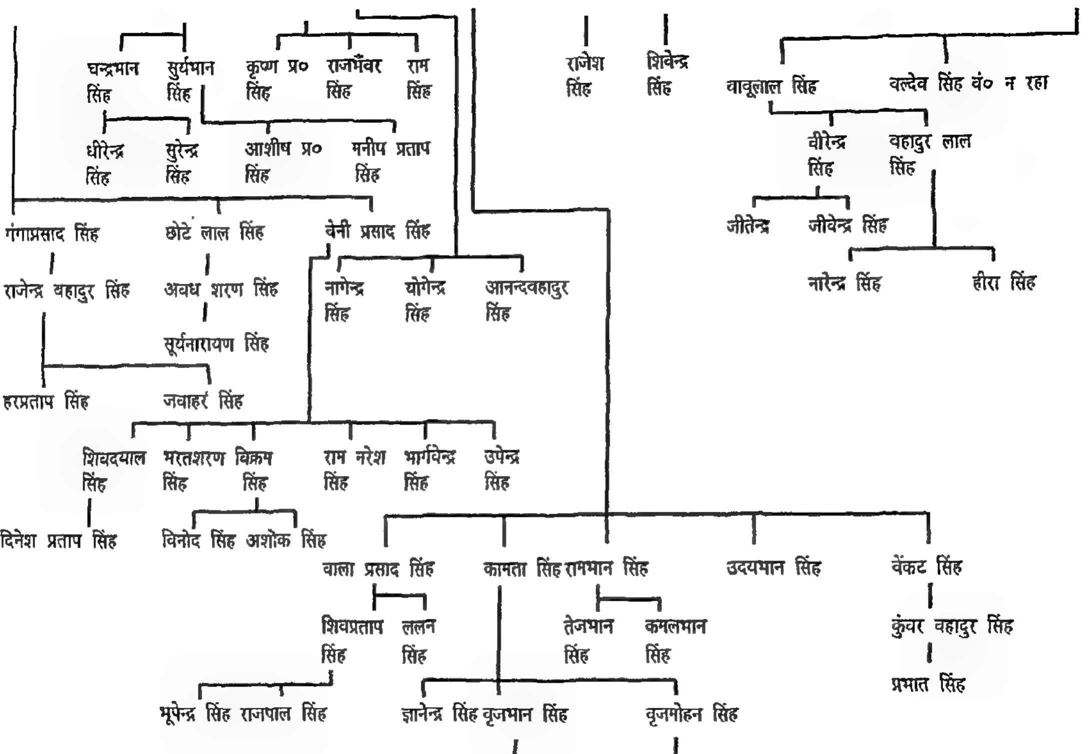


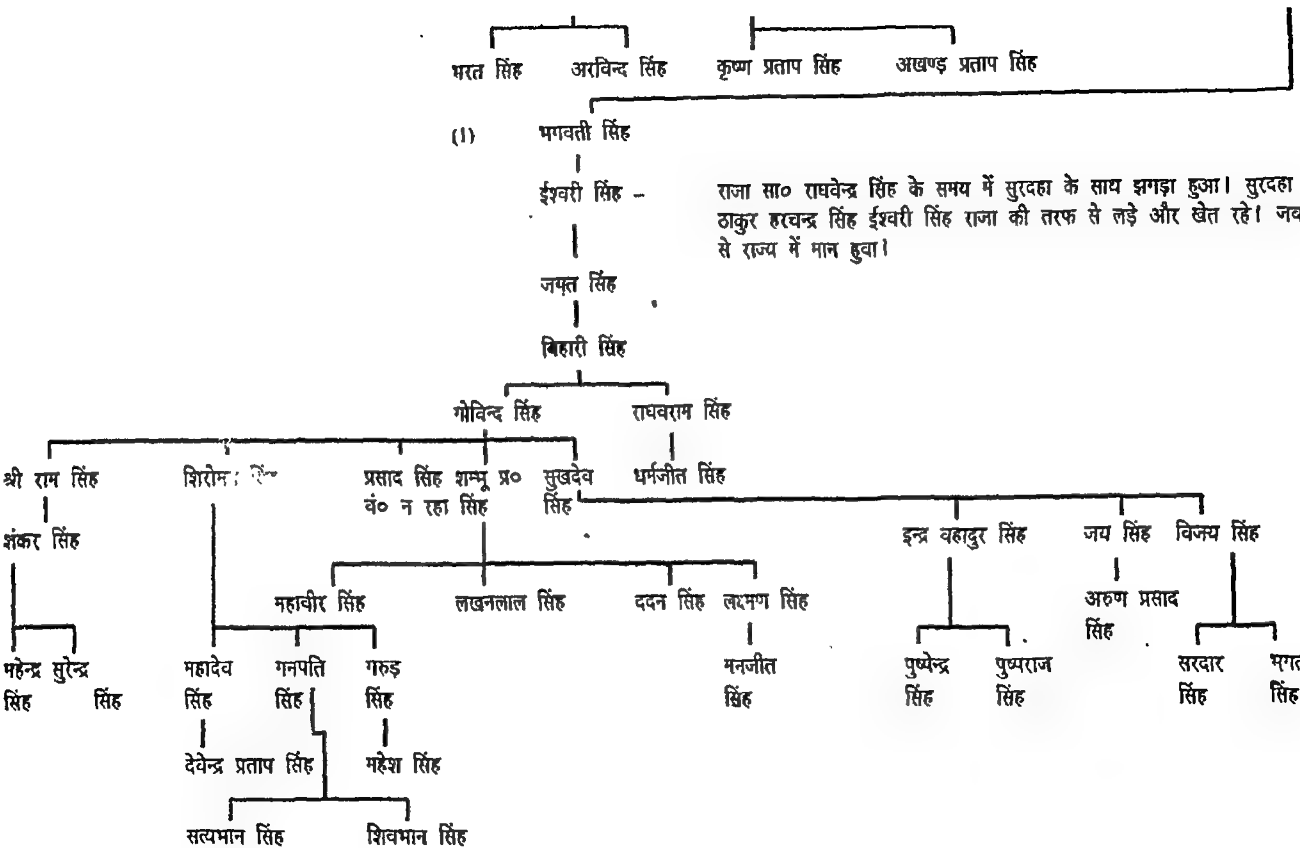

राम प्रताप सिंह
नरवदा प्र० सिंह
तेजवली सिंह
रुद्रप्रताप सिंह
वं० न रहा
चन्द्रवली सिंह
राजेन्द्र वली सिंह
जगन्नाथ सिंह
समर बहादुर सिंह
राघवेन्द्र सिंह
दान बहादुर सिंह
विजय बहादुर सिंह
जगदीश सिंह
रामभान सिंह
रामराज सिंह
रामलखन सिंह
मनी सिंह
वं० न रहा
काशी प्रसाद सिंह
वं० न रहा
तेजबहादुर सिंह
रनजोर सिंह
सीताराम सिंह
छत्रपाल सिंह
राजपाल सिंह
जसपाल सिंह
शिवनारायण सिंह
दलगंजन सिंह
जयराम सिंह
जोरावर सिंह
रघुनन्दन सिंह
नरहर सिंह
शीतल सिंह
तीरथ सिंह
नरोत्तम सिंह

(सचरा नं० 25)



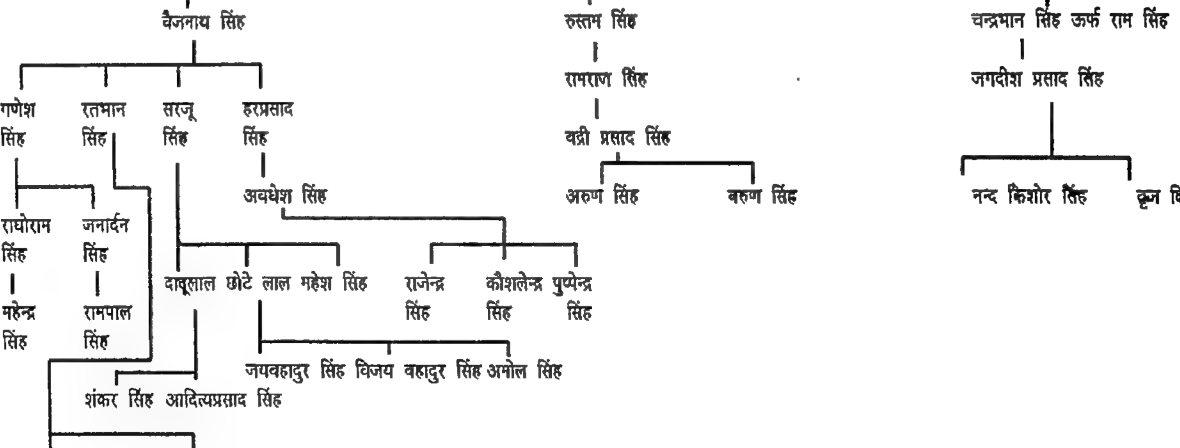
ग्राम - कोड़र क्रमांक 2 (इलाका सुरदहा)
श्री ठाकुर सा० देवी सिंह के पुत्र गुमान सिंह को मौजा कोड़र जमा कमाल 400/- का पाया।
गुमान सिंह (पुत्र देवी सिंह इलाकेदार सुरदहा)
मूरत सिंह
भगवती सिंह
वंशधारी सिंह
गुरवख्श सिंह
नृपति सिंह
मान सिंह
रनवहादुर सिंह
लाल सिंह वं० न रहा
रुद्र प्रताप सिंह वं० न रहा
साधौप्रसाद सिंह
संतप्रताप सिंह
दर्शन सिंह
जयकरण सिंह
जयराम सिंह
रामराज सिंह
राजवहादुर सिंह
शिव वहादुर सिंह
रामानुज सिंह वंश न रहा
हरपाल सिंह
सहादेव सिंह
नर्वदा प्रसाद सिंह
शिवशरण सिंह
तीर्थ राज सिंह
उदय व० सिंह
सुखेन्द्र सिंह
निहाल सिंह
सरदार सिंह
युधेन्द्र सिंह
राजेन्द्र सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
वृजेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह

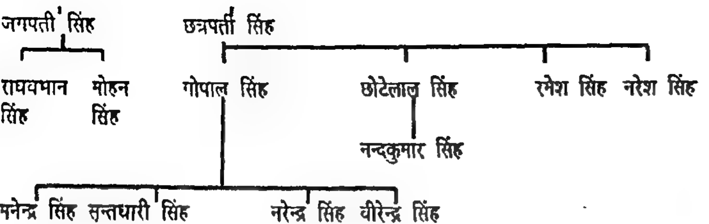

चन्द्रभान सिंह
सुर्यभान सिंह
कृष्ण प्र० सिंह
राजभँवर सिंह
राम सिंह
राजेश सिंह
शिवेन्द्र सिंह
बाबूलाल सिंह
बल्देव सिंह वं० न रहा
धीरेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
आशीष प्र० सिंह
मनीष प्रताप सिंह
वीरेन्द्र सिंह
बहादुर लाल सिंह
जीतेन्द्र
जीवेन्द्र सिंह
गंगाप्रसाद सिंह
छोटे लाल सिंह
बेनी प्रसाद सिंह
नारेन्द्र सिंह
हीरा सिंह
राजेन्द्र बहादुर सिंह
अवध शरण सिंह
नागेन्द्र सिंह
योगेन्द्र सिंह
आनन्दबहादुर सिंह
सूर्यनारायण सिंह
हरप्रताप सिंह
जवाहर सिंह
शिवदयाल सिंह
भरतशरण सिंह
विक्रम सिंह
राम नरेश सिंह
भार्गवेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
दिनेश प्रताप सिंह
विनोद सिंह
अशोक सिंह
बाला प्रसाद सिंह
कामता सिंह
रामभान सिंह
उदयभान सिंह
वेंकट सिंह
शिवप्रताप सिंह
ललन सिंह
तेजभान सिंह
कमलभान सिंह
कुंवर बहादुर सिंह
प्रभात सिंह
भूपेन्द्र सिंह
राजपाल सिंह
ज्ञानेन्द्र सिंह
बृजभान सिंह
बृजमोहन सिंह


भरत सिंह
अरविन्द सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह
अखण्ड प्रताप सिंह
(1)
भगवती सिंह
ईश्वरी सिंह –
राजा सा० राघवेन्द्र सिंह के समय में सुरदहा के साथ झगड़ा हुआ। सुरदहा के ठाकुर हरचन्द्र सिंह ईश्वरी सिंह राजा की तरफ से लड़े और खेत रहे। जब से राज्य में मान हुवा।
जयत सिंह
बिहारी सिंह
गोविन्द सिंह
राघवराम सिंह
धर्मजीत सिंह
श्री राम सिंह
शंकर सिंह
महेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
प्रसाद सिंह वं० न रहा
शम्भू प्र० सिंह
सुखदेव सिंह
इन्द्र वहादुर सिंह
जय सिंह
विजय सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
पुष्पराज सिंह
अरुण प्रसाद सिंह
सरदार सिंह
भगत सिंह
महावीर सिंह
लखनलाल सिंह
ददन सिंह
लक्ष्मण सिंह
मनजीत सिंह
महादेव सिंह
गनपति सिंह
गरुड़ सिंह
देवेन्द्र प्रताप सिंह
महेश सिंह
सत्यभान सिंह
शिवमान सिंह

(सचरा नं० 26)

ग्राम – खारा (इलाका सुरदहा के भाई) (भरतपुर के पास जिला सीधी) में इनका वंश है। ग्राम विरहुली सुरदहा के ठाकुर छत्रपाल सिंह के वंशज लक्ष्मण सिंह पुत्र छोटे लाल सिंह मौजा विरहुली से मौजा खारा नैकिनरामपुर (राज्य रीवां) चले गए। खारा वालों ने जो सचरा बनाकर दिया है और जो यहाँ का सचरा है उसमें कुछ फर्क है। छत्रपाल सिंह के तीन पुत्र लिखे हैं परान सिंह उसमें नहीं है। यहाँ चार पुत्र लिखें हैं।





(सचरा नं० 27)

ग्राम - पवइया क्रमांक 1 (इलाका सुरदहा)।

श्री ठाकुर सा० देवीसिंह के तीसरे पुत्र श्री संग्राम सिंह मौजा पवइया जमा कमाल 250/- का पाया।

संग्राम सिंह (पुत्र देवी सिंह इलाकेदार सुरदहा)

अमरी सिंह

प्रतापसिंह वं न रहा

अवधूत सिंह

खुमान सिंह

समर सिंह

मेदनीसिंह वं० न रहा

महाराजसिंह

अंगद सिंह वं० न रहा

भरतसिह वं० न रहा

फतेहसिंह

रघुनन्दनसिंह

मनोहर सिंह

विजय सिंह

सूर्यवली सिंह

कल्याण सिंह

गणेश सिंह वं० न रहा

तेजभान सिंह

साधो सिंह

शिवाप्रताप सिंह

चन्द्रभानसिंह वं० न रहा

लालमनसिंह

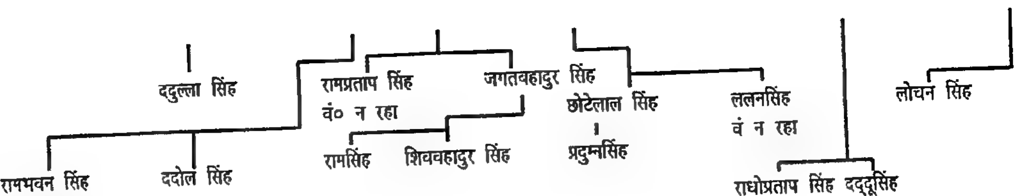
गोपाल सिंह

इन्द्र वहादुर सिंह

जगतधारी सिंह वं० न रहा

उदयराज सिंह

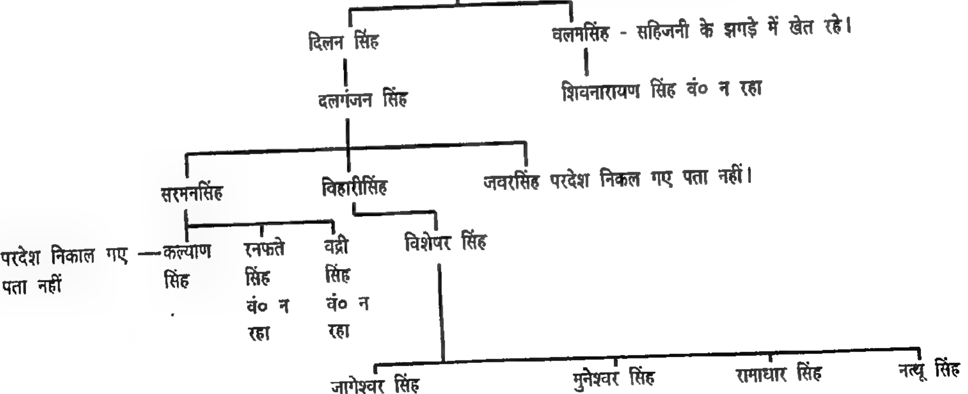
मनभरन सिंह



(सचरा नं० 28)

ग्राम - पवइया क्रमांक 2 (इलाका सुरवहा)

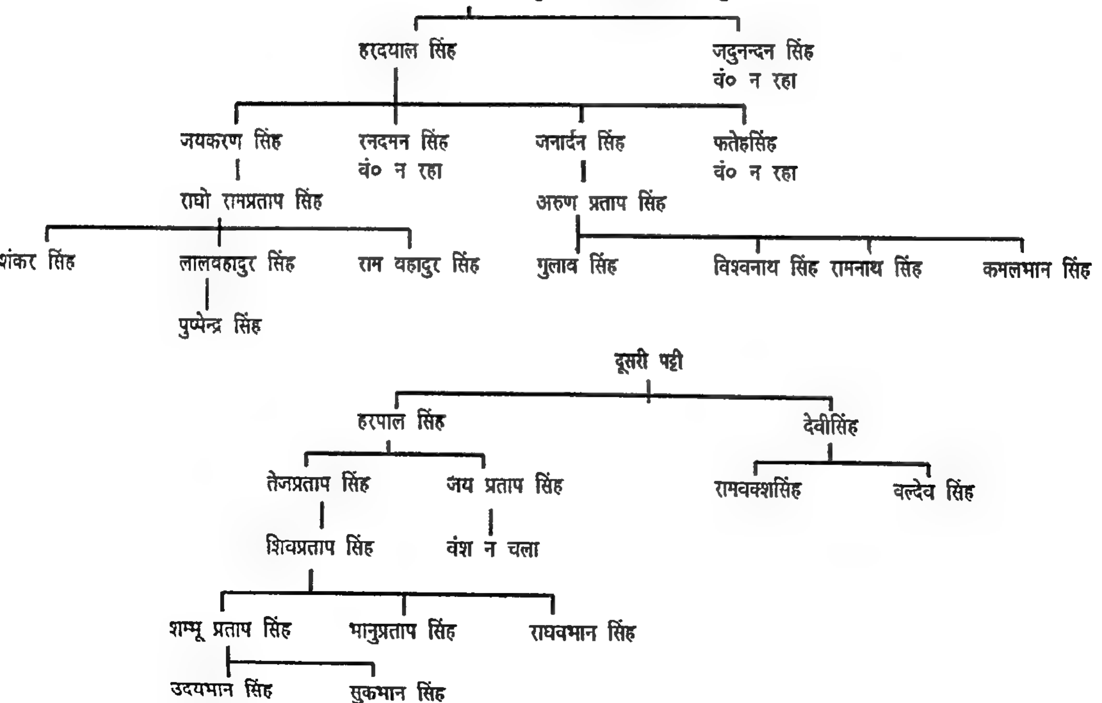
श्री ठाकुर सा० देवी सिंह के पाँचवें पुत्र वैजनाथ सिंह को मौजा आधा पवइया जमा कमाल 250/- का पाया।

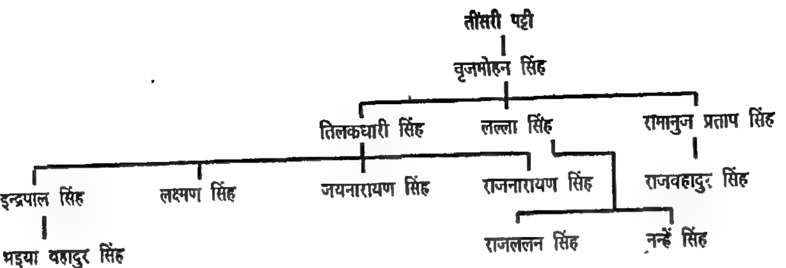


(सचरा नं० 29)

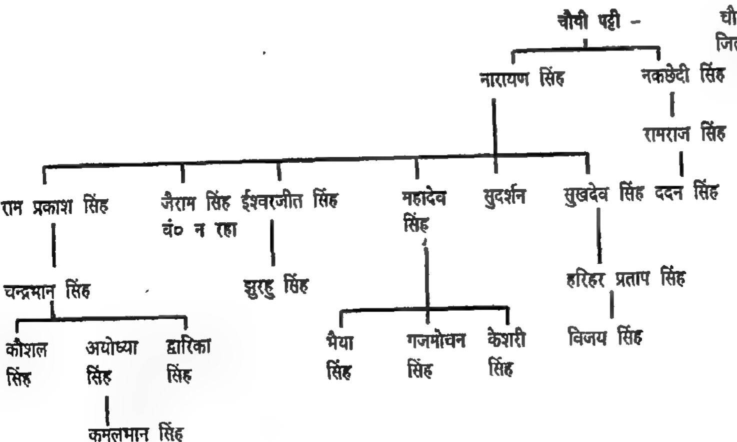
ग्राम - पसरवार (इलाका सुरदहा)

श्री ठाकुर सा० देवी सिंह जी के चौथे पुत्र को नाहर सिंह को मौजा परसवार (आधा) जमा कमाल 250/- का पाया।
इनके यहाँ का जो सचरा मिला है लिखा गया है आगे के सयानों का नाम मालूम नहीं हो सका।
इससे मूल पुरुष में जोड़ दिया गया है। मूल पुरुष के वाद कुछ पुश्तों का पता नहीं चलता।

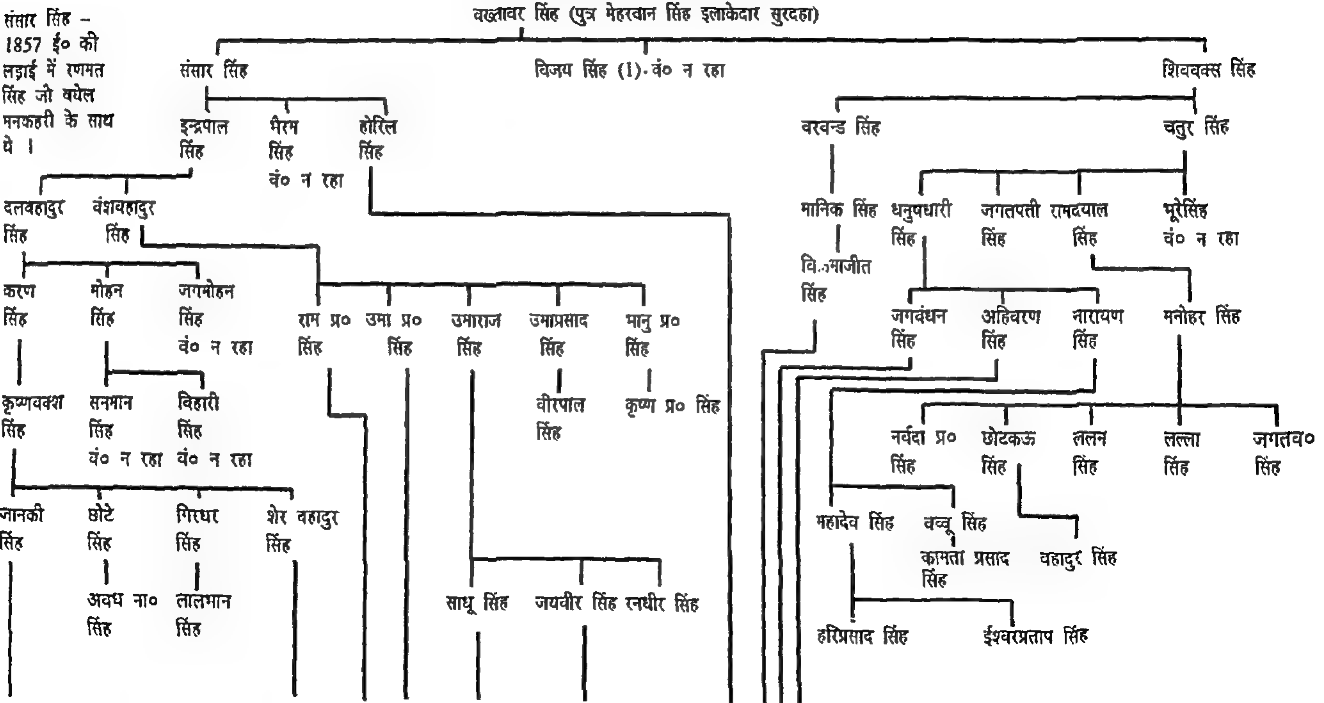




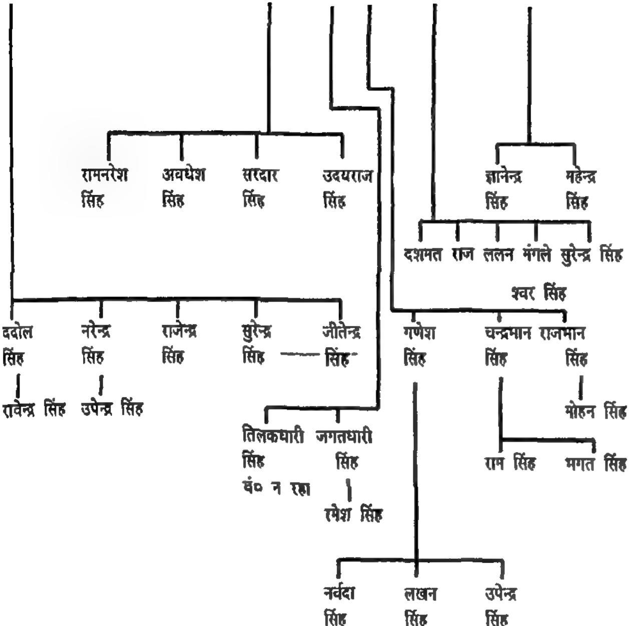
चौथी पट्टी परसवार मौजा के छोटा टोला के भाई सरमनियां मौजा जिला शहडोल में इनके वंश रहते हैं।

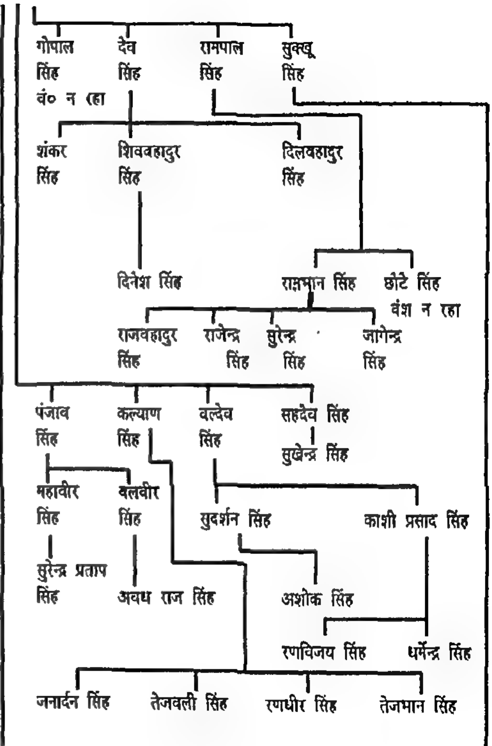


(सचरा नं० 30)



ग्राम - चमुरहिया (इलाका सुरदहा)
श्री ठाकुर मेहरवानसिंह जी के दूसरे पुत्र वख्तावरसिंह को मौजा चमुरहिया जमा कमाल 380/- रु० का पाया।
वख्तावर सिंह (पुत्र मेहरवान सिंह इलाकेदार सुरदहा)
संसार सिंह - 1857 ई० की लड़ाई में रणमत सिंह जो वघेल मनकहरी के साथ थे ।
संसार सिंह
विजय सिंह (1)-वं० न रहा
शिववक्स सिंह
इन्द्रपाल सिंह
भैरम सिंह वं० न रहा
होरिल सिंह
वरवन्ड सिंह
चतुर सिंह
दलवहादुर सिंह
वंशवहादुर सिंह
मानिक सिंह
धनुषधारी सिंह
जगतपती सिंह
रामदयाल सिंह
भूरेसिंह वं० न रहा
करण सिंह
मोहन सिंह
जगमोहन सिंह वं० न रहा
राम प्र० सिंह
उमा प्र० सिंह
उमाराज सिंह
उमाप्रसाद सिंह
भानु प्र० सिंह
वि.जमाजीत सिंह
जगवंधन सिंह
अहिवरण सिंह
नारायण सिंह
मनोहर सिंह
कृष्णवक्श सिंह
सनमान सिंह वं० न रहा
विहारी सिंह वं० न रहा
वीरपाल सिंह
कृष्ण प्र० सिंह
नर्वदा प्र० सिंह
छोटकऊ सिंह
ललन सिंह
लल्ला सिंह
जगतव० सिंह
जानकी सिंह
छोटे सिंह
गिरधर सिंह
शेर वहादुर सिंह
महादेव सिंह
वव्वू सिंह
कामता प्रसाद सिंह
वहादुर सिंह
अवध ना० सिंह
लालभान सिंह
साधू सिंह
जयवीर सिंह
रनधीर सिंह
हरिप्रसाद सिंह
ईश्वरप्रताप सिंह

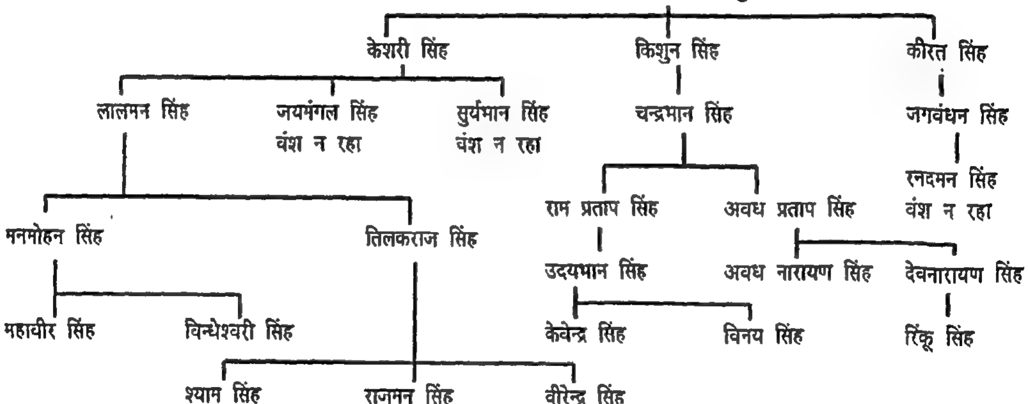

रामनरेश सिंह
अवधेश सिंह
सरदार सिंह
उदयराज सिंह
ज्ञानेन्द्र सिंह
महेन्द्र सिंह
दशमत राज ललन मंगले सुरेन्द्र सिंह
श्वर सिंह
ददोल सिंह
नरेन्द्र सिंह
राजेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
जीतेन्द्र सिंह
गणेश सिंह
चन्द्रमान सिंह
राजमान सिंह
रावेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
मोहन सिंह
तिलकधारी सिंह वं० न रहा
जगतधारी सिंह
राम सिंह
मगत सिंह
रमेश सिंह
नर्वदा सिंह
लखन सिंह
उपेन्द्र सिंह

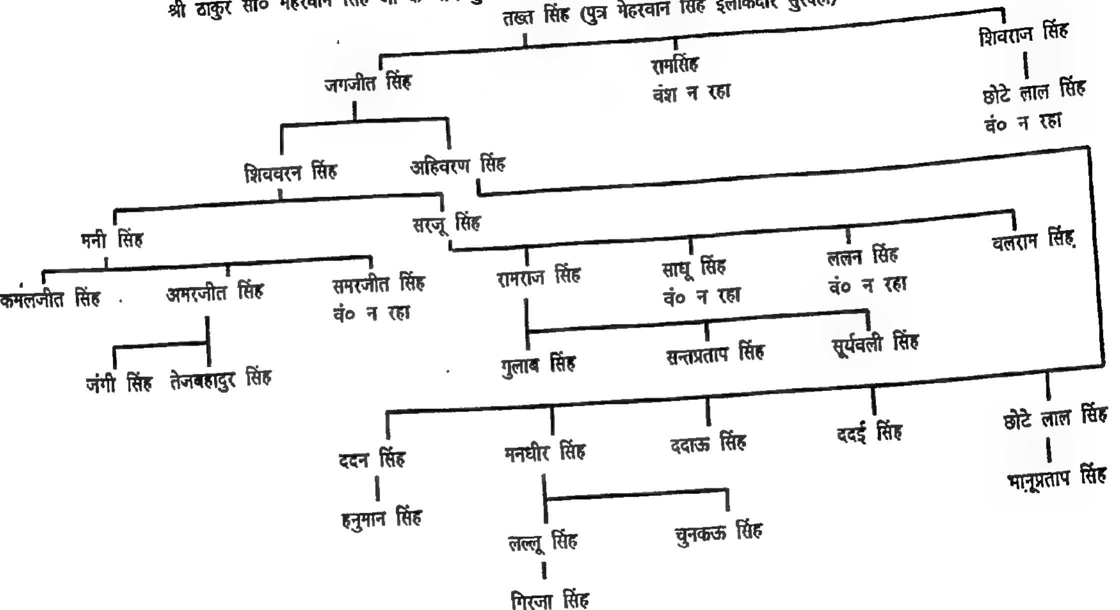

गोपाल सिंह वं० न रहा
देव सिंह
रामपाल सिंह
सुक्खू सिंह
शंकर सिंह
शिववहादुर सिंह
दिलवहादुर सिंह
दिनेश सिंह
राजमान सिंह
छोटे सिंह वंश न रहा
राजवहादुर सिंह
राजेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
जागेन्द्र सिंह
पंजाव सिंह
कल्याण सिंह
वल्देव सिंह
सहदेव सिंह
सुखेन्द्र सिंह
महावीर सिंह
वलवीर सिंह
सुदर्शन सिंह
काशी प्रसाद सिंह
सुरेन्द्र प्रताप सिंह
अवध राज सिंह
अशोक सिंह
रणविजय सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
जनार्दन सिंह
तेजवली सिंह
रणधीर सिंह
तेजमान सिंह

ग्राम - धमनहा (इलाका सुरदहा)

श्री ठाकुर सा० मेहरवान सिंह के तीसरे पुत्र उदवत सिंह, जिन्हें मौजा उमरी और धमनहा मिला था के वंशज वलवंत सिंह (उदवत सिंह के प्रपौत्र) धमनहा चले गए थे। उनके वंश के ग्राम धमनहा में हैं।

वलवंत सिंह (पुत्र सेनापत सिंह)

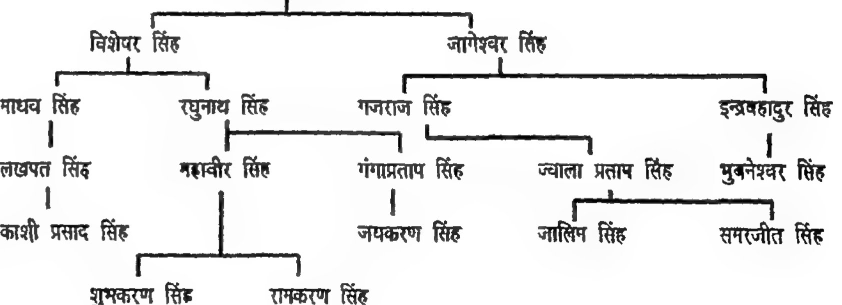



ग्राम - पाकर (इलाका सुरदहा)
श्री ठाकुर सा० मेहरवान सिंह जी के चौथे पुत्र श्री तख्त सिंह जी को मौजा पाकर जमा कमाल 175/- रुपयों का पाया।
तख्त सिंह (पुत्र मेहरवान सिंह इलाकेदार सुरदहा)
जगजीत सिंह
रामसिंह
वंश न रहा
शिवराज सिंह
छोटे लाल सिंह
वं० न रहा
शिववरन सिंह
अहिवरण सिंह
मनी सिंह
सरजू सिंह
कमलजीत सिंह
अमरजीत सिंह
समरजीत सिंह
वं० न रहा
जंगी सिंह
तेजबहादुर सिंह
रामराज सिंह
साधू सिंह
वं० न रहा
ललन सिंह
वं० न रहा
वलराम सिंह
गुलाब सिंह
सन्तप्रताप सिंह
सूर्यवली सिंह
ददन सिंह
हनुमान सिंह
मनधीर सिंह
ददाऊ सिंह
ददई सिंह
छोटे लाल सिंह
भानूप्रताप सिंह
लल्लू सिंह
चुनकऊ सिंह
गिरजा सिंह

(सचरा नं० 33)

ग्राम - वावूपुर (इलाका सुरदहा) पट्टी नं० 2

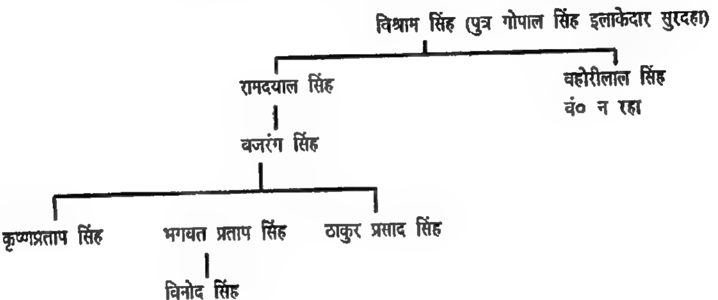
श्री ठाकुर गोपाल सिंह जी के दूसरे पुत्र दुनिया सिंह मौजा वावूपुर जमा कमाल 240/- रुपयों का पाया। वावूपुर की गद्दी राघवेन्द्र सिंह ने गिरवाई थी। उसमें कलिन्दर सिंह भदवरिया तथा मनोहर सिंह चौहान के पूर्वज जूझे, जिसके उपलक्ष्य में कलिन्दर सिंह को दुवेन का अर्न्तवेद तथा मनोहर सिंह के पूर्वजों को मौजा सुकुलगवां राज्य की तरफ से दिया गया। मौजा अर्न्तवेद पहिले दुवे ब्राह्मण पाए हुए थे।



(सचरा नं० 34)

ग्राम - विरहुली (इलाका)

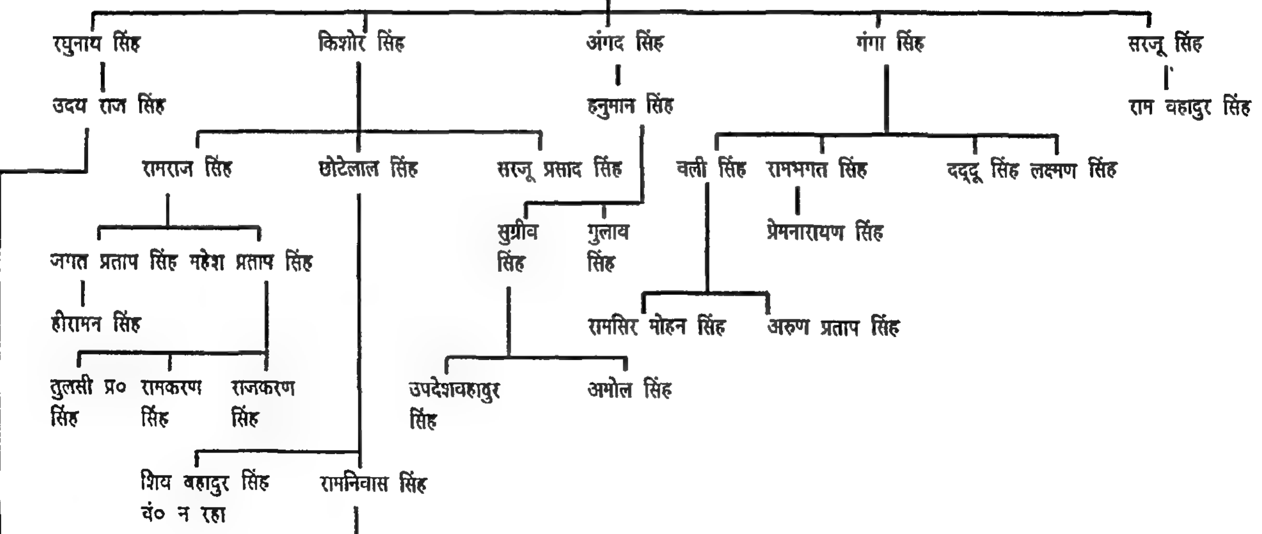
श्री ठाकुर सा० गोपाल सिंह जी के तीसरे पुत्र मौजा विरहुली पट्टी पाया।।



(सचरा नं० 35)

ग्राम - ललचहा (इलाका सुरदहा)

श्री ठाकुर सा० प्रताप सिंह जी के तीसरे पुत्र पहिलवान सिंह को मौजा ललचहा व सुखसेना जमा कमाल 350/- रु० का मिला।



रामलला सिंह   राजललन सिंह   महेन्द्र सिंह

धर्मजीत सिंह   गिरवर सिंह   मान सिंह   धुरमंगल सिंह

रामाधार सिंह (पुत्र धर्मजीत सिंह)
सुरेन्द्र सिंह (पुत्र गिरवर सिंह)

शिवमंगल सिंह   लखन प्रताप सिंह (पुत्र रामाधार सिंह)

गणेश प्रताप सिंह   रमेश प्रताप सिंह   नरेश प्रताप सिंह (पुत्र मान सिंह)

उमेश प्रताप सिंह (पुत्र गणेश प्रताप सिंह)

(सचरा नं० 36)

ग्राम - रजहा (इलाका सुरदहा)

श्री ठाकुर सा० कदमेश्वरप्रसाद सिंह जी के पाँचयें पुत्र रामभद्र सिंह को मौजा पाकर की पट्टी हिस्सा में पाया। इस समय रजहा में रहते हैं।

राम भद्र सिंह (पुत्र कदमेश्वर प्रसाद सिंह इलाकेदार सुरदहा)

वीरेन्द्र सिंह   सुरेन्द्र सिंह   नरेन्द्र सिंह

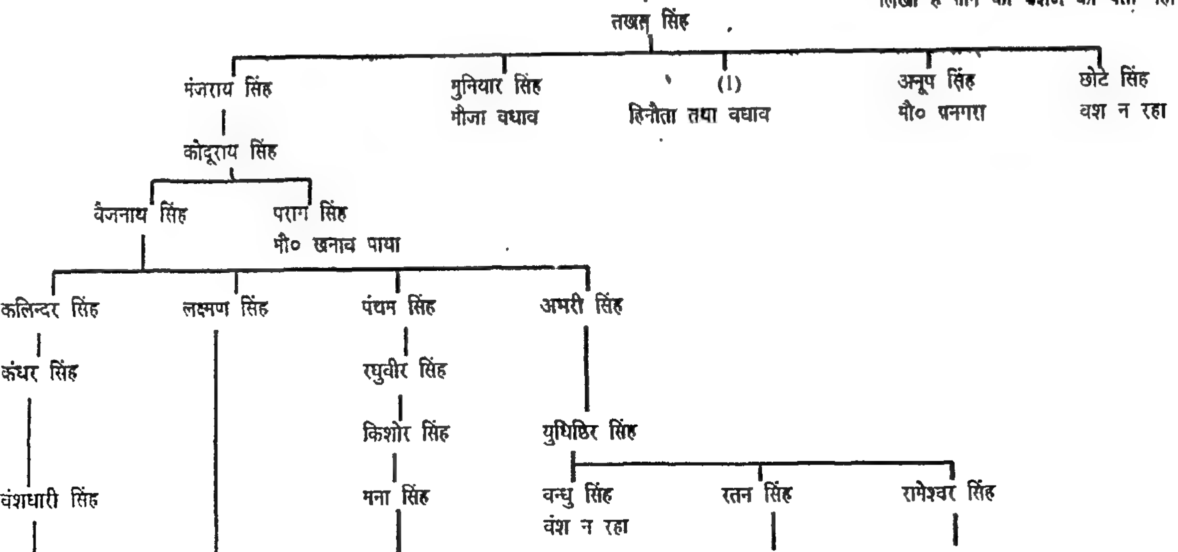
अरुण सिंह   राकेश सिंह (पुत्र सुरेन्द्र सिंह)

अजय सिंह   विजय सिंह   अभय सिंह (पुत्र वीरेन्द्र सिंह)

(सचरा नं० 37)

ग्राम - सहिपुर

श्री राजा सा० प्रतापरुद्र के तीसरे पुत्र भगवत राय सहिपुर लगाकर वि० सं० 1648 में हिस्सा पाया। श्री राजा साहब नरेन्द्र शाह के यह भाई थे।
यह मौजा सहिपुर, वधाव, पनगरा, खनाव तथा हिनौता हिस्से में शामिल थे।



(1) हिनौता तथा वधाव पाए थे। चंदिया चला जाना लिखा है नाम का बंशज का पता नहीं है।

चन्द्रमान सिंह — दिरगज सिंह वंश न रहा

विशेषर सिंह — हरिहरवक्श सिंह वंश न रहा

राजकुमार सिंह — वृजराज सिंह — वहादुर सिंह

राम सिंह — रामप्रताप सिंह — प्यारे सिंह

ददन सिंह — रामकुमार सिंह — रामराज सिंह वंश न रहा

लल्ला सिंह — रामकुमार सिंह उर्फ वेटा सिंह

गोविन्द सिंह — अवधकरण सिंह — सीताराम सिंह

गोवर्धन सिंह (परदेश चले गए पता नहीं) — जयराम सिंह वंश न रहा

महिपाल सिंह — मोहर सिंह

अजीत सिंह — वलराज सिंह वंश न रहा — अम्बर सिंह

भगत सिंह — जगमोहन सिंह वंश न रहा — सिरनेत सिंह वंश न रहा

भगत सिंह — शिवमंगल सिंह वंश न रहा — हन्सु सिंह वंश न रहा — फतेह सिंह

मथुरा सिंह — दलपत (दासी पुत्र) सिंह वंश न रहा

नीचे लिखे वालों के पिता का नाम मालूम नहीं हो पाया। रहने वाले यह मौजा सहिपुर के हैं।

दुनिया सिंह — पहिलवान सिंह

गोपाल सिंह — भैरम सिंह

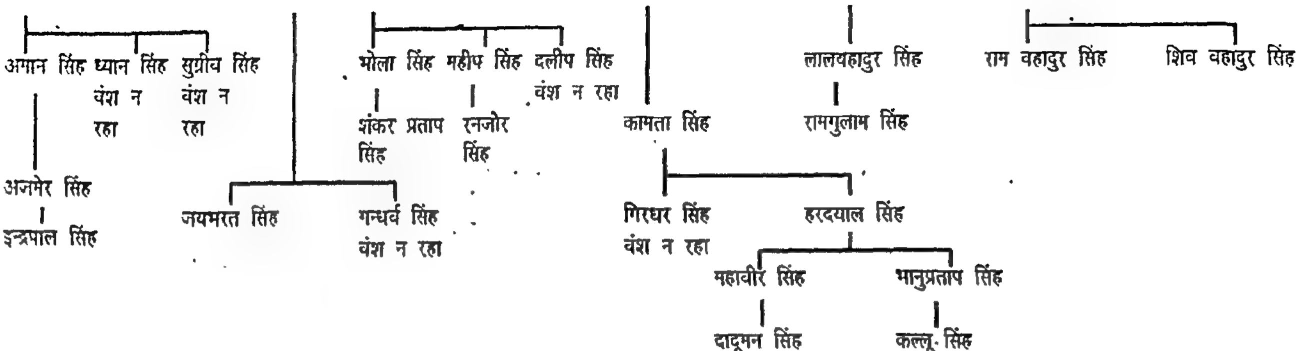
वजरंग सिंह — इन्द्रपाल सिंह

हीरा सिंह वंश न रहा

शिव प्रताप सिंह — सूर्यवली सिंह

नारायण सिंह

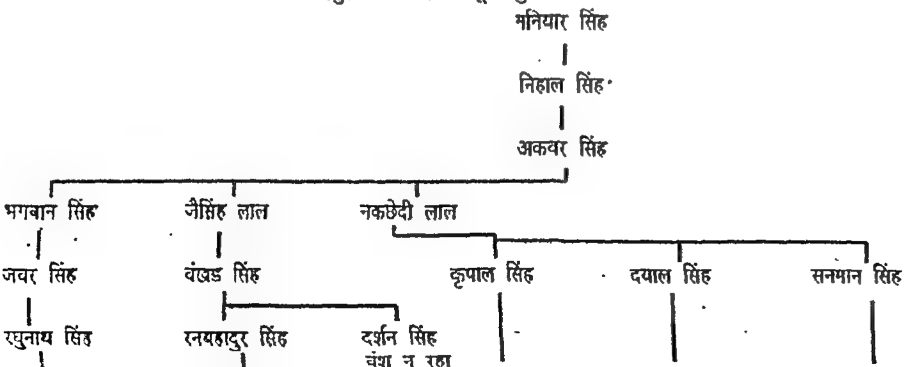
सुदर्शन सिंह वंश न रहा

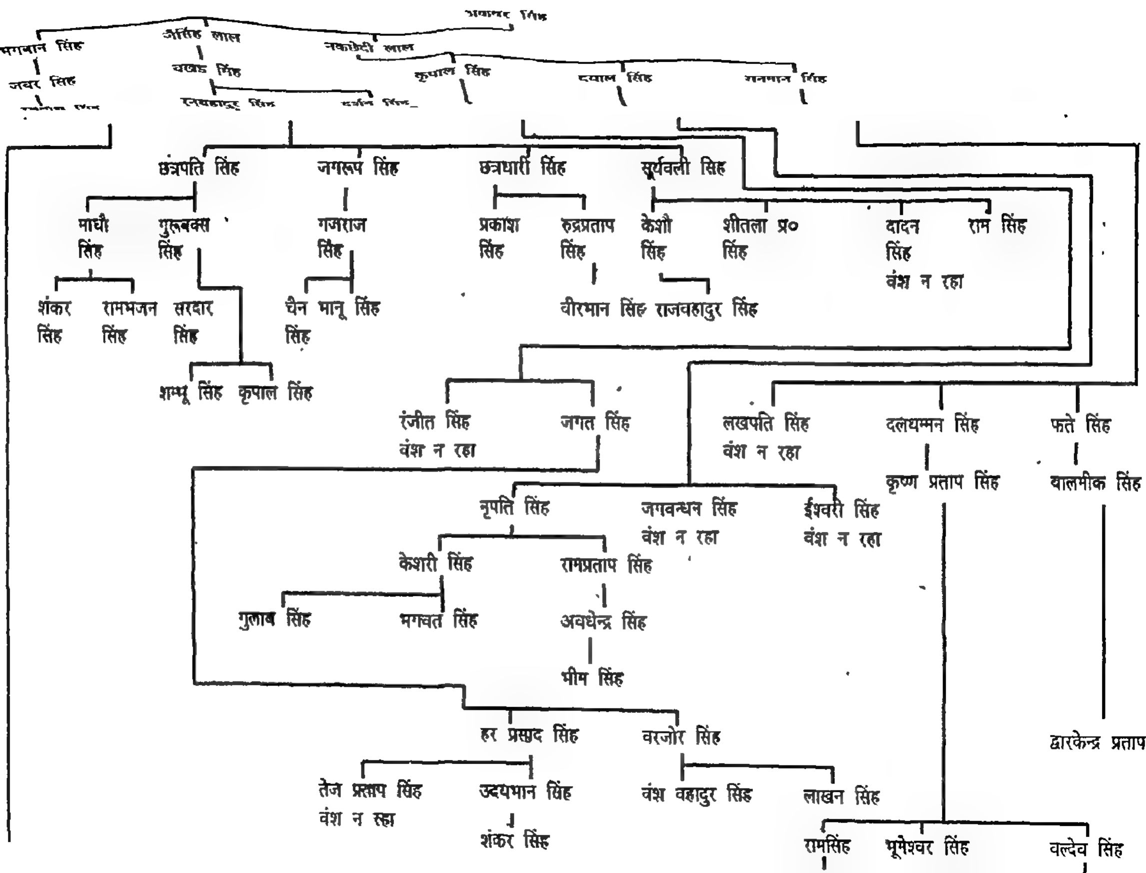


(सचरा नं० 38)

वधाव

ठा० सा० सहिपुर तख्त सिंह के दूसरे पुत्र मनियार सिंह को मौजा वधाव हिस्से में मिला।





छत्रपति सिंह
जगरूप सिंह
छत्रधारी सिंह
सूर्यवली सिंह
माधौ सिंह
गुलबक्स सिंह
गजराज सिंह
प्रकाश सिंह
रुद्रप्रताप सिंह
केशौ सिंह
शीतला प्र० सिंह
दादन सिंह वंश न रहा
राम सिंह
शंकर सिंह
रामभजन सिंह
सरदार सिंह
चैन सिंह
भानू सिंह
वीरभान सिंह
राजवहादुर सिंह
शम्भू सिंह
कृपाल सिंह
रंजीत सिंह वंश न रहा
जगत सिंह
लखपति सिंह वंश न रहा
दलथम्मन सिंह
फते सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह
वालमीक सिंह
नृपति सिंह
जगवन्धन सिंह वंश न रहा
ईश्वरी सिंह वंश न रहा
केशरी सिंह
रामप्रताप सिंह
गुलाब सिंह
भगवत सिंह
अवधेन्द्र सिंह
भीम सिंह
हर प्रसाद सिंह
वरजोर सिंह
द्वारकेन्द्र प्रताप सिंह
तेज प्रताप सिंह वंश न रहा
उदयभान सिंह
वंश वहादुर सिंह
लाखन सिंह
शंकर सिंह
रामसिंह
भूमेश्वर सिंह
वल्देव सिंह

जगतधारी सिंह   अजमेर सिंह

विश्वेसर सिंह

वक्री सिंह   जगदीश सिंह   उदयभान सिंह

राजबहादुर सिंह   विश्वनाथ सिंह

राजेन्द्र सिंह

कमलजीत सिंह   करन सिंह   जयनारायण सिंह   शीतला सिंह   रामानुज प्रताप सिंह   छोटेलाल सिंह   महेन्द्र सिंह   मुनेन्द्र सिंह

दशमत सिंह   तेजबली सिंह   समाराज सिंह

देशराज सिंह   अवधराज सिंह   उदयराज सिंह

राजमन सिंह   वीरभान सिंह

शंकर राज सिंह   तिलक राज सिंह   अभयराज सिंह

बलवन्त सिंह   हेमराज सिंह   उमाराज सिंह   श्याम राज सिंह

(तचरा नं० 39)

पनगरा

सहिपुर के ठाकुर लाल तख्त सिंह देव के पाँच पुत्र थे। उनमें से चौथे अनूप सिंह ने पनगरा पाया।

- अनूप सिंह
  - भवानी सिंह
    - जीत राय
      - छोटे लाल सिंह
        - कुशल सिंह
          - दौलत सिंह
            - रामप्रताप सिंह
              - राम सुदर्शन सिंह
                - शंकर सिंह
                - लखपति सिंह
                - वंसपती सिंह
                - रामराज सिंह
            - भूरा सिंह
              - अर्जुन सिंह
                - रनफते सिंह
                - नेपाल सिंह
              - सरजू सिंह
                - हनुमान सिंह
                - वीरभान सिंह
                - देवेन्द्र सिंह
            - जैराम सिंह (वंश न रहा)
          - महावली सिंह
            - मनोहर सिंह
              - करन सिंह
                - रामायण सिंह
              - चलवीर सिंह
            - भगवत सिंह
            - रामेश्वर सिंह
              - कल्याण सिंह
              - गोरे सिंह
              - निरपत सिंह
              - गिरवर सिंह
    - रघुवीर सिंह (चंदिया चले गये। वंश नष्ट हो गया)

(सचरा नं० 40)

ग्राम - वावूपुर (इलाका)

राजा प्रतापरूद्र के चौथे लड़के गजपतराय सिंह को मौजा वावूपुर लगाकर 19 मौजे जमा कमाल 4064) रु० का हिस्सा पाया।

गजपतराय सिंह (पुत्र प्रताप रुद्र)
- वैजनाथ सिंह
  - वोधमल्ल सिंह
    - हठी सिंह
      - जोरेश्वर सिंह
        - जीतराय सिंह
          - मूरत सिंह
            - लक्ष्मण सिंह — वंश न रहा
      - पहिलवान सिंह
    - वख्तावर सिंह
  - चतुर सिंह
- मौजा पवइया पाया

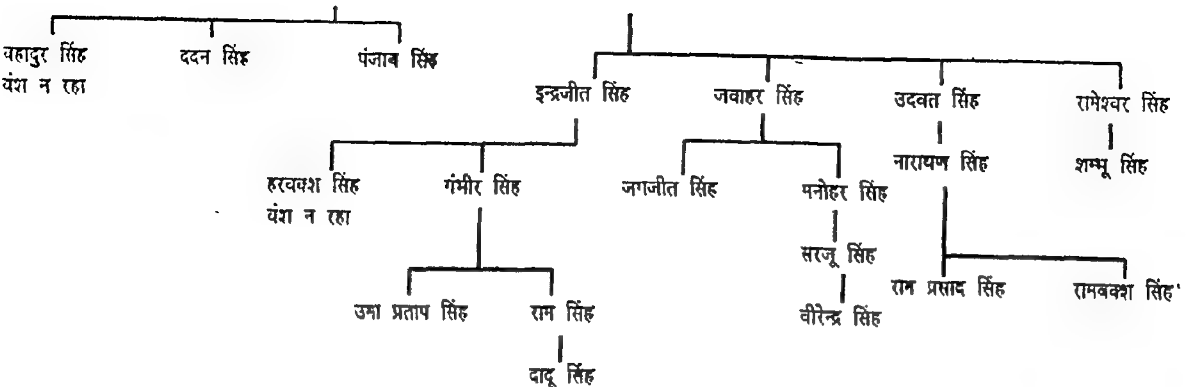
लक्ष्मण सिंह के मर जाने के वाद -- इलाका वावूपुर मौजा इटमा 150) का मौजा पाकर 175) का, मौजा कुरेही 40) का मौजा कनपुरा 100) का, मौजा कुन्दरी 10) का मौजा वावूपुर 800) का मौजा हड़हा 20) मौजा पवइया 250) मौजा ललचहा 350) मौजा परसवार 250) का मौजा अतरौरा 150) मौजा पवइया 275) मौजा पर सवार पट्टी 200) मौजा इटमा काप 60) मौजा पवइया पट्टी 250) का मौजा कोटा 250) का मौजा कठौता 3) का मौजा पाकर 225), मौजा वरहा-मौजा तिघरा मिनजुमला 4064) रु० का इलाका सुरदहा में शामिल हो गया।

(सचरा नं० 41)

ग्राम - अकोना बरेठिया के पास वाला

राजा सा० नरेन्द्र शाह जू देव के दूसरे पुत्र को ग्राम जिगनहट इलाका मिला था। वगावत की वजह से जिगनहट इलाका छूट गया और ग्राम अकोना गुजारे के लिए दिया गया। अनीराय के वंशज इसी ग्राम में हैं तथा 2-3 पुश्त के नाम का पता नहीं चलता। सम्भव है कि वदन सिंह और सदन सिंह अनीराय सिंह के लड़के हैं।

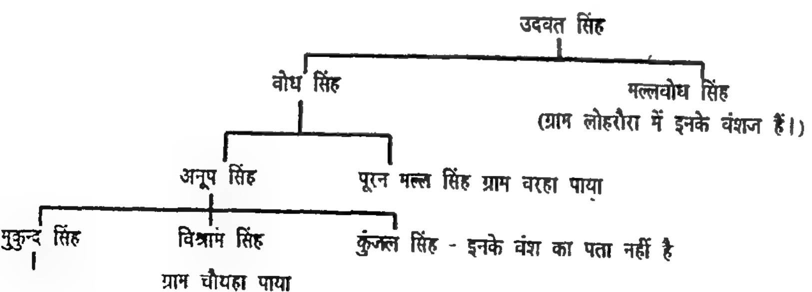
- अनीराय सिंह
  - वदन सिंह
    - शिव प्रसाद सिंह
      - दलथंभन सिंह
        - जवर सिंह
          - वेनीवक्श सिंह वंश न रहा
          - जयपाल सिंह वंश न रहा
          - चतुर सिंह वंश न रहा
          - रछपाल सिंह
          - जागेश्वर सिंह
            - वरदान सिंह वंश न रहा
        - रन सिंह वंश न रहा
        - दिरगज सिंह
          - विश्वनाथ सिंह
            - वजरंग सिंह
          - रघुनाथ सिंह वंश न रहा
    - गजराज सिंह
      - गणेश सिंह
        - कन्हैया वक्श सिंह. वंश न रहा
  - सदन सिंह
    - जगरूप सिंह
      - अभरी सिंह
      - अभिमान सिंह
        - शिवदीन सिंह
          - छत्रधारी सिंह
            - गिरधारी सिंह
          - किशोर सिंह
            - रामलखन सिंह
            - छोटे लाल सिंह
        - दिलराज सिंह
          - रामराज सिंह
          - चन्द्रकेत सिंह वंश न रहा
          - लाल सिंह वंश न रहा
      - मेहरवान सिंह वंश न रहा



(सचरा नं० 42)

'इलाका लोहरौरा (करही)

राजा सा० नरेन्द्र शाह के तीसरे लड़के भाव सिंह ने इलाका करही पाया था। भाव सिंह के तीन पुत्र थे। जेठे करही में रहे। मझले उदवत सिंह को लोहरौरा मिला और छोटे पुत्र ग्राम उरदना पाया। जेठे जो करही इलाका पाए थे उनका वंश न रहा। करही इलाका राज्य में शामिल कर लिया गया और लोहरौरा बड़े इलाकेदारों में गिना व माना गया।



नोट - मोहाफिज खाना में जो नक्शा है उसमें मल्लवोध सिंह का नाम नहीं है जिससे लड़कों को मल्लवोध सिंह का वंशज लिखाते हैं वह वोधा सिंह के भाइयों में लिखा है (प्रेमशाह, रनजीत राय, गयन्दशाह)। उनके संतान के व्यवहारों से पाया जाता है कि यह तीनों लोहरौरा के ठाकुर के ठाकुर वोध सिंह के भाई नहीं बल्कि मल्लवोध सिंह के लड़के होना ठीक पाया जाता है।

लक्ष्मण सिंह
उजियार सिंह ग्राम मुकुन्दपुर तथा ग्राम हरदुवा पाया
सुजान सिंह जूझ गए वंश न रहा
रछपाल सिंह ग्राम तिघरा पाया
अभिमान सिंह ग्राम तिघरा पाया
मेहरबान सिंह ग्राम तिघरा पाया
दूलम सिंह वंश न रहा

लक्ष्मण सिंह →
गोपाल सिंह
खुमान सिंह वंश न रहा
देवी सिंह जूझ गए वंश न रहा

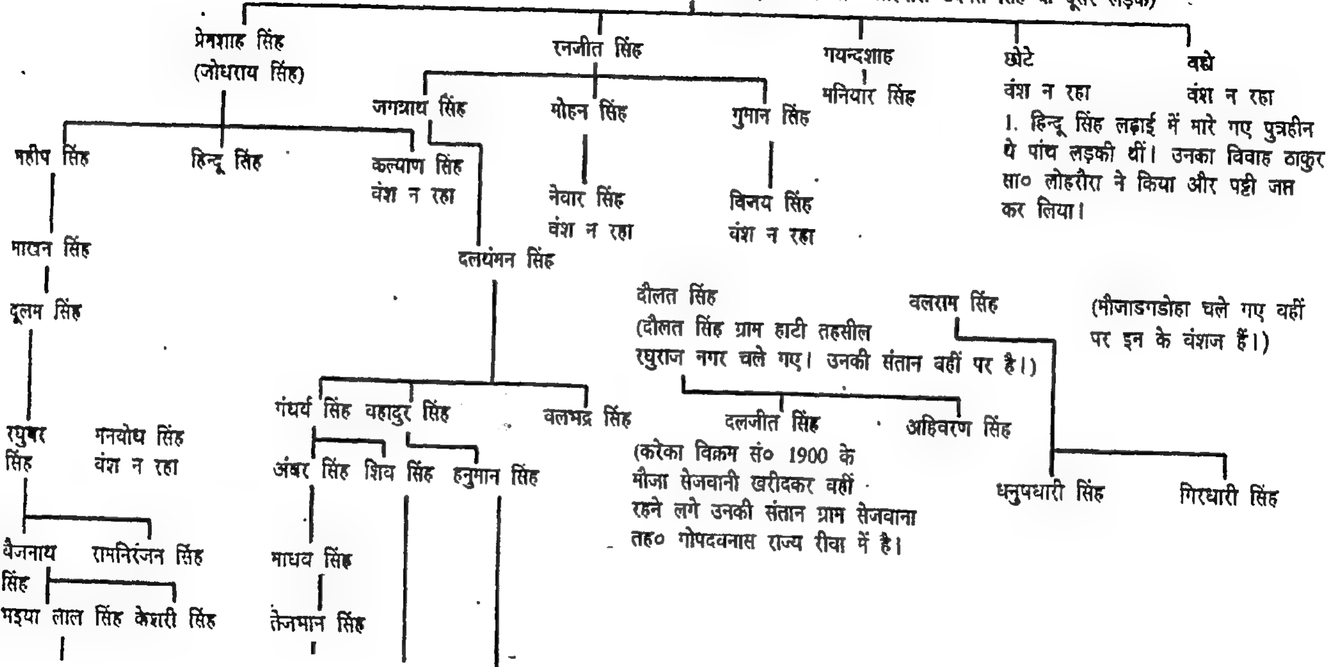
गोपाल सिंह →
शत्रुजीत सिंह
सामन्त सिंह वंश न रहा
देवी सिंह वंश न रहा

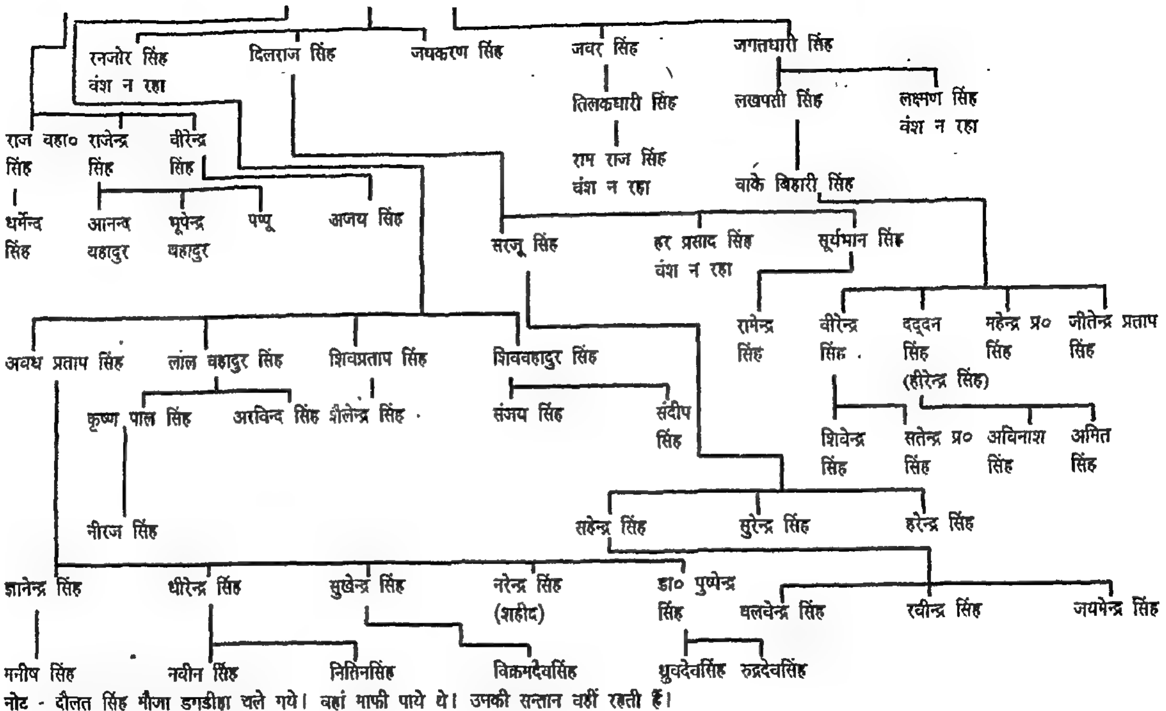
शत्रुजीत सिंह →
प्रतिपाल सिंह
हरचन्द सिंह ग्राम उमरी पाया
अमान सिंह (ग्राम - उमरी तिघरा ग्राम के पास है) ग्राम उमरी पाया

प्रतिपाल सिंह →
वंश बहादुर सिंह

वंश बहादुर सिंह →
हरबक्श सिंह वंश न रहा
राघोप्रसाद सिंह वंश न रहा
रामप्यारे सिंह वंश न रहा

नोट - लाल हर बक्श सिंह का स्वर्गवास ठाकुर होने के पहिले नाबालगी में हो गया था। राघोप्रसाद सिंह ठाकुर हुए। रामप्यारे सिंह की पहिले मृत्यु हो चुकी थी। राघोप्रसाद सिंह की मृत्यु के बाद निःसंतान होने की वजह से इलाका लोहरौरा राज्य में शामिल कर लिया गया।


(सचरा नं० 43)
ग्राम - लोहरौरा
परिहार जिनका वंशज ग्राम लोहरौरा में है (इलाका लोहरौरा)
मल्लवोध सिंह (इलाकेदार सा० लोहरौरा उदवत सिंह के दूसरे लड़के)
प्रेमशाह सिंह
(जोधराय सिंह)
रनजीत सिंह
गयन्दशाह
मनियार सिंह
छोटे
वंश न रहा
बड़े
वंश न रहा
1. हिन्दू सिंह लड़ाई में मारे गए पुत्रहीन थे पांच लड़की थीं। उनका विवाह ठाकुर सा० लोहरौरा ने किया और पट्टी जप्त कर लिया।
जगन्नाथ सिंह
मोहन सिंह
गुमान सिंह
महीप सिंह
हिन्दू सिंह
कल्याण सिंह
वंश न रहा
नेवार सिंह
वंश न रहा
विजय सिंह
वंश न रहा
माखन सिंह
दलथंमन सिंह
दूलम सिंह
दौलत सिंह
(दौलत सिंह ग्राम हाटी तहसील रघुराज नगर चले गए। उनकी संतान वहीं पर है।)
बलराम सिंह
(मौजाडगडोहा चले गए वहीं पर इन के वंशज हैं।)
गंधर्व सिंह
बहादुर सिंह
बलभद्र सिंह
दलजीत सिंह
(करेका विक्रम सं० 1900 के मौजा सेजवानी खरीदकर वहीं रहने लगे उनकी संतान ग्राम सेजवाना तह० गोपदवनास राज्य रीवा में है।
अहिवरण सिंह
रघुबर सिंह
गनयोध सिंह
वंश न रहा
अंबर सिंह
शिव सिंह
हनुमान सिंह
धनुषधारी सिंह
गिरधारी सिंह
बैजनाथ सिंह
रामनिरंजन सिंह
माधव सिंह
भइया लाल सिंह
केशरी सिंह
तेजभान सिंह

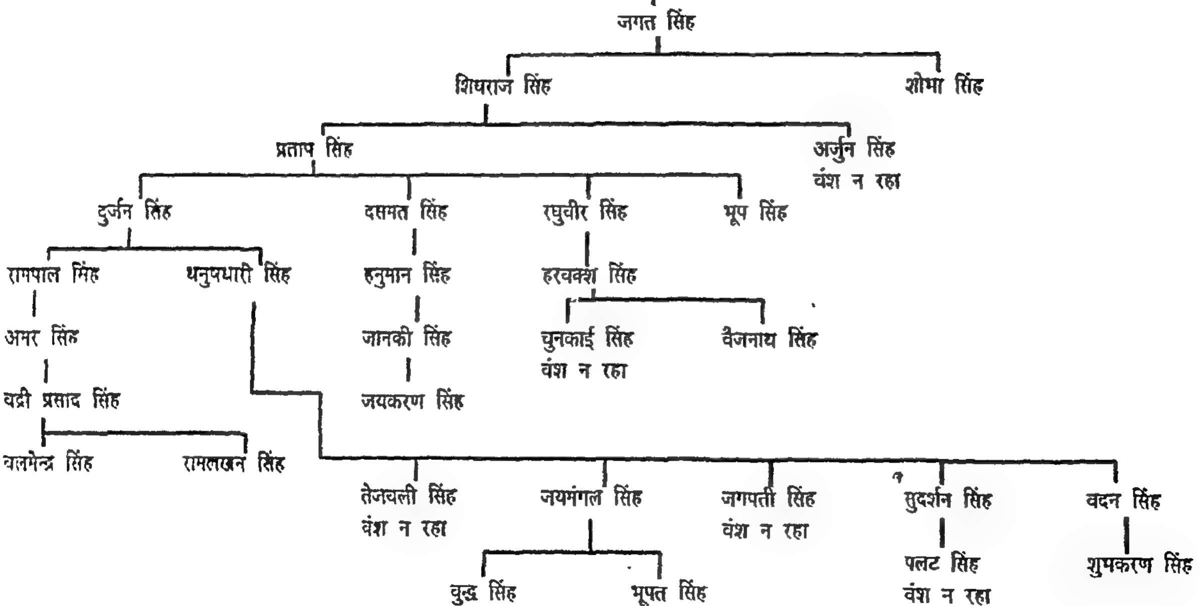


नोट - दौलत सिंह मौजा डगडीहा चले गये। वहां माफी पाये थे। उनकी सन्तान वहीं रहती हैं।

(सचरा नं० 44)

ग्राम - वरहा (इलाका लोहरौरा)

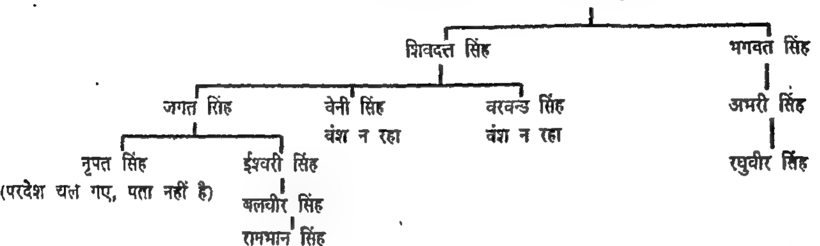
ठाकुर सा० लोहरौरा वोध सिंह के दूसरे पुत्र पूरन मल्ल सिंह जी को हिस्सा में ग्राम वरहा मिला।



(सचरा नं० 45)

ग्राम - चौयहा (काप उमरी) (इलाका लोहरौरा)

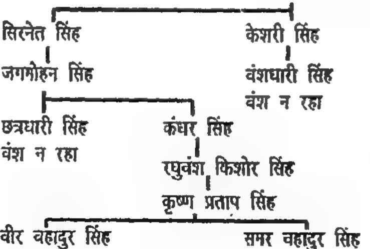
लोहरीरा के ठाकुर सा० अनूप सिंह जी के विश्राम सिंह दूसरें पुत्र थे। हिस्सा में ग्राम चौयहा पाया। इसके बाद ठाकुर सा० लोहरीरा ने मौजे को गहन रखकर इलाका में शामिल कर लिया। इनके वंशज खास लौहरौरा में है।



(सचरा नं० 46)

ग्राम - मुकुन्दपुर (इलाका लोहरौरा)

इलाका लोहरीरा के ठाकुर सा० मुकुन्द सिंह के दूसरे लड़के को ग्राम मुकुन्दपुर हिस्सा में मिला तथा ग्राम हरघुवा पाया।

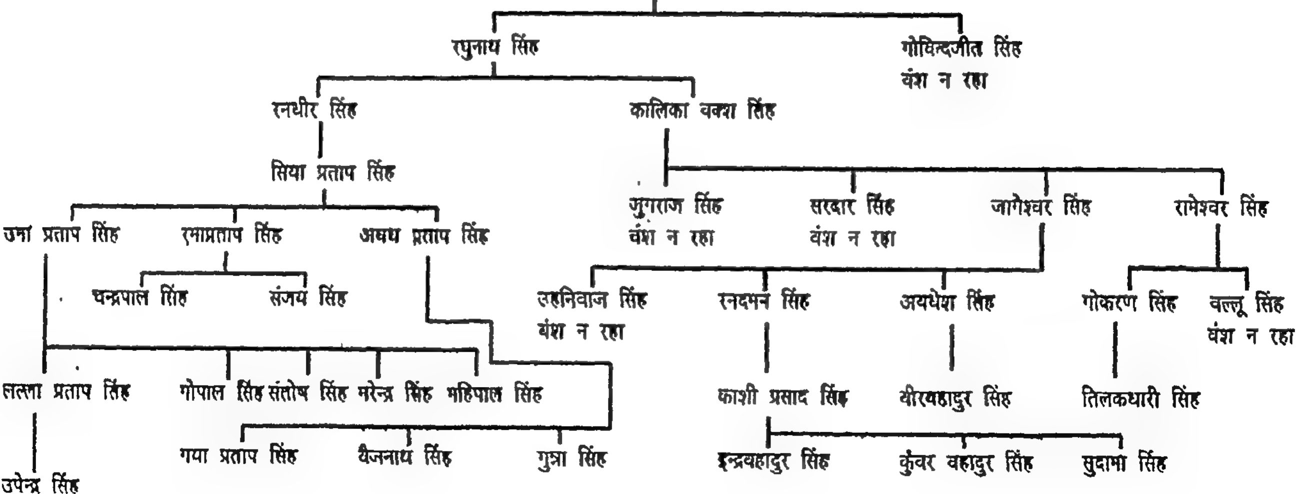


(वंशधारी सिंह जो लड़ाई नैकहाई (रीवा) में नायक से हुई थी। उस लड़ाई में खेत रहे जिससे राज्य की तरफ से ग्राम रागमा मुड़वार में दिया गया। जिसकी माल गुजारी करीव 500/- रुपयों की थी। अब करीव 1000/- रुपयों की है।

(सजरा नं० 47)

ग्राम - तिघरा (इलाका लोहरौरा) पट्टी क्रमांक 1

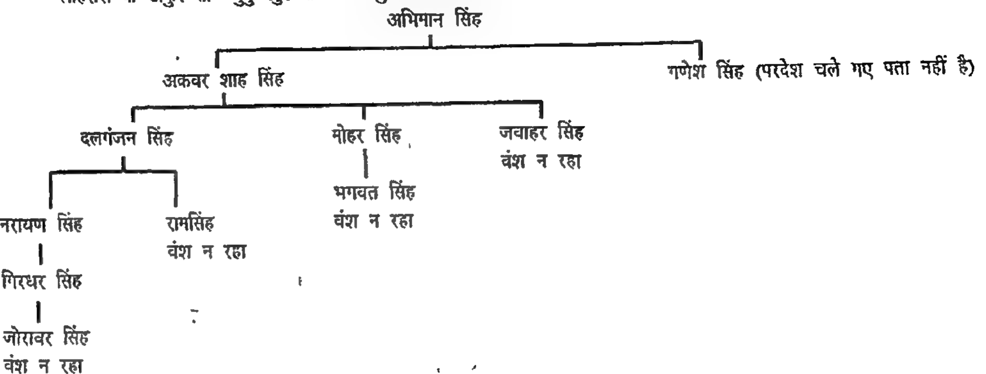
ठाकुर सा० लोहरौरा के चौथे पुत्र लाल रछपाल सिंह ग्राम तिघरा की एक पट्टी हिस्सा पाया।



(सचरा नं० 48)

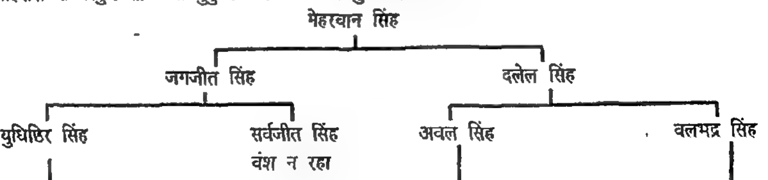
ग्राम - तिघरा (इलाका लोहरौरा) पट्टी क्रमांक 2

लोहरौरा के ठाकुर सा० मुकुन्दपुर के पाँचवें पुत्र अभिमान सिंह को ग्राम तिघरा की पट्टी हिस्सा में मिली।



ग्राम - तिघरा (इलाका लोहरौरा) पट्टी क्रमांक 3

लोहरौरा के ठाकुर सा० श्री मुकुन्द सिंह के छठवें पुत्र मेहरवान सिंह को ग्राम तिघरा की पट्टी मिली।



भाव सिंह
हरवंशराय सिंह — मोहन सिंह
दिलराज सिंह — नरहर सिंह — नरवदा सिंह
देवराज सिंह
वहादुर सिंह — शंख सिंह
कमलेन्द्र सिंह — जितेन्द्र सिंह — भूपेन्द्र सिंह
गजेन्द्र सिंह — गुलाब सिंह — विक्रम सिंह
दिलीप सिंह
विश्वनाथ सिंह
गंगाप्रसाद सिंह वंश न रहा

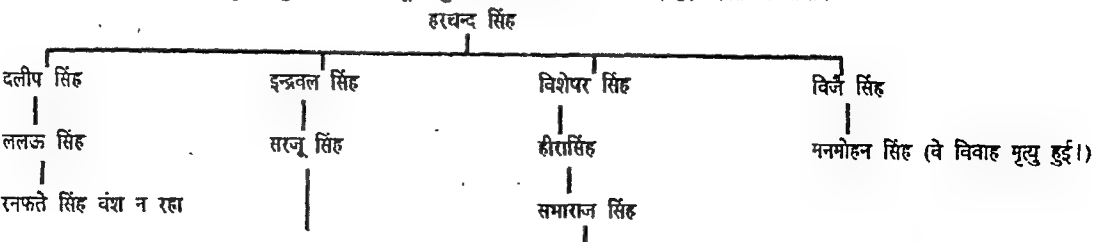
सूरत सिंह — भारत सिंह वंश न रहा — छोटा सिंह वंश न रहा
वधू सिंह
सूर्यवली (वावा हो गए)
लाल विहारी सिंह (6 वर्ष की उम्र में मर गए)
राजललन सिंह — राजकुमार सिंह — कुमरजी श्यामजी
धमेन्द्र सिंह

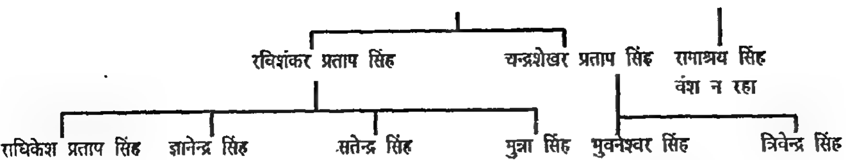
सुदान सिंह
वव्वू सिंह — दद्दी सिंह वंश न रहा
जयमान सिंह
गणेश सिंह
रामेन्द्र सिंह

(सचरा 49)

ग्राम - उमरी (इलाका लोहरौरा) पट्टी नं० 1

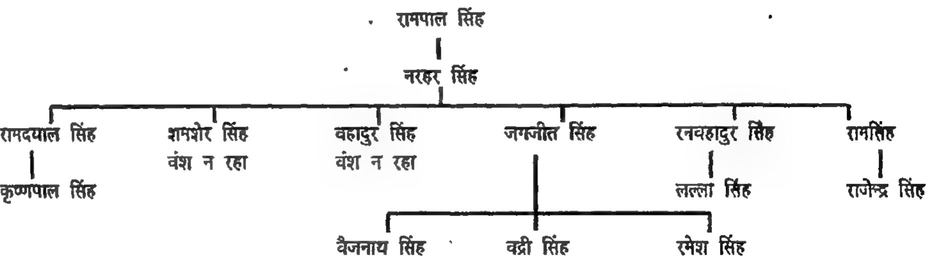
लोहरौरा के ठाकुर शत्रुजीत सिंह के दूसरे पुत्र हरचंद सिंह ग्राम उमरी (पट्टी) हिस्सा में पाया।





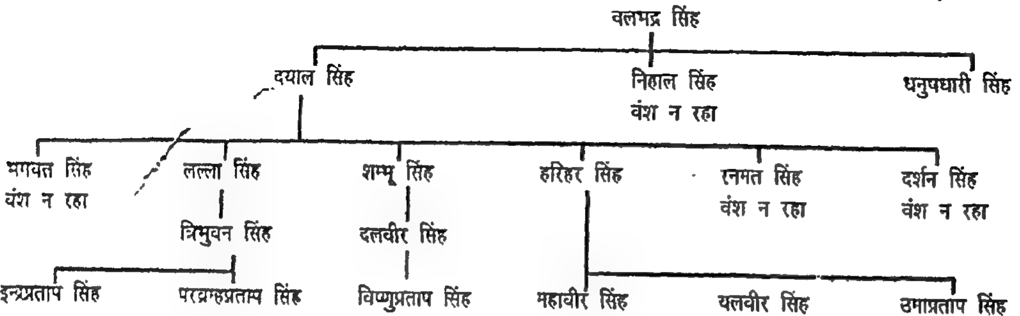
ग्राम - उमरी (इलाका लोहरीरा) पट्टी नं० 2

लोहरीरा के ठाकुर सा० शत्रुजीत सिंह के तीसरे पुत्र श्री अमान सिंह को ग्राम उमरी (पट्टी) हिस्सा में मिली।



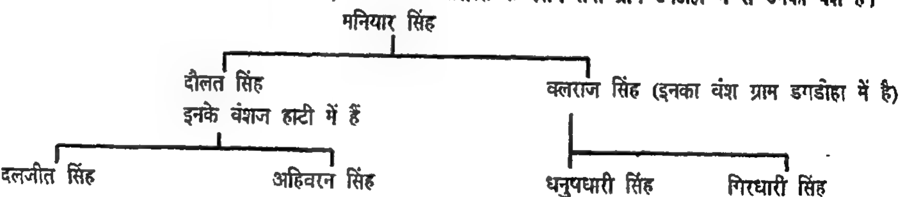
(सचरा नं० 50)

ग्राम सेन्दमानी (तहसील गोपद-बनास जिला सोधी) में लोहरौरा के परिहार के वंशज में से इनके वंशज है।



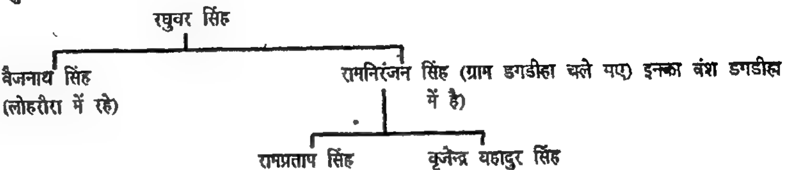
(सचरा नं० 51)

- हाटी (तहसील रघुराज नगर जिला सतना) लोहरौरा के परिहारों के वंशज तथा ग्राम डगडौहा में से उनका वंश है।



(सचरा नं० 52)

ग्राम - डगडीहा (तहसील रघुराज नगर जिला सतना) लोहरौरा के परिहारों के वंशज में से उनका वंश है।



(सचरा नं० 53)

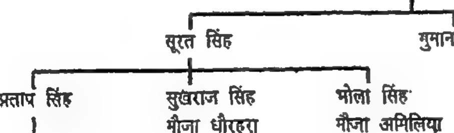
ग्राम - रगला (इलाका)

राजा साहब नरेन्द्र के चौथे पुत्र स्वरूप सिंह रगला लगकर पाया। मौजा रगला अमिलिया और लगरगंवा 500 सं० 1630 के साल पाया।

नोट - रगला के लल्ला सिंह जी के पास एक किताब है उसमें स्वरूप सिंह के बजाय भाउ सिंह लिखा है और सम्प्र सिंह के बजाय भोला सिंह अमिलिया लिखा है।

स्वरूप सिंह (पुत्र नरेन्द्र शाह)

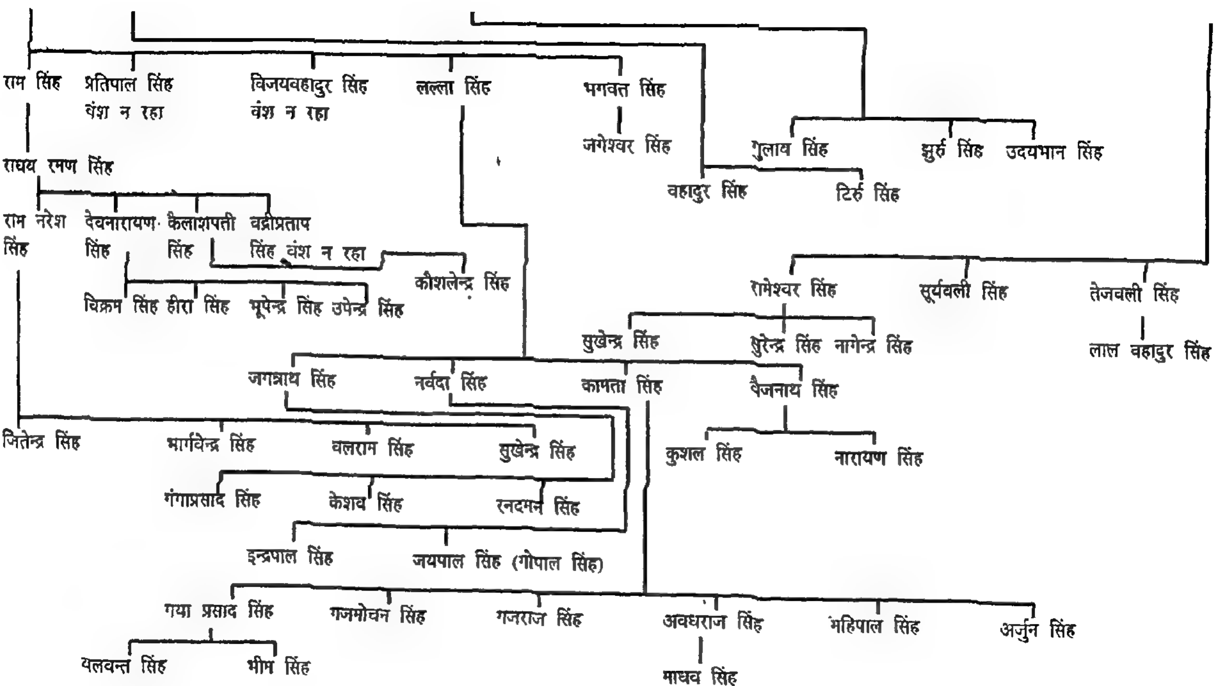
गुमान सिंह - लगरगंवा पाया सं० 1712 में



पृथ्वी सिंह



- नरेन्द्र सिंह
  - लक्ष्मण सिंह
    - जागेश्वर सिंह
  - समा सिंह वंश न रहा
  - सुग्रीव सिंह वंश न रहा
- रतन सिंह
  - गजाधर सिंह
    - साधु सिंह
      - ददोली सिंह
      - लल्ला सिंह
  - फदाली सिंह (वंश न रहा)
- अमरी सिंह
  - रघुवर सिंह
    - वन्धू सिंह
      - वंश वहादुर सिंह
        - वाँके सिंह
          - धर्मराज सिंह
          - वोधन सिंह
          - सुख निधान सिंह
    - अमरजीत सिंह वंश न रहा
    - धूमन सिंह
      - धनताली सिंह
        - राम प्रताप सिंह वंश न रहा
        - देवराज सिंह
          - वजरंग सिंह
          - रामलला सिंह
- केहरी सिंह
  - नारायण सिंह
    - गप्पू सिंह वंश न रहा
- वधू लाल सिंह
  - घली सिंह
    - जंगी सिंह वंश न रहा
- अजीत सिंह
  - युधिष्ठिर सिंह
    - शंकर सिंह
  - अनुरुद्ध सिंह
    - कंधर सिंह वंश न रहा
    - रनधीर सिंह
      - गिरवर सिंह
        - राम प्रताप सिंह
        - धीरव्रत सिंह
        - जगतवहादुर सिंह
      - गद्दू सिंह वंश न रहा
      - महाराज सिंह वंश न रहा
      - मनाऊ सिंह वंश न रहा
- भूपत सिंह वंश न रहा
- पदम सिंह वंश न रहा



राम सिंह
प्रतिपाल सिंह
वंश न रहा
विजयबहादुर सिंह
वंश न रहा
लल्ला सिंह
भगवत सिंह
जगेश्वर सिंह
गुलाब सिंह
झुर्ई सिंह
उदयभान सिंह
बहादुर सिंह
टिर्रु सिंह
राघव रमण सिंह
राम नरेश सिंह
देवनारायण सिंह
कैलाशपती सिंह
बद्रीप्रताप सिंह वंश न रहा
कौशलेन्द्र सिंह
विक्रम सिंह
हीरा सिंह
भूपेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
रामेश्वर सिंह
सूर्यबली सिंह
तेजबली सिंह
लाल बहादुर सिंह
सुखेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
नागेन्द्र सिंह
जगन्नाथ सिंह
नर्वदा सिंह
कामता सिंह
बैजनाथ सिंह
जितेन्द्र सिंह
मार्गविन्द्र सिंह
बलराम सिंह
सुखेन्द्र सिंह
कुशल सिंह
नारायण सिंह
गंगाप्रसाद सिंह
केशव सिंह
रनदमन सिंह
इन्द्रपाल सिंह
जयपाल सिंह (गोपाल सिंह)
गया प्रसाद सिंह
गजमोचन सिंह
गजराज सिंह
अवधराज सिंह
महिपाल सिंह
अर्जुन सिंह
बलवन्त सिंह
भीम सिंह
माधव सिंह

(सचरा नं० 54)

ग्राम - लगरगंवा (इलाका रगला)

ठाकुर सा० स्वरूप सिंह के दूसरे पुत्र गुमान सिंह को संवत 1712 में मौजा लगरगंवा जमा कमाल 500/- का मिला

- गुमान सिंह (पुत्र स्वरूप सिंह)
  - बुन्द सिंह
    - हिम्मत सिंह
      - नरहर सिंह
        - दुनान सिंह
          - गेंद सिंह
            - अकबर सिंह
              - वंशधारी सिंह
                - 1. कामता सिंह (continues beyond this page)
                - 2. काशीप्रसाद सिंह (अन्य पत्नी से)
                  - प्रद्युम्न सिंह
            - गिरवर सिंह वंश न रहा
          - चेत सिंह वंश न रहा
      - वरियार सिंह
        - भारत सिंह
          - जगतधारी सिंह
            - इन्द्रजीत सिंह
              - सियाप्रताप सिंह
                - जयराम सिंह
                - रघुनाथ सिंह
              - रामविशाल सिंह
                - विश्राम सिंह
                - शिवराम सिंह
                - शिवराज सिंह
                - विश्वराज सिंह
              - रामावतार सिंह
                - महेश प्रताप सिंह
                - श्याम सिंह
                - लक्ष्मण सिंह
                - भरत सिंह
        - विक्रम सिंह वंश न रहा
      - बख्तावर सिंह
        - नारायण सिंह
          - महावली सिंह
            - जगजीत सिंह (continues beyond this page)
            - चन्द्रभान सिंह
              - नर्वदा सिंह (continues beyond this page)
              - सीता प्रताप सिंह (continues beyond this page)
        - रामफल सिंह
          - बजरंग सिंह
            - जगन्नाथ सिंह
              - मनमोहन सिंह
              - रामाधार सिंह
      - किशुन सिंह (continues beyond this page)
    - मान सिंह वंश न रहा

भगत सिंह
भूपत सिंह
राजेन्द्र सिंह
ज्ञानेन्द्र सिंह
शैलेन्द्र सिंह
विश्वनाथ सिंह
जमुना सिंह
फतेमानसिंह
इन्द्रमानसिंह
कमलमानसिंह
व्रजमानसिंह
अवधशरण सिंह
सूर्यमान सिंह
वंशबहादुर सिंह
महेन्द्रसिंह
सुरेन्द्रसिंह
शिवेन्द्रसिंह
योगेन्द्रसिंह
विपेन्द्रसिंह
रणबहादुरसिंह
बलराम सिंह
सुमन्त सिंह
शिवदत्त सिंह
सहिजाद सिंह
बरमन सिंह
औसान सिंह वंश न रहा
रनजोर सिंह वंश न रहा
दलगंजन सिंह
कमोद सिंह वंश न रहा
ललई सिंह
सूर्यपाल सिंह
हरबक्श सिंह
रामबक्श सिंह
रामप्रताप सिंह
रामपाल सिंह
उमाप्रताप सिंह
रामसुजान सिंह वंश न रहा
अवधविहारी सिंह
गुलाब सिंह
कुंजविहारी सिंह
कृष्णपाल सिंह
शिवपाल सिंह
सहेन्द्र सिंह
रामगोपाल सिंह
ललन सिंह
शिवशंकरसिंह
दिनेशसिंह
अवधेशसिंह
राजेशसिंह
बृजेशसिंह
रानेशसिंह
रामनिवास सिंह
रामभवन सिंह
लखन सिंह
ब्रजमोहन सिंह
रमेशसिंह
महेशसिंह
सुरेशसिंह
सुरेन्द्रसिंह
महेन्द्रसिंह
लवकेशसिंह

(सचरा नं० 55)

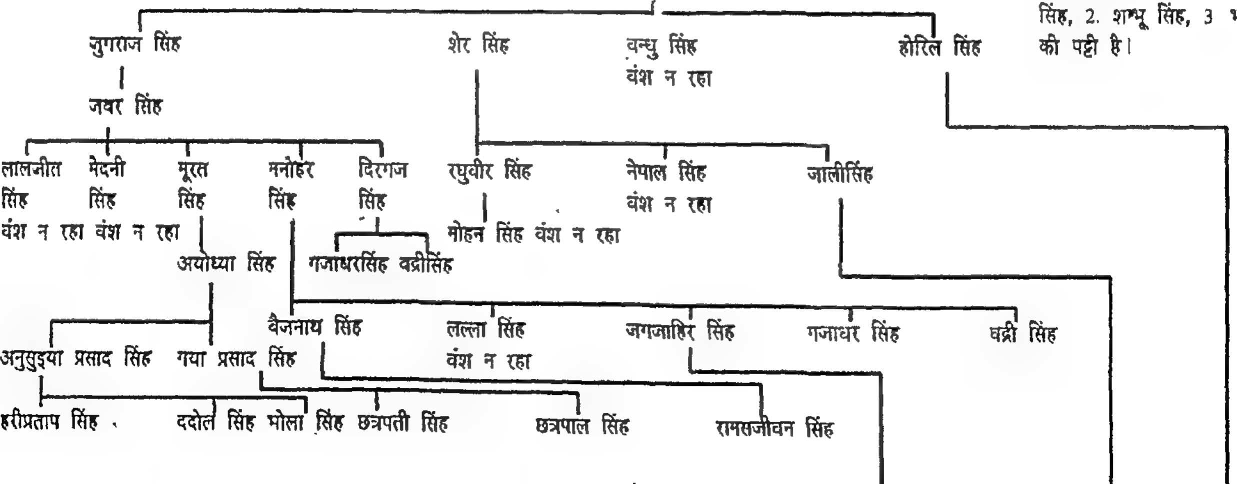
ग्राम - धौरहरा पट्टी नं० 1 (इलाका रगला)

श्री ठाकुर सा० सूरत सिंह जो के दूसरे लड़के सुखराज सिंह को मौजा धौरहरा मिला।

सुखराज सिंह (पुत्र ठा० सूरत सिंह इलाकेदार रगला)

मौजा धौरहरा मोहन सिंह की पाटी

इनको संतान मौजा धौरहरा के तीन पट्टियों में लिखी गई लेकिन यह विवरण नहीं मिलता है कि किस तरह से यह तीन पट्टी में सजरा लिखा गया। सुखराज सिंह के पहली की कौन संतान है और जेठी पट्टी कौन है तीनों पट्टियों के नाम 1 मोहन सिंह, 2. शम्भू सिंह, 3 भीषम सिंह की पट्टी है।



देवनारायण सिंह — गजराज सिंह — अमरजीत सिंह — सत्यनारायण सिंह

जयनारायण सिंह — नन्दू सिंह — दुरजन सिंह वंश न रहा — रामनारायण सिंह — सिरदार सिंह वंश न रहा

वांके सिंह वंश न रहा — गुरुवक्श सिंह वंश न रहा — गुरुशरण सिंह — छोटन सिंह वंश न रहा

जागेश्वर सिंह

समर वहादुर सिंह — लल्लू सिंह वंश न रहा — इन्द्रजीत सिंह — सर्वजीत सिंह

अवधेश सिंह

रामकृपाल सिंह वंश न रहा — रामप्रताप सिंह

हिन्दू सिंह — हिम्मत सिंह — गोपाल सिंह — शिवदयाल सिंह वंश न रहा

हनू सिंह वंश न रहा

हरमंगल सिंह — नृपति सिंह

जयमंगल सिंह — करमत सिंह वंश न रहा

सरजू सिंह

श्री सिंह — महादेव सिंह

लक्ष्मण सिंह — संकटमोचन सिंह वंश न रहा — चिन्तामन सिंह

राम लखन सिंह — भोला सिंह — तेजवहादुर सिंह — वृजनन्दन सिंह

तिलकधारी सिंह — अर्जुन सिंह — वीरभद्र सिंह — वृजेश सिंह

(सजरा नं० 56)

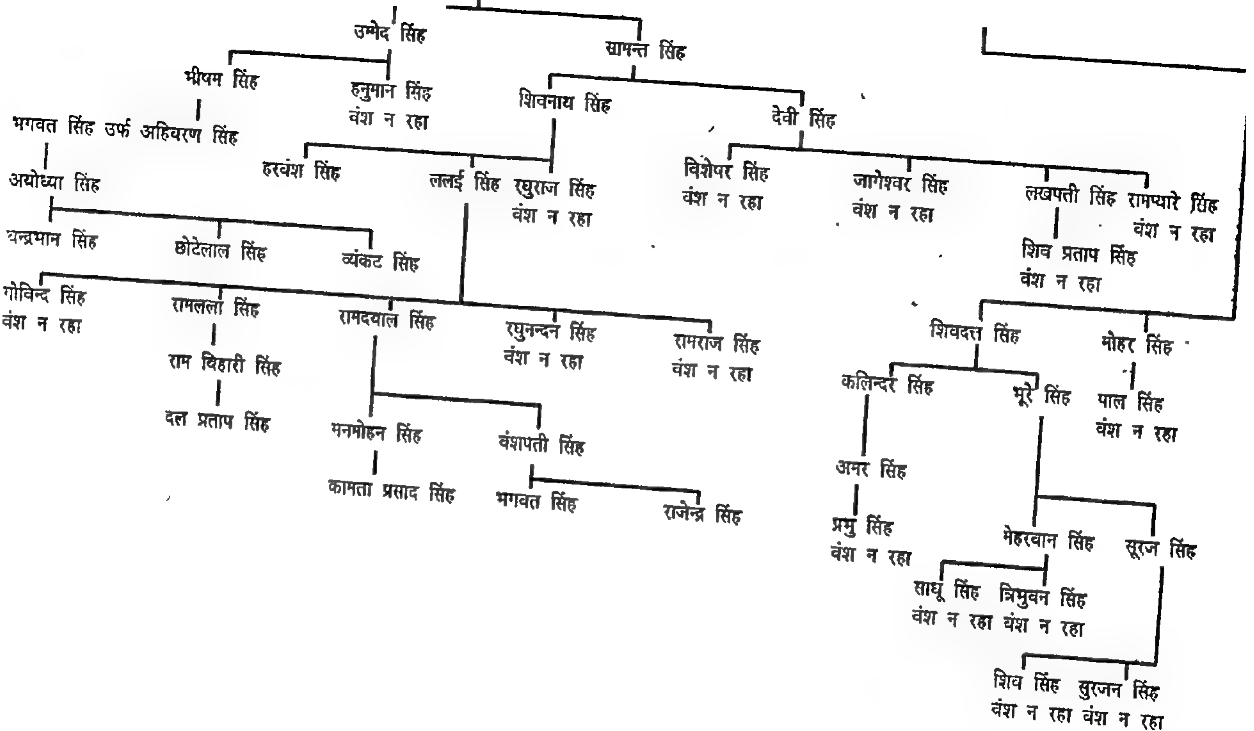
इलाका रगला
मौजा धौरहरा पाटी नं० 2
शम्भू सिंह

- नोखे सिंह
  - रघुनाथ सिंह
    - दलजीत सिंह
      - शंकर सिंह — वंश न रहा
      - हरवंश-सिंह — वंश न रहा
    - गिरवर सिंह
      - शम्भू सिंह
        - मना सिंह
          - राजबहादुर सिंह
          - राजवली सिंह
          - रामवली सिंह
        - लाल प्रताप सिंह
        - रामप्रताप सिंह
      - शिवप्रताप सिंह
        - अनुज प्रताप सिंह
          - रामदुलारे सिंह
          - कुंज विहारी सिंह
          - राम शिरोमणि सिंह
        - जयप्रताप सिंह
          - रामकृष्ण सिंह
    - सुमेर सिंह — वंश न रहा
    - बजरंग सिंह — वंश न रहा
- जगत सिंह
  - केशरी सिंह — वंश न रहा
  - विशुन सिंह — वंश न रहा
  - माधव सिंह — वंश न रहा

मौजा धौरहरा पाटी नं० 3 ता० 27 नवम्बर, 1858 ई० को हिस्सा पाया।
भीषम सिंह की पाटी
रुद्र सिंह

- बहादुर सिंह
- कमोद सिंह





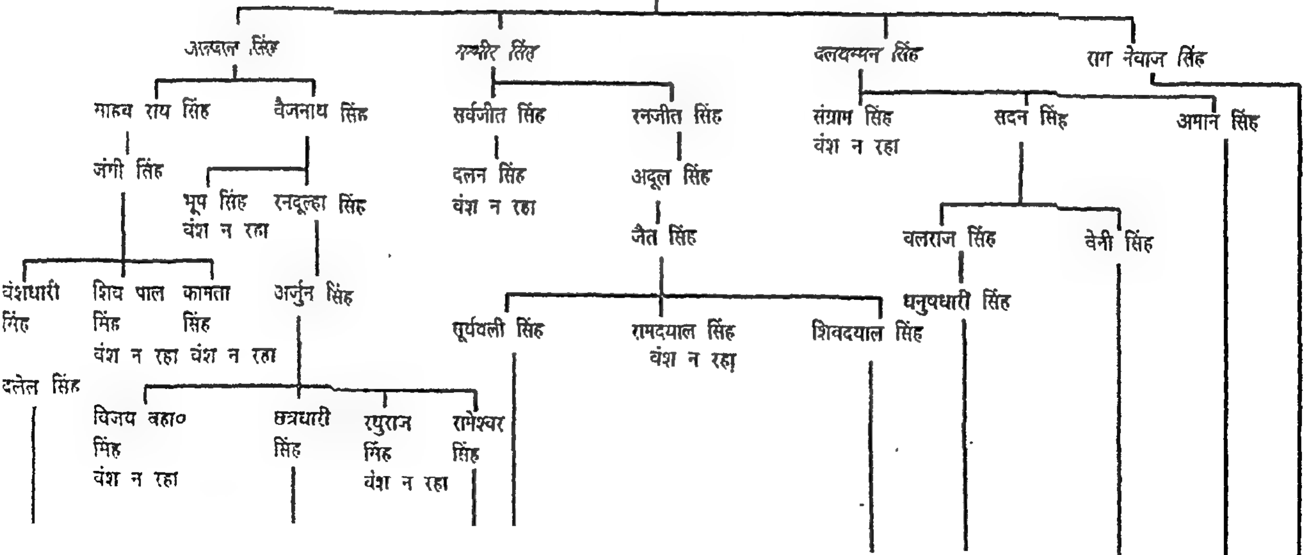
उम्मेद सिंह
सामन्त सिंह
भीषम सिंह
हनुमान सिंह
वंश न रहा
शिवनाथ सिंह
देवी सिंह
भगवत सिंह उर्फ अहिवरण सिंह
हरवंश सिंह
ललई सिंह
रघुराज सिंह
वंश न रहा
विशेपर सिंह
वंश न रहा
जागेश्वर सिंह
वंश न रहा
लखपती सिंह
रामप्यारे सिंह
वंश न रहा
अयोध्या सिंह
शिव प्रताप सिंह
वंश न रहा
चन्द्रभान सिंह
छोटेलाल सिंह
व्यंकट सिंह
गोविन्द सिंह
वंश न रहा
रामलला सिंह
रामदयाल सिंह
रघुनन्दन सिंह
वंश न रहा
रामराज सिंह
वंश न रहा
शिवदत्त सिंह
मोहर सिंह
राम विहारी सिंह
कलिन्दर सिंह
भूरे सिंह
पाल सिंह
वंश न रहा
दल प्रताप सिंह
मनमोहन सिंह
वंशपती सिंह
अमर सिंह
कामता प्रसाद सिंह
भगवत सिंह
राजेन्द्र सिंह
प्रभु सिंह
वंश न रहा
मेहरवान सिंह
सूरज सिंह
साधू सिंह
वंश न रहा
त्रिभुवन सिंह
वंश न रहा
शिव सिंह
वंश न रहा
सुरजन सिंह
वंश न रहा

(सजरा नं० 57)

ग्राम - अमिलिया (इलाका रगला)।
ठाकुर सूरत सिंह के तीसरे पुत्र भोला सिंह को मौजा अमिलिया मिला।
भोला सिंह (पुत्र सूरतसिंह इलाकेदार रगला)

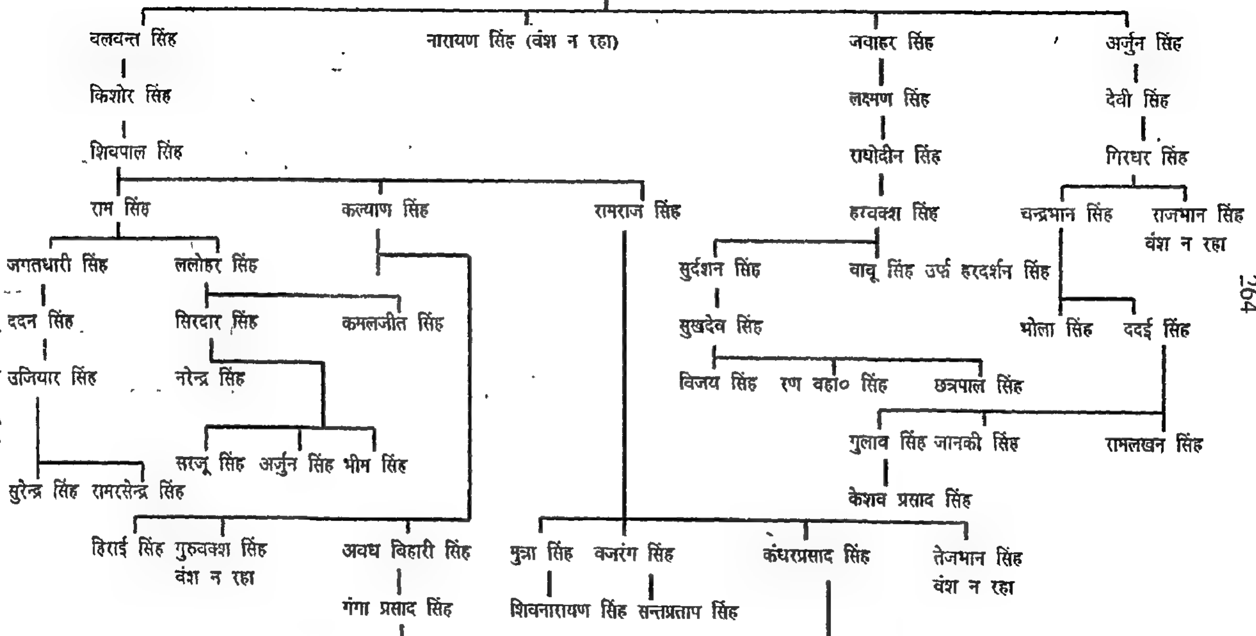
अधार सिंह

सभासिंह



ग्राम - खमरेही (इलाका भटनवारा) पट्टी 2

श्री ठा० रनजीत सिंह जी भटनवारा के पाँचवें पुत्र हनुमान सिंह जमा कमाल 125/- की खमरेही पाया।



264

बजरंग सिंह हनुमान सिंह जवाहर सिंह सुखदेव सिंह अंगद सिंह नृपति सिंह वंश न रहा

नरशंकर सिंह चन्द्रभान सिंह राममनोहर सिंह वंश न रहा मना सिंह गुलाब सिंह शुभकरण सिंह लालमन सिंह

शिवबहादुर सिंह राम बहादुर सिंह उदय प्रताप सिंह इन्द्रपाल सिंह जगतबहादुर सिंह

उमाप्रताप सिंह जगत बहा० सिंह तेज बहा० सिंह रन बहा० सिंह राकेश दिनेश सिंह धीरेश सिंह सुधेश सिंह अनुजप्रताप सिंह इन्द्रजीत सिंह

यशवन्त सिंह जगन्नाथ सिंह सुरेश प्र० सिंह जगदीश सिंह रविराज सिंह विजय सिंह वीर बहादुर सिंह

जयपाल सिंह नेपाल सिंह महिपाल सिंह वंश न रहा कामता सिंह सुरेन्द्र सिंह देवनारायण सिंह जगमोहन सिंह विश्राम सिंह

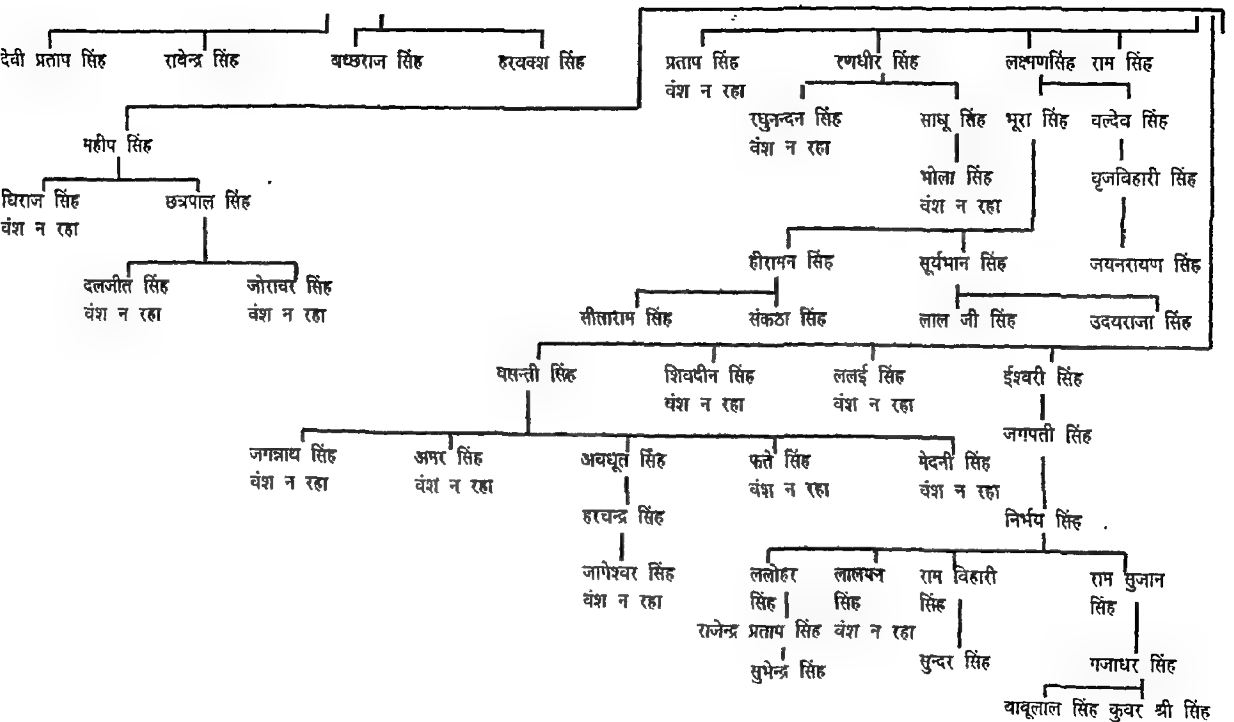
अजय सिंह अभय सिंह राहुल सिंह पंकज सिंह पियूष सिंह छोटू सिंह

दिलराज सिंह कुंजबिहारी सिंह लेखराज सिंह रामनिरंजन सिंह

अमर सिंह समर सिंह रमेश सिंह दीपेन्द्र सिंह ज्ञानेन्द्र सिंह

कमलभान सिंह

बलवन्त सिंह वीरेन्द्र प्र० सिंह भूपेन्द्र सिंह योगेन्द्र सिंह तिलकधारी सिंह समरजीत सिंह ददन सिंह बृजेश सिंह वीरेश सिंह


देवी प्रताप सिंह
राघवेन्द्र सिंह
वच्छराज सिंह
हरवंश सिंह
प्रताप सिंह
वंश न रहा
रणधीर सिंह
लक्ष्मणसिंह
राम सिंह
महीप सिंह
रघुनन्दन सिंह
वंश न रहा
साधू सिंह
भूरा सिंह
बल्देव सिंह
धिराज सिंह
वंश न रहा
छत्रपाल सिंह
भोला सिंह
वंश न रहा
बृजविहारी सिंह
हीरामन सिंह
सूर्यभान सिंह
जयनरायण सिंह
दलजीत सिंह
वंश न रहा
जोरावर सिंह
वंश न रहा
सीताराम सिंह
संकठा सिंह
लाल जी सिंह
उदयराजा सिंह
बसन्ती सिंह
शिवदीन सिंह
वंश न रहा
ललई सिंह
वंश न रहा
ईश्वरी सिंह
जगपती सिंह
जगन्नाथ सिंह
वंश न रहा
अमर सिंह
वंश न रहा
अवधूत सिंह
फते सिंह
वंश न रहा
मेदनी सिंह
वंश न रहा
हरचन्द्र सिंह
निर्भय सिंह
जागेश्वर सिंह
वंश न रहा
ललोहर सिंह
लालमन सिंह
राम विहारी सिंह
राम सुजान सिंह
राजेन्द्र प्रताप सिंह
वंश न रहा
सुभेन्द्र सिंह
सुन्दर सिंह
गजाधर सिंह
बाबूलाल सिंह
कुवर श्री सिंह

(सजरा नं० 58)

उरदना

राजा नरेन्द्रशाह के पुत्र मानसिंह को उरदना की जागीर सं० 1676 में प्राप्त हुई।

मान शाह को नौ गांव 1. उरदना, 2. उरदनी, 3. सतरी, 4 पतरी, 5. वरैठिया, 6 इटमा, 7 खरौड़ा, 8. वसहा और, 9. पटिहट मिले थे, जो उरदना वालों के वागीपन करने की वजह से सं० 1680 विक्रमी श्रावण वदी 3 को हिस्सा जप्त किया गया इसके वाद उनके लड़का सिथंजू को भादों शुदी 5 गुरौ संवत् 1696 विक्रमी को उनके लड़का सिंहजू को उरदना, ग्राम उरदनी, खड़ीरा तथा ग्राम मतरी हिस्से में दिया गया।

ग्राम उरदनी मलइंया पांडे जो उरदना वालों के दीवान थे उनको दे दिया गया।

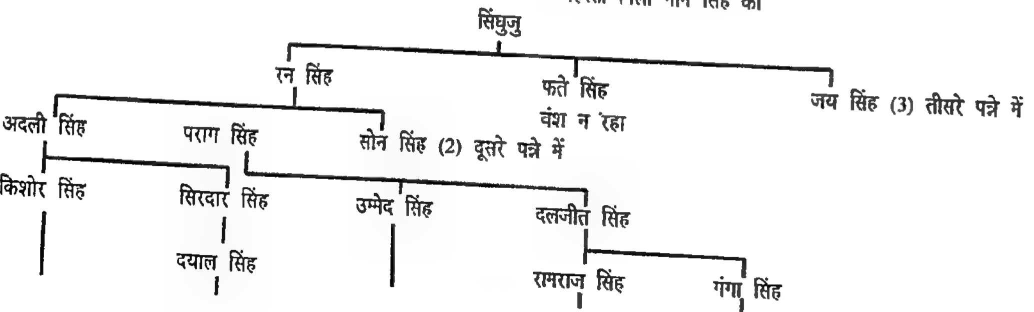
ग्राम मतरो सिंहजु के लड़के जय सिंह को मिला जो वगावत करने पर जव्त हुआ।

ग्राम खड़ौरा महाराज वलभद्र सिंह के समय में जप्त हुआ।

सजरा में मान शाह लिखा हुआ है और नागीद राज्य के सजरे में राजा सा० नरेन्द्र शाह के पांचवें पुत्र भान सिंह को उरदना ग्राम पाया लिखा जाता है। मेरे विचार से भौनशाह का दूसरा नाम भानु सिंह हैं जो कि सिंहजु के पिता हैं। उन्हीं को (भानु सिंह) ग्राम उरदना इलाका पाया माना जाना चाहिए। लौहरौरा के सजरा में जो राजा साग नरेन्द्रशाह के तीसरे पुत्र भाव सिंह को करही इलाका मिला था। उनके तीसरे लड़के को उरदना पाया जाना लिखा है वह सही नहीं है वल्कि राजा सा० नरेन्द्र शाह जू देव के पांचवे पुत्र भान सिंह को उरदना इलाका पाया जाना उचित होगा।

राजा सा० नरेन्द्र शाह के पांचवें पुत्र श्री भान सिंह को उरदना इलाका मिला।

मान सिंह (कहीं पर भौनु शाह लिखा हुआ है) वि० सं० 1676 वि० अषाढ़, सुदी 5 रविवार
हिस्सा मिला मान सिंह को



जवाहर सिंह

वच्छ राज सिंह → इनके वंश होना उरदना वालों ने नहीं लिखाया परन्तु मुहाफिजखाना की किताव में वच्छ सिंह के पुत्र मरे सिंह व मूरे सिंह के पुत्र तिलकधारी सिंह लिखा है इससे मालूम होता है कि तिलकधारी सिंह के संतान न हुई या वाहर निकल गए।

नरेन्द्र सिंह मदन सिंह कपिलेन्द्र सिंह

विष्णु प्रताप सिंह देवेन्द्र सिंह वृजेन्द्र सिंह

दुर्गा सिंह वंश न रहा, सैना सिंह

महराज सिंह, ईश्वरी सिंह वंश न रहा, सनमान सिंह वंश न रहा

अमान सिंह (राजा सा० नागीद तथा सुरदहा के इलाकेदार सा० के वीच में जो झगड़ा सं० 1898 में हुआ में खेत रहे।)

कमोद सिंह

भूपाल सिंह

जगवंधन सिंह

मेघराज सिंह, अमरजीत सिंह, हिरदय सिंह

जनार्दन सिंह, रामप्रताप सिंह, जयमंगल सिंह

शंकर सिंह

राघोभान सिंह

इन्द्रभान सिंह

ललई सिंह

गणेश सिंह

फते सिंह, वीरवल सिंह

गोपाल सिंह वंश न रहा, रामेश्वर सिंह

संपत कुमार सिंह, देवशरण सिंह, गुरुशरण सिंह

यह मौजा वड़खेरा तहसील अमरपाटन में राज्य रींवा चले गए।

अव उरदना में आकर अपनी पट्टी में काविज हैं।

कृष्णवक्श सिंह वंश न रहा, गजाधर सिंह

वासुदेव सिंह

भारत सिंह, गोविन्द सिंह

अभय राज सिंह

रूद्रप्रताप सिंह, शिववक्श सिंह, नारायण सिंह वंश न रहा

अरुण सिंह

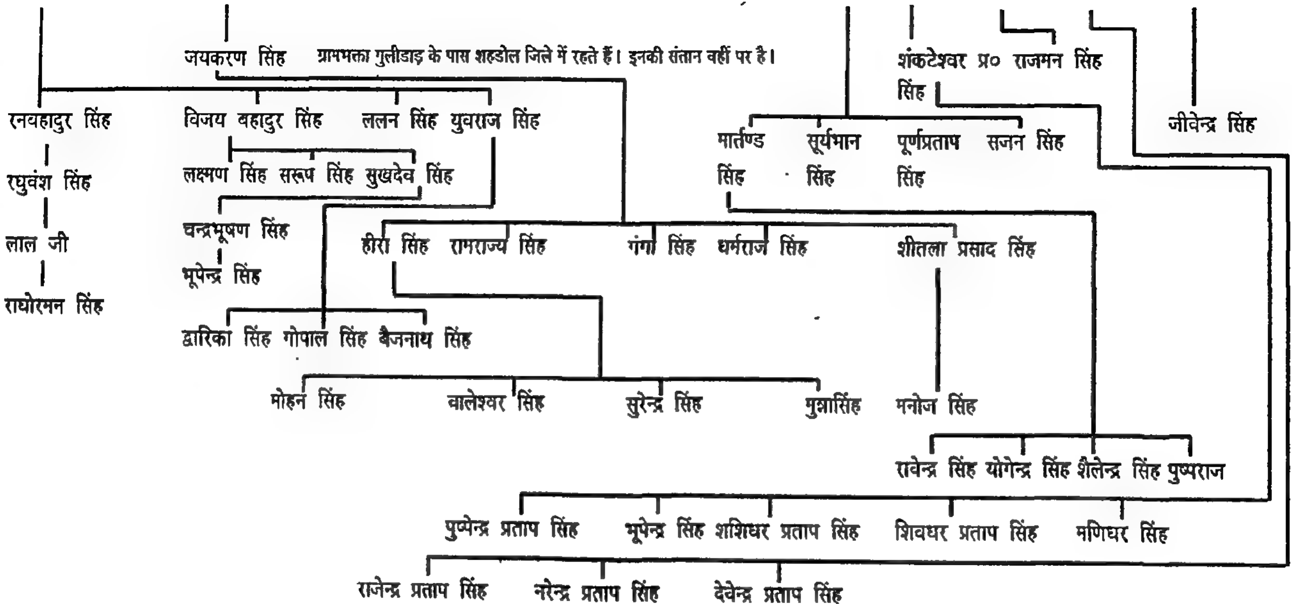
निखण्ड प्रताप सिंह

अतीत सिंह

कंधर सिंह, राम सिंह वंश न रहा, धनुपधारी सिंह, गुलाव सिंह वंश न रहा

मनोहर सिंह, साधु सिंह वंश न रहा

सर्वजीत सिंह, रनजीत सिंह, अर्जुन सिंह, भोज राज सिंह



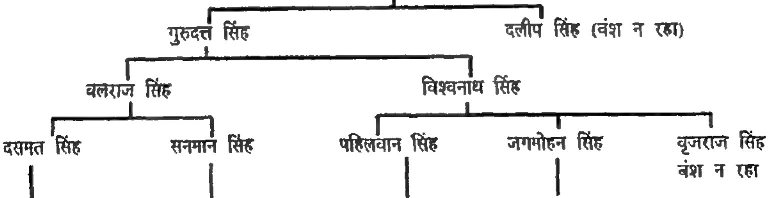
जयकरण सिंह
ग्रामभक्ता गुलीडाड़ के पास शहडोल जिले में रहते हैं। इनकी संतान वहीं पर है।
शंकटेश्वर प्र० राजमन सिंह
सिंह
जीवेन्द्र सिंह
रनवहादुर सिंह
विजय वहादुर सिंह
ललन सिंह
युवराज सिंह
मार्तण्ड सिंह
सूर्यभान सिंह
पूर्णप्रताप सिंह
सजन सिंह
रघुवंश सिंह
लाल जी
रायोरमन सिंह
लक्ष्मण सिंह
सरूप सिंह
सुखदेव सिंह
चन्द्रभूषण सिंह
भूपेन्द्र सिंह
हीरा सिंह
रामराज्य सिंह
गंगा सिंह
धर्मराज सिंह
शीतला प्रसाद सिंह
द्वारिका सिंह
गोपाल सिंह
बैजनाथ सिंह
मोहन सिंह
वालेश्वर सिंह
सुरेन्द्र सिंह
मुन्नासिंह
मनोज सिंह
रावेन्द्र सिंह
योगेन्द्र सिंह
शैलेन्द्र सिंह
पुष्पराज
पुष्पेन्द्र प्रताप सिंह
भूपेन्द्र सिंह
शशिधर प्रताप सिंह
शिवधर प्रताप सिंह
मणिधर सिंह
राजेन्द्र प्रताप सिंह
नरेन्द्र प्रताप सिंह
देवेन्द्र प्रताप सिंह

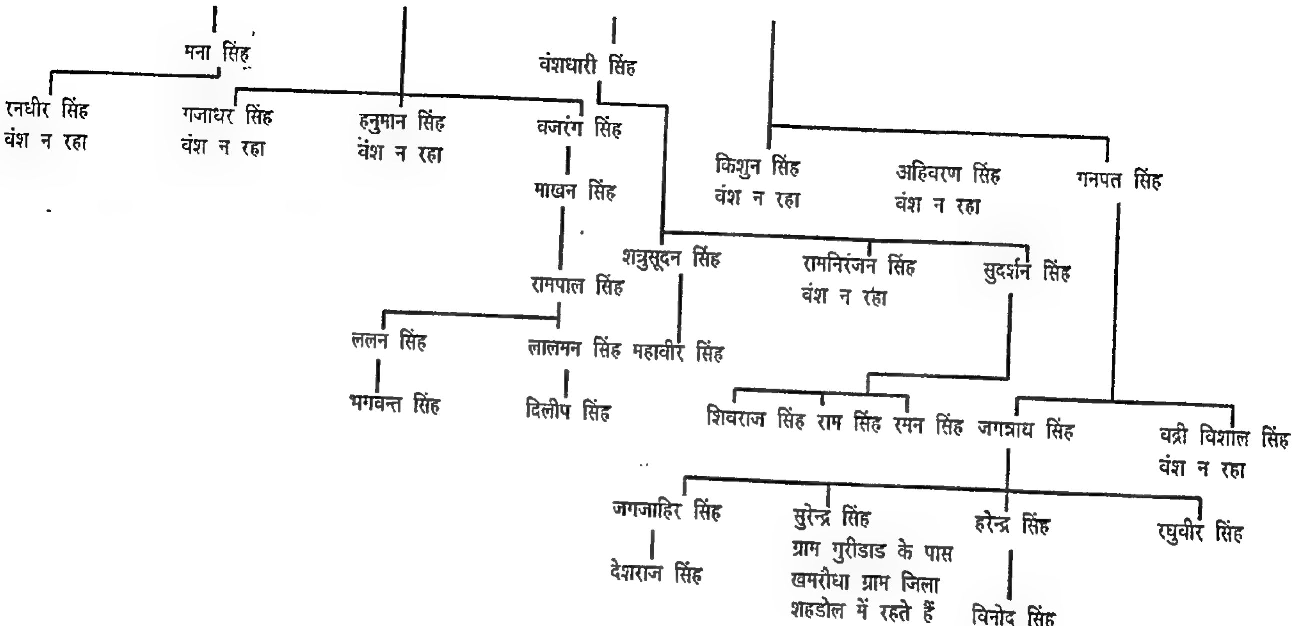
ग्राम - अवरना (इलाका करही)

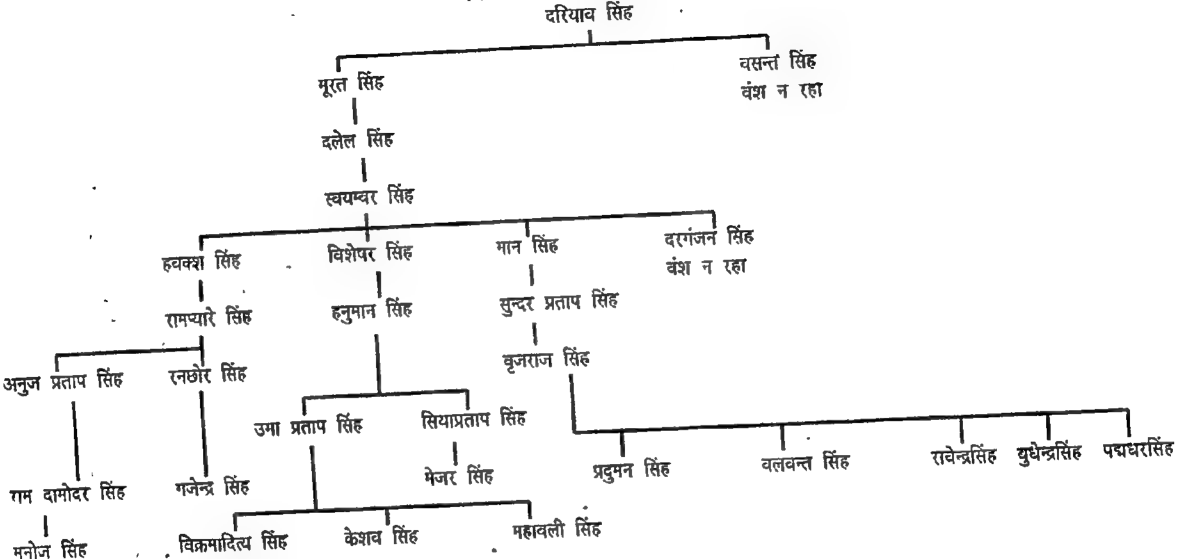
पहिले पन्ने का शेष : -

(1) दलजीत सिंह पुत्र पराग सिंह

- वलभद्र सिंह — वंश न रहा
- माधव सिंह — वंश न रहा
- गनपत सिंह — वंश न रहा
- मानिक सिंह — वंश न रहा
- मनवोध सिंह — वंश न रहा
- हीरा सिंह — वंश न रहा
- गणेश सिंह
  - सुमंगल सिंह — वंश न रहा
  - इन्द्रपाल सिंह
    - चन्द पाल सिंह
      - सूर्यप्रताप सिंह — वंश न रहा
      - सूर्यभान् सिंह — वंश न रहा
  - जयपाल सिंह
    - लक्ष्मण सिंह
      - धुरपत सिंह — वंश न रहा
    - दर्शन सिंह
      - सूर्यवली सिंह — वंश न रहा
      - तेजवली सिंह
        - रामाधार सिंह
        - अंविका प्रताप सिंह



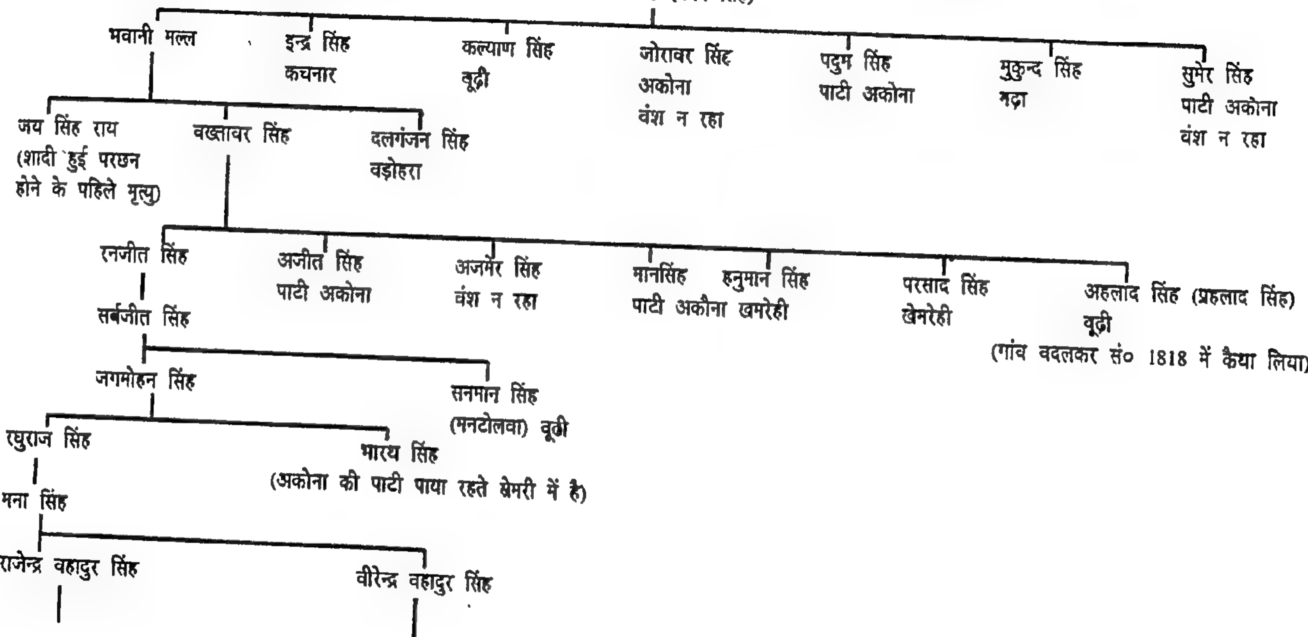

मना सिंह
रनधीर सिंह
वंश न रहा
गजाधर सिंह
वंश न रहा
हनुमान सिंह
वंश न रहा
वजरंग सिंह
माखन सिंह
रामपाल सिंह
ललन सिंह
भगवन्त सिंह
लालमन सिंह
दिलीप सिंह
वंशधारी सिंह
शत्रुसूदन सिंह
महावीर सिंह
रामनिरंजन सिंह
वंश न रहा
सुदर्शन सिंह
शिवराज सिंह
राम सिंह
रमन सिंह
किशुन सिंह
वंश न रहा
अहिवरण सिंह
वंश न रहा
गनपत सिंह
जगन्नाथ सिंह
वद्री विशाल सिंह
वंश न रहा
जगजाहिर सिंह
देशराज सिंह
सुरेन्द्र सिंह
ग्राम गुरीडाड के पास
खमरौधा ग्राम जिला
शहडोल में रहते हैं
हरेन्द्र सिंह
विनोद सिंह
रघुवीर सिंह


ग्राम - उदरना (इलाका करही)
(3) जयसिंह राय पुत्र श्री सिंह जी
दरियाव सिंह
मूरत सिंह
वसन्त सिंह
वंश न रहा
दलेल सिंह
स्वयम्वर सिंह
हवक्श सिंह
विशेषर सिंह
मान सिंह
दरगंजन सिंह
वंश न रहा
रामप्यारे सिंह
हनुमान सिंह
सुन्दर प्रताप सिंह
वृजराज सिंह
अनुज प्रताप सिंह
रनछोर सिंह
उमा प्रताप सिंह
सियाप्रताप सिंह
प्रदुमन सिंह
वलवन्त सिंह
रावेन्द्रसिंह
बुधेन्द्रसिंह
पद्मधरसिंह
मेजर सिंह
राम दामोदर सिंह
गजेन्द्र सिंह
मनोज सिंह
विक्रमादित्य सिंह
केशव सिंह
महावली सिंह

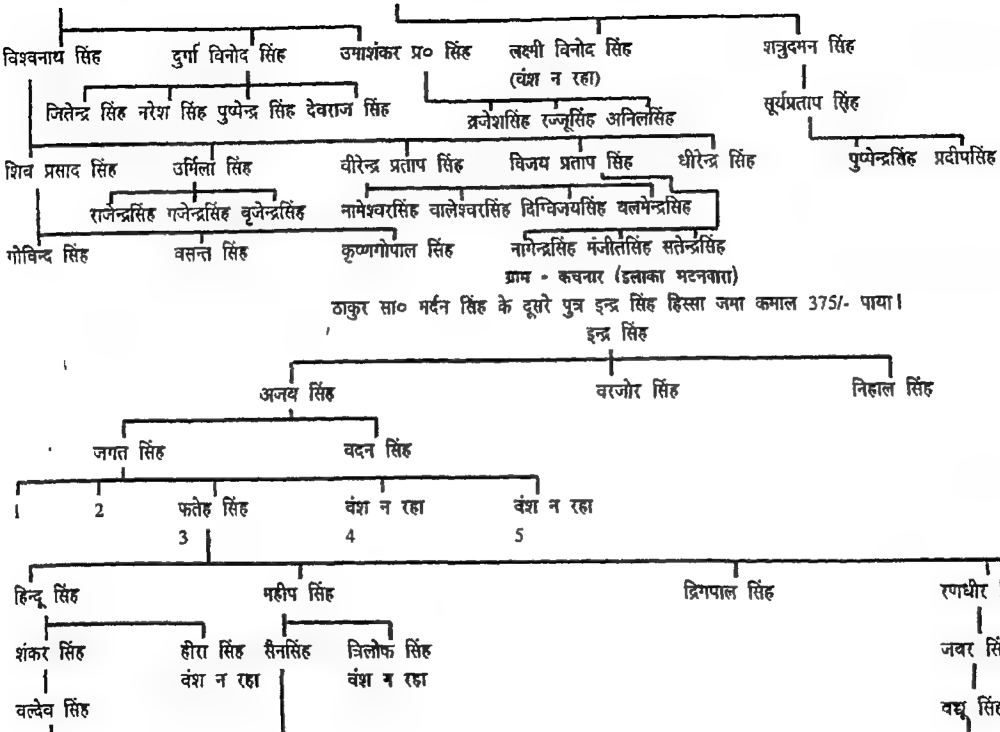
(सचरा नं० 59)

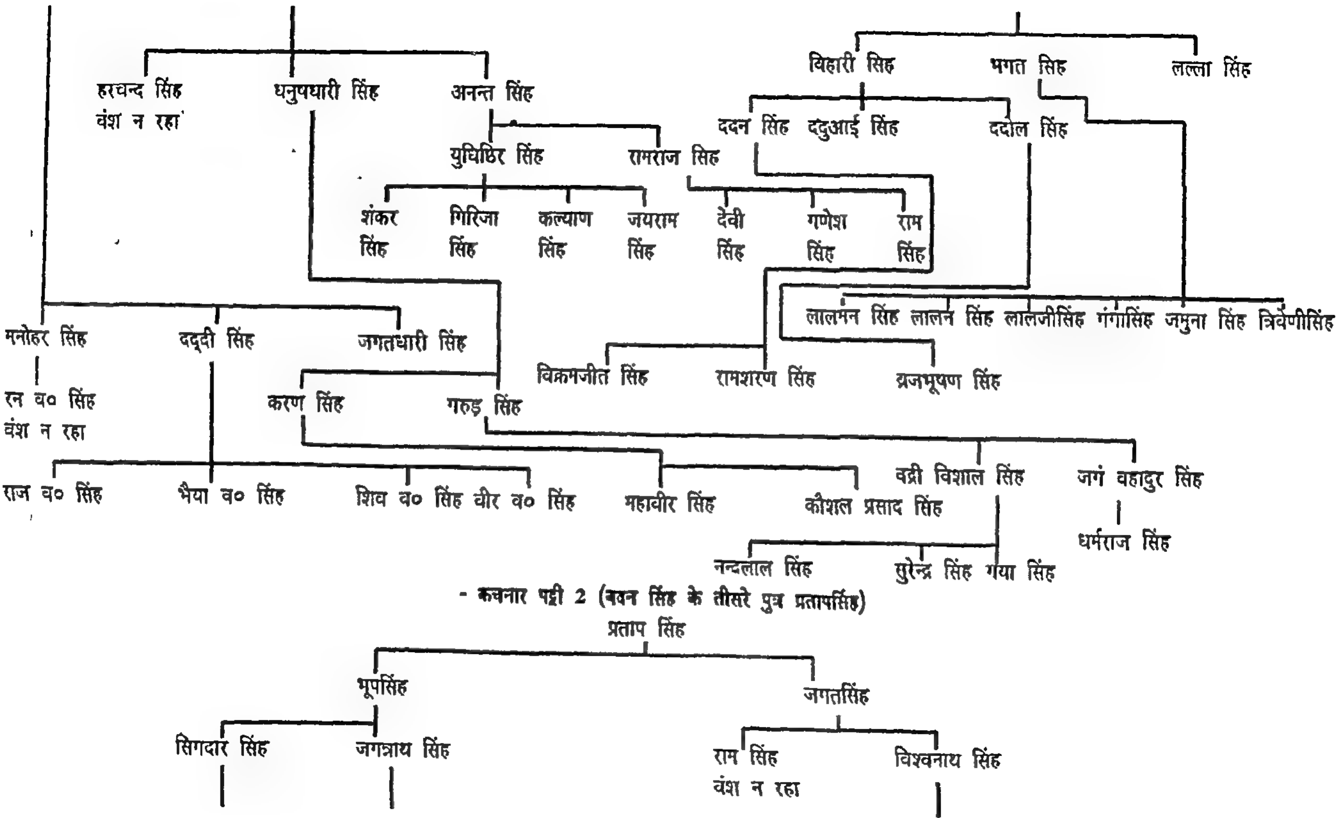
भटनवारा

श्री राजा सा० भारत शाह के छोटेपुत्र मरदनशाह थे इनको इलाका भटनवारा जमा कमाल 2500/- सालाना आमदनी सं० 1684 वि० यानी सन् 1627 में हिस्सा पाया। मौजा कचनार, बूढ़ी, भटनवारा, खमरेही, वड़ोहरा, मढ़ा अकोना, तीन पाटी कैया, सेमरी, अगहार, सहिजना इलाका के अन्तर्गत गांव थे।



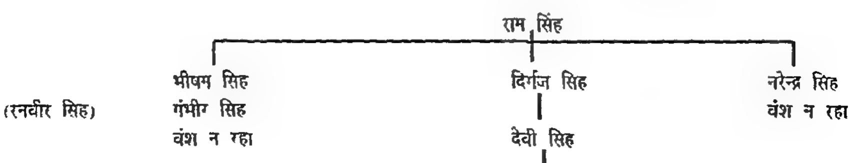
(सचरा नं० 60)


विश्वनाथ सिंह
दुर्गा विनोद सिंह
उमाशंकर प्र० सिंह
लक्ष्मी विनोद सिंह
(वंश न रहा)
शत्रुदमन सिंह
जितेन्द्र सिंह नरेश सिंह पुष्पेन्द्र सिंह देवराज सिंह
ब्रजेशसिंह रज्जूसिंह अनिलसिंह
सूर्यप्रताप सिंह
शिव प्रसाद सिंह
उर्मिला सिंह
वीरेन्द्र प्रताप सिंह
विजय प्रताप सिंह
धीरेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्रसिंह प्रदीपसिंह
राजेन्द्रसिंह गजेन्द्रसिंह बृजेन्द्रसिंह
नागेश्वरसिंह वालेश्वरसिंह दिग्विजयसिंह बलभेन्द्रसिंह
गोविन्द सिंह
वसन्त सिंह
कृष्णगोपाल सिंह
नागेन्द्रसिंह मंजीतसिंह सतेन्द्रसिंह
ग्राम - कचनार (इलाका भटनवारा)
ठाकुर सा० मर्दन सिंह के दूसरे पुत्र इन्द्र सिंह हिस्सा जमा कमाल 375/- पाया।
इन्द्र सिंह
अजय सिंह
बरजोर सिंह
निहाल सिंह
जगत सिंह
वदन सिंह
1
2
फतेह सिंह
3
वंश न रहा
4
वंश न रहा
5
हिन्दू सिंह
महीप सिंह
द्रिगपाल सिंह
रणधीर सिंह
छत्रपाल सिंह
शंकर सिंह
हीरा सिंह
वंश न रहा
सैनसिंह
त्रिलोक सिंह
वंश न रहा
जवर सिंह
वल्देव सिंह
वघु सिंह

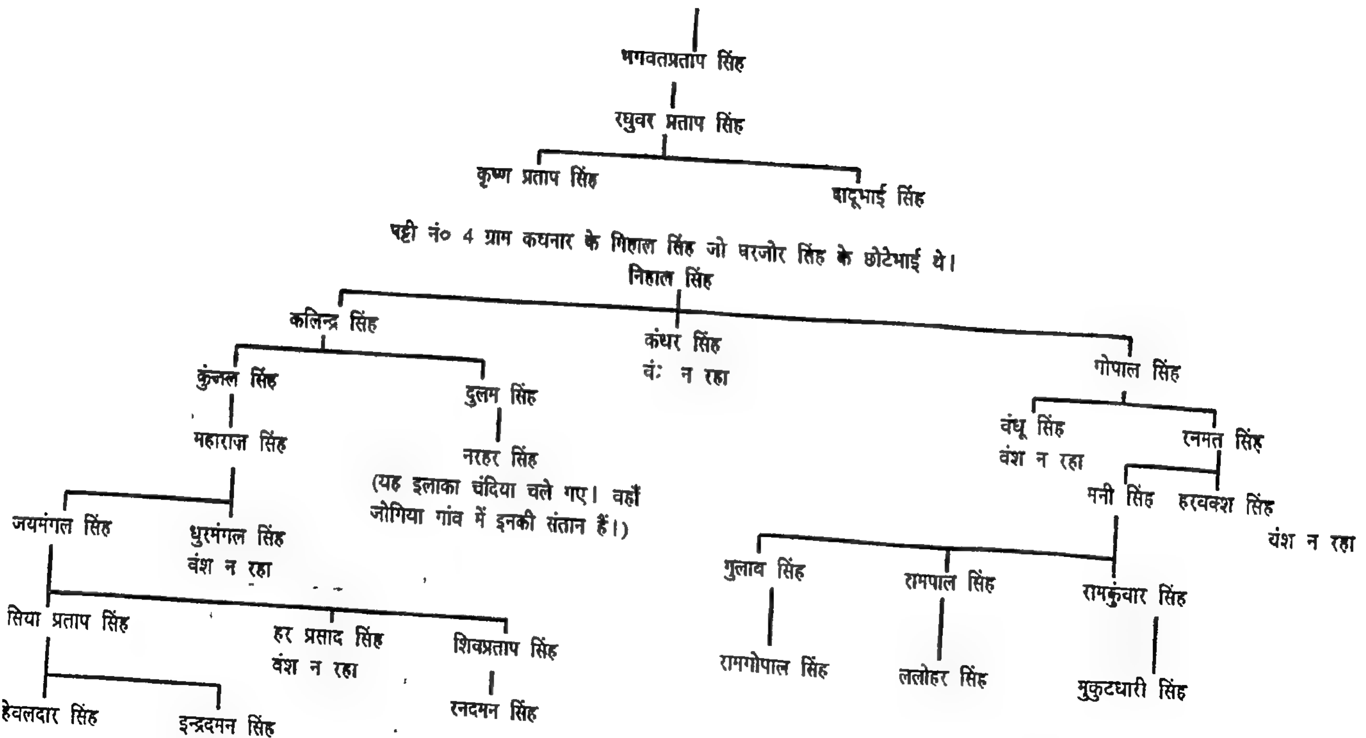

विहारी सिंह
भगत सिंह
लल्ला सिंह
हरचन्द सिंह
वंश न रहा
धनुषधारी सिंह
अनन्त सिंह
ददन सिंह
ददुआई सिंह
ददोल सिंह
युधिष्ठिर सिंह
रामराज सिंह
शंकर सिंह
गिरिजा सिंह
कल्याण सिंह
जयराम सिंह
देवी सिंह
गणेश सिंह
राम सिंह
लालमन सिंह
लालन सिंह
लालजीसिंह
गंगासिंह
जमुना सिंह
त्रिवेणीसिंह
मनोहर सिंह
ददृदी सिंह
जगतधारी सिंह
विक्रमजीत सिंह
रामशरण सिंह
ब्रजभूषण सिंह
रन व० सिंह
वंश न रहा
करण सिंह
गरुड़ सिंह
राज व० सिंह
भैया व० सिंह
शिव व० सिंह
वीर व० सिंह
महावीर सिंह
कौशल प्रसाद सिंह
वद्री विशाल सिंह
जगं वहादुर सिंह
धर्मराज सिंह
नन्दलाल सिंह
सुरेन्द्र सिंह
गया सिंह
- कचनार पट्टी 2 (बवन सिंह के तीसरे पुत्र प्रतापसिंह)
प्रताप सिंह
भूपसिंह
जगतसिंह
सिगदार सिंह
जगन्नाथ सिंह
राम सिंह
वंश न रहा
विश्वनाथ सिंह

- वैजनाथ सिंह
  - शिवमंगल सिंह
    - लल्लू सिंह
      - रामदुलारे सिंह
    - लखन सिंह — वंश न रहा
  - माधौ सिंह
    - गजाधर सिंह
      - वृजनन्दन सिंह
    - तिलकधारी सिंह — वंश न रहा
  - नृपति सिंह
  - अमरजीत सिंह
    - छत्रपती सिंह
    - वेटाई सिंह
      - राजदुलारे सिंह
      - विश्राम सिंह
      - जीतेन्द्र सिंह
  - अहिवरन सिंह
    - जैनन्दन सिंह — वंश न रहा

ग्राम - कचनार पट्टी 3 (वरजोर सिंह इन्द्र सिंह के दूसरे पुत्र)
वरजोर सिह के जेठे पुत्र का नाम रामसिंह था।

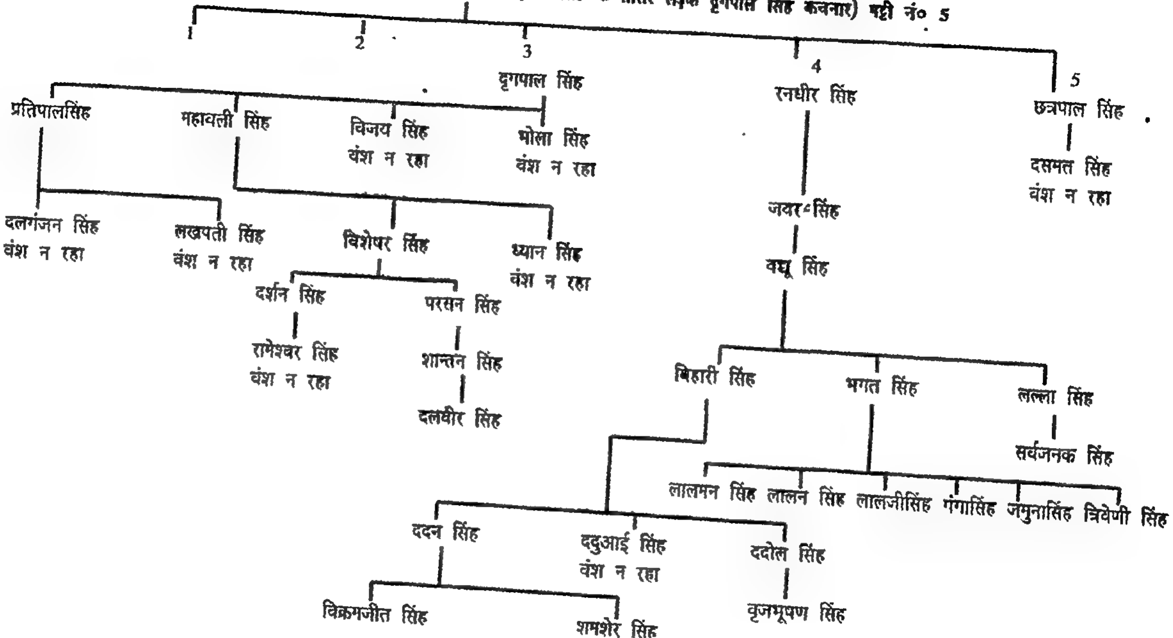


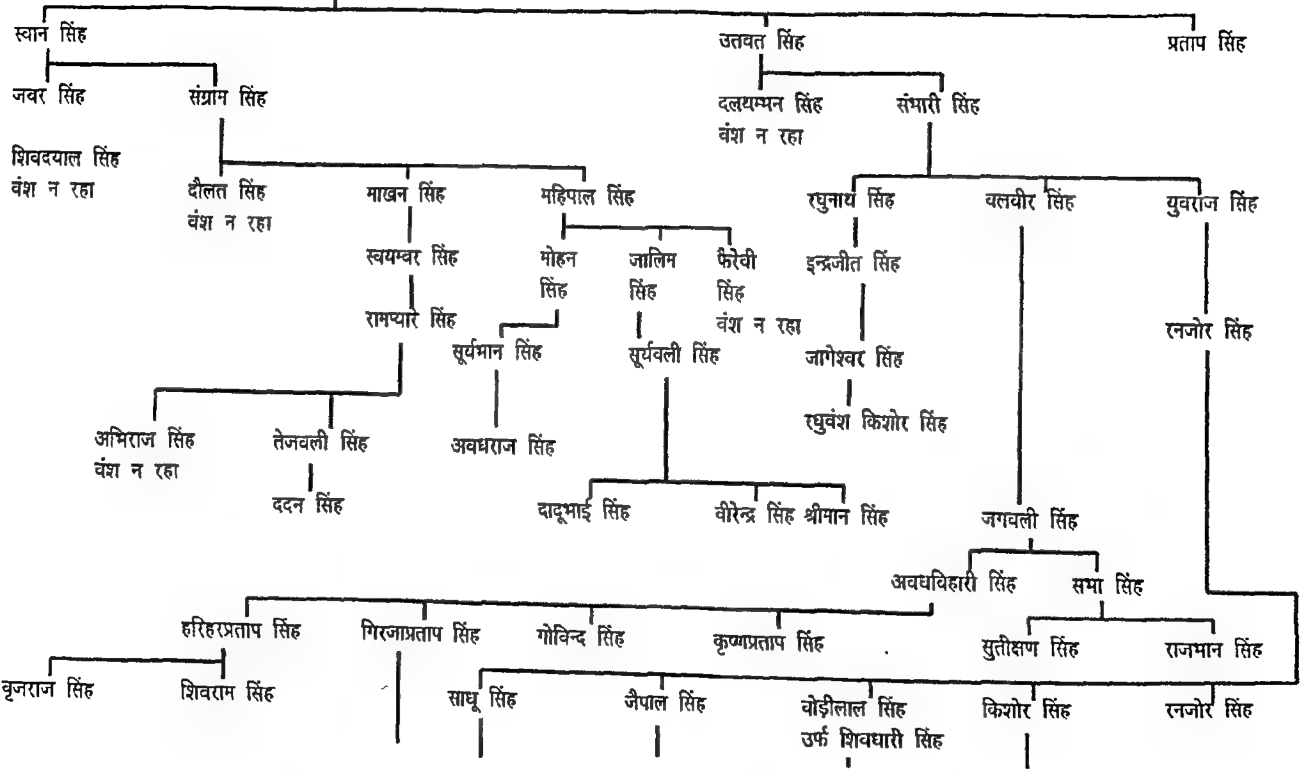
(रनवीर सिह)



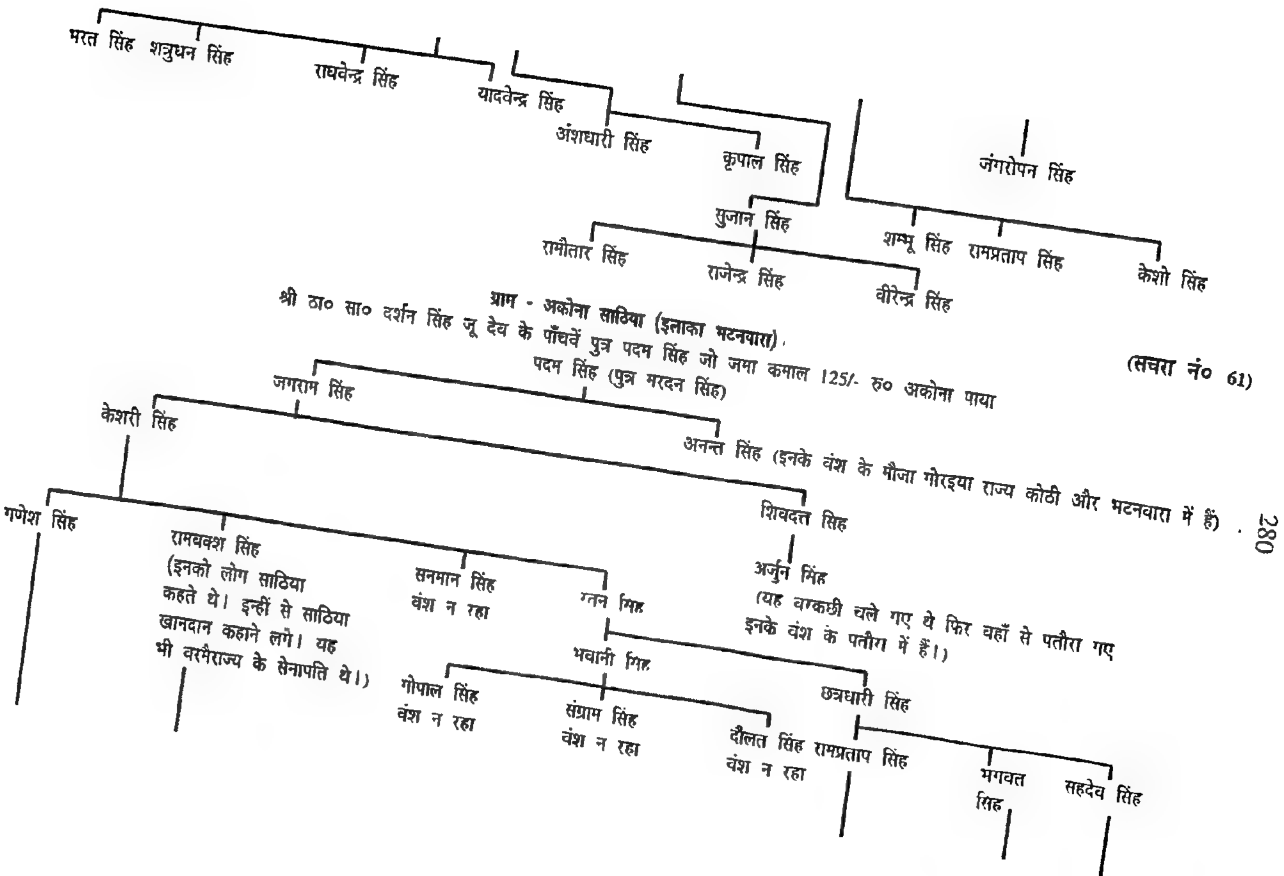
भगवतप्रताप सिंह
रघुवर प्रताप सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह
बादूभाई सिंह
पट्टी नं० 4 ग्राम कथनार के निहाल सिंह जो बरजोर सिंह के छोटेभाई थे।
निहाल सिंह
कलिन्द्र सिंह
कंधर सिंह
वं: न रहा
गोपाल सिंह
कुंजल सिंह
दुलम सिंह
महाराज सिंह
नरहर सिंह
(यह इलाका चंदिया चले गए। वहाँ जोगिया गांव में इनकी संतान हैं।)
वंधू सिंह
वंश न रहा
रनमत सिंह
मनी सिंह
हरवक्श सिंह
वंश न रहा
जयमंगल सिंह
धुरमंगल सिंह
वंश न रहा
सिया प्रताप सिंह
हर प्रसाद सिंह
वंश न रहा
शिवप्रताप सिंह
हेवलदार सिंह
इन्द्रदमन सिंह
रनदमन सिंह
गुलाव सिंह
रामपाल सिंह
रामकुंवार सिंह
रामगोपाल सिंह
ललोहर सिंह
मुकुटधारी सिंह

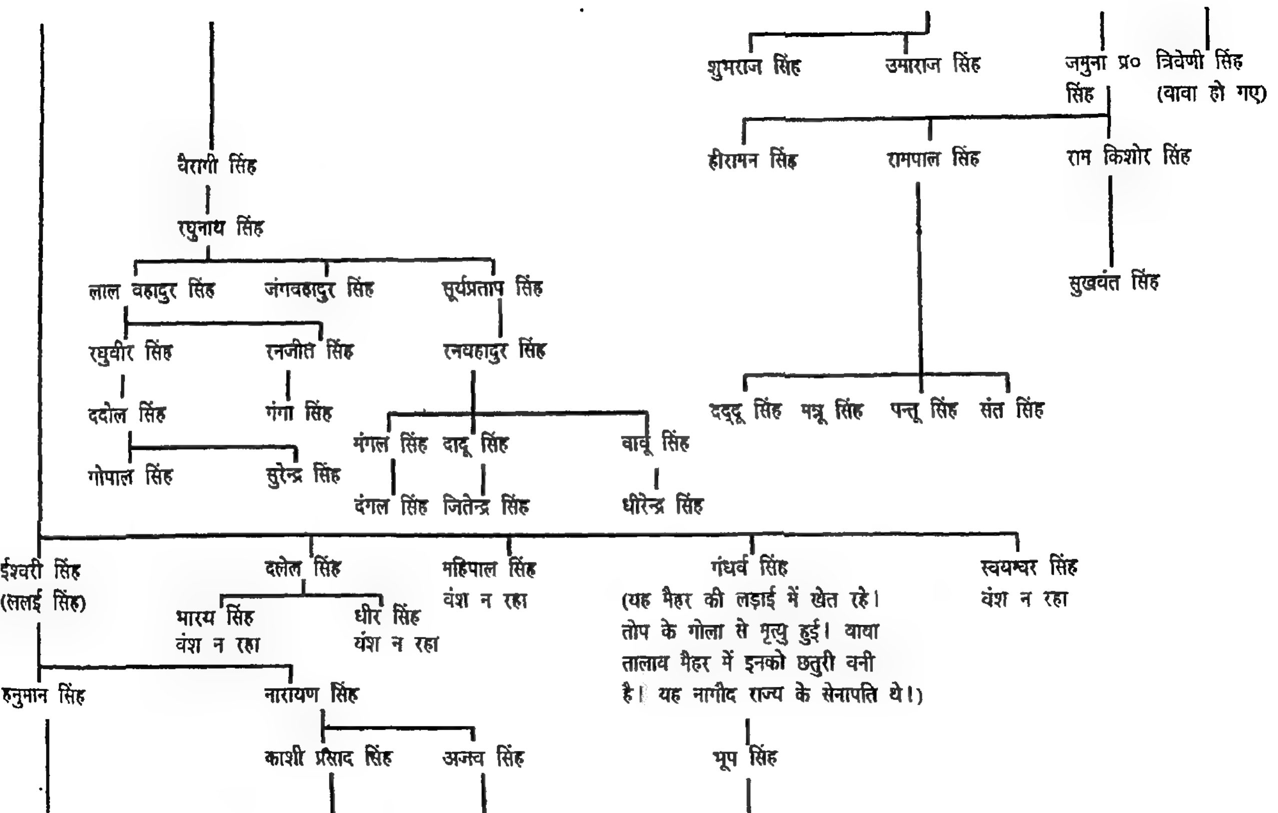
फते सिंह (फते सिंह के तीसरे लड़के दृगपाल सिंह कचनार) पट्टी नं० 5



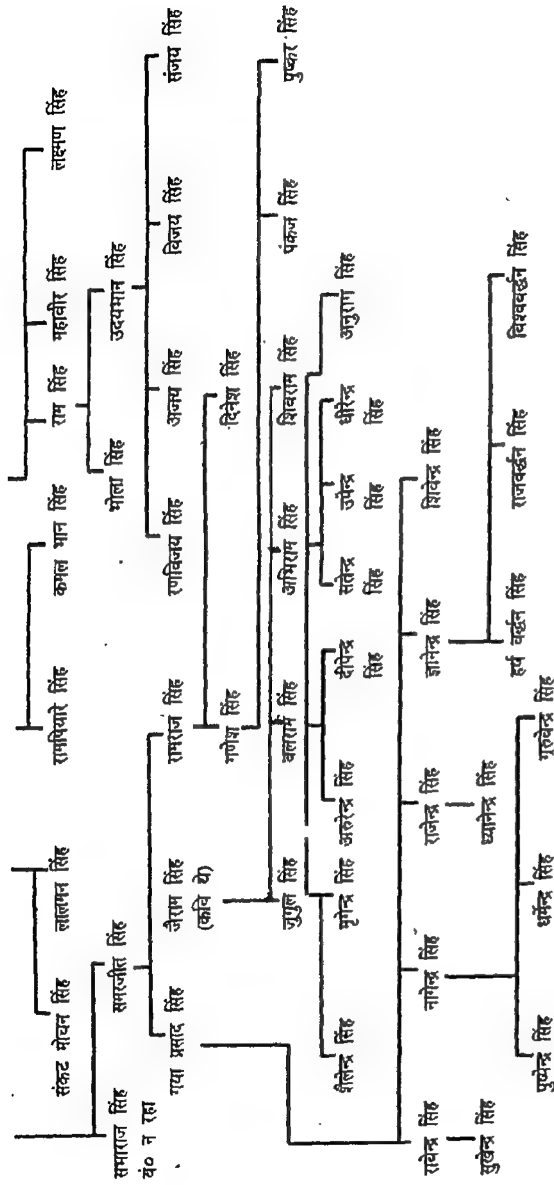


वदन सिंह (यह अजव सिंह के पुत्र तथा इन्द्रजीत सिंह के पौत्र थे) ग्राम कचनार पट्टी नं० 6
स्वान सिंह
उतवत सिंह
प्रताप सिंह
जवर सिंह
संग्राम सिंह
दलथम्भन सिंह
वंश न रहा
संभारी सिंह
शिवदयाल सिंह
वंश न रहा
दौलत सिंह
वंश न रहा
माखन सिंह
महिपाल सिंह
रघुनाथ सिंह
वलवीर सिंह
युवराज सिंह
स्वयम्वर सिंह
मोहन सिंह
जालिम सिंह
फेरेवी सिंह
वंश न रहा
इन्द्रजीत सिंह
रामप्यारे सिंह
सूर्यमान सिंह
सूर्यवली सिंह
जागेश्वर सिंह
रनजोर सिंह
रघुवंश किशोर सिंह
अभिराज सिंह
वंश न रहा
तेजवली सिंह
अवधराज सिंह
ददन सिंह
दादूभाई सिंह
वीरेन्द्र सिंह
श्रीमान सिंह
जगवली सिंह
अवधविहारी सिंह
सभा सिंह
हरिहरप्रताप सिंह
गिरजाप्रताप सिंह
गोविन्द सिंह
कृष्णप्रताप सिंह
सुतीक्षण सिंह
राजभान सिंह
वृजराज सिंह
शिवराम सिंह
साधू सिंह
जैपाल सिंह
चोड़ीलाल सिंह
उर्फ शिवधारी सिंह
किशोर सिंह
रनजोर सिंह


(सचरा नं० 61)
ग्राम - अकोना साठिया (इलाका भटनवारा)।
श्री ठा० सा० दर्शन सिंह जू देव के पाँचवें पुत्र पदम सिंह जो जमा कमाल 125/- रु० अकोना पाया
पदम सिंह (पुत्र मरदन सिंह)
जगराम सिंह
अनन्त सिंह (इनके वंश के मौजा गोरइया राज्य कोठी और भटनवारा में हैं)
केशरी सिंह
शिवदत्त सिंह
अर्जुन सिंह
(यह वरकछी चले गए थे फिर वहाँ से पतौरा गए इनके वंश के पतौरा में हैं।)
गणेश सिंह
रामबक्श सिंह
(इनको लोग साठिया कहते थे। इन्हीं से साठिया खानदान कहाने लगे। यह भी बरमैराज्य के सेनापति थे।)
सनमान सिंह
वंश न रहा
रतन सिंह
भवानी सिंह
छत्रधारी सिंह
गोपाल सिंह
वंश न रहा
संग्राम सिंह
वंश न रहा
दौलत सिंह
वंश न रहा
रामप्रताप सिंह
भगवत सिंह
सहदेव सिंह
भरत सिंह
शत्रुधन सिंह
राघवेन्द्र सिंह
यादवेन्द्र सिंह
अंशधारी सिंह
कृपाल सिंह
सुजान सिंह
रामौतार सिंह
राजेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
जंगरोपन सिंह
शम्भू सिंह
रामप्रताप सिंह
केशो सिंह



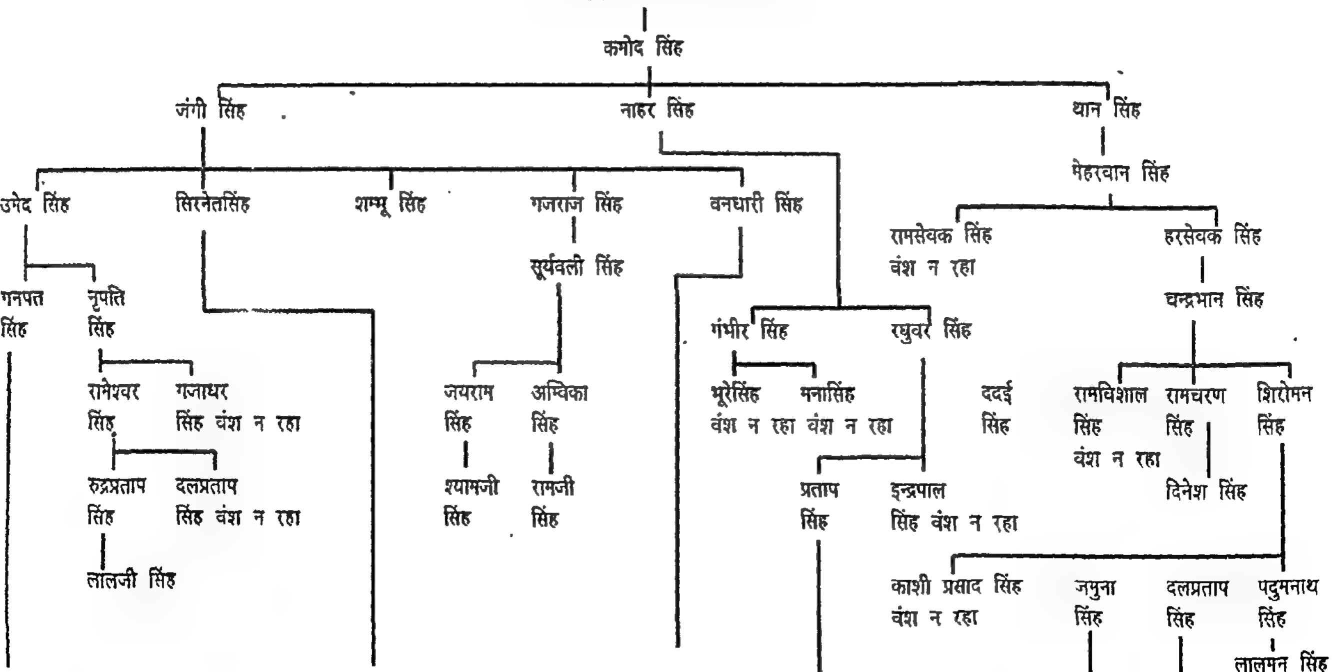
शुभराज सिंह
उमाराज सिंह
जमुना प्र० सिंह
त्रिवेणी सिंह (वावा हो गए)
हीरामन सिंह
रामपाल सिंह
राम किशोर सिंह
सुखवंत सिंह
ददूदू सिंह
मन्नू सिंह
पन्तू सिंह
संत सिंह
वैरागी सिंह
रघुनाथ सिंह
लाल वहादुर सिंह
जंगवहादुर सिंह
सूर्यप्रताप सिंह
रघुवीर सिंह
रनजीत सिंह
रनवहादुर सिंह
ददोल सिंह
गंगा सिंह
मंगल सिंह
दादू सिंह
वावू सिंह
गोपाल सिंह
सुरेन्द्र सिंह
दंगल सिंह
जितेन्द्र सिंह
धीरेन्द्र सिंह
ईश्वरी सिंह (ललई सिंह)
दलेल सिंह
महिपाल सिंह वंश न रहा
गंधर्व सिंह
(यह मैहर की लड़ाई में खेत रहे। तोप के गोला से मृत्यु हुई। वाया तालाव मैहर में इनको छतुरी वनी है। यह नागौद राज्य के सेनापति थे।)
स्वयम्वर सिंह वंश न रहा
भारथ सिंह वंश न रहा
धीर सिंह वंश न रहा
हनुमान सिंह
नारायण सिंह
काशी प्रसाद सिंह
अजव सिंह
भूप सिंह


समाराज सिंह
वं० न रहा
संकट मोचन सिंह
लालमन सिंह
समरजीत सिंह
रामपियारे सिंह
कमल भान सिंह
राम सिंह
महावीर सिंह
लक्ष्मण सिंह
भोला सिंह
उदयभान सिंह
गया प्रसाद सिंह
जैराम सिंह
(कवि थे)
रामराज सिंह
रणविजय सिंह
अजय सिंह
विजय सिंह
संजय सिंह
गणेश सिंह
दिनेश सिंह
जुगुल सिंह
बलराम सिंह
अभिराम सिंह
शिवराम सिंह
पंकज सिंह
पुष्कर सिंह
शैलेन्द्र सिंह
भूपेन्द्र सिंह
अकोरेन्द्र सिंह
दीपेन्द्र सिंह
सतेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
धीरेन्द्र सिंह
अनुराग सिंह
रवेन्द्र सिंह
नागेन्द्र सिंह
राजेन्द्र सिंह
ज्ञानेन्द्र सिंह
शिवेन्द्र सिंह
सुखेन्द्र सिंह
ध्यानेन्द्र सिंह
हर्ष वर्धन सिंह
राजवर्धन सिंह
विश्ववर्धन सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
गुरुवेन्द्र सिंह

(सचरा नं० 62)

ग्राम - मढ़ा (इलाका मटनवारा)

ठाकुर सा० मटनवारा मर्दनशाह के छोटेपुत्र मुकुन्द सिंह जमा कमाल 125/- रु० मौजा मढ़ा पाया।



सुदान सिंह रामराज सिंह उदयभान गरुऊ सिंह
वंश न रहा
कुन्दन सिंह वहादुर सिंह लखपती सिंह
रावेन्द्र सिंह
वद्री सिंह यादवेन्द्र सिंह श्रीपाल सिंह हीरेन्द्र सिंह
कामता सिंह हरवंश सिंह
गणेश सिंह
राम सिंह
इन्द्रजीत सिंह
शिववरण सिंह दर्शन सिंह हिराईसिंह अभिमान सिंह दृगज सिंह
वंश न रहा वंश न रहा
वंश वहादुर सिंह
साधू सिंह ददई सिंह रामविनोद सिंह राम जानकी सिंह
ददुल्ला सिंह शमशेर सिंह
रामनरेश सिंह मूरत सिंह कल्याण सिंह सुखेन्द्र सिंह रामनारायण सिंह विदुर सिंह

वीरेन्द्र सिंह
उमाराज सिंह भोला सिंह राजमन सिंह
विहारी सिंह शिवनन्दन सिंह मान सिंह नर्मदा सिंह हनुमान सिंह
वंश न रहा वंश न रहा वंश न रहा
देवराज सिंह
रनजोर सिंह रामप्यारे सिंह ददोली सिंह
मगन सिंह शिवमोहन सिंह
वंश न रहा
रामदयाल सिंह हरदयाल सिंह रछपाल सिंह
वंश न रहा
जयप्रताप सिंह भानूप्रताप सिंह दादूभाई मेघन सिंह
कुंवर प्रताप सिंह
जीतेन्द्र सिंह रामरसेनद्र सिंह

(सचरा नं० 63)

ग्राम - वड़ोहरा (इलाका भटनवारा)

ठाकुर सा० भटनवारा के भवानी मल्ल के दूसरे पुत्र दलगंजन सिंह जी थे जो हिस्सा में 200/- जमा कमाल का वड़ोहरा ग्राम पाए थे।

- दलगंजन सिंह (पुत्र भवानी मल्ल सिंह)
  - रछपाल सिंह
    - शिवदत्त सिंह
      - भारत सिंह
        - जगत सिंह
          - भगवत सिंह
            - शिवमंगल सिंह
              - वसन्त सिंह
                - भारत सिंह
                - शमशेर सिंह
              - ठाकुर प्रसाद सिंह
            - जयमंगल सिंह
              - खेलाई सिंह (रामरसेन्द्र सिंह)
        - मनाई सिंह
          - रामप्रताप सिंह
            - केशव प्रसाद सिंह
            - विश्वनाथ सिंह
          - अमरजीत सिंह
            - गोले सिंह
            - राजमन सिंह
            - वहादुर सिंह
    - वंधई लाल सिंह
      - भगत सिंह
        - धीर सिंह
          - चन्द्रभान सिंह
            - सिया प्रताप सिंह
        - वन्दी सिंह वंश न रहा
    - वलराज सिंह वंश न रहा
  - खुमान सिंह वंश न रहा
  - सामंत सिंह
    - गंधर्व सिंह
      - विजय सिंह
      - घुरउ सिंह वंश न रहा
      - वलवीर सिंह
        - सूर्यवली सिंह
          - रघुवंश सिंह
        - शत्रुजीत सिंह
      - संग्राम सिंह (वरछड़ ग्राम जिला, शहडोल चले गये)
        - गजलप सिंह
          - जानकीवक्स सिंह
            - भूषण सिंह
        - कल्याण सिंह
      - शंकर सिंह वंश न रहा

सभाराज सिंह — धर्मराज सिंह — उदयराज सिंह — अवधराज सिंह

राम लखन सिंह — इन्द्रपाल सिंह — कमलभान सिंह — जयभान सिंह

- राम लखन सिंह: लालबहादुर सिंह, वीरेन्द्र बहादुर सिंह, भूपेन्द्र सिंह
- इन्द्रपाल सिंह: अमर सिंह, नारेन्द्र सिंह
- कमलभान सिंह: सुखेन्द्र सिंह
- जयभान सिंह: शैलेन्द्र

वलभद्र सिंह

- वालमीक सिंह — रामपाल सिंह — जगजाहिर सिंह
- रामराज सिंह

(सचरा नं० 64)

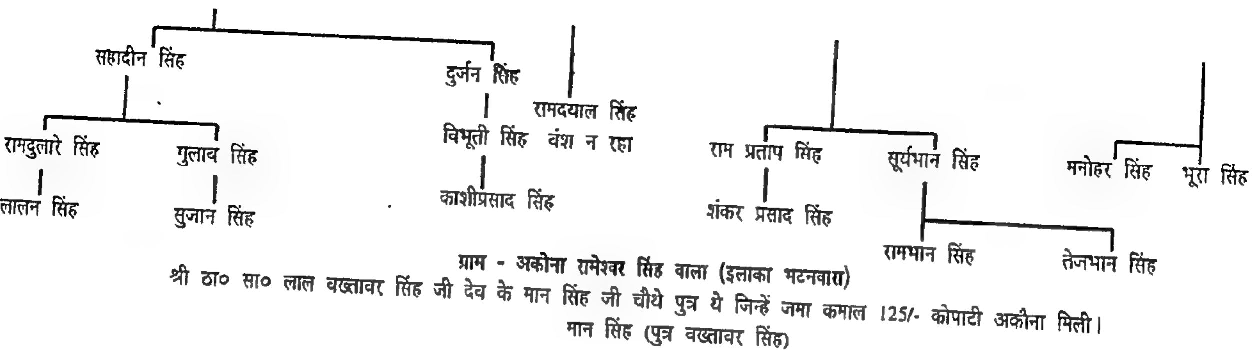
ग्राम - अकोना (इलाका भटनवारा) (भैरम सिंह का अकोना)

श्री ठा० सा० वख्तावर सिंह जी के सात लड़के थे। उनमें से अजीत सिंह जी दूसरे थे जो जमा कमाल 175/- की पाटी अकोना पाए।

अजीत सिंह (पुत्र वख्तावर सिंह)

भैरम सिंह

- ईश्वरी सिंह
- दलयम्भन सिंह (वोड़ी लाल सिंह)
  - रतन सिंह
  - हीरा सिंह
- मठूल सिंह — विश्राम सिंह



ग्राम - अकौना रामेश्वर सिंह वाला (इलाका भटनवारा)

श्री ठा० सा० लाल वख्तावर सिंह जी देव के मान सिंह जी चौथे पुत्र थे जिन्हें जमा कमाल 125/- कोपाटी अकौना मिली।

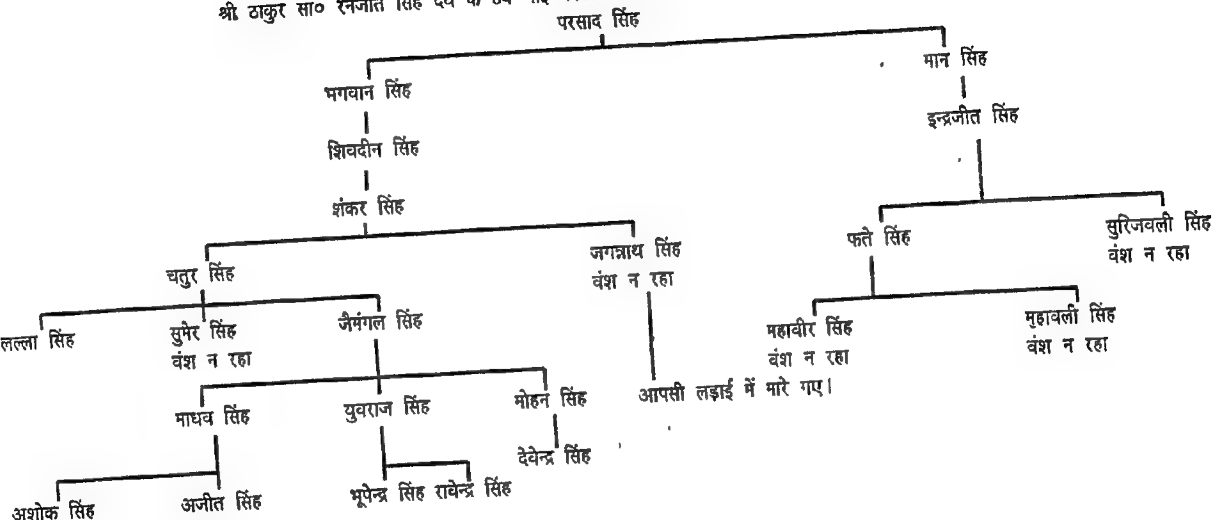
मान सिंह (पुत्र वख्तावर सिंह)

- कोलई सिंह
  - शिव सिंह
    - रघुवीर सिंह — वंश न रहा
    - धनुषधारी सिंह
      - वंश वहादुर सिंह — वंश न रहा
  - जयपाल सिंह
    - ऊधव सिंह
      - कामता सिंह
        - रामप्रताप सिंह
          - उमाराज सिंह
          - शुभराज सिंह
            - वुद्धराज सिंह
            - मजन सिंह
            - विजय सिंह
  - हिम्मत सिंह
    - रामेश्वर सिंह
      - गणेश सिंह
        - शिव वहादुर सिंह
        - राजवहादुर सिंह
      - शुभकरण सिंह
        - कौशलेन्द्र सिंह
        - यशवंत सिंह

(सचरा नं० 65)

ग्राम - खमरेही (इलाका भटनवारा) पट्टी 1

श्री ठाकुर सा० रनजीत सिंह देव के 6वें भाई परसाद सिंह जी ने पट्टी खमरेही जमा कमाल 125/- पाया



वीरेन्द्र सिंह

शिवमंगल सिंह भोला सिंह वाबूसिंह प्रताप सिंह

कुंवर वहादुर सिंह लालवहादुर सिंह

(सचरा नं० 66)

ग्राम कैथा - (इलाका भटनवारा)

श्री ठाकुर सा० वख्तावर सिंह जी देव के 6 पुत्र थे। उनमें से छोटे से मौजा वूढ़ी पाया था। उसको वदलकर कैथा लिया। वहीं उनकी संतान है।

प्रहलाद सिंह (पुत्र वख्तावर सिंह)

घोकल सिंह भीषम सिंह

माधी सिंह वहादुर सिंह शिवदयाल सिंह विजय सिंह राघू सिंह

रणजोर सिंह वजरंग सिंह वंश न रहा अमर सिंह नौमी सिंह

नेवाजी सिंह वंश न रहा अहिवरण सिंह वसन्त सिंह वंश न रहा

भरोसा सिंह रमई सिंह जनार्दन सिंह वंश न रहा

ददन सिंह साधू सिंह वंश न रहा ददई सिंह वल्देव सिंह

रामराज सिंह वंश न रहा ववोली सिंह वंश न रहा निरंजन सिंह वंश न रहा

धुनू सिंह गंगा सिंह

दद्दी सिंह चन्द्रभान सिंह वंश न राहा गोविन्द सिंह राजनारायण सिंह सुखनिधान सिंह गोरेलाल सिंह रामकृपाल सिंह 1 वावू सिंह 2 रामराज सिंह 3

गणेश सिंह दफेदार सिंह वलवेन्द्र सिंह मृगेन्द्र सिंह राघवेन्द्र सिंह सतेन्द्र सिंह गजेन्द्रसिंह रावेन्द्रसिंह राजवीरसिंह

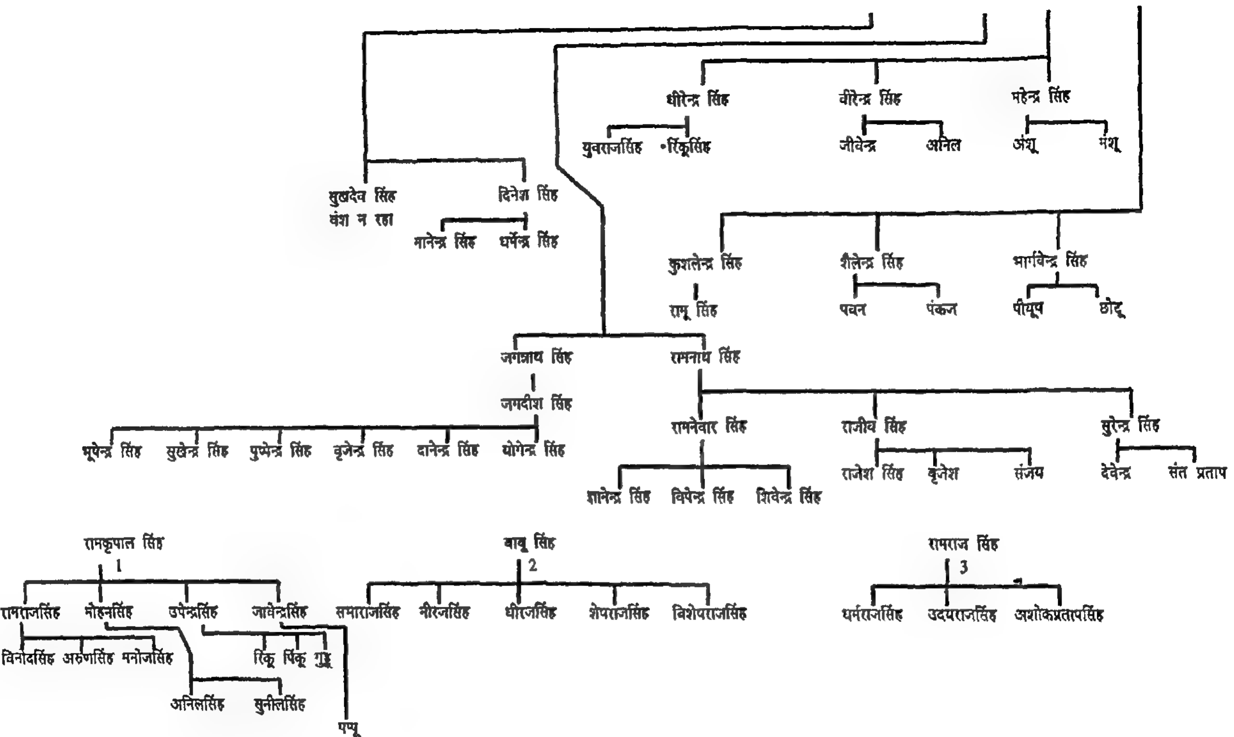
हीरामन सिंह वंश न रहा यादवेन्द्र सिंह जितेन्द्र सिंह सहेन्द्र सिंह कमलेन्द्र सिंह जगतधारी सिंह भगत सिंह भूरे सिंह छत्रधारी सिंह

राजप्रतापसिंह प्रशान्तसिंह रवि सुमन्त गोलू श्यामसिंह विशेषर सिंह निरंजन सिंह वंश न रहा वॉके सिंह

अमितसिंह नागेन्द्रसिंह वद्री प्रसाद सिंह

हीरेन्द्र प्रताप सिंह अमित कुमार सिंह कर्णवीर धर्मवीर दानवीर कामता सिंह काशी सिंह

डिम्पल प्रमोद



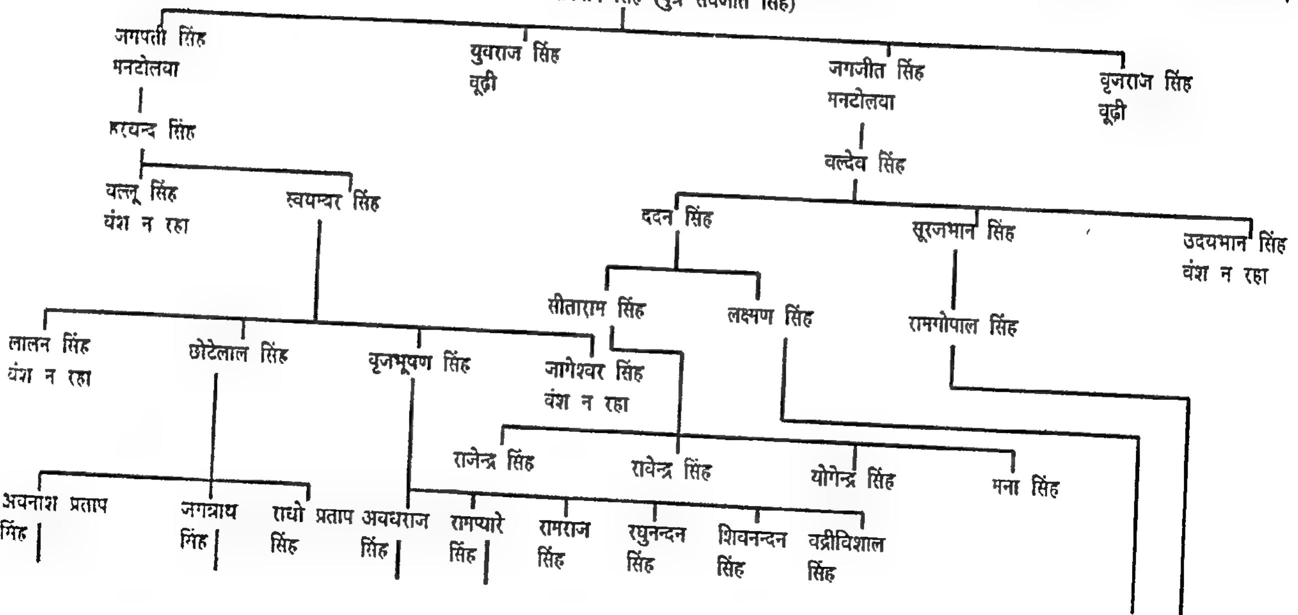
धीरेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
महेन्द्र सिंह
युवराजसिंह
•रिंकूसिंह
जीवेन्द्र
अनिल
अंशू
मंशू
सुखदेव सिंह
वंश न रहा
दिनेश सिंह
मानेन्द्र सिंह
धर्मेन्द्र सिंह
कुशलेन्द्र सिंह
शैलेन्द्र सिंह
भार्गवेन्द्र सिंह
रामू सिंह
पवन
पंकज
पीयूष
छोटू
जगन्नाथ सिंह
रमनाथ सिंह
जगदीश सिंह
भूपेन्द्र सिंह
सुखेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
बृजेन्द्र सिंह
दानेन्द्र सिंह
योगेन्द्र सिंह
रामनेवार सिंह
राजीव सिंह
सुरेन्द्र सिंह
ज्ञानेन्द्र सिंह
विपेन्द्र सिंह
शिवेन्द्र सिंह
राजेश सिंह
बृजेश
संजय
देवेन्द्र
संत प्रताप
रामकृपाल सिंह
1
रामराजसिंह
मोहनसिंह
उपेन्द्रसिंह
जावेन्द्रसिंह
विनोदसिंह
अरुणसिंह
मनोजसिंह
रिंकू
पिंकू
गुड्डू
अनिलसिंह
सुनीलसिंह
पप्पू
बाबू सिंह
2
समाराजसिंह
नीरजसिंह
धीरजसिंह
शेपराजसिंह
विशेपराजसिंह
रामराज सिंह
3
धर्मराजसिंह
उदयराजसिंह
अशोकप्रतापसिंह

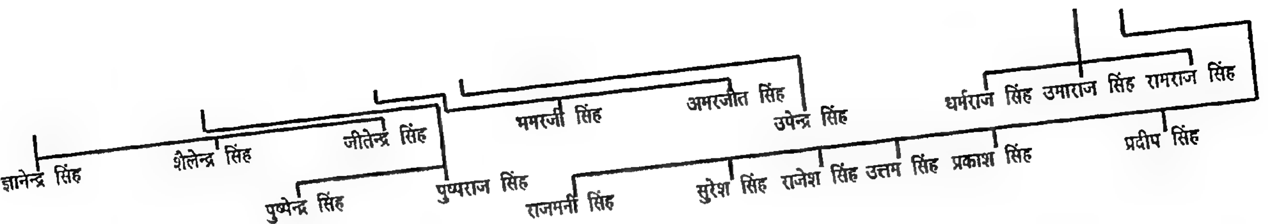
(सचरा नं० 67)

मनटोलवा (वूढ़ी)

ग्राम - (इलाका भटनवारा)

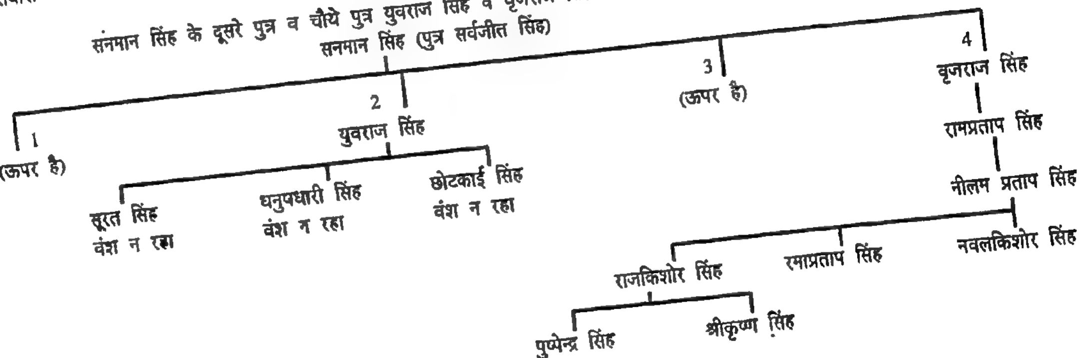
भटनवारा के ठाकुर सर्वजीत सिंह जी देव के दूसरे पुत्र सनमान सिंह हिस्सा में 205 रु० जमा कमाल पाया मौजा वूढ़ी तथा मनटोलवा पाया। सनमान सिंह के दो लड़के युवराज सिंह तथा वृजराज सिंह और जगपती सिंह तथा जगजीत सिंह मन टोलवा (मौजा खमरेही का काम) पाया तथा उसी में रहते हैं। जगपती सिंह व जगजीत सिंह की संताने मनटोलवा काप खमरेही में रहती हैं। युवराज सिंह व वृजराज सिंह का सचरा नीचे दिया हुआ है।





नोट - डीहुट गांव (जैतवारा के पास) सोहावल राज्य से मुडवार में मिला था।

संनमान सिंह के दूसरे पुत्र व चौथे पुत्र युवराज सिंह व बृजराज सिंह की वंशावली निम्न है -

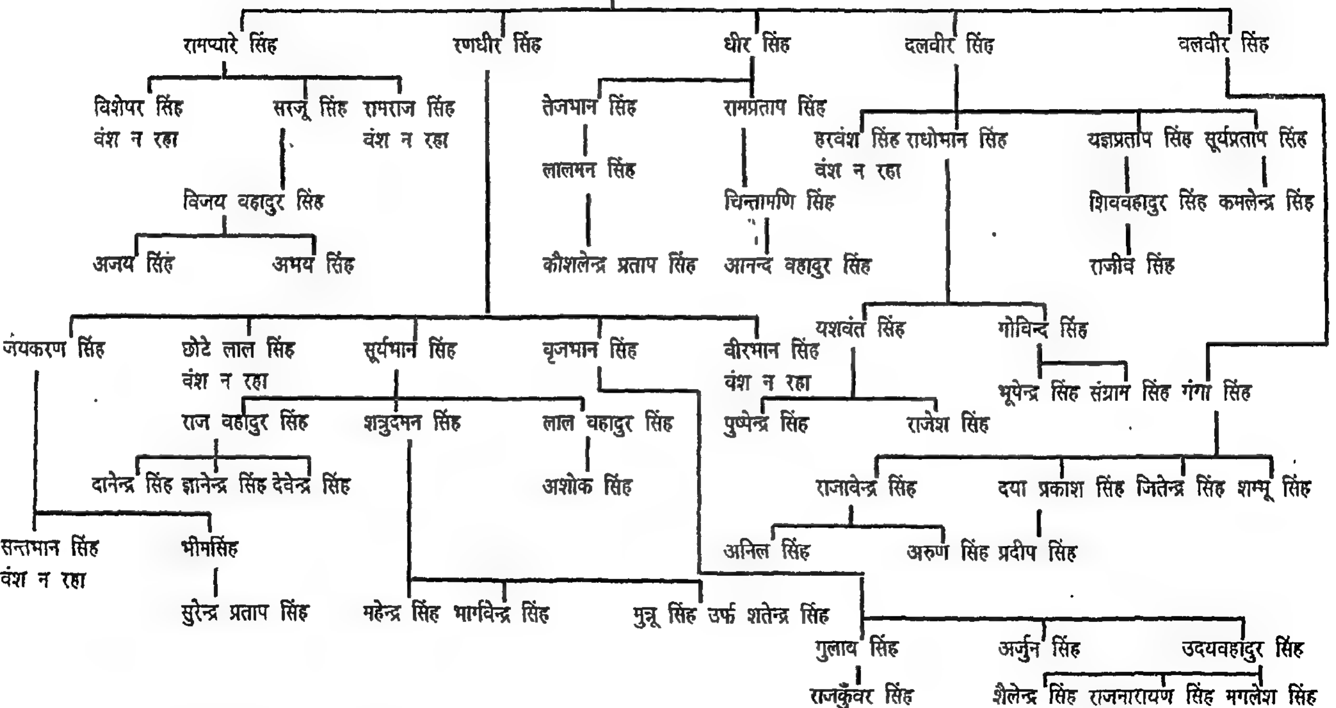


(सचरा नं० 68)

ग्राम - पट्टी अकोना और पट्टी चूढ़ी (इलाका भटनवारा)

श्री ठाकुर सा० जगमोहन सिंह के दूसरे पुत्र भारत सिंह सेमरी में रहते थे।

भारथ सिंह (पुत्र जगमोहन सिंह)



ग्राम - गौरैया (राज्य कोठी) (इलाका भटनवारा)

मौजा भटनवारा से पदम सिंह पाया। उनके एक पुत्र जगरूप सिंह अकोना के वंशनामा में लिखे हैं। जेठे जगरूप सिंह थे और छोटे अनन्त सिंह थे जो गोरइया चले गए।

अनन्त सिंह (पुत्र पदम सिंह अकोना वाले)

सुजान सिंह

मुजाम सिंह

कंधर सिंह

कन्धारी सिंह
वंश न रहा

माधव सिंह
वंश न रहा

(मोहन सिंह)

सुग्रीव सिंह

बजरंग सिंह
(इनके वंश मौजा पतौरा ं

स्वयम्बर सिंह
~ ंश मौजा भटनवारा में रहते हैं)

सिंह
रहा)

रामपाल सिंह

छत्रधारी सिंह
(वंश न रहा)

कगलमान सिंह

मोहन सिंह अवधराज सिंह

जयमंगल सिंह

राजेन्द्र सिंह नारेन्द्र सिंह

रामप्यारे सिंह

हरपाल सिंह

रामपाल सिंह शिवपाल सिंह

सूरत सिंह रामदयाल सिंह

स्वरूप सिंह

रनदमन सिंह
मिलन सिंह
वंश न रहा

फतेसिंह

तिलभवन सिंह
मनमोहन सिंह

राजबहादुर सिंह
दलप्रताप सिंह

इन्द्रपाल सिंह
जगतधारी सिंह

जमुना सिंह मिठाईलाल सिंह

कृपाल सिंह वृजमान सिंह
वंश न रहा वंश न रहा

मगन सिंह
वंश न रहा

अनुराग सिंह
जगपती सिंह

जयनारायण सिंह
शिवराम सिंह
वंश न रहा

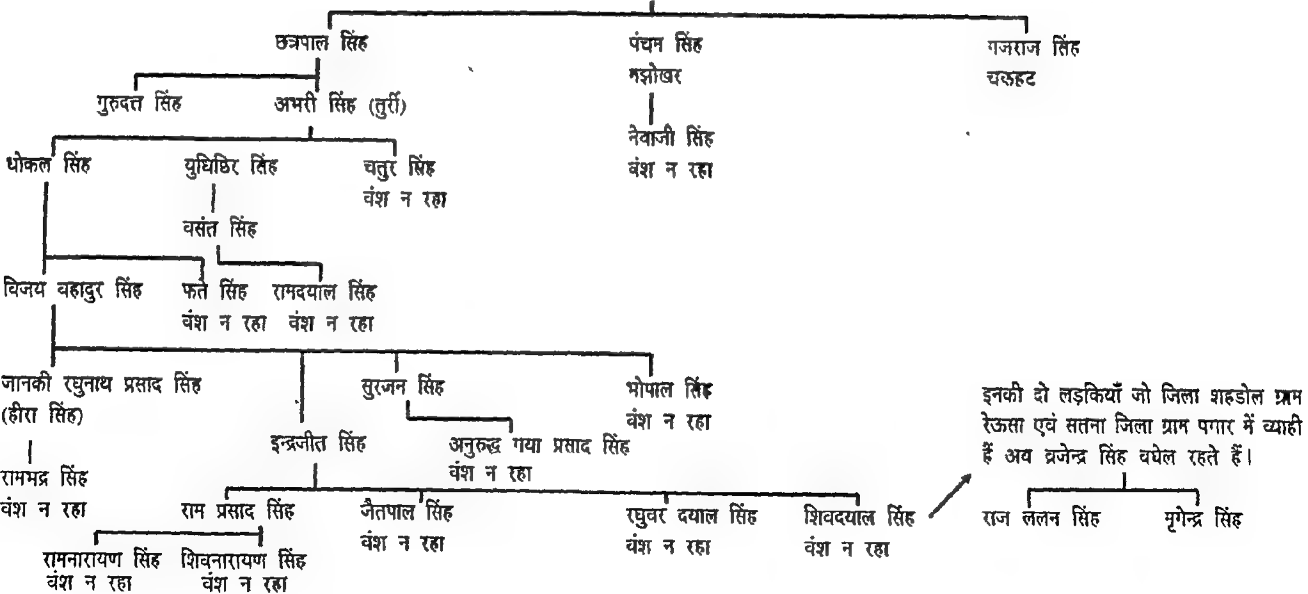
जगतबहादुर सिंह
दद्दू सिंह

नोट - अनन्त सिंह के वंश के गौरैया में हैं। गौरैया गये थे। वहां से एक साख भटनवारा गई और पतौरा के वारे में जगरूप सिंह के दो पुत्र थे। छोटे शिवरतन सिंह थे। उनके पुत्र अर्जुन सिंह थे पतौरा जाना लिखा है।

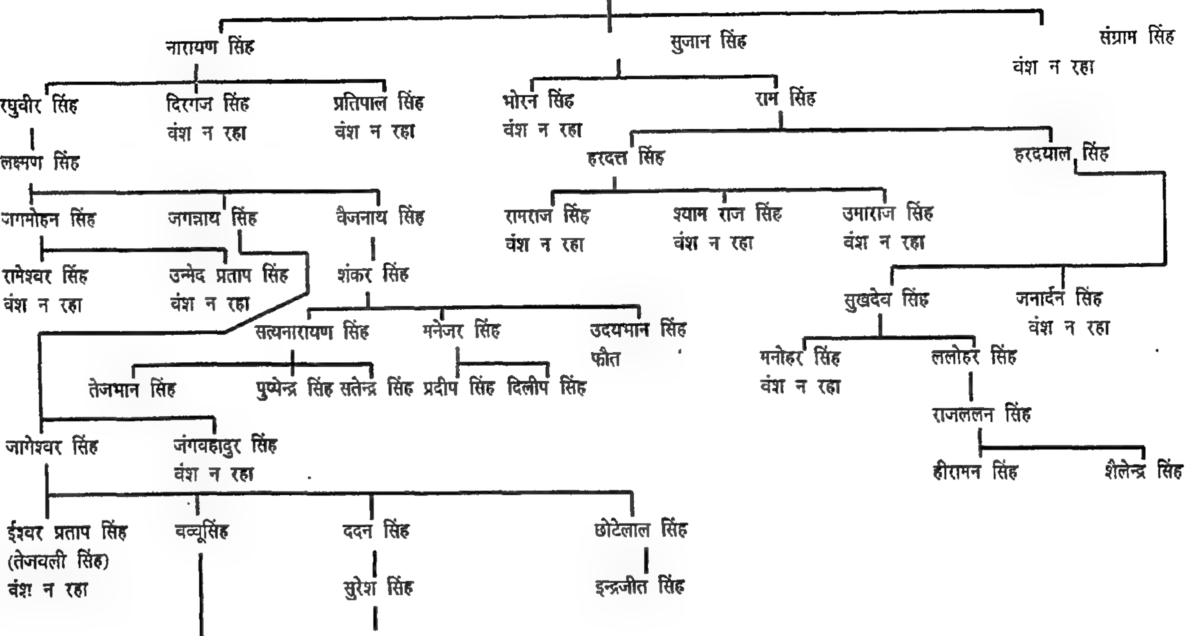
(सवरा नं० 69)

पिपरोखर इलाका

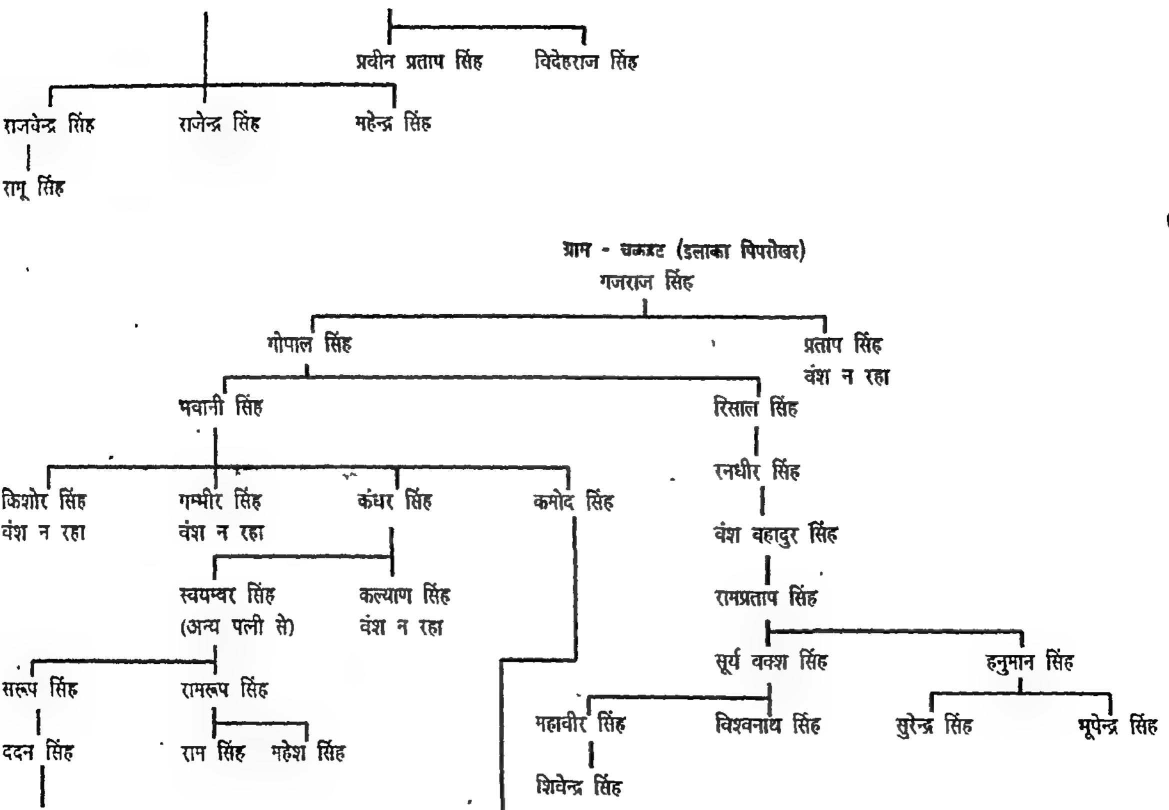
श्री राजा सा० पृथ्वीराज सिंह के दूसरे पुत्र कीरत सिंह जी देव थे। इनको इलाका पिपरोखर जमा कमाल 160/- साला आमदनी सम्वत 1762 वि० में हिस्सा मिला। मौजा पिपरोखर, मझोखर, चकहट, तुर्री, अमरती, सेमरिहा, वांसावरी, वरकछा भरों, अटैला, गढ़री, मड़फई इलाका के अन्तर्गत गाँव थे।



(सचरा नं० 70)


ग्राम - तुर्री (इलाका पिपरोखर)
अमरी सिंह
नारायण सिंह
सुजान सिंह
संग्राम सिंह
वंश न रहा
रघुवीर सिंह
दिरगज सिंह
वंश न रहा
प्रतिपाल सिंह
वंश न रहा
भोरन सिंह
वंश न रहा
राम सिंह
लक्ष्मण सिंह
हरदत्त सिंह
हरदयाल सिंह
जगमोहन सिंह
जगन्नाथ सिंह
वैजनाथ सिंह
रामराज सिंह
वंश न रहा
श्याम राज सिंह
वंश न रहा
उमाराज सिंह
वंश न रहा
रामेश्वर सिंह
वंश न रहा
उम्मेद प्रताप सिंह
वंश न रहा
शंकर सिंह
सुखदेव सिंह
जनार्दन सिंह
वंश न रहा
सत्यनारायण सिंह
मनेजर सिंह
उदयभान सिंह
फौत
मनोहर सिंह
वंश न रहा
ललोहर सिंह
तेजभान सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
सतेन्द्र सिंह
प्रदीप सिंह
दिलीप सिंह
राजललन सिंह
जागेश्वर सिंह
जंगबहादुर सिंह
वंश न रहा
हीरामन सिंह
शैलेन्द्र सिंह
ईश्वर प्रताप सिंह
(तेजवली सिंह)
वंश न रहा
बब्बूसिंह
ददन सिंह
छोटेलाल सिंह
सुरेश सिंह
इन्द्रजीत सिंह

(सचरा नं० 71)



ग्राम - चकइट (इलाका पिपरोखर)
गजराज सिंह
गोपाल सिंह
प्रताप सिंह
वंश न रहा
भवानी सिंह
रिसाल सिंह
किशोर सिंह
वंश न रहा
गम्भीर सिंह
वंश न रहा
कंधर सिंह
कमोद सिंह
रनधीर सिंह
वंश बहादुर सिंह
स्वयम्वर सिंह
(अन्य पत्नी से)
कल्याण सिंह
वंश न रहा
रामप्रताप सिंह
सूर्य वक्श सिंह
हनुमान सिंह
सरूप सिंह
रामरूप सिंह
ददन सिंह
राम सिंह
महेश सिंह
महावीर सिंह
विश्वनाथ सिंह
सुरेन्द्र सिंह
भूपेन्द्र सिंह
शिवेन्द्र सिंह
प्रवीन प्रताप सिंह
विदेहराज सिंह
राजवेन्द्र सिंह
राजेन्द्र सिंह
महेन्द्र सिंह
रामू सिंह

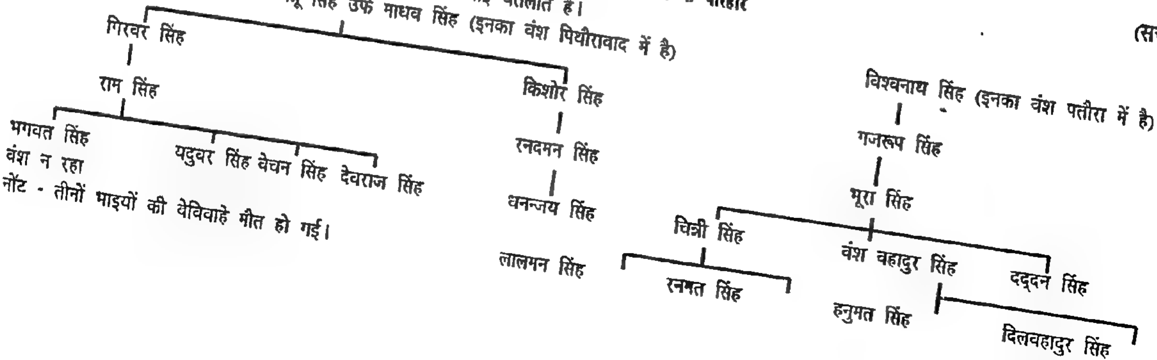
वलमेन्द्र सिंह
लोकेश सिंह

शिवमंगल सिंह
दौलत सिंह
निरंजन सिंह
रामकृपाल सिंह
अनुज प्रताप सिंह
काशी प्रसाद सिंह
वंश न रहा
छोटेलाल सिंह
सरदार सिंह
उदयप्रताप सिंह
समरजीत सिंह
बुद्धराज सिंह
मनोज सिंह
रघुनाथ सिंह
तेजवहादुर सिंह
ददन सिंह
मुन्ना सिंह
संतवहादुर सिंह
सुख्खू सिंह
दरसन सिंह
विश्राम सिंह

नोट - यह लोग अपने को पिपरोखर इलाका के भाई वतलाते हैं।

पियौरावाद तथा पतौरा के परिहार

(सचरा नं० 72)

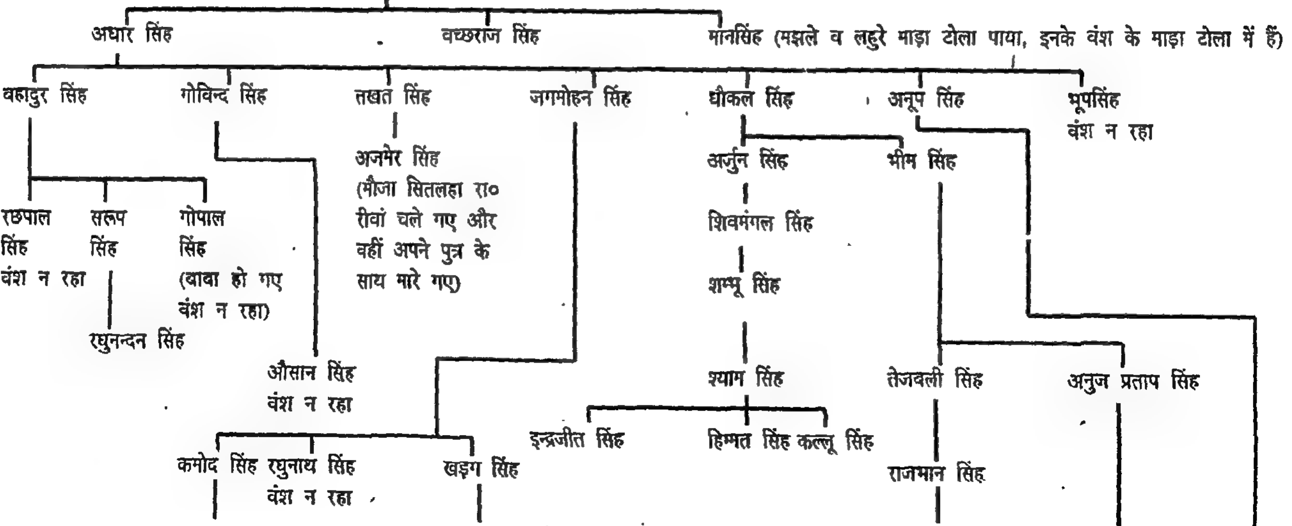


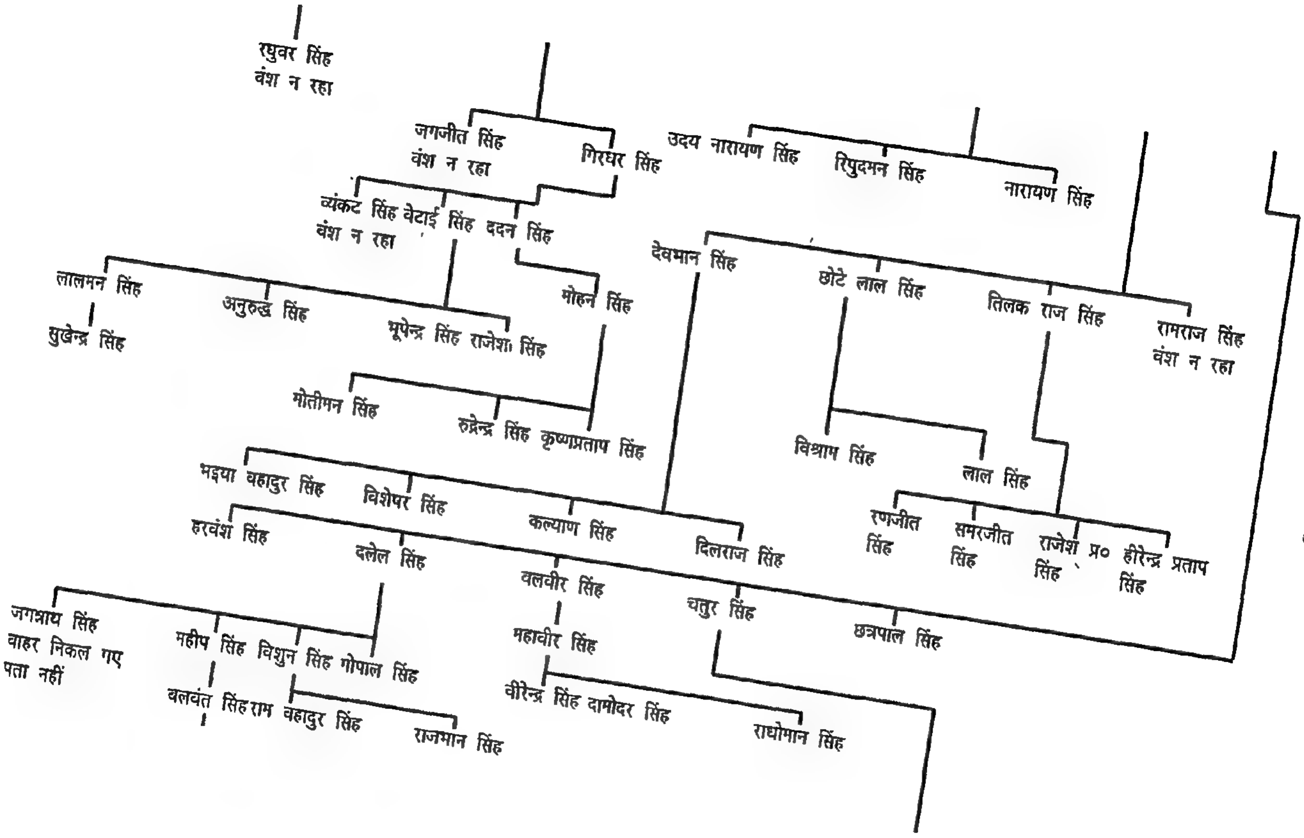
(सचरा नं० 73)

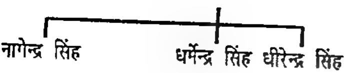
इलाका चंदकुवा

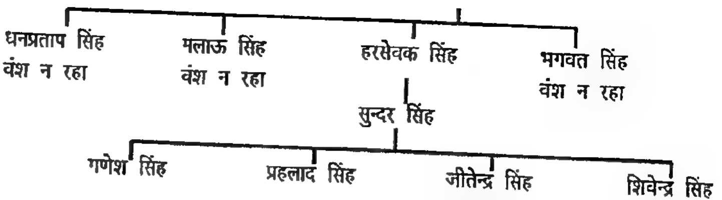
श्री राजा पृथ्वीराजसिंह के पुत्र व राजा सा० फकीर शाह के तीसरे भाई हिरदैशाह ग्राम चंदकुवा, रेंउसा व दुवहिया पाया।

हिरदै सिंह (पुत्र श्री पृथ्वीराजसिंह)




रघुवर सिंह
वंश न रहा
जगजीत सिंह
वंश न रहा
गिरधर सिंह
उदय नारायण सिंह
रिपुदमन सिंह
नारायण सिंह
व्यंकट सिंह
वंश न रहा
वेटाई सिंह
ददन सिंह
देवमान सिंह
छोटे लाल सिंह
तिलक राज सिंह
रामराज सिंह
वंश न रहा
लालमन सिंह
सुखेन्द्र सिंह
अनुरुद्ध सिंह
भूपेन्द्र सिंह
राजेश। सिंह
मोहन सिंह
मोतीमन सिंह
रुद्रेन्द्र सिंह
कृष्णप्रताप सिंह
विश्राम सिंह
लाल सिंह
भइया वहादुर सिंह
विशेपर सिंह
कल्याण सिंह
दिलराज सिंह
रणजीत
सिंह
समरजीत
सिंह
राजेश प्र०
सिंह
हीरेन्द्र प्रताप
सिंह
हरवंश सिंह
दलेल सिंह
वलवीर सिंह
चतुर सिंह
छत्रपाल सिंह
महावीर सिंह
जगन्नाथ सिंह
वाहर निकल गए
पता नहीं
महीप सिंह
विशुन सिंह
गोपाल सिंह
वलवंत सिंह
राम वहादुर सिंह
राजमान सिंह
वीरेन्द्र सिंह
दामोदर सिंह
राधोमान सिंह





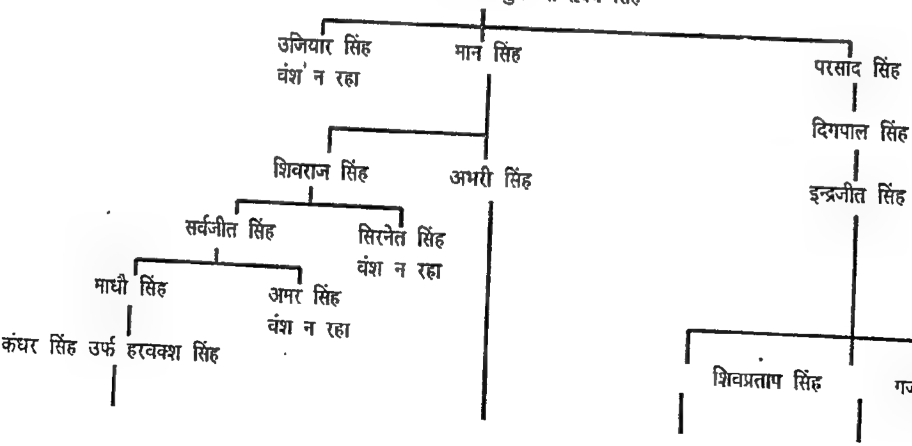
(सचरा नं० 74)

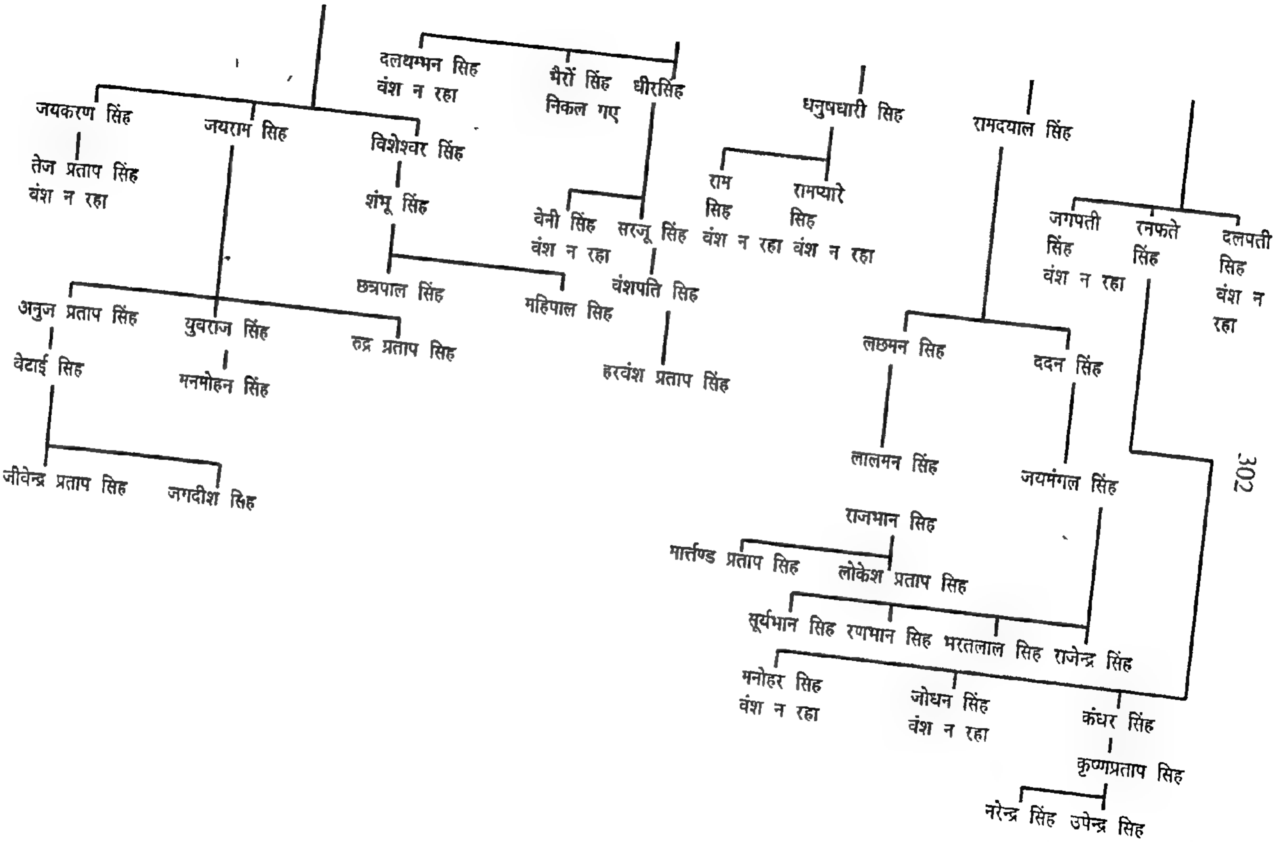
इलाका चन्दकुवा

ग्राम दुवहिया

श्री राजा पृथ्वीराजसिंह के तीसरे पुत्र हृदय सिंह के दूसरे पुत्र अनन्त सिंह को भाई ठाकुर दसमत सिंह से ग्राम दुवहिया जमा कमाल 300/- का हिस्से में मिला।

अनन्त सिंह पुत्र श्री हृदय सिंह



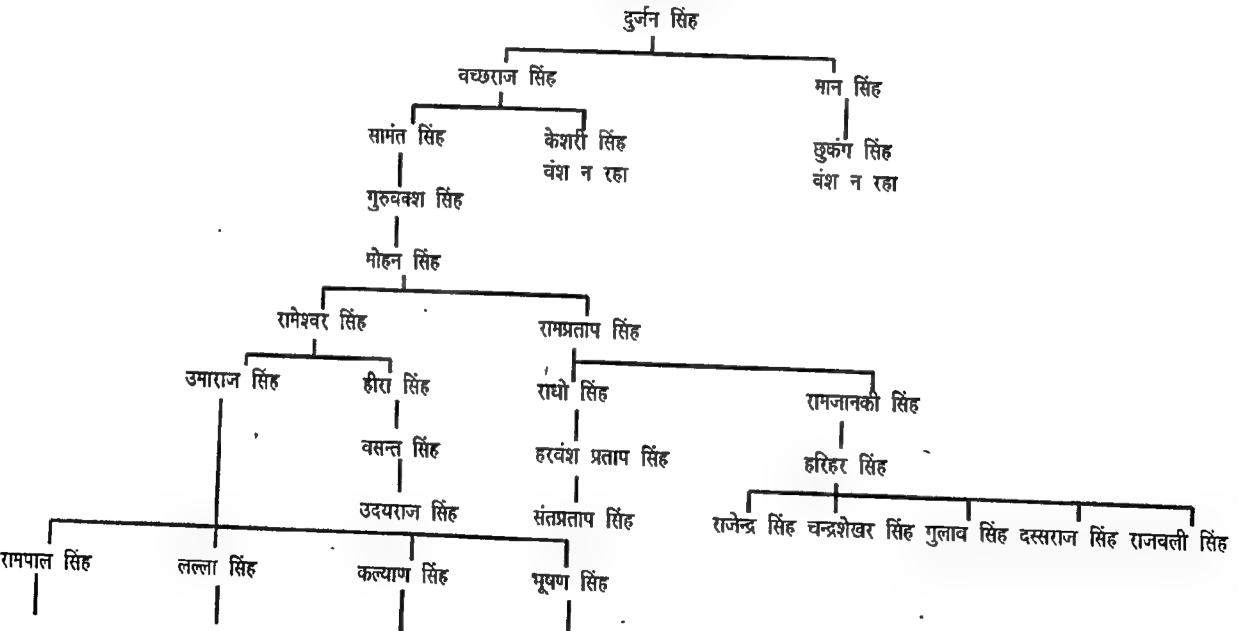

दलथम्भन सिंह
वंश न रहा
भैरों सिंह
निकल गए
धीरसिंह
धनुषधारी सिंह
रामदयाल सिंह
जयकरण सिंह
जयराम सिंह
विशेश्वर सिंह
तेज प्रताप सिंह
वंश न रहा
शंभू सिंह
वेनी सिंह
वंश न रहा
सरजू सिंह
राम
सिंह
वंश न रहा
रामप्यारे
सिंह
वंश न रहा
जगपती
सिंह
वंश न रहा
रनफते
सिंह
दलपती
सिंह
वंश न
रहा
छत्रपाल सिंह
महिपाल सिंह
वंशपति सिंह
अनुज प्रताप सिंह
युवराज सिंह
रुद्र प्रताप सिंह
लछमन सिंह
ददन सिंह
वेटाई सिंह
मनमोहन सिंह
हरवंश प्रताप सिंह
लालमन सिंह
जयमंगल सिंह
जीवेन्द्र प्रताप सिंह
जगदीश सिंह
राजभान सिंह
मार्त्तण्ड प्रताप सिंह
लोकेश प्रताप सिंह
सूर्यभान सिंह
रणभान सिंह
भरतलाल सिंह
राजेन्द्र सिंह
मनोहर सिंह
वंश न रहा
जोधन सिंह
वंश न रहा
कंधर सिंह
कृष्णप्रताप सिंह
नरेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह

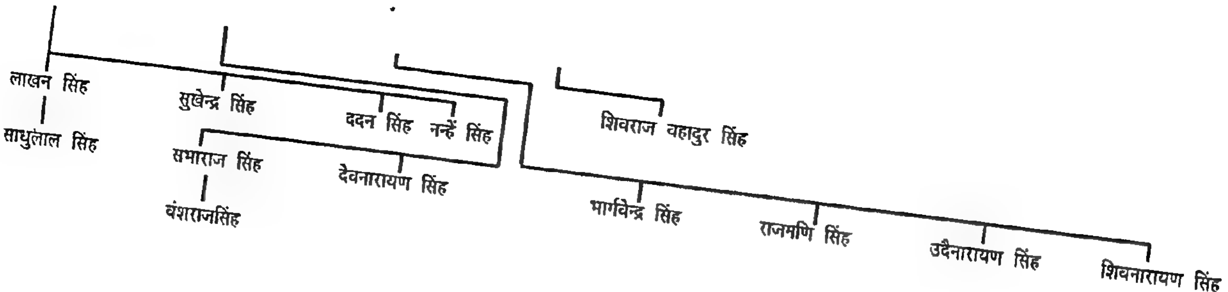
(सचरा न० 75)

इलाका चन्दकुँवा

ग्राम - माढ़ा टोला

श्री राजा पृथ्वीराज सिंह के तीसरे पुत्र हृदय सिंह के पुत्र दसमत सिंह के लड़के दुर्जन सिंह के दूसरे व तीसरे पुत्र क्रमशः वच्छराज सिंह और मान सिंह को ग्राम माढ़ा टोला हिस्से में मिला।





(सचरा नं० 76)

इलाका पथरहटा –
ग्राम - पथरहटा

श्री राजा सा० पृथ्वीराज के चौथे पुत्र अतवलशाह ने हिस्सा में ग्राम पथरहटा, उमरी और नवस्ता पाया। संवत 1756 में

अतवल शाह पुत्र श्री राजा पृथ्वीराज सिंह

जयराम सिंह — रन सिंह (वंश न रहा) — जुझार सिंह

रन सिंह तथा जुझार सिंह को मौजा उमरी में 225/- 225/- का हिस्सा मिला। रन सिंह के मर जाने के बाद इनके हिस्से की उमरी राज्य में जप्त हो गई। बाद को पतौरा इलाका के हिस्सा में शामिल कर ली गई। मौजा उमरी में जुझार सिंह के वंशज हैं।

जयराम सिंह के पुत्र: जुगराज सिंह 500/- — वरजोर सिंह 270/- — भगवत सिंह (भगवान सिंह) 111/-

जुगराज सिंह के पुत्र: मेहरवान सिंह — प्रताप सिंह — शिवबक्श सिंह — वरवण्ड सिंह — जवर सिंह

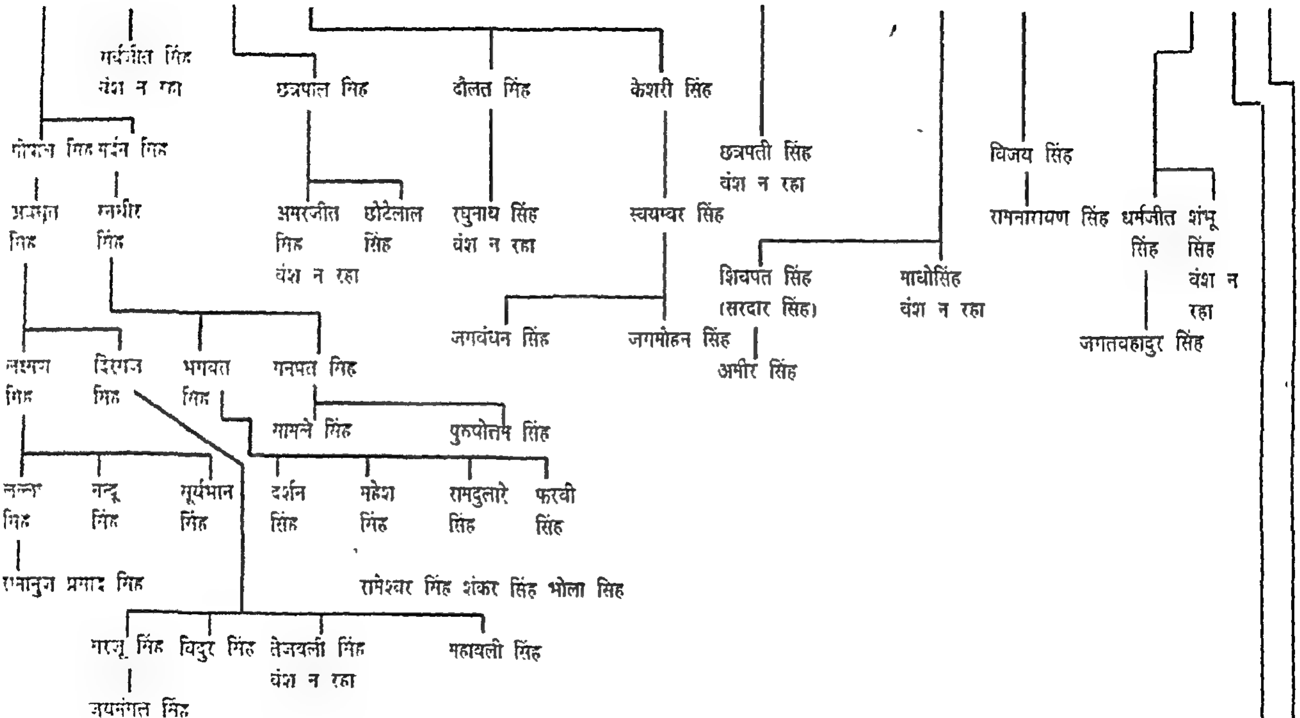
मेहरवान सिंह — भवानी सिंह

प्रताप सिंह — मेदनी सिंह, गणेश सिंह

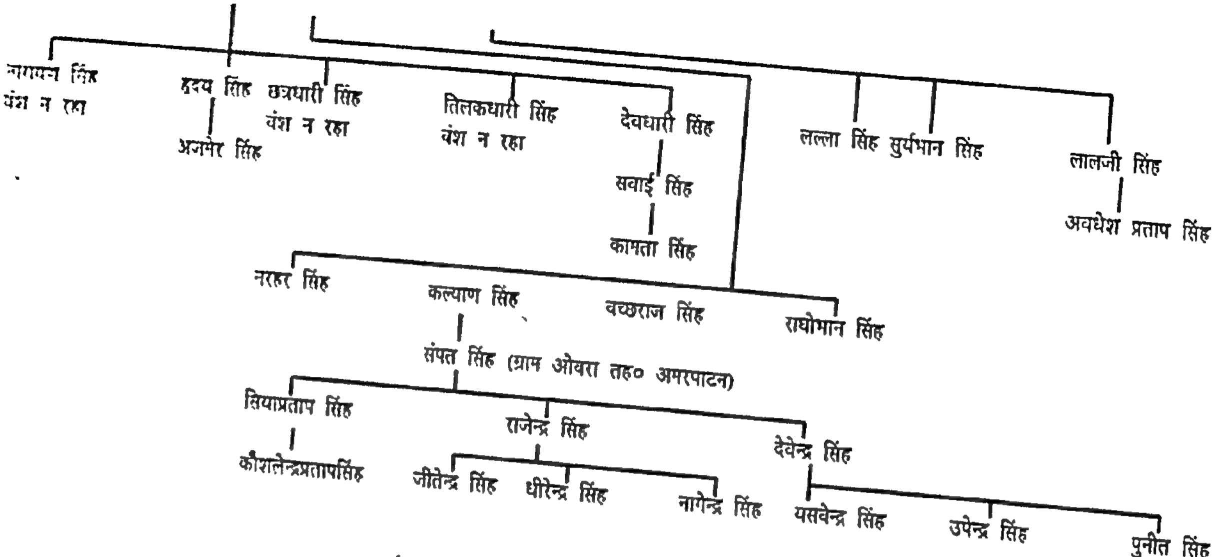
वरवण्ड सिंह — दशमत सिंह, दशरथ सिंह (वंश न रहा)

हनुमान सिंह

अर्जुन सिंह — भरत सिंह — भीष्म सिंह — रामसिंह (वंश न रहा)


वंश न रहा
मर्दन सिंह
छत्रपाल सिंह
दौलत सिंह
केशरी सिंह
छत्रपती सिंह
वंश न रहा
विजय सिंह
अमरजीत सिंह
वंश न रहा
छोटेलाल सिंह
रघुनाथ सिंह
वंश न रहा
स्वयम्वर सिंह
रामनारायण सिंह
धर्मजीत सिंह
शंभू सिंह
वंश न रहा
शिवपत सिंह
(सरदार सिंह)
माधोसिंह
वंश न रहा
जगबंधन सिंह
जगमोहन सिंह
जगतबहादुर सिंह
अमीर सिंह
लक्ष्मण सिंह
दिग्गज सिंह
भगवत सिंह
गनपत सिंह
गामने सिंह
पुरुषोत्तम सिंह
नन्दू सिंह
सूर्यभान सिंह
दर्शन सिंह
महेश सिंह
रामदुलारे सिंह
फरवी सिंह
रामेश्वर सिंह
शंकर सिंह
भोला सिंह
विदुर सिंह
तेजबली सिंह
वंश न रहा
महाबली सिंह

- अधार सिंह
  - दलजीत सिंह
    - चतुर सिंह
      - हरचन्द्र सिंह
        - रामेश्वर सिंह
      - शुभकरण सिंह
        - वल्देव सिंह
        - सुर्यपाल सिंह
  - उदवत सिंह
    - जगरूप सिंह
      - अहिवरन सिंह
        - रघुवीर सिंह
      - सियाप्रताप सिंह
    - ललई सिंह वंश न रहा
  - वैजनाथ सिंह वंश न रहा
- रछपाल सिंह वंश न रहा
- भाऊसिंह वंश न रहा
- नरहरसिंह वंश न रहा
- वहादुर सिंह वंश न रहा
- कंधर सिंह
  - सुरतान सिंह
    - दलेल सिंह
      - रणदमन सिंह
        - जगमोहन सिंह वंश न रहा
      - अमान सिंह
      - सरनाम सिंह
        - जैकरण सिंह
        - गिरवर सिंह
        - जगजाहिर सिंह
          - वोड़े सिंह
      - हरनाम सिंह वंश न रहा
  - गुरुदत्त सिंह
    - युधिष्ठिर सिंह वंश न रहा
  - वलवंत सिंह
    - कीरत सिंह
      - मनोहर सिंह
        - अमीर सिंह
          - यदुवीर सिंह
        - नृपसिंह
      - जगन्नाथ सिंह
    - धनुपधारी सिंह वंश न रहा
  - अजीत सिंह
    - पंजाव सिंह वंश न रहा
  - कमोद सिंह वंश न रहा
- शिव सिंह वंश न रहा
- जगत सिंह
  - अयोध्या सिंह
    - वंशी सिंह
      - भगवत सिंह
        - नौरंग सिंह

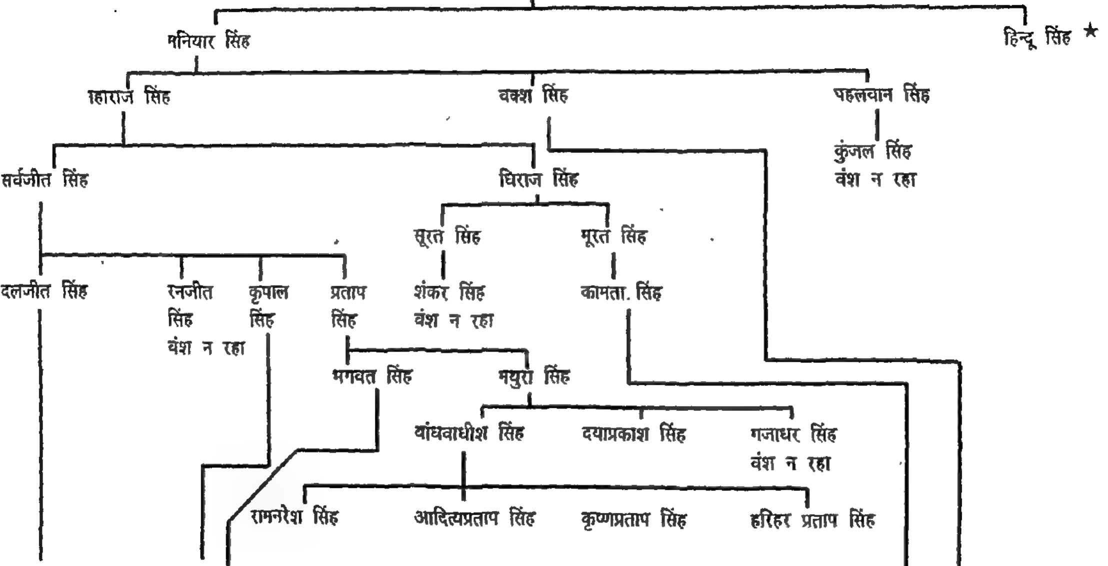

नारायन सिंह
वंश न रहा
हृदय सिंह
अजमेर सिंह
छत्रधारी सिंह
वंश न रहा
तिलकधारी सिंह
वंश न रहा
देवधारी सिंह
सवाई सिंह
कामता सिंह
लल्ला सिंह
सुर्यभान सिंह
लालजी सिंह
अवधेश प्रताप सिंह
नरहर सिंह
कल्याण सिंह
वच्छराज सिंह
राघोभान सिंह
संपत सिंह (ग्राम ओवरा तह० अमरपाटन)
सियाप्रताप सिंह
कौशलेन्द्रप्रतापसिंह
राजेन्द्र सिंह
जीतेन्द्र सिंह
धीरेन्द्र सिंह
नागेन्द्र सिंह
देवेन्द्र सिंह
यसवेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
पुनीत सिंह

(सचरा नं० 77)

इलाका पथरहटा

(ग्राम - उमरी)

पथरहटा के ठाकुर सा० अतवलशाह के तीसरे लड़के जुझार सिंह को आधी उमरी 250/- की मिली।



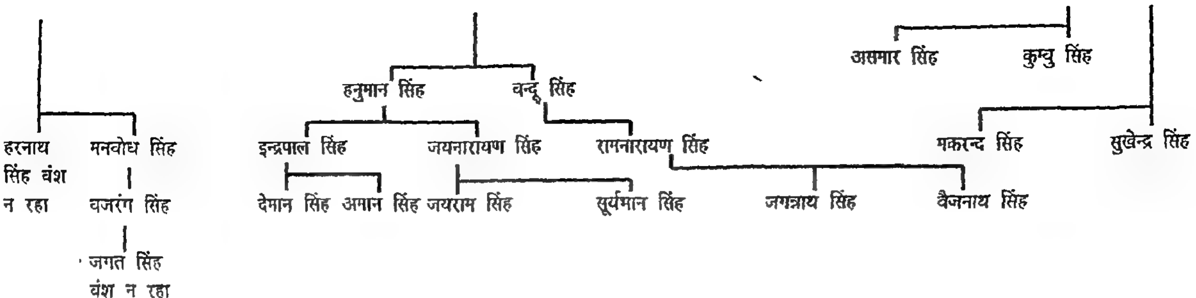
- अहिवरन सिंह
  - चन्द्रभान सिंह
    - रामभान सिंह
      - रामभक्त सिंह
        - उदयभान सिंह
        - लालन सिंह
    - शिवभान सिंह
      - बुद्धराज सिंह
- रनमत सिंह
  - जयमंगल सिंह
    - रामभगत सिंह
      - राममनोहर सिंह
      - रामानुज प्रताप सिंह
    - रामदुलारे सिंह

- जुगराज सिंह
  - रामेश्वर सिंह
    - मनरमन सिंह
      - रामलखन सिंह
    - करण सिंह
      - गुलाब सिंह
      - दानवहादुर सिंह
- राधो सिंह
  - मनमोहन सिंह
    - रामप्रताप सिंह
    - रामपाल सिंह
- कल्याण सिंह
  - गुरुवक्श सिंह
    - लालजी सिंह
    - रामगोपाल सिंह
    - केशरी प्रताप सिंह
    - वंधन सिंह

- दया प्रकाश सिंह
- गुरुमंगल सिंह
- जयराम सिंह
  - साधो सिंह
  - संतप्रताप सिंह

- वलवीर सिंह
  - रामनाथ सिंह वंश न रहा
- सिरनेत सिंह
  - दुनिया सिंह वंश न रहा
- जयपाल सिंह
  - अमर सिंह
    - रामसिपाही सिंह वंश न रहा
    - रामसेवक सिंह रि० लेफ्टीनेन्ट रीवा राज्य
      - रामप्रकाश सिंह
        - रामानुज प्रताप सिंह
          - कृष्णपाल सिंह
            - व्रजेश सिंह
              - अनिल प्रताप सिंह
            - मोहन सिंह
              - नलिनप्रताप सिंह
          - भारत सिंह
        - वृजेश सिंह
        - मोहन सिंह
      - उदय सिंह
        - रामायण प्रसाद सिंह
          - कौशलेन्द्र सिंह
          - अनन्त सिंह
        - वीरमन सिंह
        - वीरेन्द्र सिंह
  - भैरम सिंह वंश न रहा

- *हिन्दू सिंह
  - मोहन सिंह
    - किशोर सिंह
    - कलिन्दरसिंह वंश न रहा
    - सिरदार सिंह वंश न रहा
    - अभिमान सिंह
  - शिवदत्त सिंह



(सचरा नं० 78)

इलाका जाखी

ग्राम जाखी

श्री राजा सा० पृथ्वी राज सिंह के पाँचवें पुत्र संग्राम सिंह थे जो हिस्सा में ग्राम जाखी जमा कमाल 115/- रु० का पाया

संग्राम सिंह पुत्र श्री राजा पृथ्वीराज सिंह

|

दुर्गपाल सिंह

|

लक्ष्मण सिंह

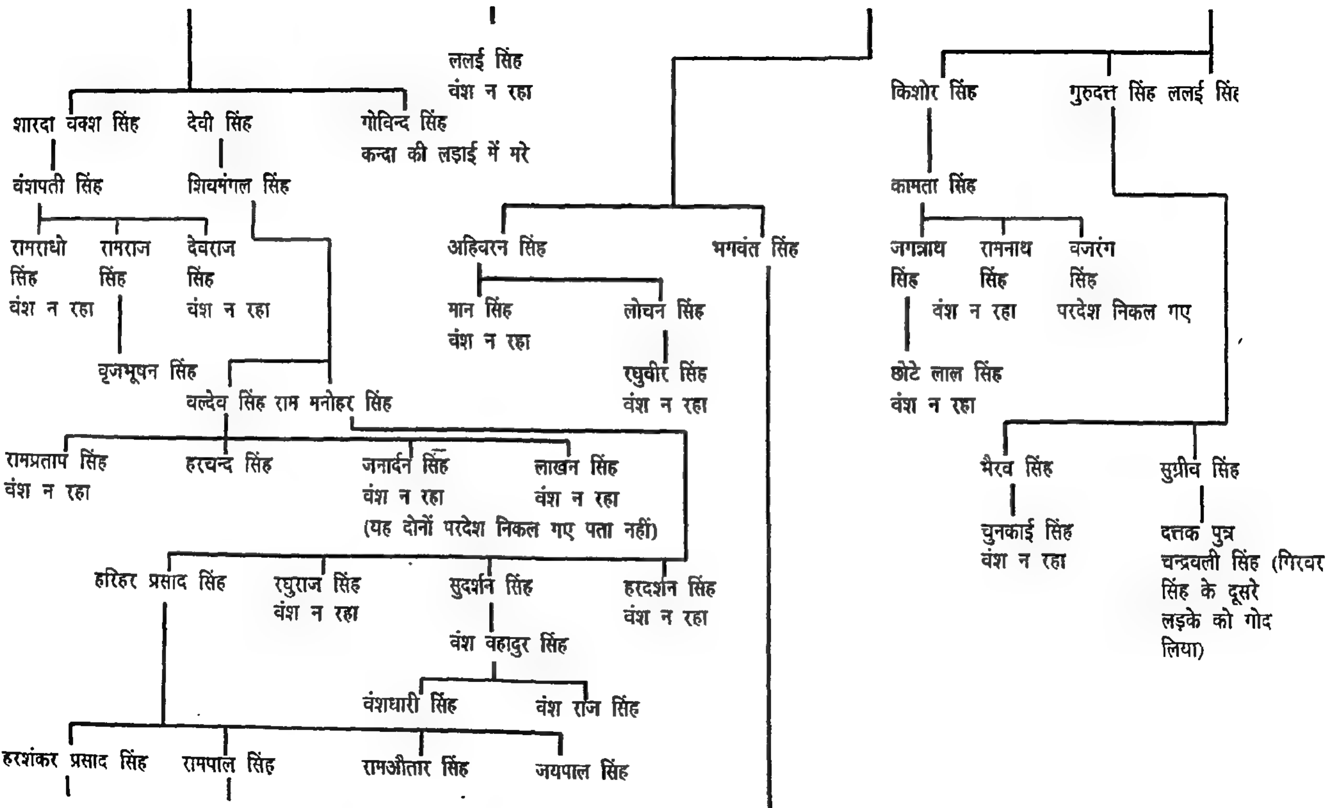
|

हनुमान सिंह

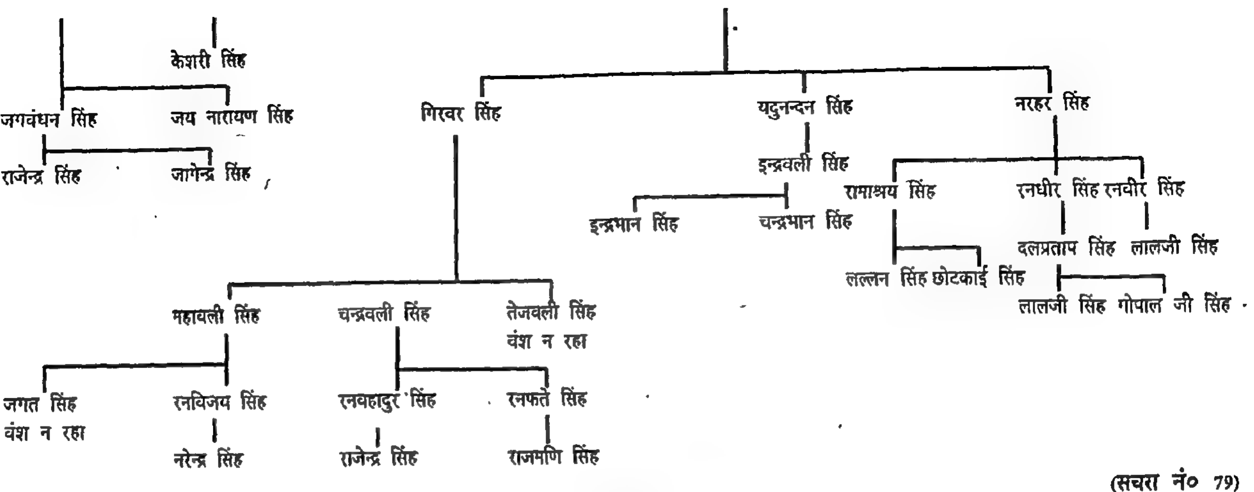
|

जालिम सिंह





ललई सिंह
वंश न रहा
शारदा वक्श सिंह
देवी सिंह
गोविन्द सिंह
कन्दा की लड़ाई में मरे
वंशपती सिंह
शिवमंगल सिंह
रामराधो सिंह
वंश न रहा
रामराज सिंह
देवराज सिंह
वंश न रहा
वृजभूषन सिंह
वल्देव सिंह राम मनोहर सिंह
रामप्रताप सिंह
वंश न रहा
हरचन्द सिंह
जनार्दन सिंह
वंश न रहा
लाखन सिंह
वंश न रहा
(यह दोनों परदेश निकल गए पता नहीं)
हरिहर प्रसाद सिंह
रघुराज सिंह
वंश न रहा
सुदर्शन सिंह
हरदर्शन सिंह
वंश न रहा
वंश वहादुर सिंह
वंशधारी सिंह
वंश राज सिंह
हरशंकर प्रसाद सिंह
रामपाल सिंह
रामऔतार सिंह
जयपाल सिंह
अहिवरन सिंह
भगवंत सिंह
मान सिंह
वंश न रहा
लोचन सिंह
रघुवीर सिंह
वंश न रहा
किशोर सिंह
गुरुदत्त सिंह ललई सिंह
कामता सिंह
जगन्नाथ सिंह
रामनाथ सिंह
वंश न रहा
वजरंग सिंह
परदेश निकल गए
छोटे लाल सिंह
वंश न रहा
भैरव सिंह
सुग्रीव सिंह
चुनकाई सिंह
वंश न रहा
दत्तक पुत्र
चन्द्रवली सिंह (गिरवर सिंह के दूसरे लड़के को गोद लिया)



(सचरा नं० 79)

इलाका बरकछी

ग्राम - बरकछी

श्री राजा सा० पृथ्वीराज सिंह के छठवें पुत्र अर्जुन सिंह ग्राम वरकछी डीही और जाखी की काप पाए हुए थे।

अर्जुन सिंह पुत्र श्री राजा पृथ्वीराज सिंह

गुरुदत्त सिंह

वच्छू सिंह

शिवनन्दन सिंह   साभन्त सिंह

शिवदत्त सिंह   मान सिंह   अमान सिंह   सनमान सिंह वंश न रहा   इन्द्रजीत सिंह वंश न रहा

ललई सिंह   मरजाद सिंह

चतुर सिंह   अभयराज सिंह   जगपती सिंह वंश न रहा   बद्री सिंह   रामदयाल सिंह

विशेषर सिंह वंश न रहा

राममनोहर सिंह वंश न रहा   राम सुजान सिंह   जानकी सिंह   वंश न रहा वंश न रहा   रामनिरंजन सिंह वंश न रहा   छत्रधारी सिंह   कामता सिंह वंश न रहा

गजेन्द्र सिंह

जोरावर सिंह वंश न रहा   जवर सिंह

रामनारायण सिंह   शिव बक्श सिंह   रामनाथ सिंह

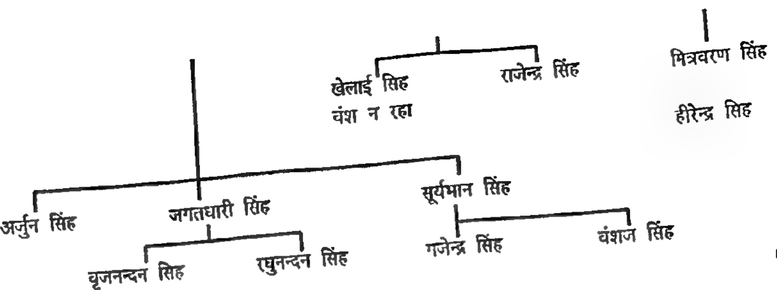
भगवत सिंह वंश न रहां   कमलजीत सिंह   धर्मराज सिंह   जंगबहादुर सिंह   विहारी सिंह वंश न रहा   जगतबहादुर सिंह   लालमन सिंह

वीरभान सिंह   रनजोर सिंह   धनेश सिंह   रमेश सिंह

सुखनिधान सिंह   दादू लाल सिंह   वेंकट सिंह   अमर सिंह   रामविनोद सिंह   प्रमोद सिंह   कामता सिंह   कल्याण सिंह

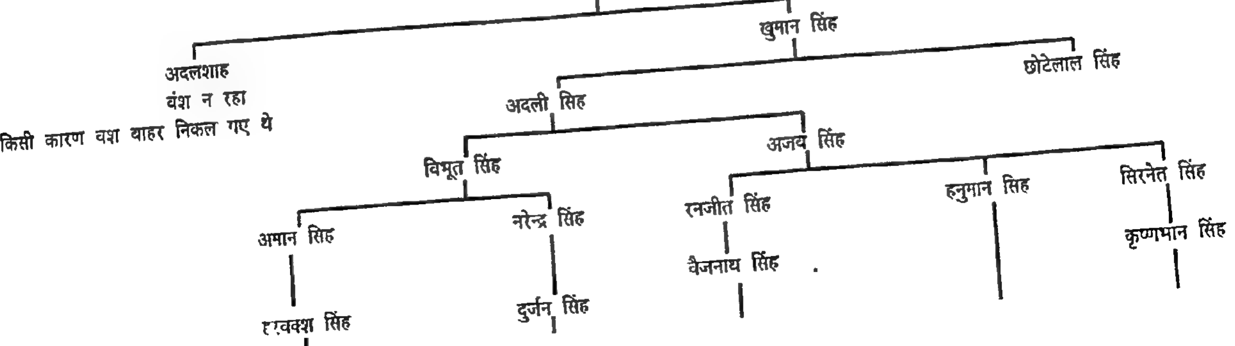
बंधू सिंह   ददौली   दुरजन सिंह

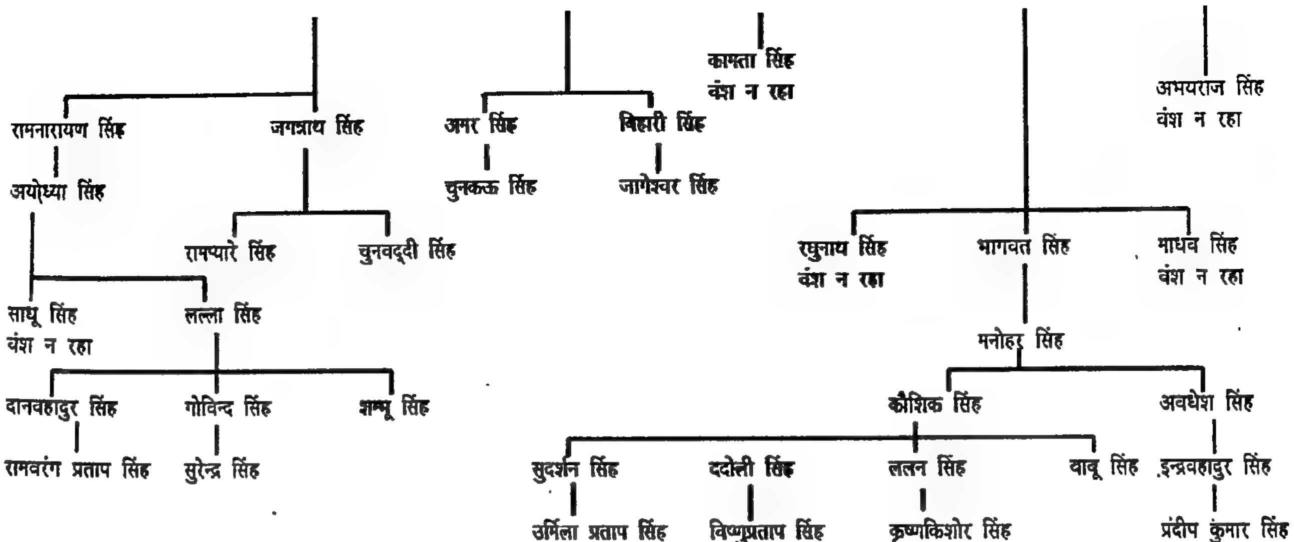
(सचरा नं० 80)



इलाका नरहठी
ग्राम नरहठी

श्री राजा सा० पृथ्वीराज सिंह के दसवें पुत्र पहाड़ सिंह उर्फ प्रहलाद सिंह हिस्सा में नरहठी और हरदुवा पाया।





रामनारायण सिंह
जगन्नाथ सिंह
अयोध्या सिंह
रामप्यारे सिंह
चुनवद्दी सिंह
साधू सिंह
वंश न रहा
लल्ला सिंह
दानवहादुर सिंह
गोविन्द सिंह
शम्भू सिंह
रामवरंग प्रताप सिंह
सुरेन्द्र सिंह
अमर सिंह
बिहारी सिंह
चुनकऊ सिंह
जागेश्वर सिंह
कामता सिंह
वंश न रहा
अभयराज सिंह
वंश न रहा
रघुनाथ सिंह
वंश न रहा
भागवत सिंह
माधव सिंह
वंश न रहा
मनोहर सिंह
कौशिक सिंह
अवधेश सिंह
सुदर्शन सिंह
ददोली सिंह
ललन सिंह
बाबू सिंह
इन्द्रबहादुर सिंह
उर्मिला प्रताप सिंह
विष्णुप्रताप सिंह
कृष्णकिशोर सिंह
प्रदीप कुमार सिंह

(सचरा नं० 81)

ग्राम - बड़ी कतकोन (इलाका जिगनहट)

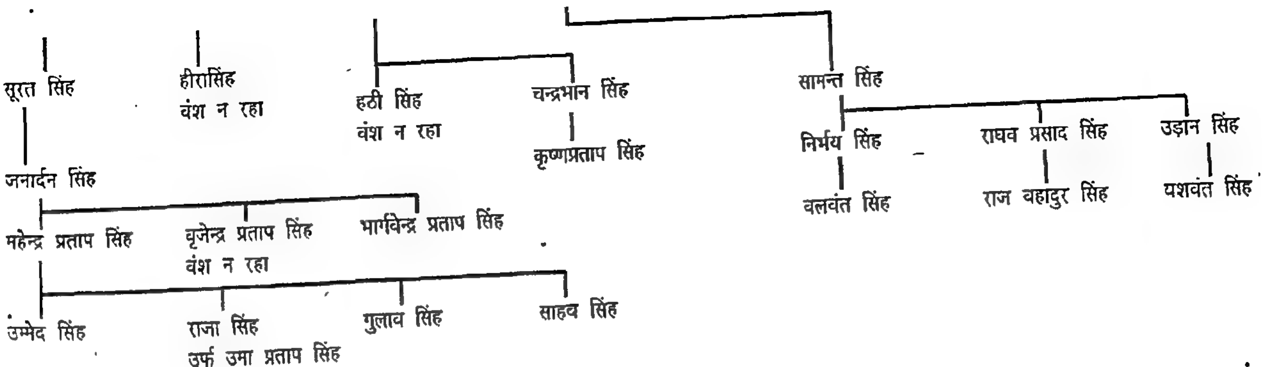
श्री राजा साहब फकीरशाह के दूसरे लड़के नरहरशाह को जिगनहट इलाका मिला। बगावत करने की वजह से इलाका जिगनहट ठाकुर अनिरुद्ध सिंह के समय में छूट गया। लाल अनिरुद्ध सिंह वि० स० 1899 के साल में लाल साहब (राघवेन्द्र सिंह राजा साहब नागौद) काशी में रहे। नागौद राज्य कोर्ट आफ वार्ड में रहा। राजा राघवेन्द्र सिंह की मरजी के मुताबिक दीवान ने जिगनहट पर कब्जा कर लिया और जिगनहट वालों को गढ़ी से निकाल दिया। कुछ दिन के बाद फिर से अनिरुद्ध सिंह ने गढ़ी में कब्जा कर लिया तब राघवेन्द्र सिंह ने जिगनहट जप्ती की दरख्वास्त किया। इस पर पोलिटिकल एजेन्ट कोल साहब बहादुर फौज लेकर धावा किया और गढ़ी गिरवा दी तथा संवत 1901 के जेठ के महीना में इलाका जिगनहट का रियासत नागौद राज्य में कब्जा हो गया। दोनों कतकोन वालों को नगदी गुजारा मिलता है, जो भाई इलाका के मौजूद थे अपने-अपने मौजा में कायम रहे।

नरहर सिंह (पुत्र फकीरशाह)

- जगरूप सिंह
  - दिरपाल सिंह
    - अनिरुद्ध सिंह
      - शत्रुजीत सिंह
      - वैजनाथ सिंह — हिस्सा नहीं मिला
      - गंभीर सिंह — हिस्सा नहीं मिला
      - रनधीर सिंह — हिस्सा नहीं मिला
      - गिरवर सिंह (मितराइ से) — हिस्सा नहीं मिला, वंश न रहा
    - हरवंशराजय — मौ० छोटी कतकोन काप 275/-
    - गोविन्द सिंह — मौ० छोटी कतकोन काप
    - गिरवर सिंह (दासी पुत्र)
      - गोकुल सिंह — वंश न रहा
      - लुप्त सिंह — वंश न रहा
      - अहिवरण सिंह — वंश न रहा
  - वरवन्ड सिंह — मौजा घोरहटी जमा कमाल 500)
  - रनजीत सिंह — मौजा टिकुरी जमा कमाल 500)
  - इन्द्रजीत सिंह — मौजा सलइया तथा सती जमा कमाल 190) वंश न रहा
- भोला सिंह — मौजा छीदा तथा सटना पाया
- दरियाव सिंह (अन्य पत्नी से) — काप सटना 150)

- इन्द्रजीत सिंह का वंश न होने की वजह से मौजा सलइया तथा सती राज्य में शामिल कर लिए गए।

लड़के शत्रुजीत सिंह के ठा० सा० अनिरुद्ध सिंह के समय में जिगनहट इलाका रियासत में जप्त हो गया।

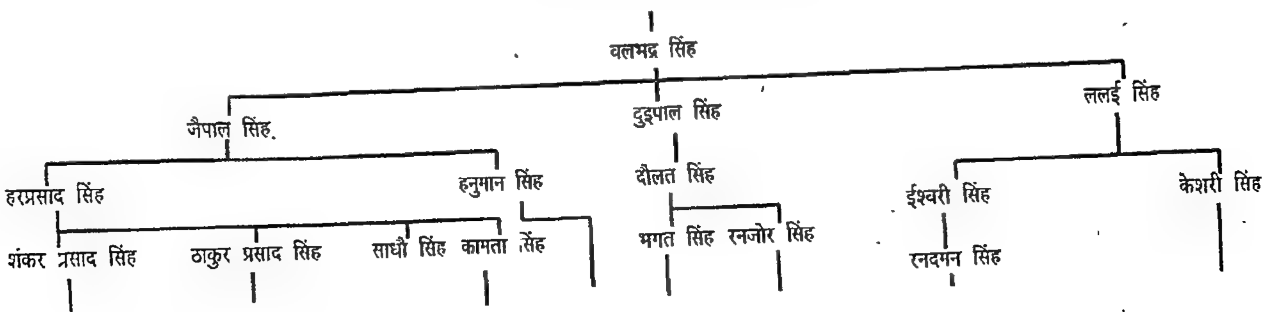


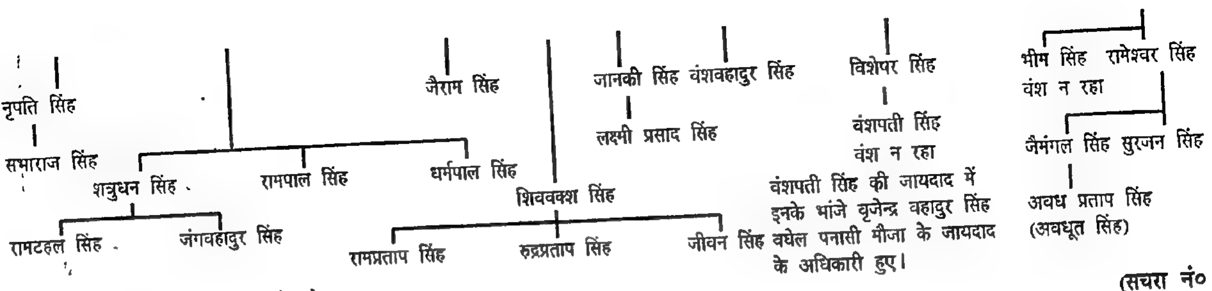
(सचरा नं० 82)

ग्राम - छींवा (इलाका जिगनहट)

श्री ठाकुर सा० नरहट सिंह जिगनहट के दूसरे पुत्र भोला सिंह जू देव को छींदा व सटना हिस्सा में पाया।

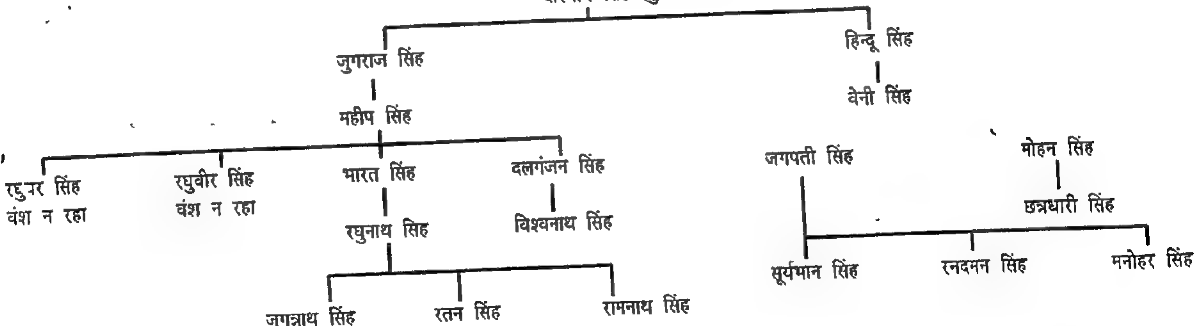
भोला सिंह (पुत्र नरहर सिंह)



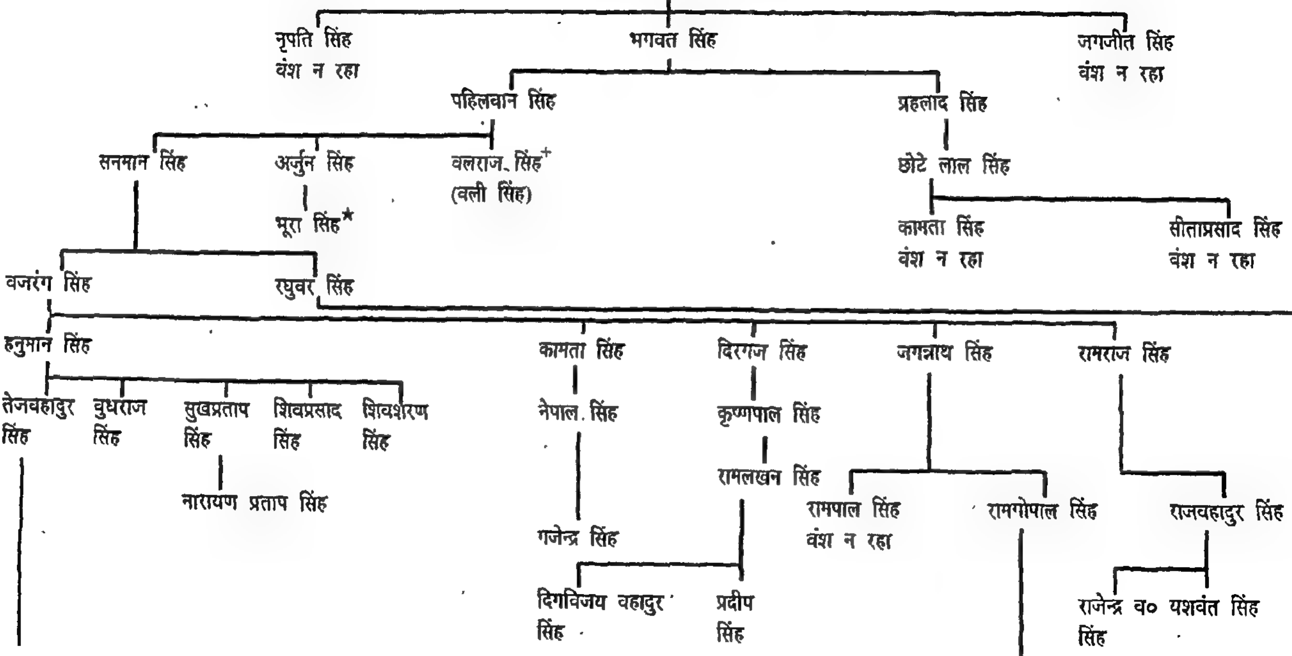


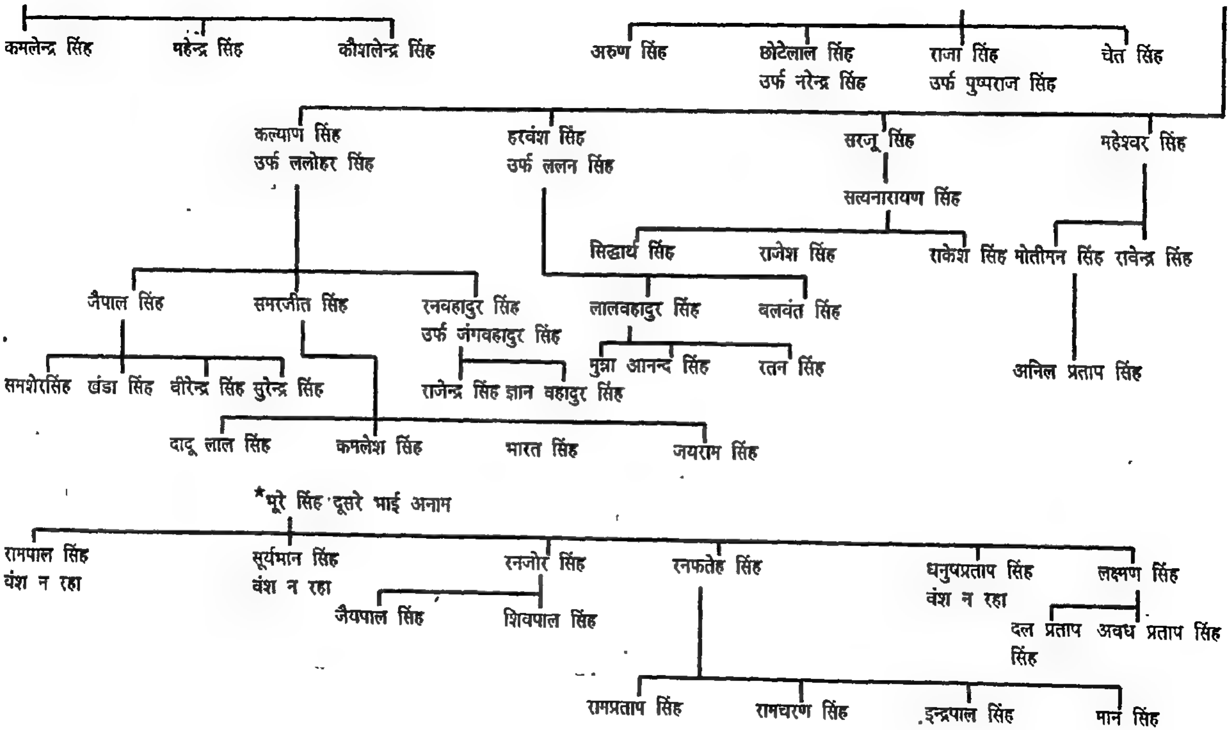
ग्राम - सटना (इलाका जिगनहट)

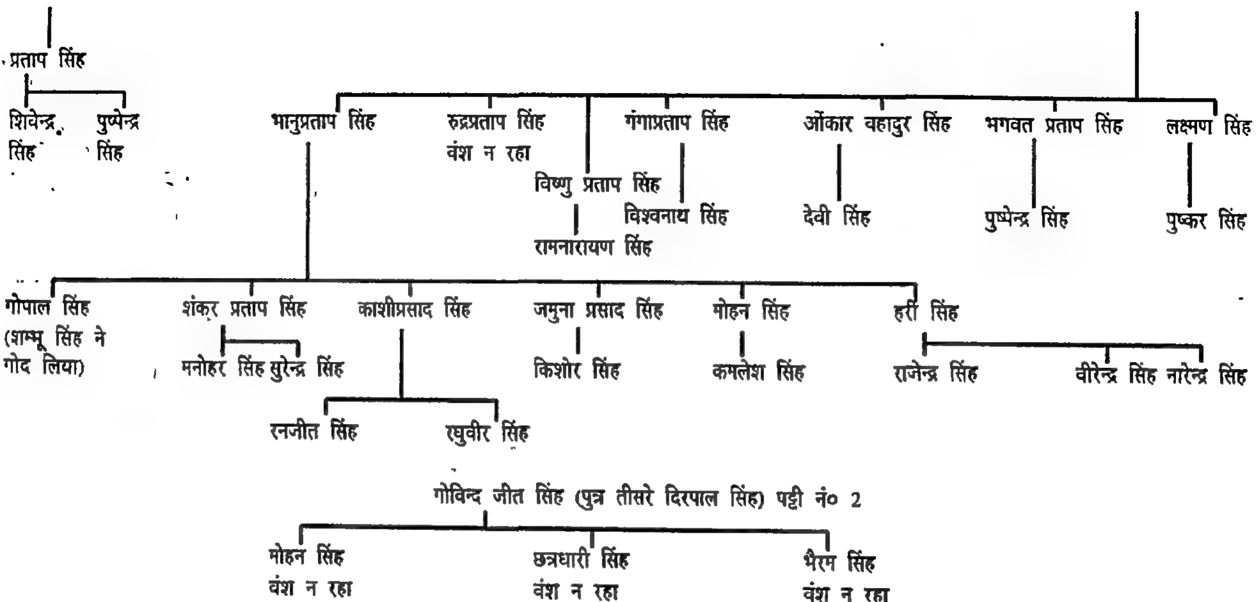
श्री ठा० सा० नरहरि सिंह जिगनहट के तीसरे पुत्र दरियाव सिंह थे जिन्हें सटना मिला था।



(सचरा नं० 84)


ग्राम - घोरहटी (इलाका जिगनहट)
श्री ठाकुर सा० जिगनहट श्री जगरूप सिंह के दूसरे पुत्र वरवन्ड सिंह को मौजा घोरहटी हिस्से में पाया।
वरवन्ड सिंह (पुत्र जगरूप सिंह)
नृपति सिंह वंश न रहा
भगवत सिंह
जगजीत सिंह वंश न रहा
पहिलवान सिंह
प्रहलाद सिंह
सनमान सिंह
अर्जुन सिंह
वलराज सिंह+ (वली सिंह)
छोटे लाल सिंह
भूरा सिंह*
कामता सिंह वंश न रहा
सीताप्रसाद सिंह वंश न रहा
वजरंग सिंह
रघुवर सिंह
हनुमान सिंह
कामता सिंह
दिरगज सिंह
जगन्नाथ सिंह
रामराज सिंह
तेजवहादुर सिंह
वुधराज सिंह
सुखप्रताप सिंह
शिवप्रसाद सिंह
शिवशरण सिंह
नेपाल सिंह
कृष्णपाल सिंह
रामलखन सिंह
नारायण प्रताप सिंह
गजेन्द्र सिंह
रामपाल सिंह वंश न रहा
रामगोपाल सिंह
राजवहादुर सिंह
दिगविजय वहादुर सिंह
प्रदीप सिंह
राजेन्द्र सिंह
व० यशवंत सिंह

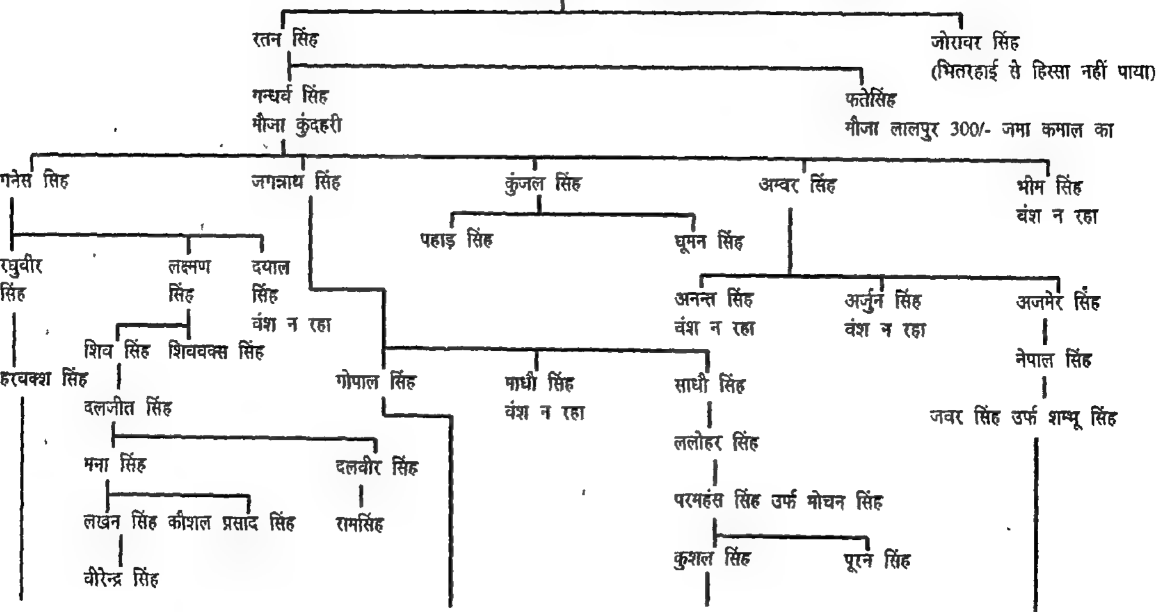

कमलेन्द्र सिंह
महेन्द्र सिंह
कौशलेन्द्र सिंह
अरुण सिंह
छोटेलाल सिंह उर्फ नरेन्द्र सिंह
राजा सिंह उर्फ पुष्पराज सिंह
चेत सिंह
कल्याण सिंह उर्फ ललोहर सिंह
हरवंश सिंह उर्फ ललन सिंह
सरजू सिंह
महेश्वर सिंह
सत्यनारायण सिंह
सिद्धार्थ सिंह
राजेश सिंह
राकेश सिंह
मोतीमन सिंह
रावेन्द्र सिंह
जैपाल सिंह
समरजीत सिंह
रनवहादुर सिंह उर्फ जंगवहादुर सिंह
लालवहादुर सिंह
वलवंत सिंह
मुन्ना आनन्द सिंह
रतन सिंह
अनिल प्रताप सिंह
समशेरसिंह
खंडा सिंह
वीरेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
राजेन्द्र सिंह
ज्ञान वहादुर सिंह
दादू लाल सिंह
कमलेश सिंह
भारत सिंह
जयराम सिंह
*भूरे सिंह दूसरे भाई अनाम
रामपाल सिंह वंश न रहा
सूर्यभान सिंह वंश न रहा
रनजोर सिंह
रनफतेह सिंह
धनुषप्रताप सिंह वंश न रहा
लक्ष्मण सिंह
जैयपाल सिंह
शिवपाल सिंह
दल प्रताप सिंह
अवध प्रताप सिंह
रामप्रताप सिंह
रामचरण सिंह
इन्द्रपाल सिंह
मान सिंह



प्रताप सिंह
शिवेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
भानुप्रताप सिंह
रुद्रप्रताप सिंह
वंश न रहा
विष्णु प्रताप सिंह
रामनारायण सिंह
गंगाप्रताप सिंह
विश्वनाथ सिंह
ओंकार बहादुर सिंह
देवी सिंह
भगवत प्रताप सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
लक्ष्मण सिंह
पुष्कर सिंह
गोपाल सिंह
(शम्भू सिंह ने
गोद लिया)
शंकर प्रताप सिंह
मनोहर सिंह
सुरेन्द्र सिंह
काशीप्रसाद सिंह
रनजीत सिंह
रघुवीर सिंह
जमुना प्रसाद सिंह
किशोर सिंह
मोहन सिंह
कमलेश सिंह
हरी सिंह
राजेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
नारेन्द्र सिंह
गोविन्द जीत सिंह (पुत्र तीसरे दिरपाल सिंह) पट्टी नं० 2
मोहन सिंह
वंश न रहा
छत्रधारी सिंह
वंश न रहा
भैरम सिंह
वंश न रहा

ग्राम - कुंदहरी (इलाका)

श्री राजा सा० फकीरशाह के तीसरे पुत्र वख्तावर सिंह उर्फ छोटेलाल सिंह को कुंदहरी तथा लालपुर मौजा लगाकर जमा कमाल 1300/- रुपयों का पाया।



रामराधे सिंह रामनिरंजन सिंह

राम प्रताप सिंह

उमा प्रताप सिंह

कामता सिंह अयोध्या सिंह

सूर्यभान सिंह चन्द्रभान सिंह हेमराज सिंह

लाल बहादुर सिंह राजबहादुर सिंह

राममन सिंह

ओंकार सिंह

महेश प्रताप सिंह गोपाल सिंह रामजीत सिंह

रामानुज प्रताप सिंह शारदा प्रताप सिंह चन्द्रशेखर सिंह पन्नामन सिंह

कृष्ण प्रताप सिंह दलप्रताप सिंह सकत्तर सिंह रामप्यारे सिंह

वंश न रहा

तालेन्द्र प्रताप सिंह

राम लला सिंह रामनरेश सिंह

अवध प्रताप सिंह सुमन्त सिंह धनेश सिंह रिपुसूदन सिंह

उदयभान सिंह तेजभान सिंह सियाप्रताप सिंह रामपाल सिंह उर्फ अंगद सिंह

मोहन सिंह अर्जुन सिंह

महेन्द्र सिंह

श्याममन सिंह लक्ष्मण सिंह लवकेश सिंह

वीरबली सिंह

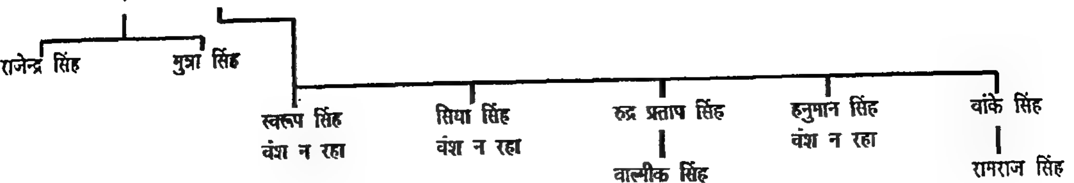
जनार्दन सिंह लव सिंह रामसिंह मोतीलाल सिंह

(सचरा नं० 88)

ग्राम - लालपुर (इलाका कुंदहरी)

मौजा कुंदहरी के ठाकुर रतन सिंह के दूसरे लड़के फतेहसिंह मौजा लालपुर आधा पाया जमा कमाल 300/- रु० का।

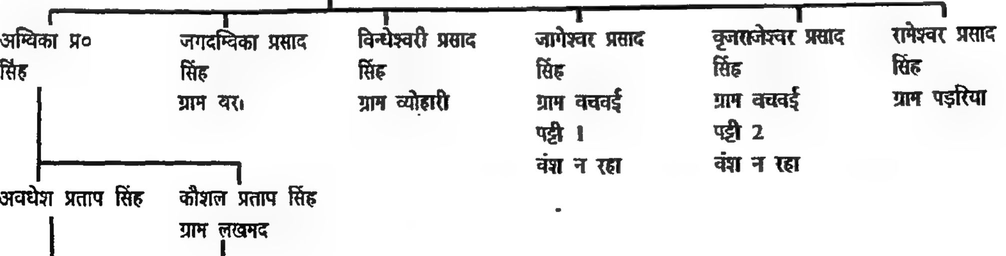
- फतेहसिंह (पुत्र रतन सिंह)
  - गोपाल सिंह
    - राम सिंह
      - महिपाल सिंह
        - मना सिंह वंश न रहा
      - गिरवर सिंह
        - दिग्गज सिंह वंश न रहा
    - भारत सिंह
      - छत्रधारी सिंह
        - गजराज सिंह
          - जागेश्वर सिंह
            - मंगलेश्वर सिंह
          - सुदर्शन सिंह
      - हरचन्द्र सिंह
      - भभूत सिंह
        - भोला सिंह
          - सरजू सिंह वंश न रहा
      - दिलराज सिंह
        - विशेपर सिंह
          - हीरामन सिंह
        - शिवमंगल सिंह
    - धनुषधारी सिंह वंश न रहा
    - जानकी सिंह
      - अवधूत सिंह
        - वद्री सिंह
          - शिवशरण सिंह
          - गुरुशरण सिंह
      - अनुसइया प्रसाद सिंह
        - रामप्रताप सिंह
          - संपतलाल सिंह
        - रामदेव सिंह
  - रघुवर सिंह वंश न रहा
  - किशोर सिंह
    - नारायण सिंह
      - मनोहर सिंह वंश न रहा
    - सुजान सिंह वंश न रहा

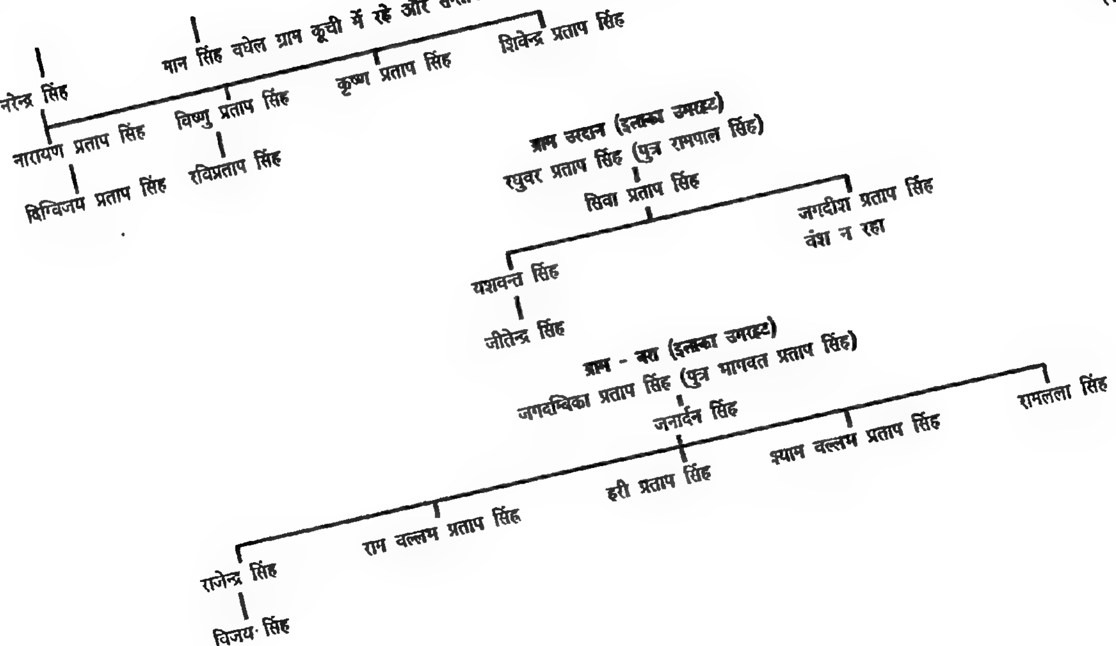


(सचरा नं० 89)

इलाका उमरहट

राजा सा० अहलाद सिंह के द्वितीय पुत्र दिलराज सिंह इलाका उमरहट जमा कमाल 4250/- सालाना आमदनी विक्रमी संवत ज्येष्ठ वदी 2, 1843 (1786 ई०) को हिस्सा पाया। मौजा उमरहट व्योहारी, वरा, पड़रिया, वचवई, लखमत, पोंड़ी अमिलिया, डोंड़ी, रीठी, वसहा, पनहाई, कुटमी उरदान, लालपुर इलाका के अन्तर्गत के गांव थे।




ग्राम बर।
अम्बिका सिंह
कौशल प्रताप सिंह
ग्राम लखनपुर
अवधेश प्रताप सिंह
मान सिंह बघेल ग्राम कूची में रहे और सन्तान न होने के कारण जायदाद के वारिस हुए।
(सचरा नं० 90)
नरेन्द्र सिंह
शिवेन्द्र प्रताप सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह
विष्णु प्रताप सिंह
नारायण प्रताप सिंह
रविप्रताप सिंह
दिग्विजय प्रताप सिंह
ग्राम उरदान (इलाका उमरहट)
रघुवर प्रताप सिंह (पुत्र रामपाल सिंह)
सिवा प्रताप सिंह
जगदीश प्रताप सिंह
वंश न रहा
(सचरा नं० 91)
यशवन्त सिंह
जीतेन्द्र सिंह
ग्राम - बरा (इलाका उमरहट)
जगदम्बिका प्रताप सिंह (पुत्र भागवत प्रताप सिंह)
जनार्दन सिंह
रामलला सिंह
श्याम वल्लभ प्रताप सिंह
हरी प्रताप सिंह
राम वल्लभ प्रताप सिंह
राजेन्द्र सिंह
विजय सिंह

(सचरा नं० 92)

ग्राम - ब्योहारी (इलाका उमरहट)

विन्धेश्वरी प्रसाद सिंह (पुत्र भागवत प्रताप सिंह)

1 राम वल्लभ प्रताप सिंह (गोपाल जी) | 2 लखन जी | 3 हरशरण प्रताप सिंह | 4 गणेश सिंह | 5 कमलेश सिंह

उदय प्रताप सिंह | संतोष सिंह | विनोद सिंह | अशोक सिंह | प्रभाकर सिंह | दिवाकर सिंह | वालेन्द्र सिंह

मनोज सिंह | शरद सिंह | शिशिर सिंह | अजय सिंह | अतुल सिंह

अनिल सिंह | दिलीप सिंह | मूरत प्रताप सिंह | प्रमोद सिंह | श्यामले सिंह | राजेन्द्र सिंह

आदित्य प्रताप सिंह | प्रेमवहादुर सिंह | सुदामा सिंह | प्रवीणसिंह | सत्यजीतसिंह

मुकुन्द सिंह | राजेश सिंह

रविप्रताप सिंह | प्रकाश सिंह | रावेन्द्र सिंह | शिवेन्द्र सिंह

मृगेन्द्र सिंह | विमलेन्द्र सिंह | दीपेन्द्र सिंह

भूपेन्द्र सिंह | पुष्पेन्द्र सिंह | उपेन्द्र सिंह | धीरेन्द्र सिंह | विनय सिंह | विनीत सिंह | विवेक सिंह

(सचरा नं० 93)

ग्राम ववबई (इलाका उमरहट)

जागेश्वर प्रताप सिंह (पुत्र भागवत प्रताप सिंह)

ददन सिंह

वंश न रहा

दामाद गुरु प्रसन्न सिंह वाघेल खैरहन

(सचरा नं० 94)

ग्राम - पडरिया (इलाका उमरहट)

रामेश्वर प्रसाद सिंह (पुत्र भागवत प्रताप सिंह)

1 जोधा प्रताप सिंह
- राम जी
- राजेश सिंह
- अरुण सिंह

2 बलराम सिंह

3 सुरेन्द्र सिंह

4 घनश्याम सिंह

(सचरा नं० 95)

ग्राम - लखमद (इलाका उमरहट)

कौशल प्रसाद सिंह (पुत्र अम्बिका प्रसाद सिंह)

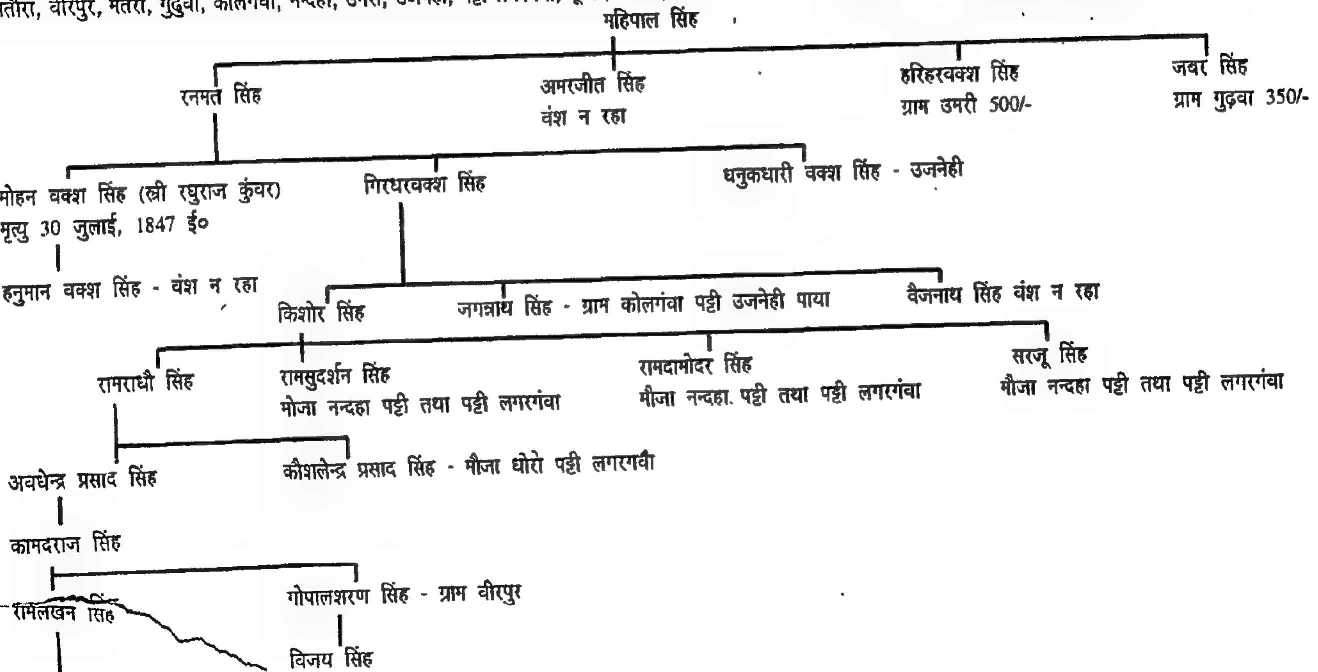
वंश न रहा

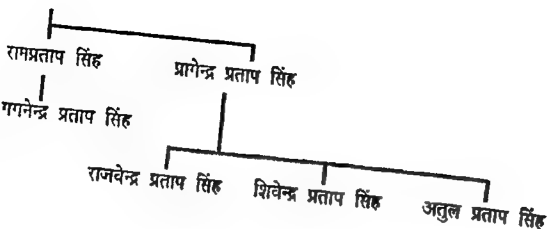
मान सिंह वाघेल कूंची काबिज

(सचरा नं० 96)

इलाका पतौरा

राजा सा० अहलाद सिंह तृतीय पुत्र महिपाल सिंह को इलाका पतौरा जमा कमाल 3340/- सालाना आमदनी असाढ़ वदी 7 वृहस्पतिवार सं० 1845 (सन् 1788 ई०) में हिस्सा पाया। मौजा पतौरा, वीरपुर, मतरी, गुढुवा, कोलगंवा, नन्दहा, उमरी, उजनेही, पट्टी लगरगंवा, कूम्ही, झखोर, भरौली, पपरागार और काप मौहार (हार सोनखर) इलाका के अन्तर्गत गांव थे।

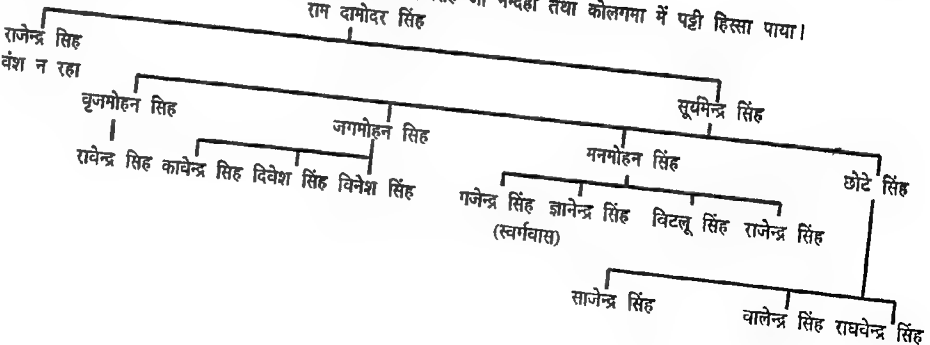




ग्राम - नन्दहा पट्टी नं० 1 (इलाका पतीरा)

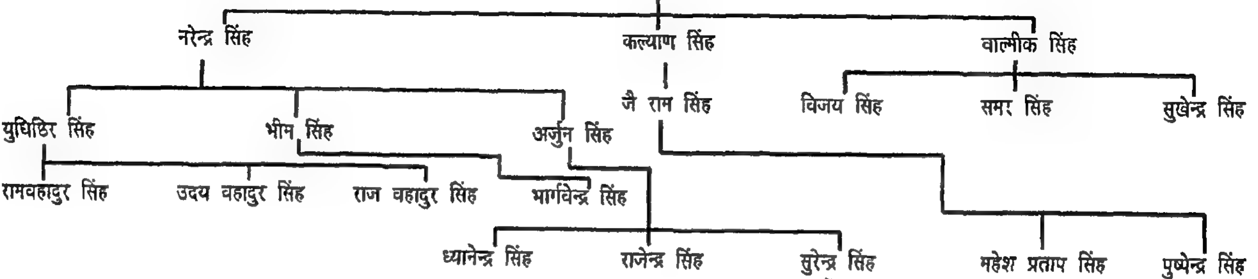
(सचरा नं० 97)

श्री ठाकुर सा० पतीरा के श्री किशोर सिंह के तीसरे पुत्र रामदामोदर सिंह जी नन्दहा तथा कोलगमा में पट्टी हिस्सा पाया।



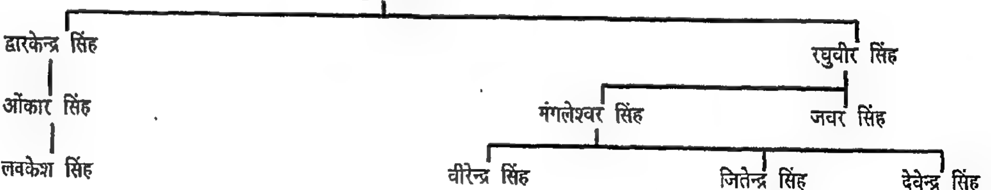
ग्राम - नन्दहा पट्टी नं० 2 (इलाका पतौरा)

श्री ठाकुर सा० पतौरा के श्री किशोर सिंह के चौथे पुत्र लाल सरयू सिंह ने नन्दहा तथा लगरगंवा पट्टी पाया।



ग्राम - नन्दहा पट्टी नं० 3 (इलाका पतौरा)

श्री ठा० सा० पतौरा के श्री किशोर सिंह जी के दूसरे पुत्र राम सुदर्शन सिंह जी नन्दहा पट्टी तथा लगरगंवा में पट्टी पाया।



(सचरा नं० 98)

ग्राम उजनेही (इलाका पतौरा)

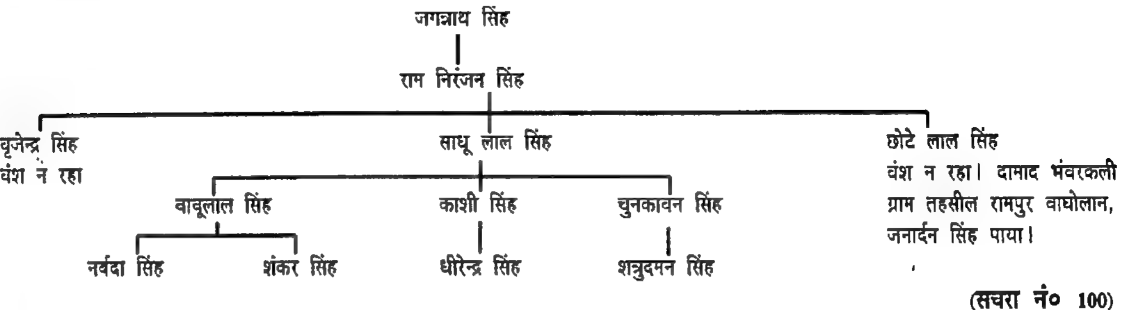
- धनुपधारीवक्शसिंह (पुत्र रनमत सिंह)
  - लक्ष्मण सिंह
    - गुरुवक्श सिंह
      - सीता प्रसाद सिंह
        - अवधेश प्रसाद सिंह
          - फतेन्द्रशरण सिंह फौत
          - उपेन्द्र शरण सिंह
      - दासरथी साह सिंह
        - राम वहादुर सिंह
          - पुष्पेन्द्र प्र० सिंह
    - चन्द्रभान सिंह
      - सुखेन्द्र प्रताप सिंह
        - हरिशरण सिंह
          - विजय सिंह
          - विवेक सिंह
      - गुलाव सिंह
        - निरंजन शरण सिंह
          - अवध किशोर सिंह
          - रमा गोविन्द सिंह
        - त्रिवेणी शरण सिंह
          - अंकितसिंह
  - शत्रुघ्न सिंह
    - रामानुग्रह सिंह
      - हर प्रसाद सिंह वंश न रहा
      - रमाप्रताप सिंह वंश न रहा
      - जानकी प्रसाद सिंह, वंश न रहा
    - रामप्यारे सिंह
      - रामलाल सिंह वंश न रहा
      - पदमकपोल सिंह
        - त्रिविक्रम सिंह
          - भूपेन्द्रसिंह
          - शिवेन्द्रसिंह
        - धर्मविजय सिंह
          - मंगलेश्वरसिंह
          - उग्रसेनसिंह

नोट - श्री धनुपधारी वक्श सिंह को उजनेही का जुज रकवा 400/- सालाना आमदनी मिती 12 आरम्भ वदी संवत 1900 के साल श्री लाल गिरधरवक्शसिंह ने दिया।

(सचरा नं० 99)

ग्राम - कोलगंवा (इलाका पतौरा)

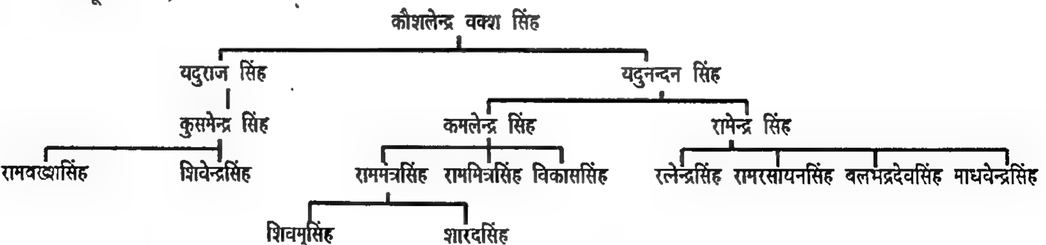
श्री ठाकुर सा० पतौरा गिरधरवक्शसिंह के दूसरे पुत्र जगन्नाथ सिंह जी 100/- जमा कमाल मौजा कोलगंवा तथा 300/- जमा कमाल उजनेही पट्टी पाया यानी 400/- जमा कमाल का हिस्सा मिला।



(सचरा नं० 100)

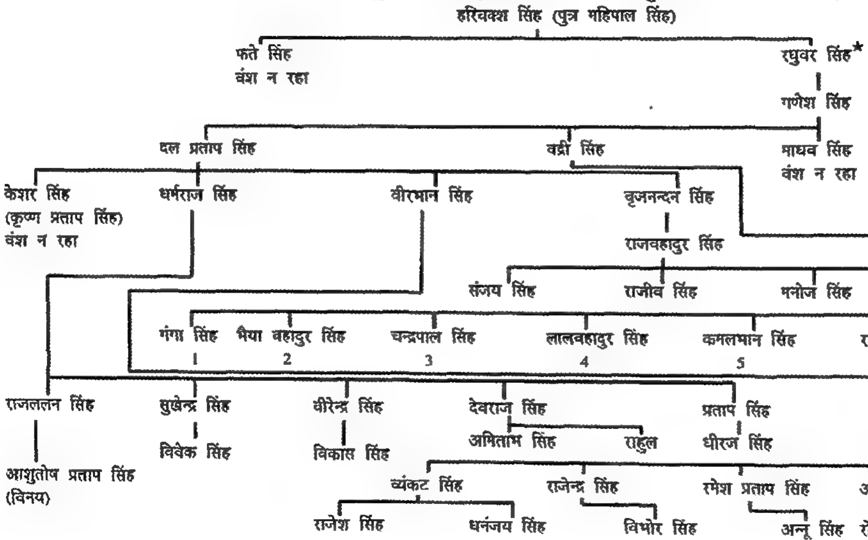
ग्राम धौरा (इलाका पतौरा)

श्री ठाकुर सा० पतौरा श्री रामराधो सिंह के दूसरे पुत्र कौशलेन्द्र वक्श सिंह ने 100/- रु० जमा कमाल में मौजा धौरा तथा 88/- रु० जमा कमाल में मौजा लगरगंवा पट्टी हिस्से में पाया। (वि० सं० 1970 पूसवदी 13)

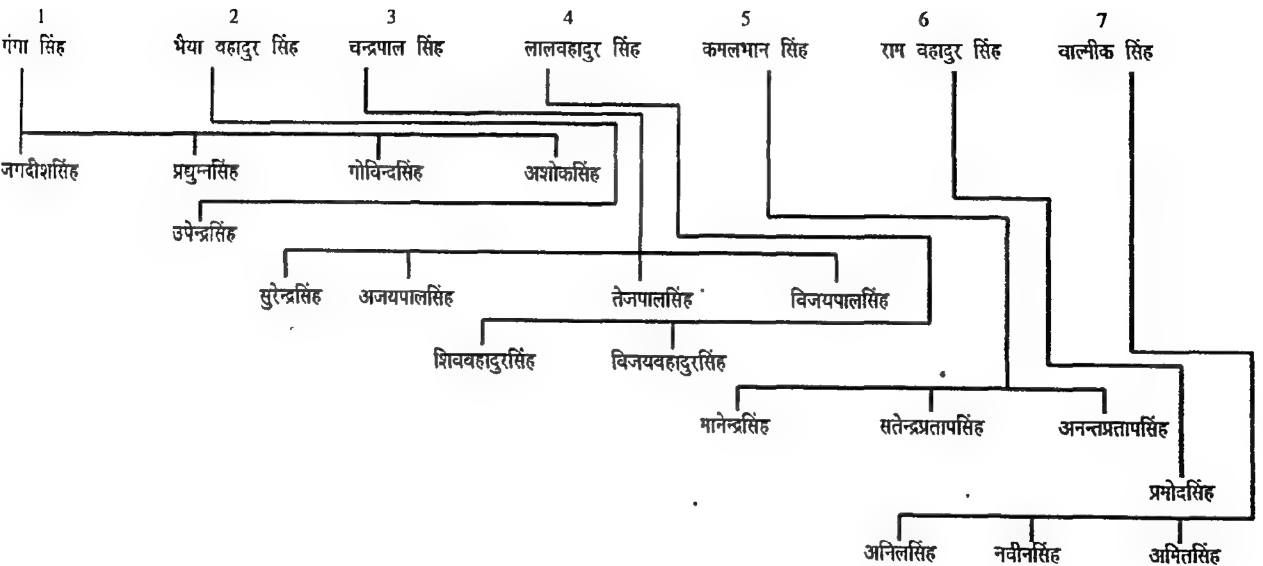


(सचरा नं० 101)

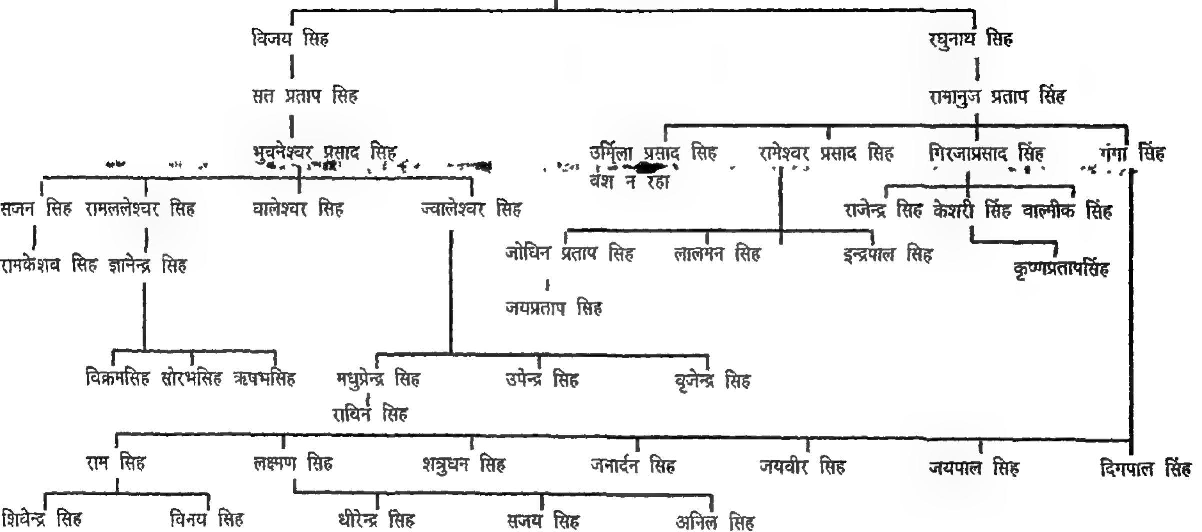
*नोट - इनका विवाह रनमत सिंह की बहिन के साथ हुआ था। मेलसांव के युद्ध में यह रनमत के साथ रहे।



वघेलान, वघेलान, (सचरा ९९ में)



(सचरा नं० 102)



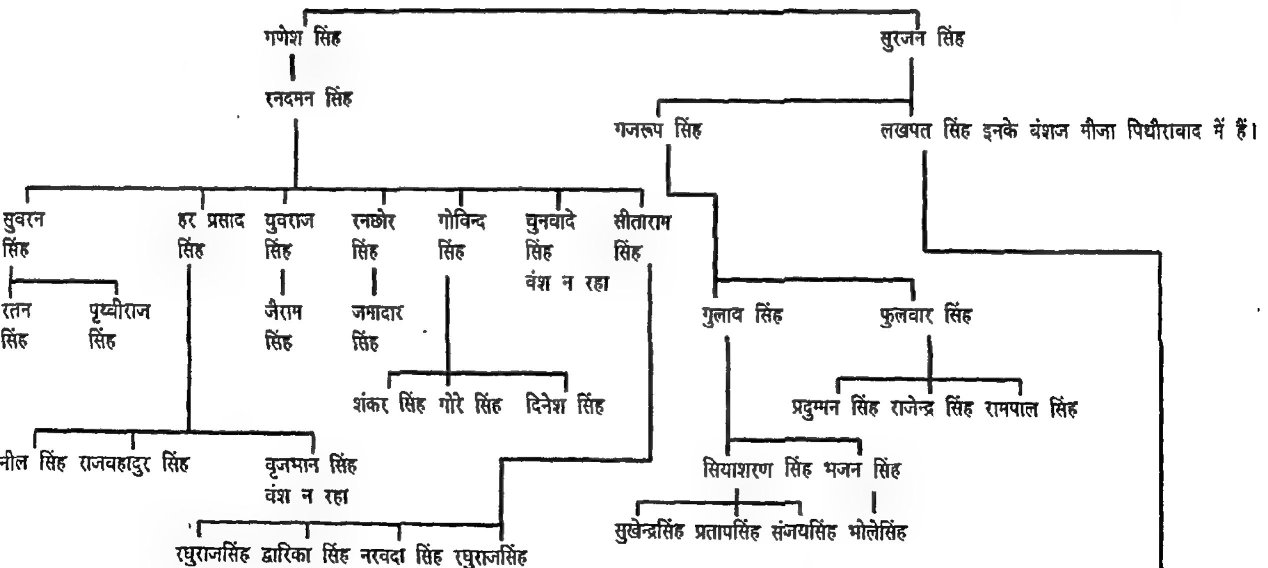
ग्राम - गुढ़वा (इलाका पतौरा)
इनकी सनद जेठ वदी 30 बुधवार सं० 1878 को दी गई।
जवर सिह (पुत्र महिपाल सिह)
विजय सिह
रघुनाथ सिह
सत प्रताप सिह
रामानुज प्रताप सिंह
भुवनेश्वर प्रसाद सिह
उर्मिला प्रसाद सिह
वंश न रहा
रामेश्वर प्रसाद सिह
गिरजाप्रसाद सिंह
गंगा सिंह
सजन सिह
रामललेश्वर सिह
वालेश्वर सिह
ज्वालेश्वर सिह
राजेन्द्र सिह
केशरी सिंह
वाल्मीक सिंह
रामकेशव सिह
ज्ञानेन्द्र सिह
जोधिन प्रताप सिह
लालमन सिह
इन्द्रपाल सिह
कृष्णप्रतापसिंह
जयप्रताप सिह
विक्रमसिह
सोरभसिह
ऋषभसिह
मधुप्रेन्द्र सिह
उपेन्द्र सिह
वृजेन्द्र सिह
राविन सिह
राम सिह
लक्ष्मण सिह
शत्रुधन सिह
जनार्दन सिह
जयवीर सिह
जयपाल सिह
दिगपाल सिंह
शिवेन्द्र सिह
विनय सिह
धीरेन्द्र सिह
सजय सिह
अनिल सिह

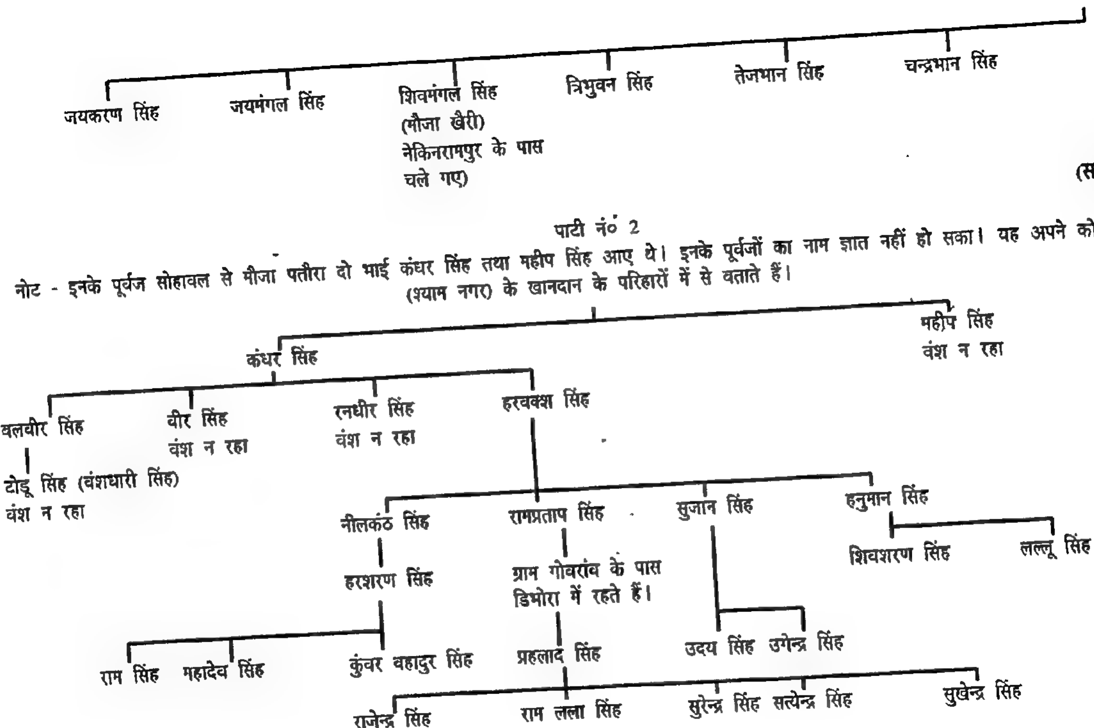
(सचरा नं० 103)

मौजा पतौरा एवं पिथौरावाद के परिहार पाटी नं० 1

नोट - इनके पूर्वजों का नाम नहीं मालूम हो पाया। यह लोग अपने को भटनवारा इलाका के होना बताते हैं। राजा कल्याण सिंह के दूसरे पुत्र भगतराय को वटइया ग्राम (श्याम नगर) हिस्से में पाया था।

राजा सा० नरेन्द्र सिंह जदेव के छठवें पुत्र कनक सिंह को भटनवारा इलाका मिला था जिसको राजा सा० भारतशाह ने जप्त कर अपने दूसरे लड़के मर्दनशाह को इलाका भटनवारा दिया था। यह लोग कनक सिंह के वंशज होना मालूम होते हैं।



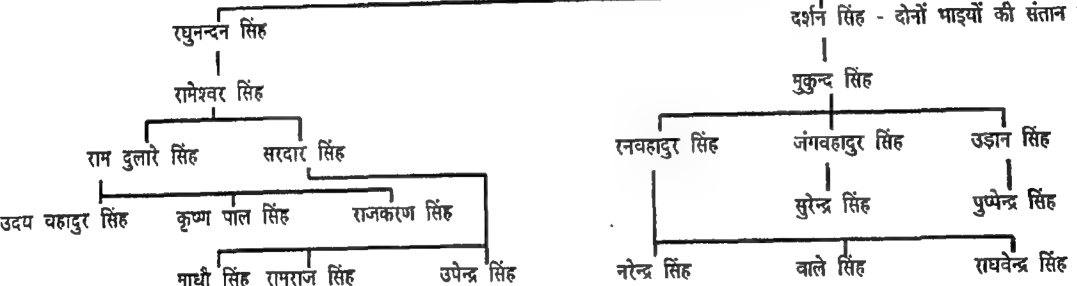


नोट - इनके पूर्वज सोहावल से मौजा पतौरा दो भाई कंधर सिंह तथा महीप सिंह आए थे। इनके पूर्वजों का नाम ज्ञात नहीं हो सका। यह अपने को ग्राम वटइया (श्याम नगर) के खानदान के परिहारों में से वताते हैं।

(सचरा नं० 105)

ग्राम पतौरा में रहने वाले परिहार पट्टी नं० 3

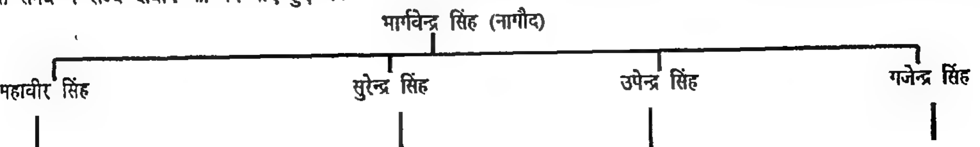
ठाकुर पदुम सिंह इलाका भटनवारा से हिस्सा ग्राम अकौना साठियन वाला पाया। उनके दो पुत्र थे पहिले जगरूप सिंह ग्राम अकोना में उनके वंशज हैं। दूसरे अनन्त सिंह ग्राम गोरइया (राज्य कोठी) चले गए। वहाँ इनके वंशज हैं। ग्राम गोरइया से वज्र सिंह के लड़के रघुनन्दन सिंह और दर्शन सिंह ग्राम पतौरा आए जिनके वंशज ग्राम पतौरा में आवाद हैं।



(सचरा नं० 106)

लालसाहब मार्गवेन्द्र सिंह नागौद (कोठी)

श्री लाल सा० लाल भार्गवेन्द्र सिंह नागौद (वड़ी कतकोन से) श्री राजा साहव यादवेन्द्र सिंह जी के दत्तक पुत्र (गोद लिए गए) थे जिनको 600/- मासिक राज्य से दिया जाता था जिनकी शादी महाराव सा० रामसिंह वघेल कसौटा (राजा सा० वारा शंकरगढ़) के यहाँ हुई थी। आप राज्य के ऊँचे-ऊँचे विभागों में कोर्ट के समय तथा राजा सा० महेन्द्र सिंह के समय में राज्य दीवान का पद पाए हुए थे।



हेमेन्द्र सिंह

भूपेन्द्र सिंह

देवेन्द्र सिंह मृगेन्द्र सिंह

राजेन्द्र सिंह
वे विवाहित मृत्यु

धर्मेन्द्र सिंह योगेन्द्र सिंह धीरेन्द्र सिंह

भारतेन्द्र सिंह

रवीन्द्र सिंह वरुणेन्द्र सिंह सचीन्द्र सिंह शुभेन्द्र सिंह

(सचरा नं० 107)

इलाका जिगनहट

राजा सा० वलभद्र सिंह के तीसरे पुत्र लाल छत्रपाल सिंह ने जिगनहट इलाका सन् 1870 ई० में जमा कमाल 4800/- तथा 200/- नकद माहवार रियासत नागौद से पाया। मौजा जिगनहट, रेंउसा, तुर्कहा, वैरगला, लदवद, डोमा पाया।

लाल छत्रपाल सिंह (जिगनहट)

उमा प्रताप सिंह — विन्धेश्वरी प्रताप सिंह (वंश न रहा) — सिया प्रताप सिंह (हिस्सा में तुर्कहा)

उमा प्रताप सिंह के पुत्र: राजेन्द्र वहादुर सिंह; वजरंग सिंह (भितरहाई वंश न रहा); मुन्ना सिंह (भितरहाई से वंश न रहा); ददुदन सिंह; रामेश्वर सिंह (भितरहाई से वंश न रहा)

ददुदन सिंह — वच्चू सिंह

सिया प्रताप सिंह के पुत्र: हनुमान सिंह; महावीर सिंह (पिजैगढ चले गये वंश न रहा); वलवीर सिंह; दलवीर सिंह (पिनैगढ में हैं)

हनुमान सिंह — मकरध्वज सिंह

राजेन्द्र वहादुर सिंह — विशुद्ध प्रताप सिंह

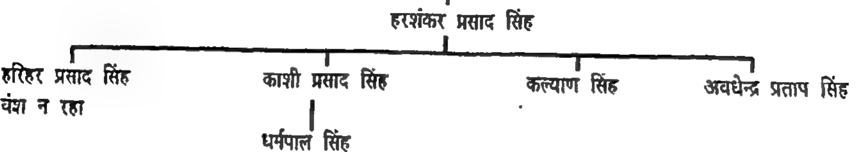
विशुद्ध प्रताप सिंह के पुत्र: उमाशंकरप्रतापनारायणसिंह; जयदीप सिंह; यशदीप सिंह; ऐश्वर्यदीप सिंह; कीर्तिमान सिंह; विजयदीप सिंह; सारस्वत प्रताप सिंह

नोट - एक इलाका देवगढ़ दह० दही कमासिन जिला प्रतापगढ़ उ० प्र० 60 ग्राम थे। उनकी जमा कमाल 87000/ सालाना

(सचरा नं० 108)

ग्राम - डुड़हा - बरेठिया

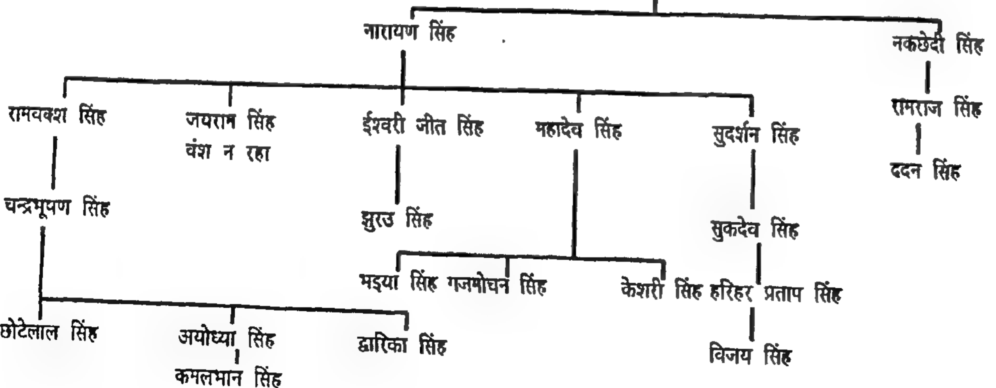
श्री राजा सा० राघवेन्द्र सिंह जी के अन्य पत्नी से विशेश्वर सिंह डुड़हा बरेठिया पाया।



नोट - इस समय यह लोग मौजा बरेठिया में रहते हैं।

(सचरा नं० 109)

ग्राम - परसवार (छोटा टोला) के भाई मौजा सरमनियाँ राज्य रीवा में रहते हैं। इनके पूर्वजों का नाम नहीं मालूम हो सका।

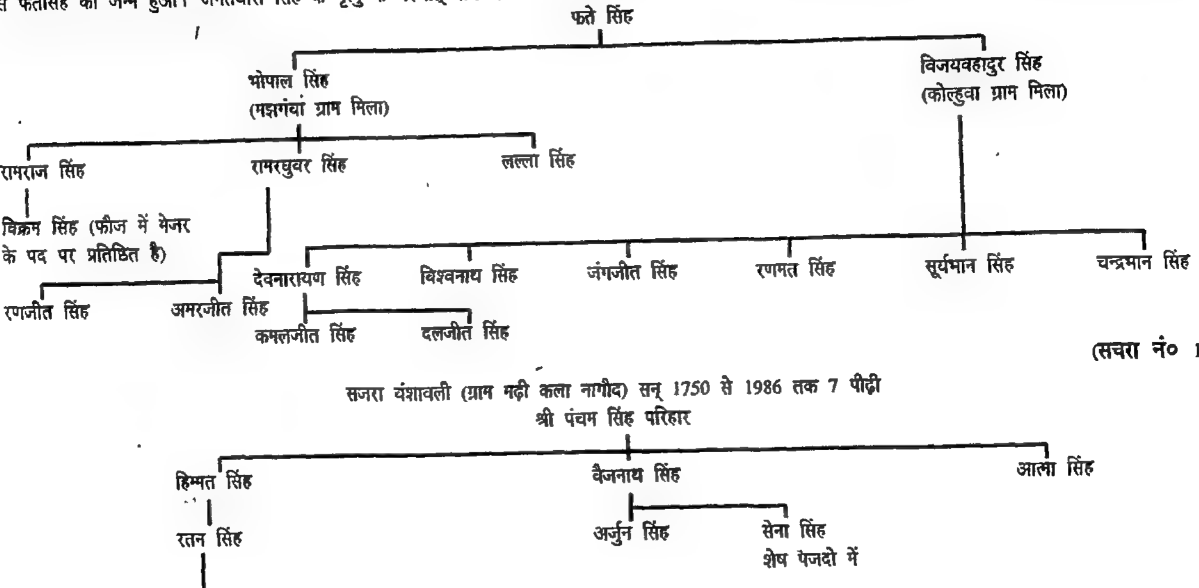


(सचरा नं० 110)

ग्राम - मझगंवा एवं कोल्हुआ के परिहार.

शाखा - करही कला.

महाराज शिवचरण सिंह के मझले पुत्र श्री लाल जगतधारी सिंह करही लगाकर 8501 रुपयों का मिला। इनकी दो ठकुराइन साहिवों से कोई संतान नहीं रही। तीसरी पत्नी से फतेसिंह का जन्म हुआ। जगतधारी सिंह के मृत्यु के पश्चात् शेष गांव महराज राघवेन्द्र सिंह द्वारा जप्त कर मझगंवा कोल्हुवा, इटमा काप, फतेसिंह के पास रहे।



फैजदोमें

दलथम्मन सिंह | गणेश सिंह | जोधन सिंह | संसारी सिंह | वंधू सिंह

गंगा सिंह | लखपती सिंह | रामेश्वर सिंह | हीरासिंह | रामवक्श सिंह

प्रताप सिंह | रैमान सिंह | खजैभान सिंह

गोपाल शरण सिंह | तिलकराज सिंह

राजराज सिंह | युगराज सिंह | नारेन्द्र सिंह | कृष्णप्रताप सिंह

देवनारायण सिंह | कृष्णगोपाल सिंह | जयगोपाल सिंह | विष्णूसिंह

इन्द्रभान सिंह | कमलभान सिंह | इन्द्रपाल सिंह

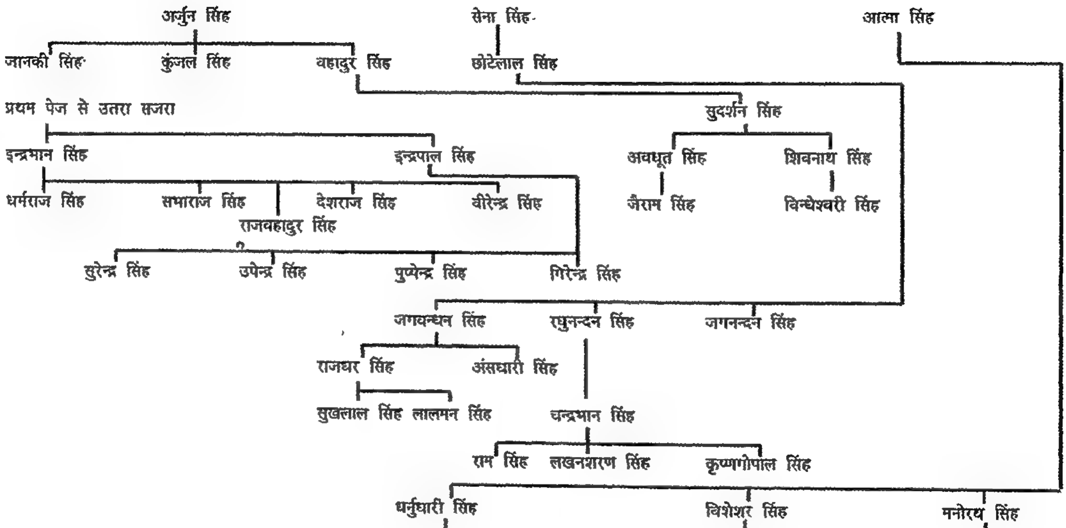
पेज दो में | भूरा सिंह | मनोहर सिंह | गजराज सिंह | गुलाव सिंह | मुन्ना सिंह | रुद्रप्रताप सिंह

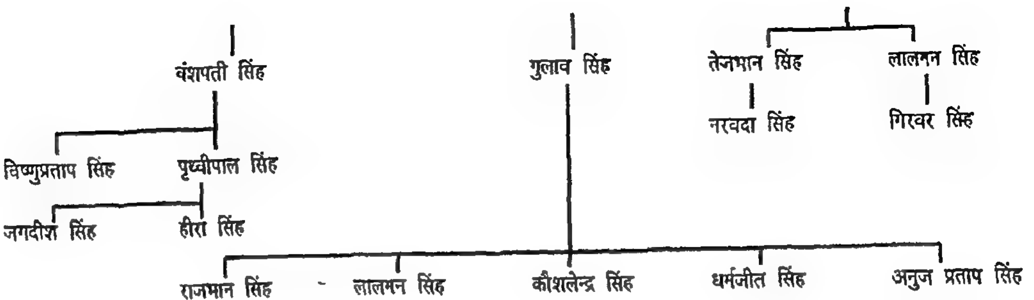
राजभान सिंह | दौलत सिंह | दीपेन्द्र सिंह

रामभान सिंह | शिववालक सिंह | भगवन्त सिंह

धनस्यामसिंह

चद्रधर सिंह | शंखधर सिंह | पद्मधर सिंह


सजरा परिहार ग्राम मढ़ीकला
अर्जुन सिंह
सेना सिंह
आत्मा सिंह
जानकी सिंह
कुंजल सिंह
वहादुर सिंह
छोटेलाल सिंह
सुदर्शन सिंह
प्रथम पेज से उतरा सजरा
इन्द्रभान सिंह
इन्द्रपाल सिंह
अवधूत सिंह
शिवनाथ सिंह
धर्मराज सिंह
सभाराज सिंह
देशराज सिंह
वीरेन्द्र सिंह
जैराम सिंह
विन्धेश्वरी सिंह
राजवहादुर सिंह
सुरेन्द्र सिंह
उपेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
गिरेन्द्र सिंह
जगवन्धन सिंह
रघुनन्दन सिंह
जगनन्दन सिंह
राजधर सिंह
अंसधारी सिंह
सुखलाल सिंह
लालमन सिंह
चन्द्रभान सिंह
राम सिंह
लखनशरण सिंह
कृष्णगोपाल सिंह
धर्नुधारी सिंह
विशेशर सिंह
मनोरथ सिंह



(सचरा नं० 112)

ग्राम - भटगवां

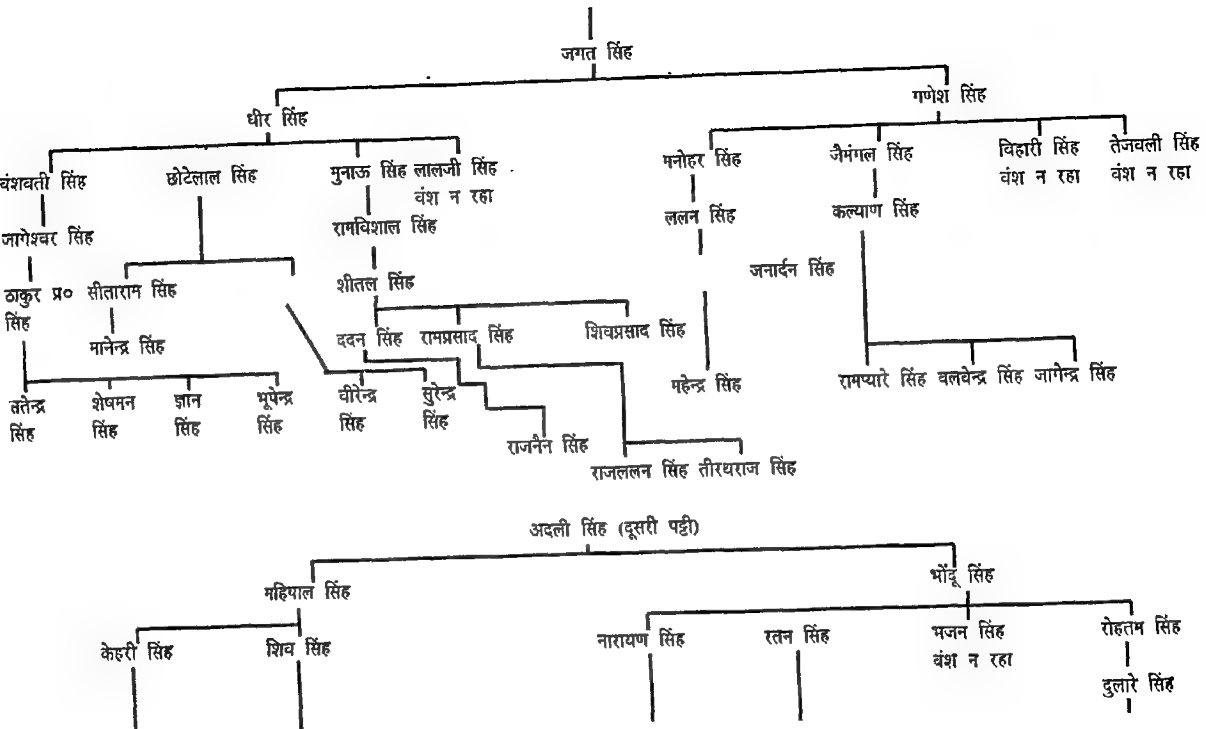
यह परिहार अपने को पिथौरावाद के भाई वतलाते हैं। भटगंवा सोहावल राज्यान्तर्गत था। जो रेगांव मार्ग पर रेगांव से दक्षिण तीन मील तथा सोहावल से चार मील उत्तर-पश्चिम आवाद है। इनका कहना है कि जय ठकुर पिथौरावाद विवाह करने लड़के के विजयराघौगढ़ इलाका में सिंगौड़ी गए तव राजा नागौद ने गढ़ी पर कब्जा कर लिया। इनमें से एक ठाकुर पिथौरावाद में जो मौजूद थे वह सोहावल राजा सा० के पास गए। इस पर राजा साहव ने आदमियों द्वारा वारातः भी वाला-वाला अपने यहां वुलवा ली और सोहावल में ही वसा लिया जो सोहावल आए उनके पूर्वज के नाम नहीं वताते।

राजा सा० पृथ्वीपति सिंह सोहावल वालों का झगड़ा जागीरदार कोठी से हुआ। उस समय हठी सिंह, तखत सिंह और सुजान सिंह राजा सा० सोहावल के साथ मारे गए। इनके उपलक्ष्य में मुढ़वार जागीर माफी भटगमा 1600/- रु० के करीव सनद राजा सा० सोहावल रघुनाथ सिंह ने ज्येष्ठ वदी 8 वि० सं० 1852 में दी। (फाल्गुन सुदी 15 वि०सं० 1882 एक जगह तथा दूसरी जगह सं० 1886 लिखा मिला है। यह दो भाई पंचम सिंह तथा अदली सिंह नाम के थे, जिनको मुड़वार में ग्राम भटगमा दिया गया।

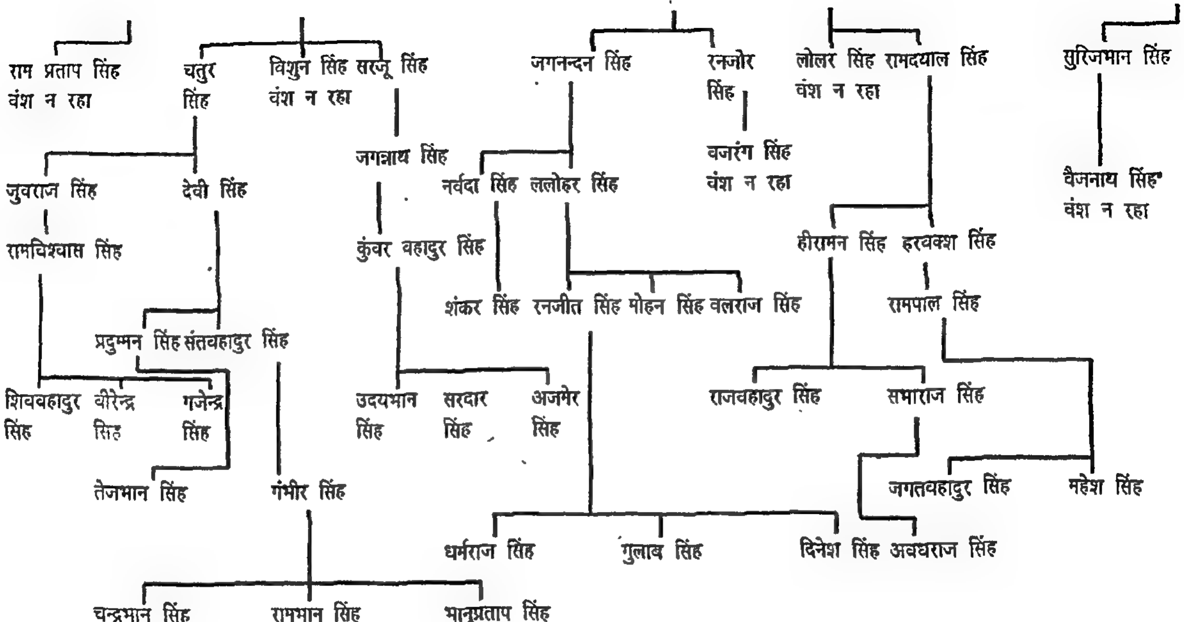
नोट - भटगंवा वालों का कहना है कि मौजा पटना व मौजा फुरताल के हमारे भाई हैं। हमारे यहाँ सोवर-सूदक में शामिल होते थे और पुजाई करते थे। नागौद राज्य के इतिहास में मौजा पटना के परिहारों को सितपुरा के परिहारों के भाई होना लिखा है।

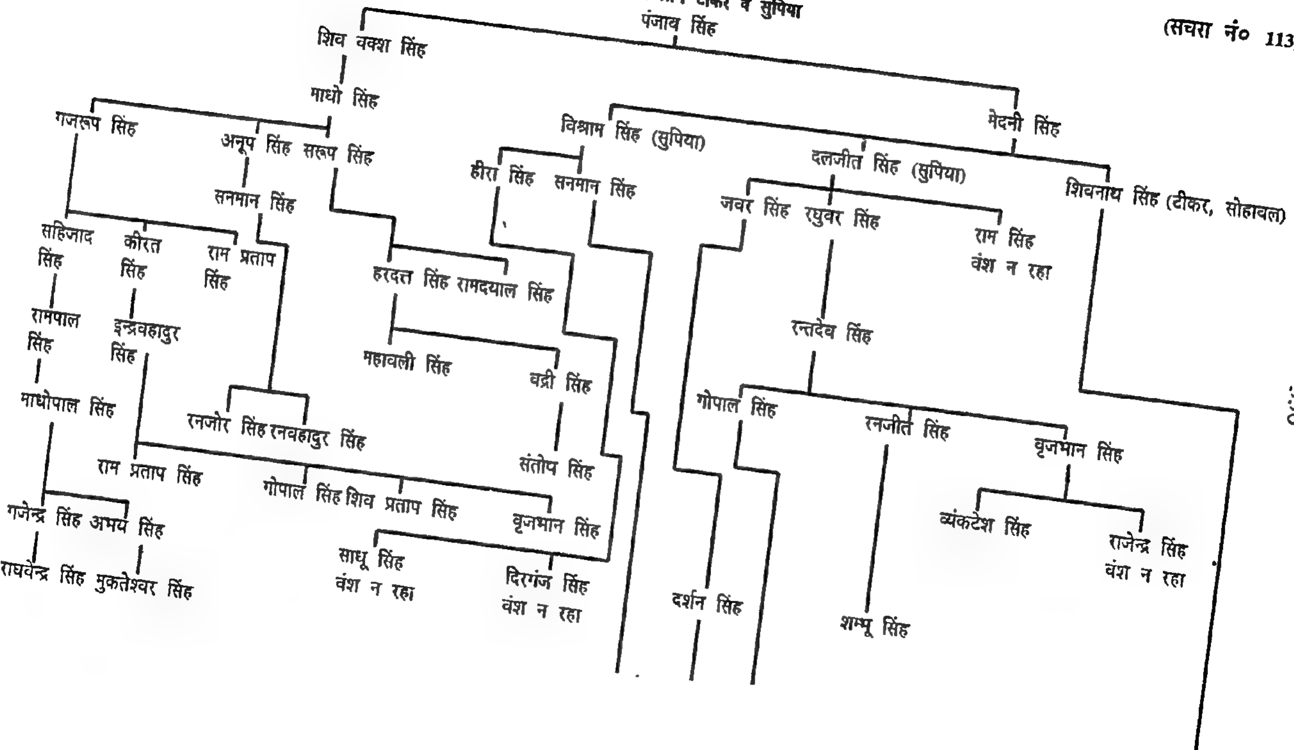
पंचम सिंह (पहली पट्टी)

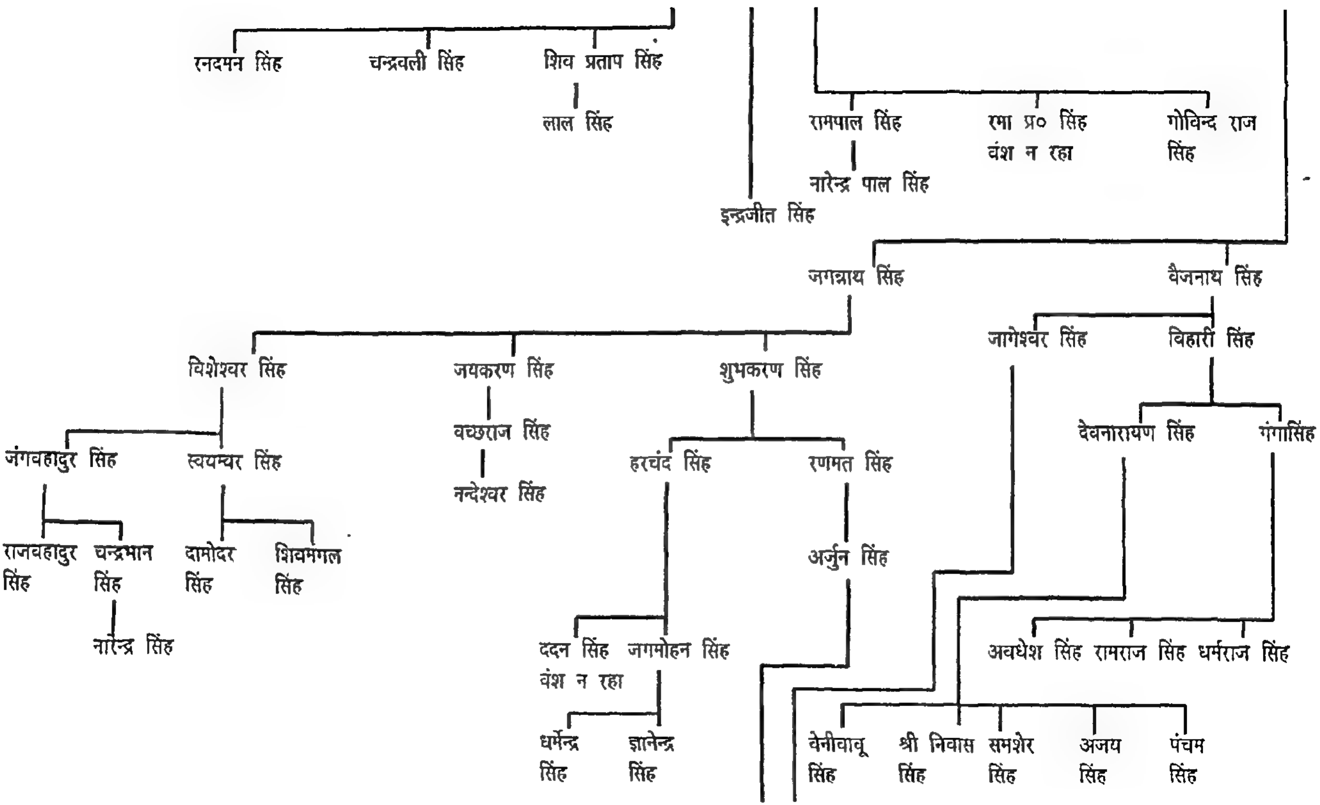
मूरत सिंह

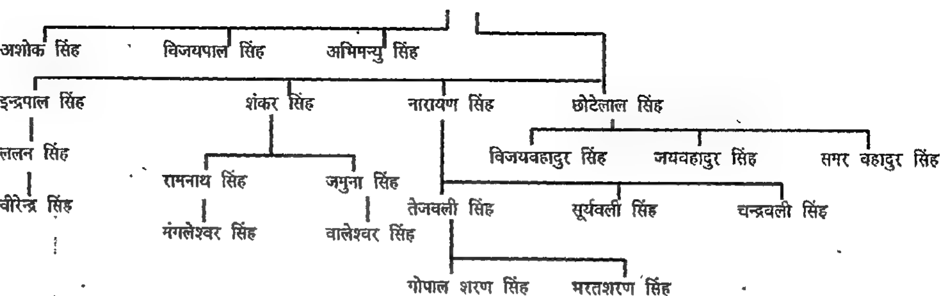


जगत सिंह
धीर सिंह
गणेश सिंह
वंशवती सिंह
छोटेलाल सिंह
मुनाऊ सिंह
लालजी सिंह
वंश न रहा
मनोहर सिंह
जैमंगल सिंह
विहारी सिंह
वंश न रहा
तेजवली सिंह
वंश न रहा
जागेश्वर सिंह
रामविशाल सिंह
ललन सिंह
कल्याण सिंह
जनार्दन सिंह
ठाकुर प्र० सिंह
सीताराम सिंह
शीतल सिंह
मानेन्द्र सिंह
ददन सिंह
रामप्रसाद सिंह
शिवप्रसाद सिंह
महेन्द्र सिंह
रामप्यारे सिंह
बलवेन्द्र सिंह
जागेन्द्र सिंह
ततेन्द्र सिंह
शेषमन सिंह
ज्ञान सिंह
भूपेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
सुरेन्द्र सिंह
राजनैन सिंह
राजललन सिंह
तीरथराज सिंह
अदली सिंह (दूसरी पट्टी)
महिपाल सिंह
भोंदू सिंह
केहरी सिंह
शिव सिंह
नारायण सिंह
रतन सिंह
भजन सिंह
वंश न रहा
रोहतम सिंह
दुलारे सिंह


राम प्रताप सिंह
वंश न रहा
चतुर सिंह
विशुन सिंह
वंश न रहा
सरजू सिंह
जगनन्दन सिंह
रनजोर सिंह
लोलर सिंह
वंश न रहा
रामदयाल सिंह
सुरिजभान सिंह
जुवराज सिंह
देवी सिंह
जगन्नाथ सिंह
नर्वदा सिंह
ललोहर सिंह
वजरंग सिंह
वंश न रहा
वैजनाथ सिंह
वंश न रहा
रामविश्वास सिंह
कुंवर वहादुर सिंह
हीरामन सिंह
हरवक्श सिंह
शंकर सिंह
रनजीत सिंह
मोहन सिंह
वलराज सिंह
रामपाल सिंह
प्रदुम्मन सिंह
संतवहादुर सिंह
शिववहादुर सिंह
वीरेन्द्र सिंह
गजेन्द्र सिंह
उदयभान सिंह
सरदार सिंह
अजमेर सिंह
राजवहादुर सिंह
समाराज सिंह
तेजभान सिंह
गंभीर सिंह
जगतवहादुर सिंह
महेश सिंह
धर्मराज सिंह
गुलाब सिंह
दिनेश सिंह
अवधराज सिंह
चन्द्रभान सिंह
रामभान सिंह
भानूप्रताप सिंह


(सचरा नं० 113)
सचरा परिहार ग्राम टीकर व सुपिया
पंजाब सिंह
शिव वक्श सिंह
माधो सिंह
मेदनी सिंह
गजरूप सिंह
अनूप सिंह
सरूप सिंह
विश्राम सिंह (सुपिया)
दलजीत सिंह (सुपिया)
शिवनाथ सिंह (टीकर, सोहावल)
सनमान सिंह
हीरा सिंह
सनमान सिंह
जवर सिंह
रघुवर सिंह
राम सिंह
वंश न रहा
सहिजाद सिंह
कीरत सिंह
राम प्रताप सिंह
हरदत्त सिंह
रामदयाल सिंह
रन्तदेव सिंह
रामपाल सिंह
इन्द्रवहादुर सिंह
महावली सिंह
वद्री सिंह
माधोपाल सिंह
रनजोर सिंह
रनवहादुर सिंह
गोपाल सिंह
रनजीत सिंह
वृजभान सिंह
राम प्रताप सिंह
संतोष सिंह
गोपाल सिंह
शिव प्रताप सिंह
वृजभान सिंह
व्यंकटेश सिंह
राजेन्द्र सिंह
वंश न रहा
गजेन्द्र सिंह
अभय सिंह
साधू सिंह
वंश न रहा
दिरगंज सिंह
वंश न रहा
राघवेन्द्र सिंह
मुकतेश्वर सिंह
दर्शन सिंह
शम्भू सिंह

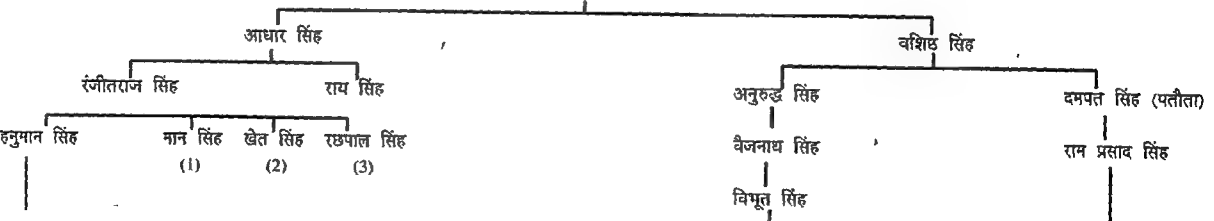

रनदमन सिंह
चन्द्रवली सिंह
शिव प्रताप सिंह
लाल सिंह
इन्द्रजीत सिंह
रामपाल सिंह
नारेन्द्र पाल सिंह
रमा प्र० सिंह
वंश न रहा
गोविन्द राज
सिंह
जगन्नाथ सिंह
वैजनाथ सिंह
विशेश्वर सिंह
जयकरण सिंह
शुभकरण सिंह
जागेश्वर सिंह
विहारी सिंह
जंगवहादुर सिंह
स्वयम्बर सिंह
वच्छराज सिंह
नन्देश्वर सिंह
हरचंद सिंह
रणमत सिंह
देवनारायण सिंह
गंगासिंह
राजवहादुर
सिंह
चन्द्रभान
सिंह
नारेन्द्र सिंह
दामोदर
सिंह
शिवमंगल
सिंह
अर्जुन सिंह
ददन सिंह
वंश न रहा
जगमोहन सिंह
धर्मेन्द्र
सिंह
ज्ञानेन्द्र
सिंह
अवधेश सिंह
रामराज सिंह
धर्मराज सिंह
वेनीवावू
सिंह
श्री निवास
सिंह
समशेर
सिंह
अजय
सिंह
पंचम
सिंह

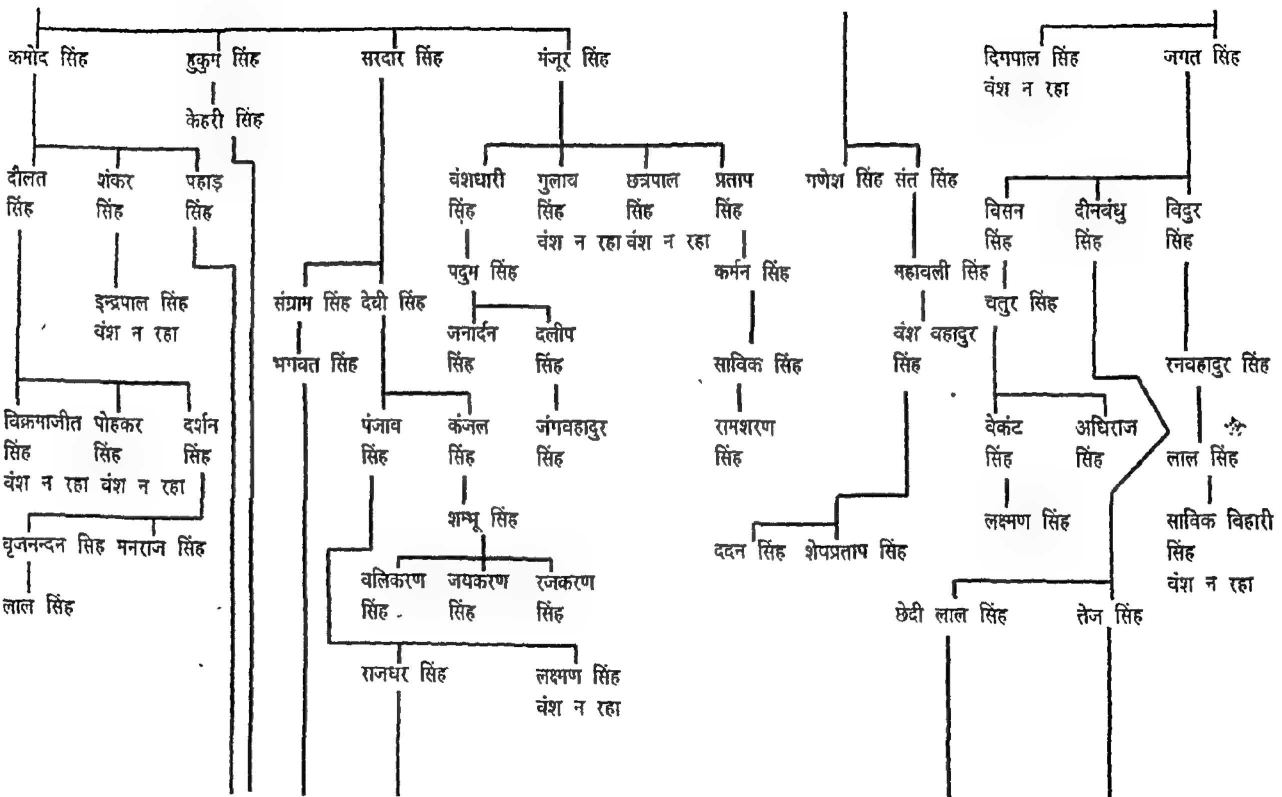


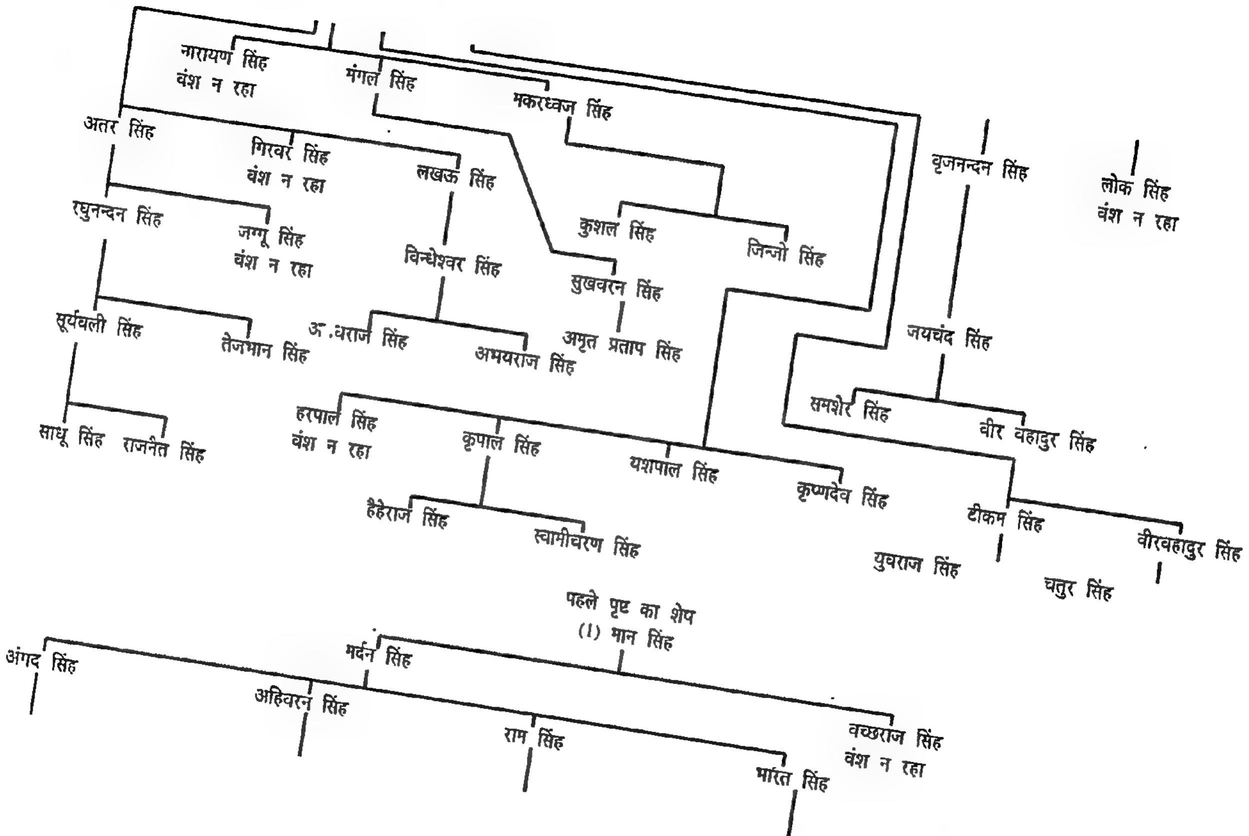
(सचरा नं० 114)

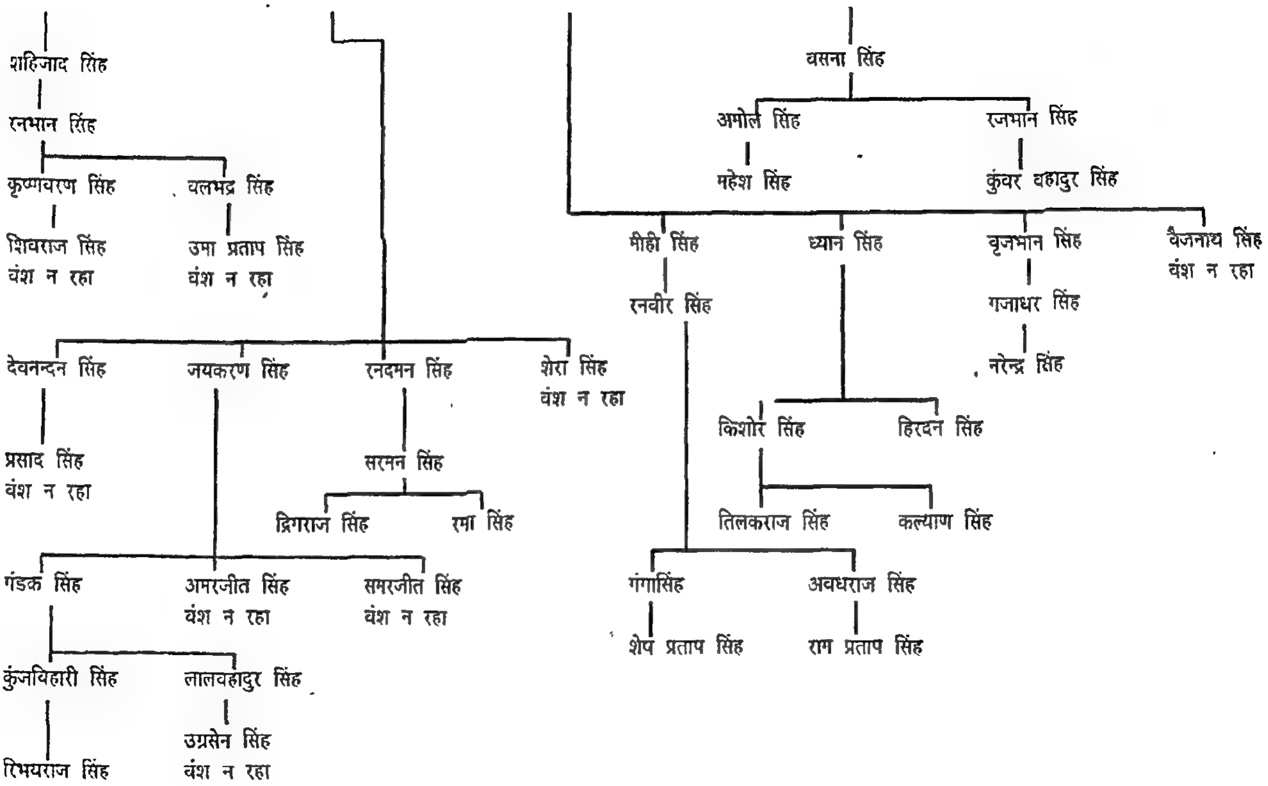
वरहदी एवं पतौता (जिला रीवा)

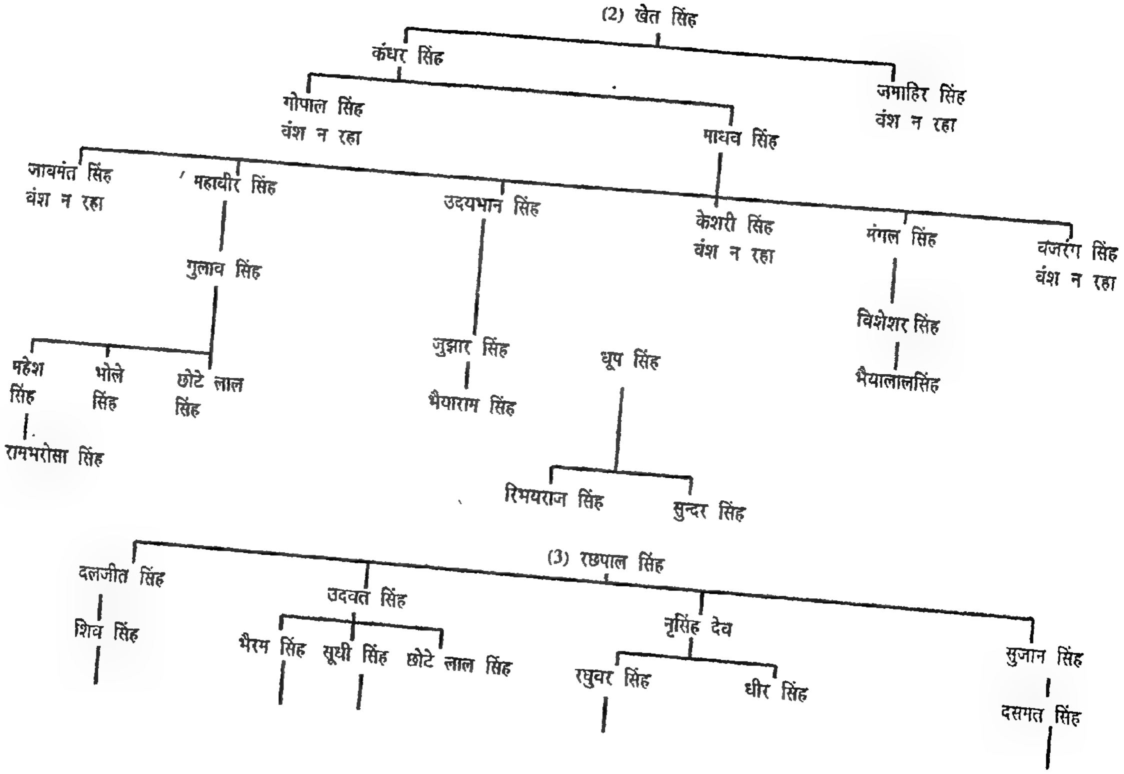
महाराजा रुद्र प्रताप सिंह के वंशज मही सिंह




कमोद सिंह
हुकुम सिंह
केहरी सिंह
सरदार सिंह
मंजूर सिंह
दिगपाल सिंह
वंश न रहा
जगत सिंह
दौलत सिंह
शंकर सिंह
पहाड़ सिंह
वंशधारी सिंह
गुलाब सिंह
वंश न रहा
छत्रपाल सिंह
वंश न रहा
प्रताप सिंह
गणेश सिंह
संत सिंह
विसन सिंह
दीनबंधु सिंह
विदुर सिंह
पदुम सिंह
कर्मन सिंह
महाबली सिंह
इन्द्रपाल सिंह
वंश न रहा
संग्राम सिंह
देवी सिंह
चतुर सिंह
जनार्दन सिंह
दलीप सिंह
वंश बहादुर सिंह
भगवत सिंह
सात्विक सिंह
रनबहादुर सिंह
विक्रमाजीत सिंह
वंश न रहा
पोहकर सिंह
वंश न रहा
दर्शन सिंह
पंजाब सिंह
कंवल सिंह
जंगबहादुर सिंह
रामशरण सिंह
वैकंट सिंह
अधिराज सिंह
लाल सिंह
शम्भू सिंह
लक्ष्मण सिंह
सात्विक बिहारी सिंह
वंश न रहा
वृजनन्दन सिंह
मनराज सिंह
दद्दन सिंह
शेषप्रताप सिंह
लाल सिंह
बलिकरण सिंह
जयकरण सिंह
रजकरण सिंह
छेदी लाल सिंह
तेज सिंह
राजधर सिंह
लक्ष्मण सिंह
वंश न रहा

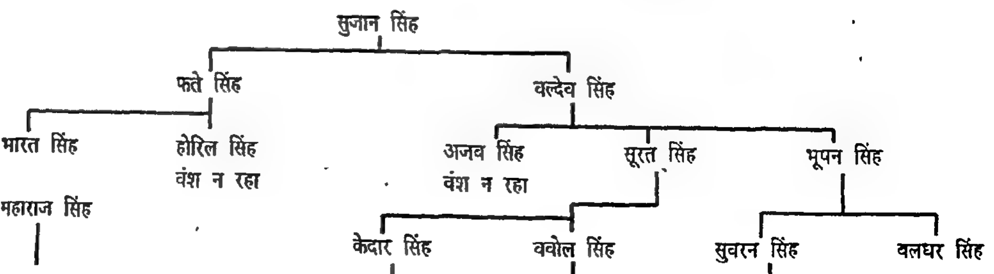

नारायण सिंह
वंश न रहा
मंगल सिंह
मकरध्वज सिंह
वृजनन्दन सिंह
लोक सिंह
वंश न रहा
अतर सिंह
गिरवर सिंह
वंश न रहा
लखऊ सिंह
रघुनन्दन सिंह
जग्गू सिंह
वंश न रहा
विन्धेश्वर सिंह
कुशल सिंह
जिन्जो सिंह
सुखवरन सिंह
सूर्यवली सिंह
तेजभान सिंह
अमयराज सिंह
अमृत प्रताप सिंह
जयचंद सिंह
समशेर सिंह
वीर वहादुर सिंह
साधू सिंह
राजनैत सिंह
हरपाल सिंह
वंश न रहा
कृपाल सिंह
यशपाल सिंह
कृष्णदेव सिंह
हैहेराज सिंह
स्वामीचरण सिंह
टीकम सिंह
वीरवहादुर सिंह
युवराज सिंह
चतुर सिंह
पहले पृष्ट का शेष
(1) मान सिंह
अंगद सिंह
मर्दन सिंह
अहिवरन सिंह
राम सिंह
भारत सिंह
वच्छराज सिंह
वंश न रहा


शहिजाद सिंह
रनभान सिंह
कृष्णवरण सिंह
बलभद्र सिंह
शिवराज सिंह
वंश न रहा
उमा प्रताप सिंह
वंश न रहा
देवनन्दन सिंह
जयकरण सिंह
रनदमन सिंह
शेरा सिंह
वंश न रहा
प्रसाद सिंह
वंश न रहा
सरमन सिंह
द्रिगराज सिंह
रमा सिंह
गंडक सिंह
अमरजीत सिंह
वंश न रहा
समरजीत सिंह
वंश न रहा
कुंजविहारी सिंह
लालबहादुर सिंह
रिभयराज सिंह
उग्रसेन सिंह
वंश न रहा
बसना सिंह
अमोल सिंह
रजभान सिंह
महेश सिंह
कुंवर बहादुर सिंह
मीही सिंह
ध्यान सिंह
वृजभान सिंह
वैजनाथ सिंह
वंश न रहा
रनवीर सिंह
गजाधर सिंह
नरेन्द्र सिंह
किशोर सिंह
हिरदन सिंह
तिलकराज सिंह
कल्याण सिंह
गंगासिंह
अवधराज सिंह
शेष प्रताप सिंह
राम प्रताप सिंह

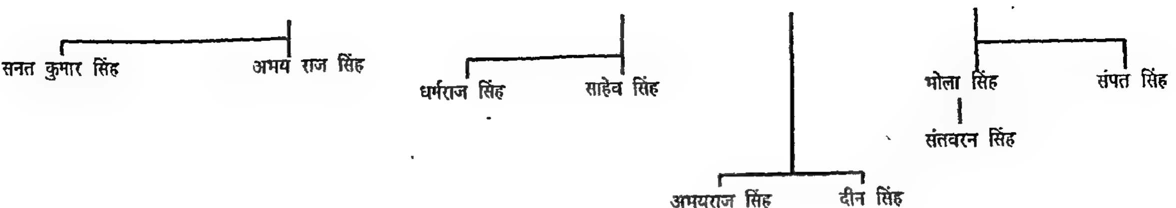


(2) खेत सिंह
कंधर सिंह
जमाहिर सिंह
वंश न रहा
गोपाल सिंह
वंश न रहा
माधव सिंह
जावमंत सिंह
वंश न रहा
महावीर सिंह
उदयभान सिंह
केशरी सिंह
वंश न रहा
मंगल सिंह
वजरंग सिंह
वंश न रहा
गुलाव सिंह
जुझार सिंह
भैयाराम सिंह
विशेशर सिंह
भैयालालसिंह
महेश सिंह
भोले सिंह
छोटे लाल सिंह
रामभरोसा सिंह
धूप सिंह
रिमयराज सिंह
सुन्दर सिंह
(3) रछपाल सिंह
दलजीत सिंह
शिव सिंह
उदवत सिंह
भैरम सिंह
सूथी सिंह
छोटे लाल सिंह
नृसिंह देव
रघुवर सिंह
धीर सिंह
सुजान सिंह
दसमत सिंह

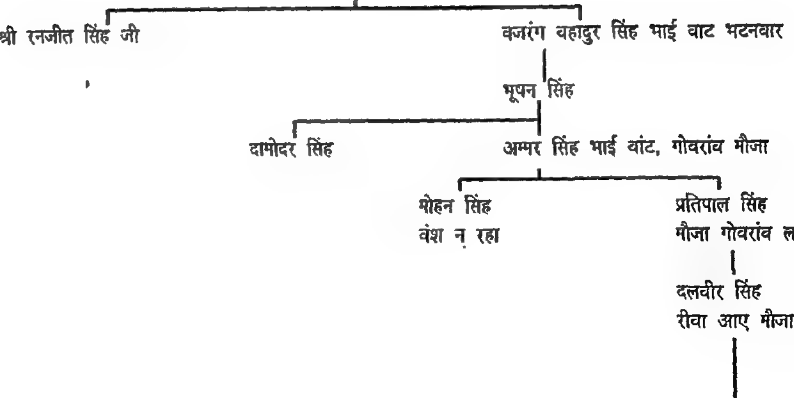
प्रभुनारायण सिंह
रविनाथ सिंह वंश न रहा
शिवदीन सिंह
जमान सिंह
हरचन्द सिंह
छत्रपती सिंह
शार्दूल सिंह
अनूप सिंह
रतन सिंह
रायविन्द सिंह
लल्ला सिंह
हरिनाथ सिंह
पूरन सिंह
श्याम सिंह
कुवेर सिंह
गोविन्द सिंह वंश न रहा
राजमन सिंह वंश न रहा
तिलकधारी सिंह
तिलकराज सिंह
नेपाल सिंह
मालिक सिंह
श्रीनिवास सिंह
सवाई सिंह
रमानिवास सिंह
प्यारे सिंह
जीवन सिंह
अवधविहारी सिंह
नर्वदा सिंह
जोधराय सिंह
करन सिंह
कमलभान सिंह
नकुल सिंह
कंठन सिंह



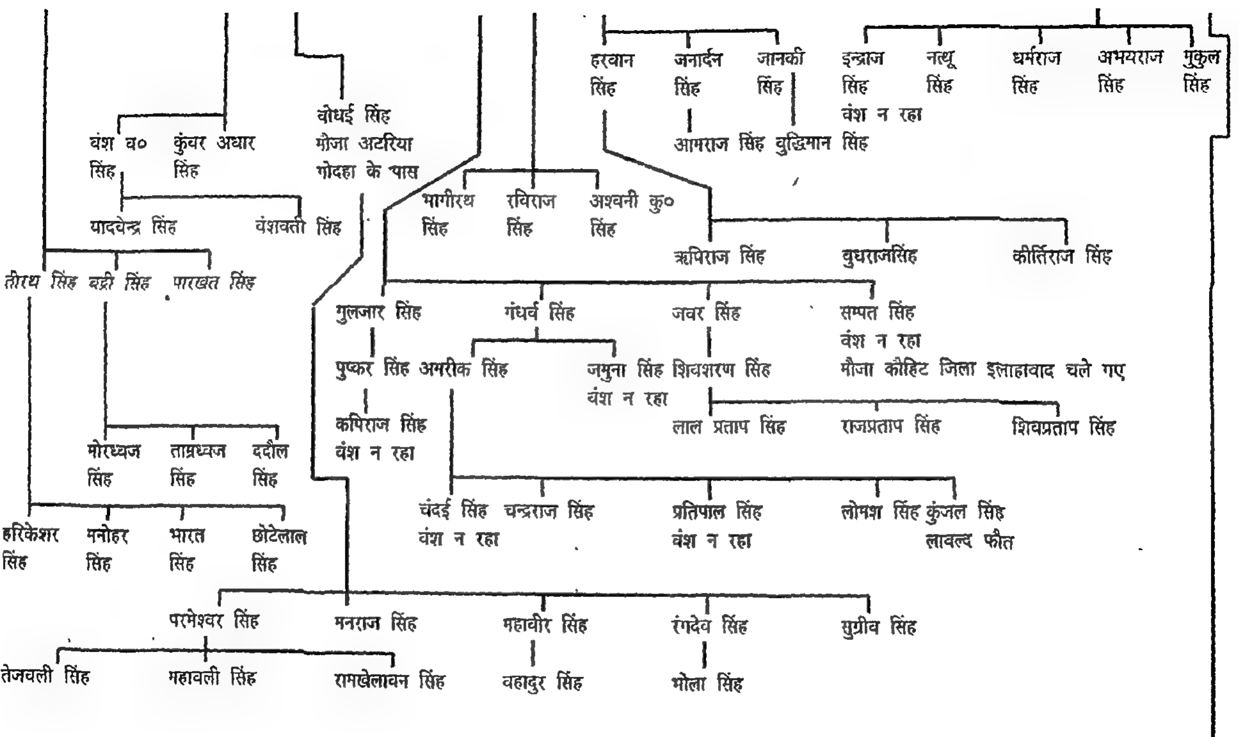
सचरा नं० 115



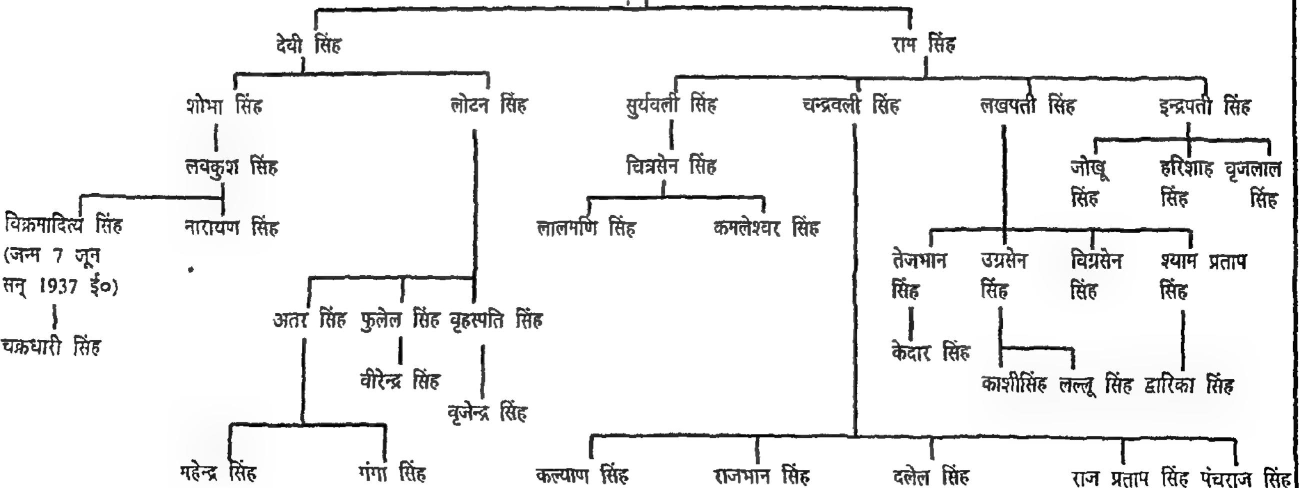
परिहार वंशावली तिलखन मौजा, जिला रीवा
श्रीमान महाराजा सा० गद्दी नागौद
1. श्री राम बक्श सिंह जी

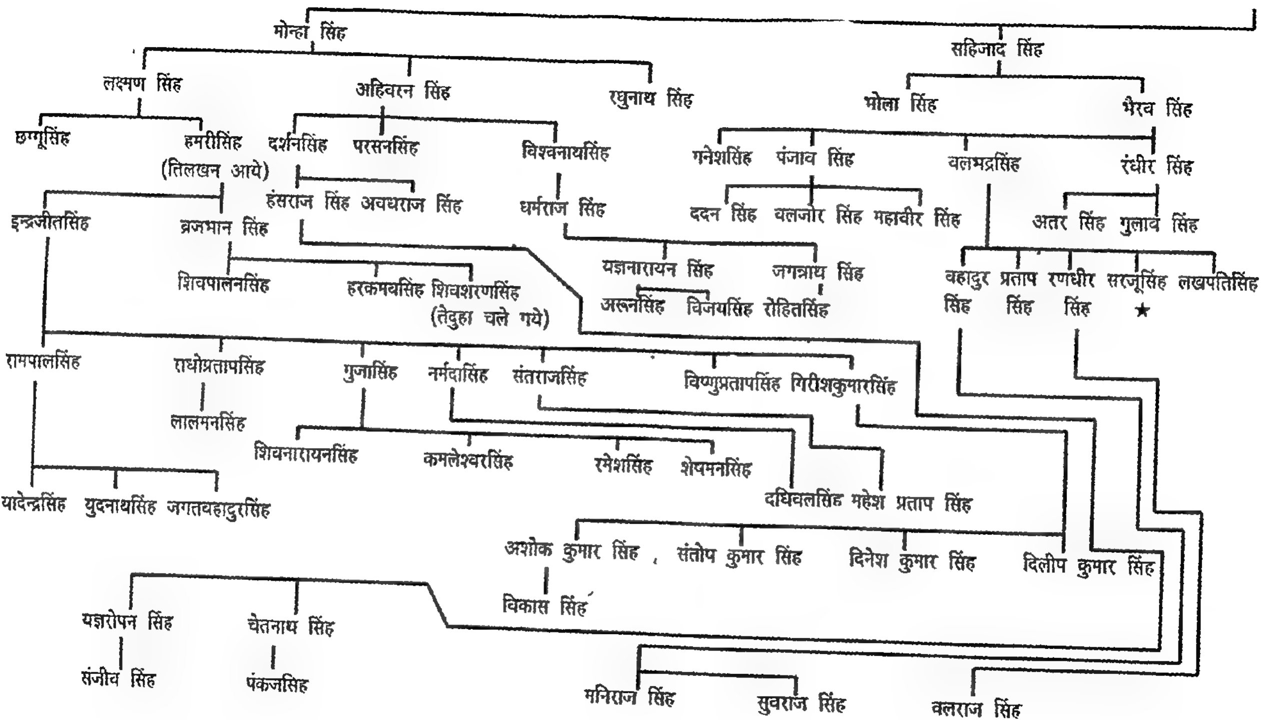


- अवध विहारी सिंह
  - उमराव सिंह — टीकर चले गए
  - मोहर सिंह — तिलखन मौजा आए
    - ददन सिंह
      - सुखलाल सिंह
        - शिवदत्त सिंह
          - नारायण सिंह
            - रनगत्त सिंह
              - मोहन सिंह
                - रनधीर सिंह
                - वाकजी सिंह
              - जीता सिंह
                - वहोरन सिंह — वंश न रहा
          - नौरंग सिंह
            - अहिवरण सिंह
            - रघुनाथ सिंह
              - वृजभान सिंह
                - जगन्नाथ सिंह
                - संशेर सिंह
        - गुरुदत्त सिंह (★)
        - महीप सिंह
          - चतुर सिंह
            - दिरगज सिंह
              - दुर्योधन सिंह
              - दीप सिंह
              - प्रभुनाथ सिंह — वंश न रहा
            - शिरोमणि सिंह
            - दलवीर सिंह
        - पाल सिंह
          - गंगा सिंह
            - हरनन्दन सिंह
              - दल प्रताप सिंह
              - चन्द्रवेनी सिंह — वंश न रहा
            - जय सिंह
              - सुव्वा सिंह
              - यदुनाथ सिंह
              - पतिरा खन सिंह
          - वंश सिंह
            - जयवरन सिंह
              - पत्ते सिंह
              - मंगली सिंह
                - अमर वहादुर सिंह
- वीरभान सिंह — वंश न रहा
- कल्याण सिंह — तेंदुन आए (वैकुण्ठपुर)
- शिवराज सिंह — तेंदुन आए

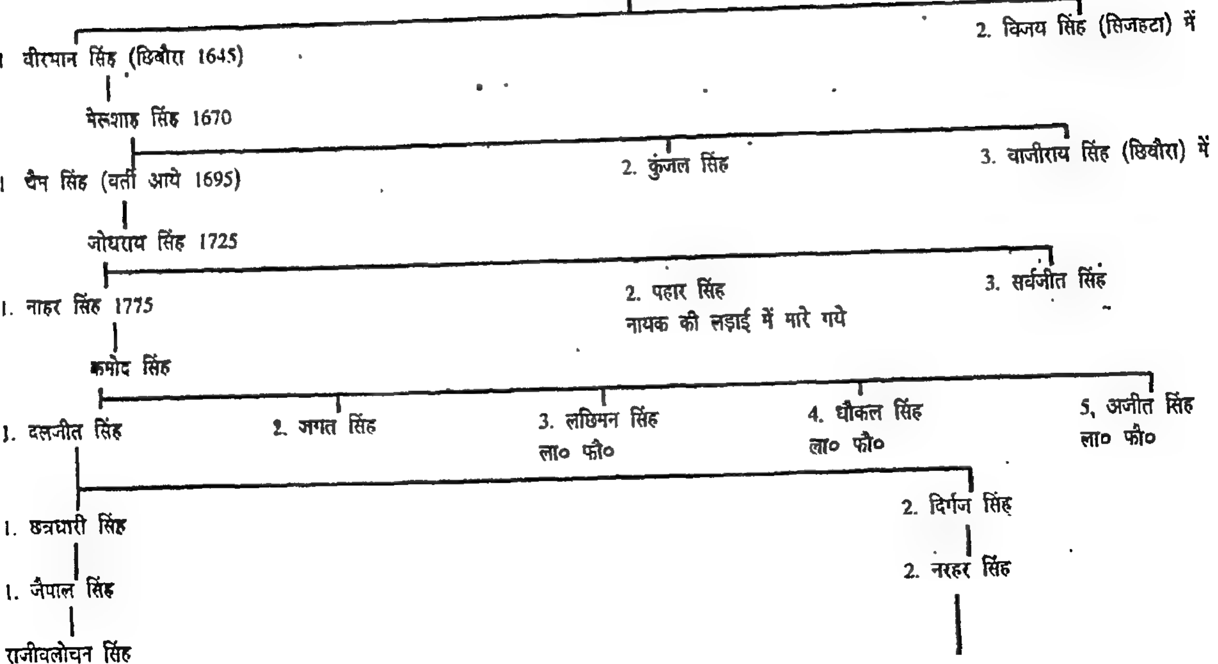


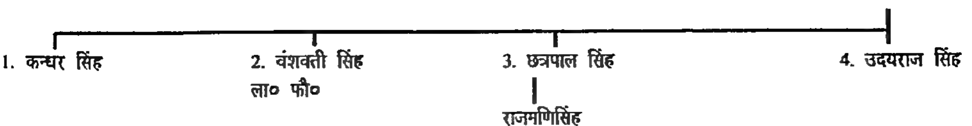
हरवान सिंह
जनार्दन सिंह
जानकी सिंह
इन्द्राज सिंह
वंश न रहा
नत्थू सिंह
धर्मराज सिंह
अभयराज सिंह
मुकुल सिंह
आमराज सिंह
बुद्धिमान सिंह
वंश व० सिंह
कुंवर अधार सिंह
वोधई सिंह
मौजा अटरिया
गोदहा के पास
यादवेन्द्र सिंह
वंशवती सिंह
भागीरथ सिंह
रविराज सिंह
अश्वनी कु० सिंह
ऋषिराज सिंह
बुधराजसिंह
कीर्तिराज सिंह
तीरथ सिंह
बद्री सिंह
पारखत सिंह
गुलजार सिंह
गंधर्व सिंह
जवर सिंह
सम्पत सिंह
वंश न रहा
मौजा कौहिट जिला इलाहावाद चले गए
पुष्कर सिंह
अमरीक सिंह
जमुना सिंह
वंश न रहा
शिवशरण सिंह
कपिराज सिंह
वंश न रहा
लाल प्रताप सिंह
राजप्रताप सिंह
शिवप्रताप सिंह
मोरध्वज सिंह
ताम्रध्वज सिंह
ददौल सिंह
चंदई सिंह
वंश न रहा
चन्द्रराज सिंह
प्रतिपाल सिंह
वंश न रहा
लोमश सिंह
कुंजल सिंह
लावल्द फौत
हरिकेशर सिंह
मनोहर सिंह
भारत सिंह
छोटेलाल सिंह
परमेश्वर सिंह
मनराज सिंह
महावीर सिंह
रंगदेव सिंह
सुग्रीव सिंह
तेजवली सिंह
महावली सिंह
रामखेलावन सिंह
वहादुर सिंह
भोला सिंह


(★)
गुरुदत्त सिंह
युधिष्ठिर सिंह
किशोर सिंह
देवी सिंह
राम सिंह
शोभा सिंह
लोटन सिंह
सुर्यवली सिंह
चन्द्रवली सिंह
लखपती सिंह
इन्द्रपती सिंह
लवकुश सिंह
चित्रसेन सिंह
जोखू सिंह
हरिशाह सिंह
वृजलाल सिंह
विक्रमादित्य सिंह (जन्म 7 जून सन् 1937 ई०)
नारायण सिंह
लालमणि सिंह
कमलेश्वर सिंह
तेजभान सिंह
उग्रसेन सिंह
विग्रसेन सिंह
श्याम प्रताप सिंह
चक्रधारी सिंह
अतर सिंह
फुलेल सिंह
वृहस्पति सिंह
केदार सिंह
वीरेन्द्र सिंह
काशीसिंह
लल्लू सिंह
द्वारिका सिंह
वृजेन्द्र सिंह
महेन्द्र सिंह
गंगा सिंह
कल्याण सिंह
राजभान सिंह
दलेल सिंह
राज प्रताप सिंह
पंचराज सिंह


मोन्हा सिंह
सहिजाद सिंह
लक्ष्मण सिंह
अहिवरन सिंह
रघुनाथ सिंह
भोला सिंह
भैरव सिंह
छग्गूसिंह
हमीरसिंह (तिलखन आये)
दर्शनसिंह
परसनसिंह
विश्वनाथसिंह
गनेशसिंह
पंजाव सिंह
वलभद्रसिंह
रंधीर सिंह
हंसराज सिंह
अवधराज सिंह
धर्मराज सिंह
ददन सिंह
वलजोर सिंह
महावीर सिंह
अतर सिंह
गुलाव सिंह
इन्द्रजीतसिंह
व्रजभान सिंह
यज्ञनारायन सिंह
जगन्नाथ सिंह
वहादुर सिंह
प्रताप सिंह
रणधीर सिंह
सरजूसिंह ★
लखपतिसिंह
शिवपालनसिंह
हरकमयसिंह
शिवशरणसिंह (तेदुहा चले गये)
अरूनसिंह
विजयसिंह
रोहितसिंह
रामपालसिंह
राधेप्रतापसिंह
गुजासिंह
नर्मदासिंह
संतराजसिंह
विष्णुप्रतापसिंह
गिरीशकुमारसिंह
लालमनसिंह
शिवनारायनसिंह
कमलेश्वरसिंह
रमेशसिंह
शेषमनसिंह
यादेन्द्रसिंह
युदनाथसिंह
जगतवहादुरसिंह
दधिवलसिंह
महेश प्रताप सिंह
अशोक कुमार सिंह
संतोष कुमार सिंह
दिनेश कुमार सिंह
दिलीप कुमार सिंह
विकास सिंह
यज्ञरोपन सिंह
चेतनाथ सिंह
संजीव सिंह
पंकजसिंह
मनिराज सिंह
सुवराज सिंह
वलराज सिंह

(सचरा नं० 116)

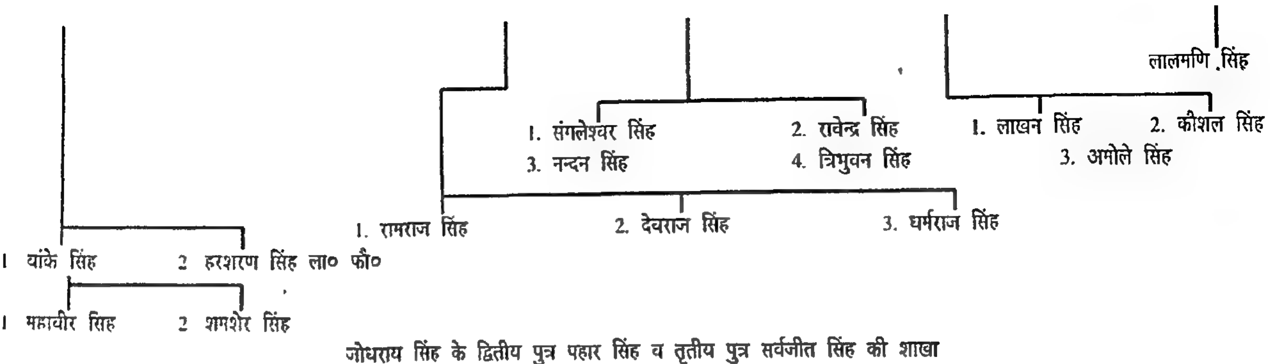

वंशावली परिहारों की वर्ती शाखा
पछांह से आयूभिखर मुरार से राना परिहार चन्द्रभान सिंह आये
चन्द्रभान सिंह
1 वीरभान सिंह (छिवौरा 1645)
2. विजय सिंह (सिजहटा) में
मेरुशाह सिंह 1670
1 थैन सिंह (वर्ती आये 1695)
2. कुंजल सिंह
3. वाजीराय सिंह (छिवौरा) में
जोधराय सिंह 1725
1. नाहर सिंह 1775
2. पहार सिंह
नायक की लड़ाई में मारे गये
3. सर्वजीत सिंह
कमोद सिंह
1. दलजीत सिंह
2. जगत सिंह
3. लछिमन सिंह
ला० फौ०
4. धौकल सिंह
ला० फौ०
5, अजीत सिंह
ला० फौ०
1. छत्रधारी सिंह
2. दिग्गज सिंह
1. जैपाल सिंह
2. नरहर सिंह
राजीवलोचन सिंह



कमोद सिंह के द्वितीय पुत्र जगत सिंह की शाखा

जगत सिंह

- 1. अमान सिंह
- 2. सिउरतन सिंह
  - दलीप सिंह
    - वैजनाथ सिंह
      - महावली सिंह
- 3. वाला सिंह
  - 1. रंगदेव सिंह
  - 2. गनपत सिंह
    - 1. श्याम सिंह
    - 2. रविराज सिंह
  - 3. धनपत सिंह
    - 1. महेश सिंह
    - 2. तिलकराज सिंह
  - 2. दलप्रताप सिंह
  - 3. छत्रदमन सिंह
    - 1. पदुमनाथ सिंह
    - 2. रामनाथ सिंह
    - 3. कुंवर सिंह
- 4. अन्सधारी सिंह
  - 1. इन्द्रभान सिंह
    - अवधराज सिंह
      - नारायण सिंह
  - 2. जगवहादुर सिंह
    ला० फौ०
- 5. काकू सिंह
  ला० फौ०



जोधराय सिंह के द्वितीय पुत्र पहार सिंह व तृतीय पुत्र सर्वजीत सिंह की शाखा

पहार सिंह
सेगराम सिंह
1. दलथम्हन सिंह 2 रघुनाथ सिंह ला० फौ० 3 गोपाल सिंह
1 भगवत सिंह 2. जैराम सिंह ला० फौ०
1. परवत सिंह 2. गम्भीर सिंह ला० फौ०
1 लखउ सिंह 2 जगजीत सिंह 3. रणजीत सिंह 4 चन्द्रशेखर सिंह ला० फौ० 5. भान सिंह ला० फौ०

सर्वजीत सिंह
चेत सिंह
रघुवर सिंह
कामता सिंह
चन्द्रसेन सिंह ला० फौ०

इन्द्रपाल सिंह अभयराज सिंह मनोहर सिंह

अयोध्या सिंह

1. छत्रपाल सिंह 2. शिवदर्शन सिंह 3. रणमत सिंह 4. रणबहादुर सिंह 5. विजय बहादुर सिंह

1. राजीवलोचन सिंह 2. नर्मदा सिंह 3. जगभान सिंह 4. रामभान सिंह

यादवेन्द्र सिंह

शिवमंगल सिंह

1. जगन्नाथ सिंह 2. नरेन्द्र प्रताप सिंह

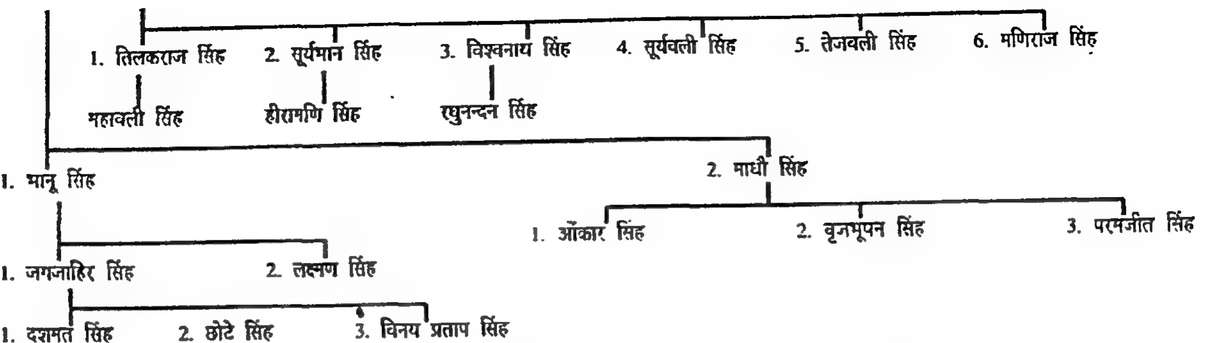
1. धीरभान सिंह 2. चक्रभान सिंह 3. कमलभान सिंह 4. पदुमनाथ सिंह

दयानन्द सिंह वनमाली सिंह गया प्रताप सिंह देवेन्द्र सिंह

1. राम प्रताप सिंह 2. ईश्वरजीत सिंह 3. विशेष सिंह 4. रामेश्वर सिंह 5. हरिकेशव सिंह

वंशराज सिंह गंगाप्रताप सिंह सुखीनन्दन सिंह

1 दमोदर सिंह रघुराज सिंह



मेरुशाह सिंह के द्वितीय पुत्र कुंजलशाह सिंह की शाखा जो पन्ना में जूझे

कुंजलशाह सिंह

|

रूपशाह सिंह पन्ना में जूझे

|

दलगंजन सिंह

ला० फौ०

वंशावली परिहारों की पछांह में आवूशिखर मुरार से परिहार चन्द्रभान सिंह आये

चन्द्रभान सिंह

वीरभान सिंह — विजय सिंह (सिजहट गये)

वीरभान सिंह

मेरूशाह सिंह

चैन सिंह 1. (वर्ती) — कुंजलशाह सिंह 2. (सोनवरसा) — 3. वाजीराय सिंह (छिवौरा)

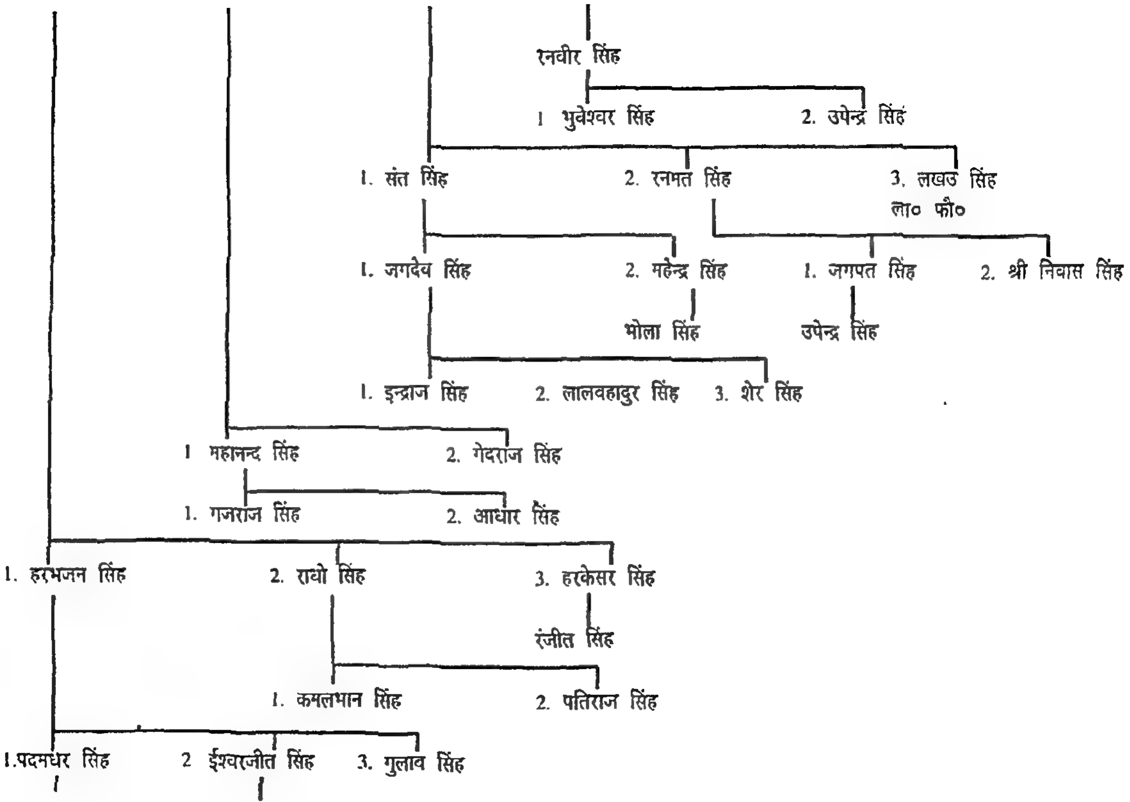
1. सोहन सिंह — 2. मोहन सिंह (पन्ना में जूझे) लाο फौο — 3. मेहरवान सिंह

1. हृदय सिंह — 2. विक्रमाजीत सिंह

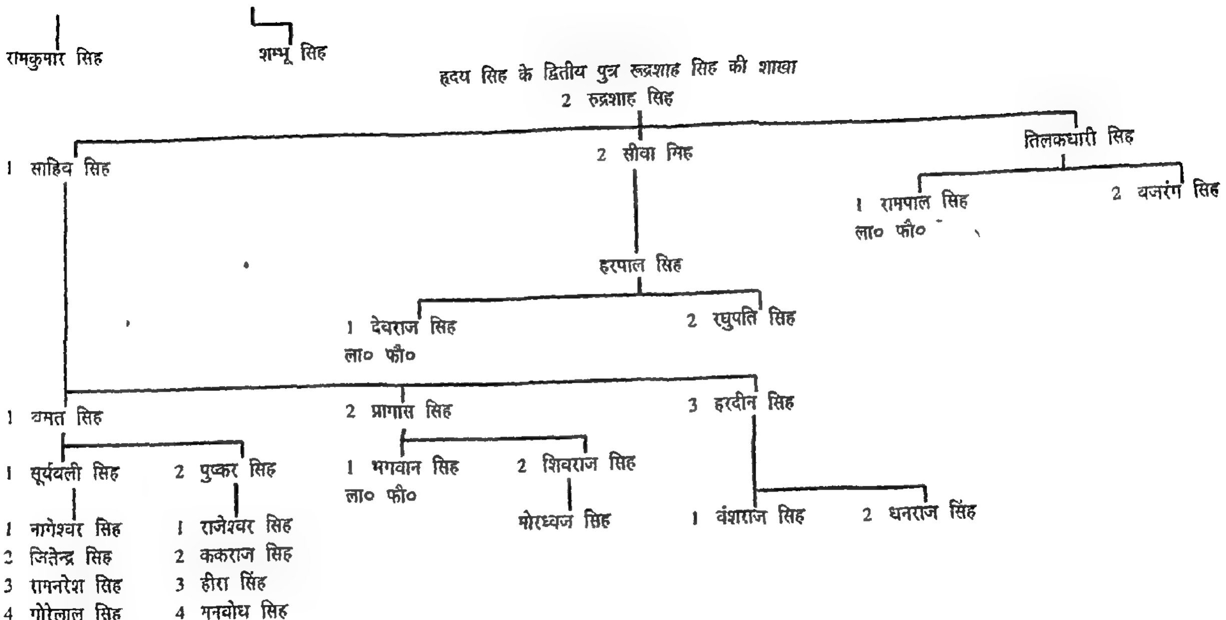
1. अनूप सिंह — 2. रुद्रशाह सिंह

1. दशरथ सिंह — 2. चतुर सिंह — 3. अयोध्या सिंह — 4. मथुरा सिंह — 5 हरचन्द सिंह — 6. राजरूप सिंह

- 1. दशरथ सिंह → जैकरन सिंह
- 2. चतुर सिंह → त्रिलोक सिंह
- 6. राजरूप सिंह → वैंकटेश्वर सिंह → प्रभुनाथ सिंह
- 5 हरचन्द सिंह → 1. मंगल सिंह लाο फौο — 2. रविराज सिंह — 3 भगीरथ सिंह लाο फौο



रनवीर सिंह
1 भुवेश्वर सिंह
2. उपेन्द्र सिंह
1. संत सिंह
2. रनमत सिंह
3. लखउ सिंह
ला० फौ०
1. जगदेव सिंह
2. महेन्द्र सिंह
1. जगपत सिंह
2. श्री निवास सिंह
भोला सिंह
उपेन्द्र सिंह
1. इन्द्राज सिंह
2. लालवहादुर सिंह
3. शेर सिंह
1 महानन्द सिंह
2. गेदराज सिंह
1. गजराज सिंह
2. आधार सिंह
1. हरभजन सिंह
2. रायो सिंह
3. हरकेसर सिंह
रंजीत सिंह
1. कमलभान सिंह
2. पतिराज सिंह
1.पदमधर सिंह
2 ईश्वरजीत सिंह
3. गुलाव सिंह



रामकुमार सिंह
शम्भू सिंह
हृदय सिंह के द्वितीय पुत्र रुद्रशाह सिंह की शाखा
2 रुद्रशाह सिंह
1 साहिब सिंह
2 सीवा सिंह
तिलकधारी सिंह
1 रामपाल सिंह
ला० फौ०
2 बजरंग सिंह
हरपाल सिंह
1 देवराज सिंह
ला० फौ०
2 रघुपति सिंह
1 वमत सिंह
2 प्रागास सिंह
3 हरदीन सिंह
1 सूर्यवली सिंह
2 पुष्कर सिंह
1 भगवान सिंह
ला० फौ०
2 शिवराज सिंह
मोरध्वज सिंह
1 वंशराज सिंह
2 धनराज सिंह
1 नागेश्वर सिंह
2 जितेन्द्र सिंह
3 रामनरेश सिंह
4 गोरेलाल सिंह
1 राजेश्वर सिंह
2 ककराज सिंह
3 हीरा सिंह
4 मनवोध सिंह

सोहन सिंह के द्वितीय पुत्र विक्रमाजीत सिंह की शाखा

विक्रमाजीत सिंह

1. भरत सिंह लाο फौο
2. फुरुमान सिंह लाο फौο
3. छत्रधारी सिंह लाο फौο
4. छकौड़ी सिंह लाο फौο
5. पंचम सिंह
   - 1. सुग्रीव सिंह
     - 1. जगन्नाथ सिंह
       - 1. चक्रपान सिंह
         - किशोर सिंह
       - 2. वत्सराज सिंह
         - पदमाकर सिंह
       - 3. दिनेश सिंह
       - 4. रमेश सिंह
         - दिवाकर सिंह
     - 2. भान सिंह
       - पृथ्वीराज सिंह
     - 3. शिशुपाल सिंह लाο फौο
   - 2. त्रिभुवन सिंह लाο फौο

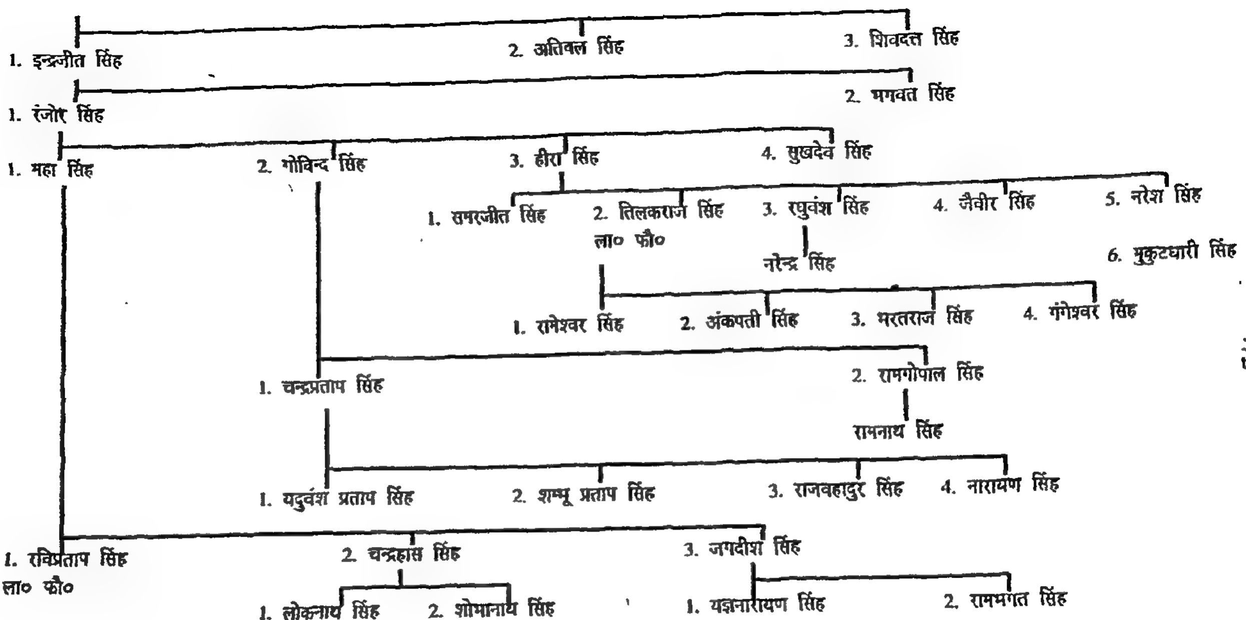
बाजीराव के तीसरे लड़के मेहरवान सिंह की शाखा

मेहरवान सिंह

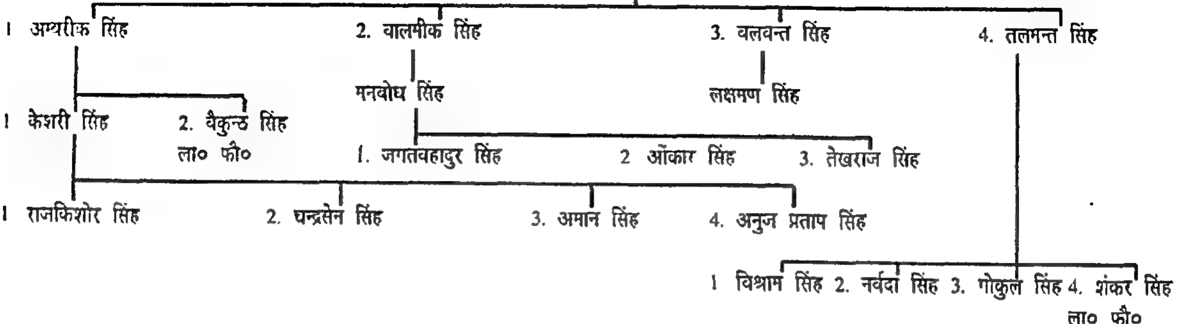
गुरुदत्त सिंह



1. अभिमान सिंह
2. दलेल सिंह

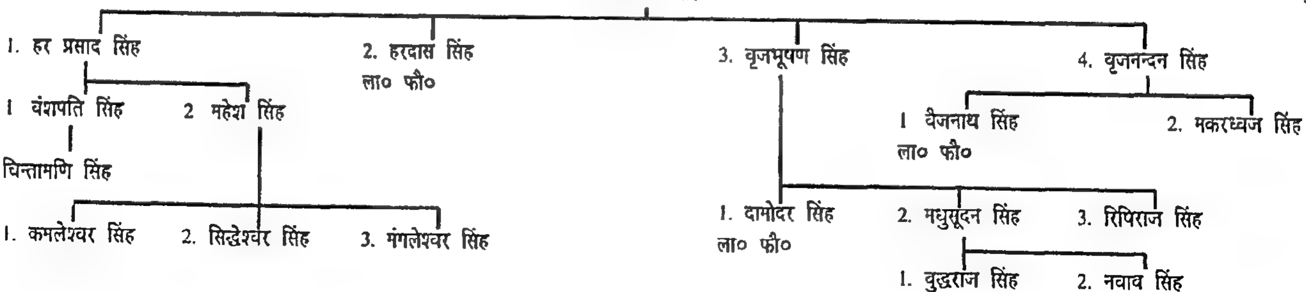

1. इन्द्रजीत सिंह
2. अतिबल सिंह
3. शिवदत्त सिंह
1. रंजोर सिंह
2. भगवत सिंह
1. महा सिंह
2. गोविन्द सिंह
3. हीरा सिंह
4. सुखदेव सिंह
1. समरजीत सिंह
2. तिलकराज सिंह
ला० फौ०
3. रघुवंश सिंह
4. जैवीर सिंह
5. नरेश सिंह
नरेन्द्र सिंह
6. मुकुटधारी सिंह
1. रामेश्वर सिंह
2. अंकपती सिंह
3. भरतराज सिंह
4. गंगेश्वर सिंह
1. चन्द्रप्रताप सिंह
2. रामगोपाल सिंह
रामनाथ सिंह
1. यदुवंश प्रताप सिंह
2. शम्भू प्रताप सिंह
3. राजबहादुर सिंह
4. नारायण सिंह
1. रविप्रताप सिंह
ला० फौ०
2. चन्द्रहास सिंह
3. जगदीश सिंह
1. लोकनाथ सिंह
2. शोभानाथ सिंह
1. यज्ञनारायण सिंह
2. रामभगत सिंह

इन्द्रजीत सिंह के दूसरे लड़के भगवत सिंह

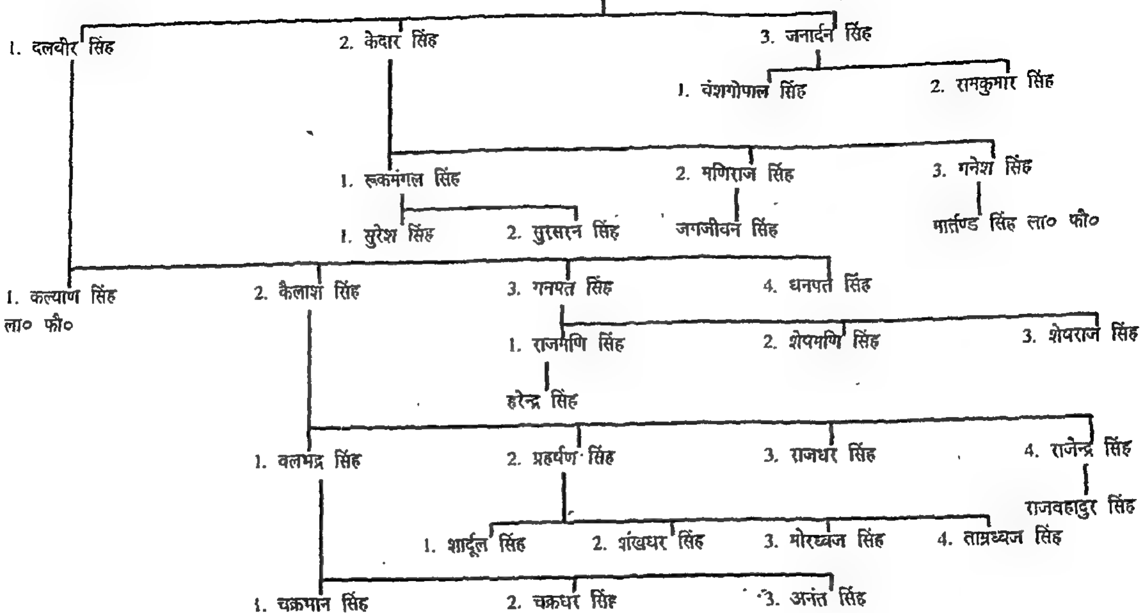


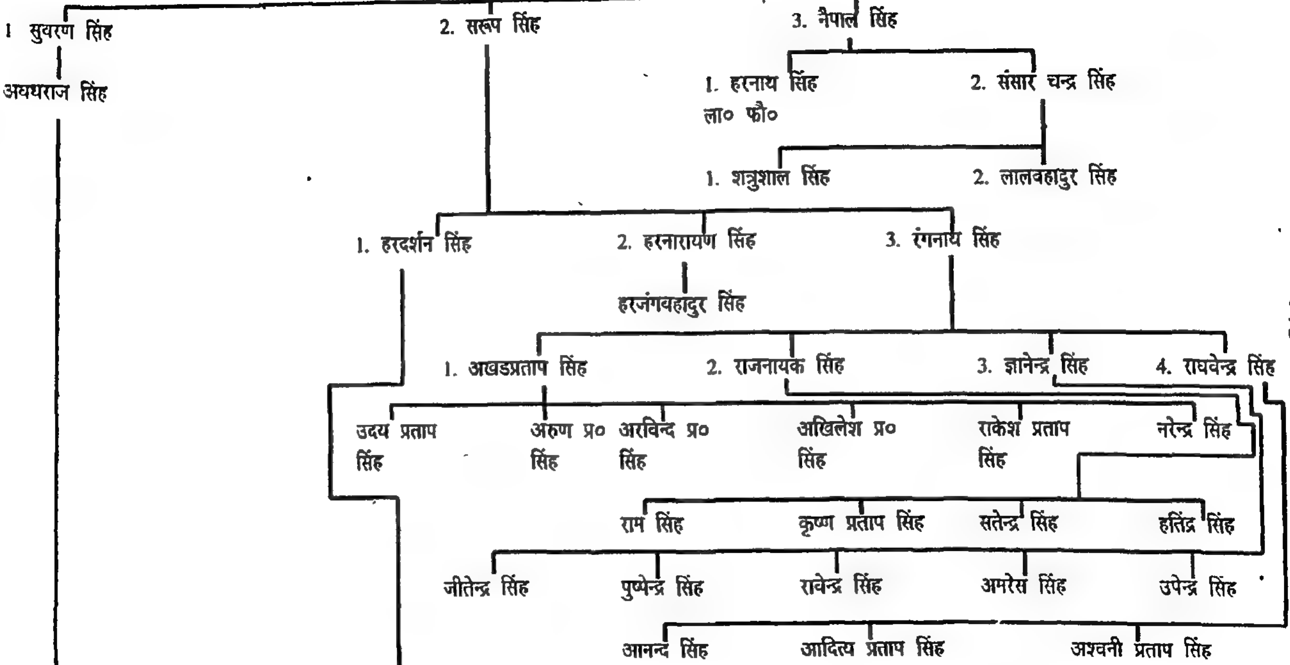
अभिमान सिंह के द्वितीय पुत्र अतिवल सिंह की शाखा

अतिवल सिंह

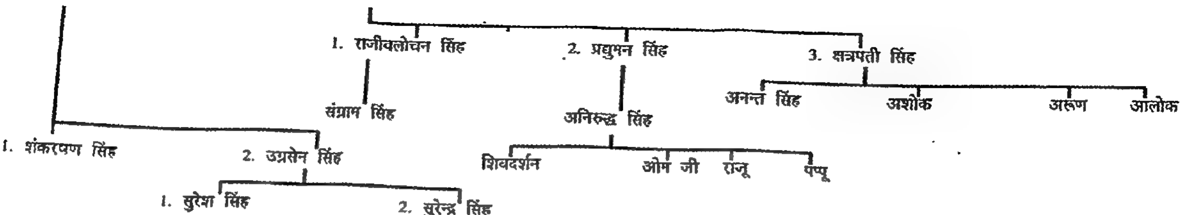


अभिमान सिंह के तृतीय पुत्र शिवदत्त सिंह की शाखा





गुरुदत्त सिंह के द्वितीय पुत्र दलेल सिंह की शाखा
दलेल सिंह
1 सुवरण सिंह
अथधराज सिंह
2. सरूप सिंह
3. नैपाल सिंह
1. हरनाथ सिंह
ला० फौ०
2. संसार चन्द्र सिंह
1. शत्रुशाल सिंह
2. लालबहादुर सिंह
1. हरदर्शन सिंह
2. हरनारायण सिंह
3. रंगनाथ सिंह
हरजंगबहादुर सिंह
1. अखडप्रताप सिंह
2. राजनायक सिंह
3. ज्ञानेन्द्र सिंह
4. राघवेन्द्र सिंह
उदय प्रताप सिंह
अरुण प्र० सिंह
अरविन्द प्र० सिंह
अखिलेश प्र० सिंह
राकेश प्रताप सिंह
नरेन्द्र सिंह
राम सिंह
कृष्ण प्रताप सिंह
सतेन्द्र सिंह
हतिंद्र सिंह
जीतेन्द्र सिंह
पुष्पेन्द्र सिंह
रावेन्द्र सिंह
अमरेस सिंह
उपेन्द्र सिंह
आनन्द सिंह
आदित्य प्रताप सिंह
अश्वनी प्रताप सिंह

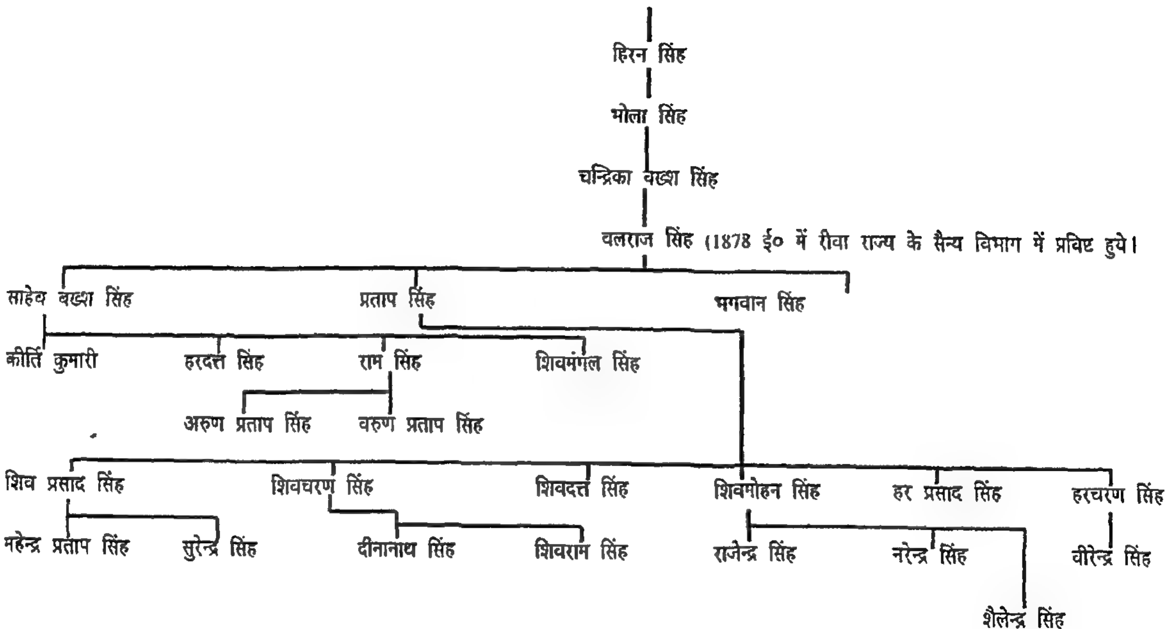


सचरा नं० 117

ठिकाना नादन (तहसील अमरपाटन)

नादन घराने के परिहारों का सम्बन्ध रीवा से बहुत पहले से चला आ रहा था। किन्तु इस ठिकाने की स्थापना 1907 ई० में महाराज वेंकटरमन सिंह के द्वारा की गई। उत्तर प्रदेश में झगरपुर में इनका एक छोटा ठिकाना था, जहाँ से श्री बलराज सिंह फौज में नौकरी के सिलसिले में 1878 ई० में रीवा आये थे। आपके तीन पुत्र हुए - साहेब बख्श सिंह, प्रताप सिंह और भगवान बख्श सिंह। आपकी वंशावली इस प्रकार है —

मुकुट शाह
|
जय सिंह
|
गज सिंह
|
भाव सिंह
|
दुरजन सिंह
|

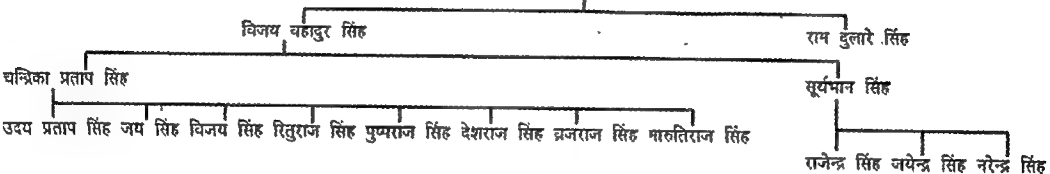


हिरन सिंह
भोला सिंह
चन्द्रिका वख्श सिंह
वलराज सिंह (1878 ई० में रीवा राज्य के सैन्य विभाग में प्रविष्ट हुये।
साहेव वख्श सिंह
प्रताप सिंह
भगवान सिंह
कीर्ति कुमारी
हरदत्त सिंह
राम सिंह
शिवमंगल सिंह
अरुण प्रताप सिंह
वरुण प्रताप सिंह
शिव प्रसाद सिंह
शिवचरण सिंह
शिवदत्त सिंह
शिवमोहन सिंह
हर प्रसाद सिंह
हरचरण सिंह
महेन्द्र प्रताप सिंह
सुरेन्द्र सिंह
दीनानाथ सिंह
शिवराम सिंह
राजेन्द्र सिंह
नरेन्द्र सिंह
वीरेन्द्र सिंह
शैलेन्द्र सिंह

सचरा नं० 118

नागौद शहर में रहने वाले परिहार

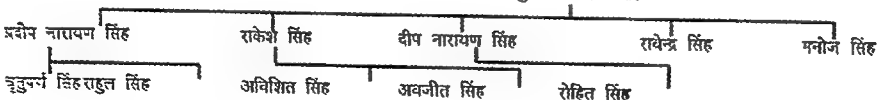
श्री कन्हाई सिंह परिहार सन् 1850 में रीवा फौज में कप्तान थे। उनके छेटे भाई शंकर सिंह भी रीवा फौज में थे। वर्ष 1885 के लगभग उनके पुत्र लाल काली सिंह जी नागौद रिसाले में भर्ती हुए व पूर्ण रीति से अपने जन्म स्थान ग्राम करौंदी स्टेशन हरचंद पुर जिला राय बरेली उ० प्र० से आकर नागौद में स्व० महाराजा साहब यादवेन्द्र सिंह जू देव के समय में बस गये व कुछ माफी की भूमि बिकरा ग्राम में दी गई। इनकी एक पूर्व शाखा से श्री सूर्यभान सिंह सतना कालेज में प्रिन्सिपल थे। अब बिलासपुर में रह रहे हैं। डगरपुर उ० प्र० की साखा से ही पूर्वज करौंदी आये थे।



सचरा नं० 119

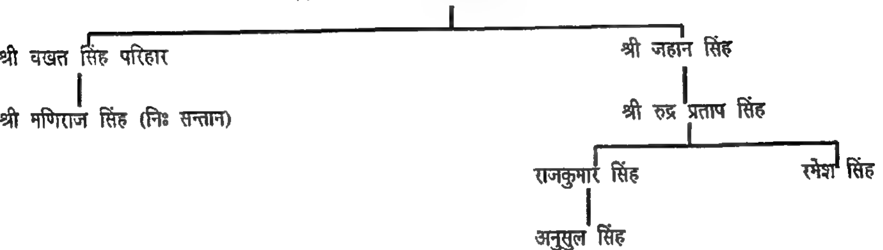
करही (तह० अमरपाटन) के परिहार

श्री शेष प्रसाद सिंह ठाकुर साहब भीष्मपुर की पुत्री श्रीमती रमा देवी का विवाह कु० ब्रज नरेश सिंह सा० मझगवाँ तहसील राठ जिला हमीरपुर उ० प्र० के साथ हुआ। अतः करही ग्राम उन्हें मिला।



सचरा नं० 120

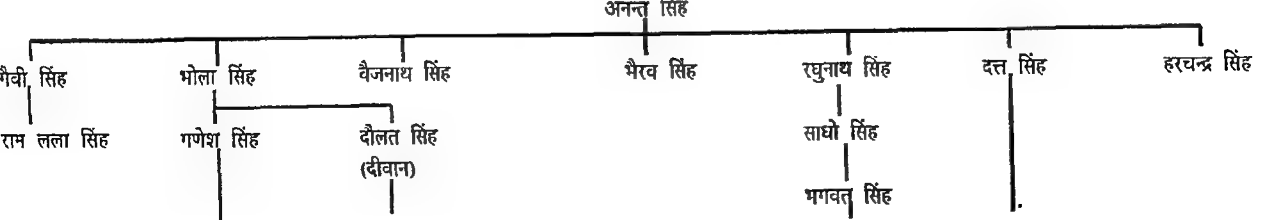
ग्राम पटना जिला रीवा के परिहार
ग्राम - जिगनी, (उरई) जिला हमीरपुर उ० प्र०
खानदान से
स्व० श्री मनोहर सिंह परिहार (वघेल की गोद)



सचरा नं० 121

ग्राम - पतौड़ा (तहसील रघुराज नगर) के परिहार

यै लोग अपने को नागौद राज्य के इलाका सुरदहा से चुनहा फिर चुनहा से घोरहटी तत्पश्चात् रीवा राज्य अन्तर्गत इलाका माधवगढ़ के ग्राम पतौड़ा आना दर्शाया है। ग्राम पतौड़ा माधवगढ़ के तत्कालीन इलाकेदार लक्ष्मण सिंह से श्री दौलत सिंह परिहार की पवाई से प्राप्त हुआ। ये माधवगढ़ इलाके में दीवान थे। इनका परिवार माधवगढ़ में निवास करता रहा शेष परिवार ग्राम पतौड़ा में आवाद हुये।



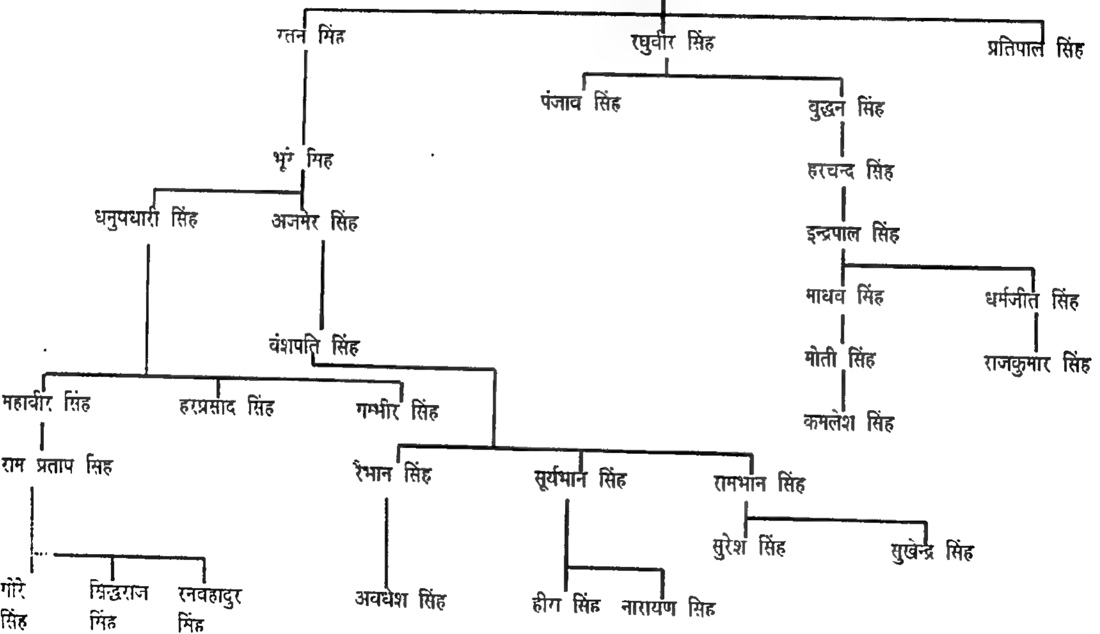
राम प्रताप सिंह
सरयू सिंह
जगदीश सिंह बद्री सिंह भारत सिंह
शंखधर सिंह शार्दूल सिंह रामनगीना सिंह
अनन्तसिंह सुधाकरसिंह
गजेन्द्रसिंह शैलेन्द्रसिंह
प्रदीपसिंह संदीपसिंह कुलदीपसिंह
दिलीपसिंह जयदीपसिह
प्रभाकरसिंह दिवाकरसिंह

माधौ सिंह
जयम्बर सिंह
1 जयकरण सिंह
2 जयवीर सिंह
3 रामपाल सिह
4. तेज वहादुर सिंह
5 लाल वहादुर सिह
6 वीरेन्द्र सिंह
7 वलराम सिंह
8 शत्रुसूदन सिंह

जगरूप सिह
1 राम राघव सिह
2 दमोहरा सिंह
3 अयोध्या सिंह
4 भगत सिंह
तेजवहादुर सिंह दल प्रताप सिंह
शमशेर सिंह गुलाब सिंह

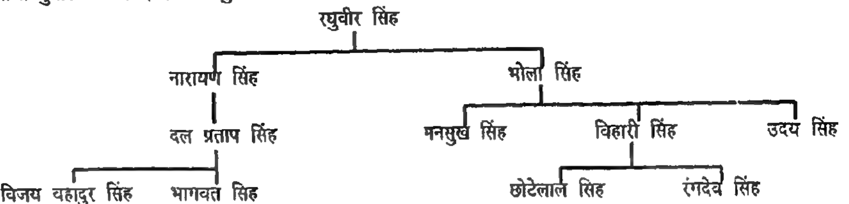
शम्भू सिंह
समाराज सिंह
वल्देव सिंह रणजोर सिंह
रंगमदार सिंह सीताराम सिंह
विश्वनाथ सिंह
रामभरोसा सिंह हर प्र० सिंह
कमलाकर सिह दरोगा सिंह कौशलेन्द्र सिंह
1. शिवलोचन सिंह
2. पुरन्दर सिंह
3. कल्याण सिंह
4 छोटे सिंह

सचरा नं० 122


बिहरा (तहसील रघुराजनगर के परिहार)
ग्राम पाकर के भाई वतलाते हैं।
शहिजाद सिंह
रतन सिंह
रघुवीर सिंह
प्रतिपाल सिंह
पंजाव सिंह
वुद्धन सिंह
हरचन्द सिंह
इन्द्रपाल सिंह
माधव सिंह
धर्मजीत सिंह
मोती सिंह
राजकुमार सिंह
कमलेश सिंह
भूरे सिंह
धनुपधारी सिंह
अजमेर सिंह
वंशपति सिंह
महावीर सिंह
हरप्रसाद सिंह
गम्भीर सिंह
राम प्रताप सिंह
रैभान सिंह
सूर्यभान सिंह
रामभान सिंह
सुरेश सिंह
सुखेन्द्र सिंह
गोरे सिंह
सिद्धराज सिंह
रनवहादुर सिंह
अवधेश सिंह
हीरा सिंह
नारायण सिंह

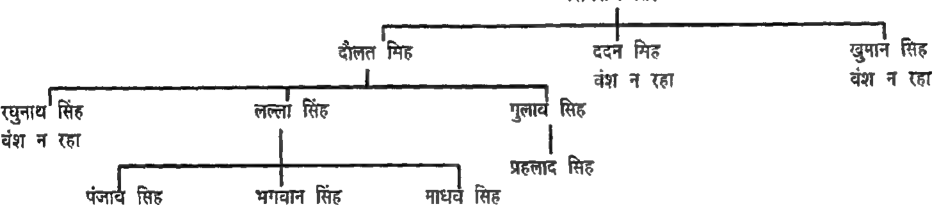
सचरा नं० 122 A

मौजा दुवारी सोनौरा (तहसील रघुराज नगर) के परिहार पाकर के भाई हैं। ससुराल दुवारी चले गये।



सचरा नं० 123

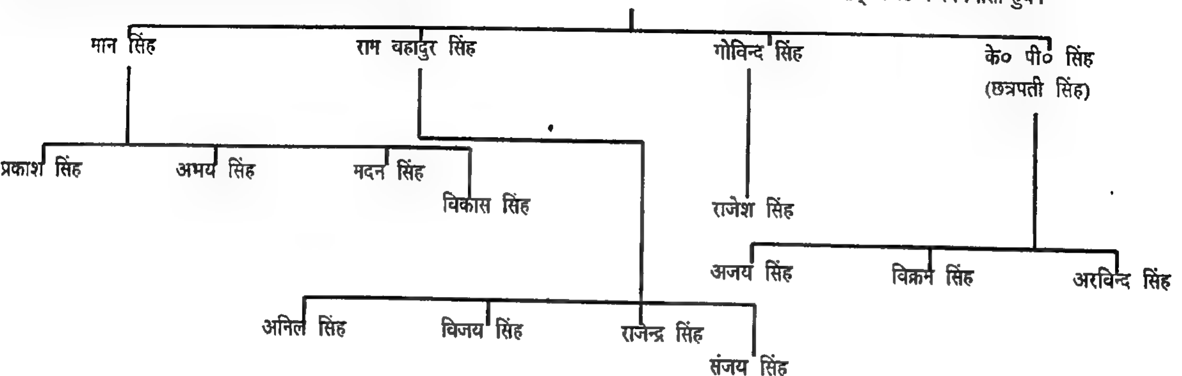
ग्राम - पासी के परिहार



सचरा नं० 124

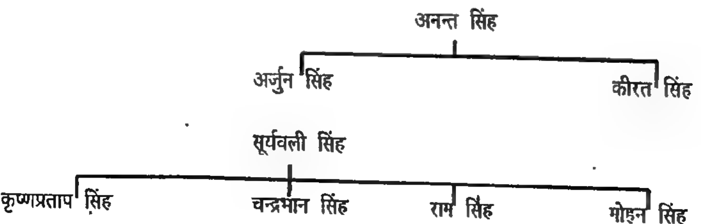
रैगांव (सोहावल राज्य के परिहार)

श्री शंकर प्रताप सिंह परिहार सुरदहा से रैगांव 100 वर्ष पूर्व 30 वर्ष की उम्र में रैगांव आये थे। आने के पूर्व किसी कुख्यात अपराधी को पकड़ने के कारण जागीर से सुरक्षा प्रभारी नियुक्त किया गया था व रैगांव में वस गये। एक पुत्र श्री जगत सिंह जागीर रैगांव में खासगी अफसर रहे। 55 वर्ष की उम्र में सन् 1940 में स्वर्गवासी हुये।



सचरा नं० 125

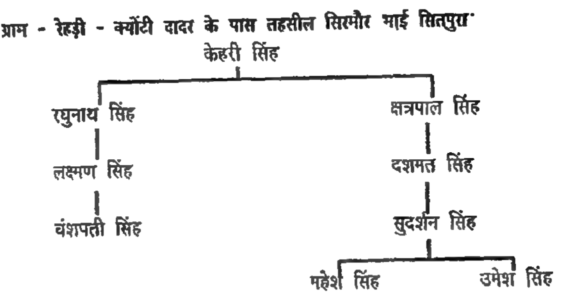
कठार उचेहरा के परिहार



नोट - अनन्त सिंह जिला इटावा ग्राम कतरौली पो० पिपरौली गढ़िया उत्तर प्रदेश से आये। कीरत सिंह नागौद स्टेट में तोपखाना में हवलदार पद पर नौकर हुए।

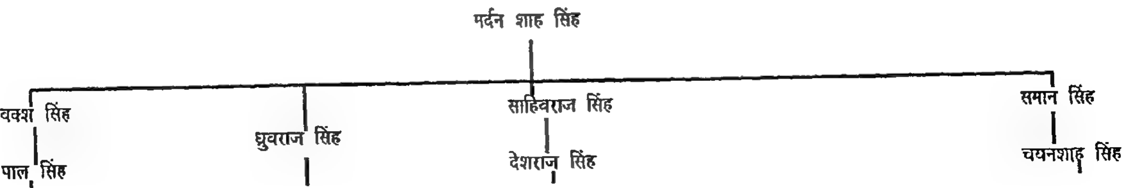
सचरा नं० 126

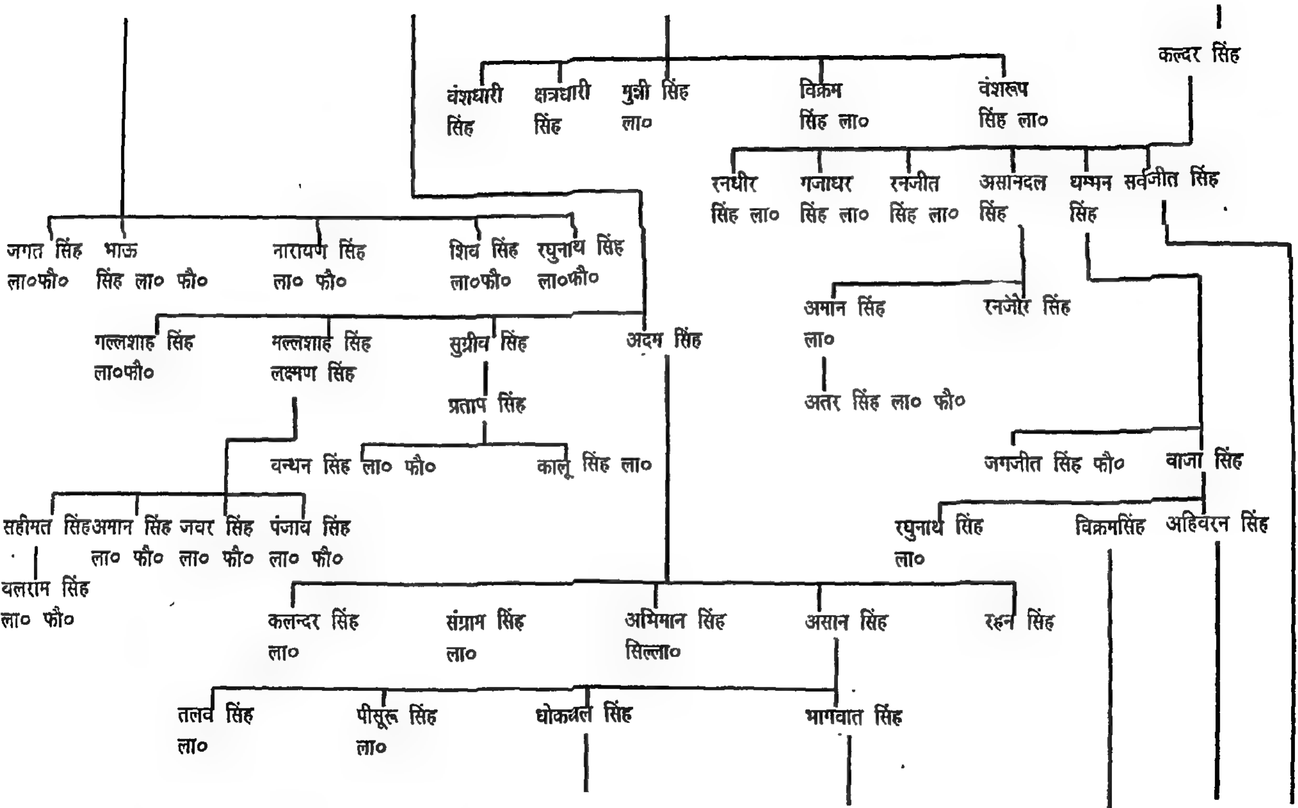
ग्राम - रेहड़ी - क्योंटी दादर के पास तहसील सिरमौर माई सितपुरा



सचरा नं० 127

वंशावली परिहार (वीड़ा) अमली टोला





कल्दर सिंह
वंशधारी सिंह
क्षत्रधारी सिंह
मुन्नी सिंह ला०
विक्रम सिंह ला०
वंशरूप सिंह ला०
रनधीर सिंह ला०
गजाधर सिंह ला०
रनजीत सिंह ला०
असानदल सिंह
थम्मन सिंह
सर्वजीत सिंह
जगत सिंह ला०फौ०
भाऊ सिंह ला० फौ०
नारायण सिंह ला० फौ०
शिव सिंह ला०फौ०
रघुनाथ सिंह ला०फौ०
अमान सिंह ला०
रनजोर सिंह
अतर सिंह ला० फौ०
गल्लशाह सिंह ला०फौ०
मल्लशाह सिंह
लक्ष्मण सिंह
सुग्रीव सिंह
अदम सिंह
प्रताप सिंह
वन्थन सिंह ला० फौ०
कालू सिंह ला०
जगजीत सिंह फौ०
वाजा सिंह
सहीमत सिंह
अमान सिंह ला० फौ०
जवर सिंह ला० फौ०
पंजाव सिंह ला० फौ०
बलराम सिंह ला० फौ०
रघुनाथ सिंह ला०
विक्रमसिंह
अहिवरन सिंह
कलन्दर सिंह ला०
संग्राम सिंह ला०
अभिमान सिंह सिल्ला०
असान सिंह
रहन सिंह
तलव सिंह ला०
पीसूरू सिंह ला०
धोकवल सिंह
भागवात सिंह

भाऊ सिंह लाο, रुद्र सिंह लाο, त्रिभुवन सिंह लाο, बाऊ सिंह लाο, सिरवमन सिंह लाο

भूरा सिंह लाο, प्रताप सिंह लाο, भागवत सिंह, सूर्यभान सिंह, बांके सिंह लाο, बल्देव सिंह

कलावती, चन्द्रवती

कामता सिंह फौο, बेवा शान्ती मोο

छोटे लाल सिंह मीο

संजय कुमार सिंह

राम भरोसा सिंह मीο

हीरा सिंह लाο, सहदेव सिंह

बृजभान सिंह, बोधन सिंह लाο

रुद्रप्रताप सिंह लाο, गुरुप्रसाद सिंह लाο

मुगुल सिंह लाο, धुरन्धर सिंह, हरदत्त सिंह, रमाधार सिंह

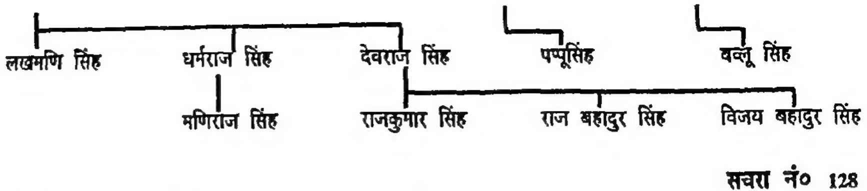
फूल सिंह लाο, त्रिभुवन सिंह लाο

अनन्त सिंह, नर्वदा सिंह

सुमेश्वर सिंह लाο, तेजवली सिंह, दर्शन सिंह, रंगनाथ सिंह लाο, सूर्यवली सिंह लाο, पदुम सिंह

रामराज सिंह लाο

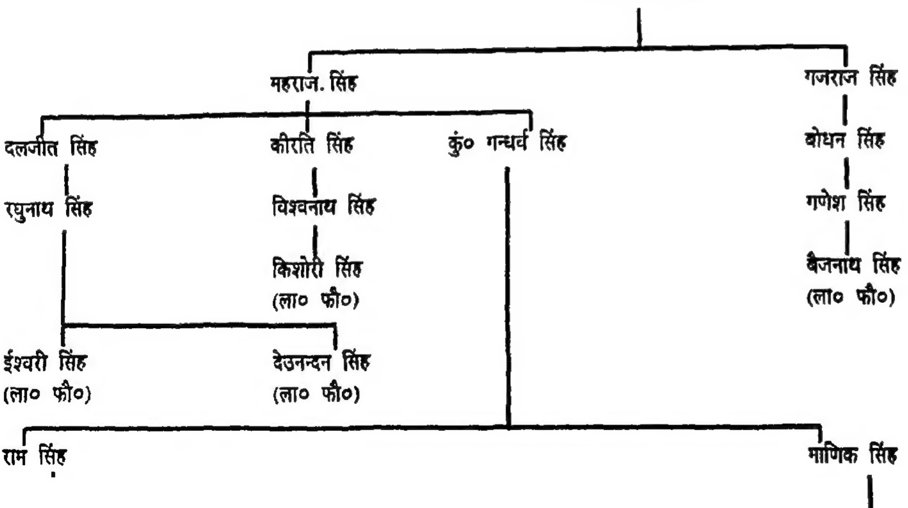
वलीकरण सिंह मोο, शुभकरण सिंह मोο



सचरा नं० 128

वंश वृक्ष परिहार ग्राम चोरहटा तहसील रघुराज नगर जिला सतना (म०प्र०)

ग्राम - पनगरा राज्य से 350 वर्ष पूर्व रीवा राजान्तर्गत ग्राम - चोरहटा तह० रघुराज नगर में आकर आवाद हुये।



मोहन सिंह

जगजाहिर सिंह | इन्द्रभान सिंह | जयगोविन्द सिंह

जगत सिंह | वीरबहादुर सिंह | कुं० राजेन्द्र सिंह | वृजेन्द्र सिंह

पुष्पेन्द्र सिंह | कुँवर सिंह | योगेन्द्र सिंह

शमशेर बहादुर सिंह | श्रवण सिंह

संम्पत सिंह | बल्देव सिंह

चन्द्रिका सिंह | महेन्द्र सिंह

तलमन सिंह | उदयभान सिंह | रामभान सिंह | कृष्णभान सिंह

रामबहादुर सिंह | राजभान सिंह

प्रभाशंकर सिंह | प्रदीप सिंह | प्रभात सिंह

सौरभ सिंह | अखंड सिंह | लापन सिंह

धर्मेन्द्र सिंह | पुष्पेन्द्र सिंह | देवेन्द्र सिंह

मृगेन्द्र सिंह

मंगलेश्वर सिंह | सिद्धेश्वर सिंह | कीर्तिकेश्वर सिंह

कौशलेन्द्र सिंह | कमलभान सिंह | सुदर्शन सिंह | तेजभान सिंह

राजीव सिंह | संजीव सिंह | पृथ्वीराज सिंह

रविन्द्र सिंह | धिरेन्द्र सिंह | शिवेन्द्र सिंह

सचरा नं० 129

मानीव राज्य के इलाहाबाद के पुरोहित॥
निशान - श्री राधाकृष्ण पत्ता 126 चौखण्डी, कीटगंज, प्रयाग
मदनमोहन विहारी लाल

पं० माधवलाल
- शम्मोदेवी (पति त्रिजुगी नारायण दुबे)
  - मोतीलाल
  - रमेश्वर प्रसाद
  - रमेशकुमार
  - संतोषकुमार
- गुलाबदेवी (पति जमार्दन प्रसाद दुबे)

मनोहरलाल
- मुरलीमनोहर